अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01
02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07
03. निर्णायक मण्डल 08
04. प्रवक्ता साथी 10/11

(Science / विज्ञान)

05. Ecophysiological study of medicinal plant *Cyathocline purpurea* (S.C Mehta, S.S Rawat) 12
06. Luminescence Studies of Nanocrystalline Films of Cadmium Sulphide Nanocrystals 15
(U.S.Patle)
07. BLASTing Flu Season 2105-2016 (N. Khurana) 17
08. Ethnobotanical some plants used for Dental disorders by Tribal's of Dhar district, (M.P.) India 21
(Dr. K.S. Alawa, Dr. N.S. Dawar)
09. Nanocrystal (Dr. Neeraj Dubey) 23
10. मध्य प्रदेश की मिट्टियों में कॉपर की मात्रा एवं उपलब्ध कॉपर की न्यूनतम वाले क्षेत्रो का सीमा निर्धारण 25
(डॉ. सलिल कु. उदयपुरे)
11. गुणवत्ता में पारदर्शिता (विशेष संदर्भ - उच्च शिक्षा में चुनौतियाँ और सुधार के उपाय) (डॉ. सुनील कुमार सिकरवार) 28

(Home Science / गृह विज्ञान)

12. Effect Of E-Shopping Factors On Consumer's Attitude In Jabalpur City 31
(Saumya Mishra, Dr. Abha Tiwari)
13. To Study The Impect Of Cartoons On The Daily Behaviour Of The Kids (Gorakhpur City) 35
(Dr. Deepshikha Pandey)
14. Marital Adjustment (Sangeeta Rachiyat) 37
15. किशोर बालक-बालिकाओं की विभिन्न समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. आभा तिवारी, सपना श्रीवास्तव) 40
16. किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का अध्ययन (डॉ. आभा तिवारी) 42

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

17. Buying Behavior of Retailers in Modern Wholesale Stores (With Special Reference to Best Price at Indore) 44
(Prof. Rajesh Jain, Dr. Paritosh Awasthi, Dr. R.L. Dave, Dr. Deepika Chouhan)
18. Role of ICT & its impact on education (Dr. Manoj Mahajan, Dr. Sudhir Mahajan) 48
19. Problems And Challenges In Adopting IFRS In India : An Inquiry 51
(Dr. Abhay Pathak, Neha Bhandari)

20. Financial Performance of General Insurance in Indian Insurance Industry 54
(Dr. N. K. Patidar, Nidhi Saxena)

21. म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केन्द्र से सहायता, अनुदान का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. एल. एन. शर्मा) 56

22. सार्वजनिक एवं निजी जीवन बीमा क्षेत्र की व्यवसाय संवर्द्धन नीतियों का तुलनात्मक अध्ययन 61
(जबलपुर जिले के विशेष संदर्भ में)(डॉ. रिचा राय (मालवीय), रश्मि चौरसिया)

23. पन्ना जिले की हीरा खदानों एवं फर्शी पत्थर खदानों के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन (प्रदीप कुमार रावत) 65

24. वित्तीय समावेशन के माध्यम से बैंकिंग जागरूकता (एक अध्ययन) (डॉ. प्रियंका श्रीवास्तव) 68

25. अंतर्राष्ट्रीय पूँजी और वैश्वीकरण (डॉ. राजू रैदास) 71

26. वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) - एक सैद्धांतिक विवेचन (डॉ. मनोज महाजन, डॉ. सुधीर महाजन) 74

27. भारतीय खाद्य निगम व छत्तीसगढ़ राज्य में इसकी स्थिति (नीलिमा कौशिक, डॉ. राजेश कुमार शुक्ला) 77

28. सिवनी एवं छिन्दवाड़ा जिले में लघु एवं कुटीर उद्योगों का योगदान (डॉ. सुमन यादव) 79

29. भावी नेतृत्व की नींव - छात्रसंघ चुनाव (डॉ. ज्योति सोनी) 81

30. मन्दसौर स्लेट पेंसिल उद्योग में कर्मकार कल्याण मंडल का योगदान (डॉ. अंतिमबाला जैन) 83

31. भारत में स्वतंत्रता से पूर्व सड़क यात्री परिवहन (डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़) 85

(Economics / अर्थशास्त्र)

32. Agriculture policy of Jammu & Kashmir (Nisar Ahmad Wani, Dr. Pavan Kumar Shrivastav) 87

33. Impact Of Climate Change On Economy (Dr. Archana Singhal) 91

34. कन्या भ्रूण हत्या कराने वाली महिलाओं का समाज शास्त्रीय अध्ययन (धार जिले की कुक्षी तहसील के सन्दर्भ में) 94
(डॉ. प्रकाशचंद रांका, विजय यादव)

35. गरीबी रेखा की अवधारणा, समस्या एवं समाधान (डॉ. हरदयाल अहिरवार) 97

36. आर्थिक नीति का गरीबी उन्मूलन में योगदान, पन्ना जिले के संदर्भ में (नितेश मिश्रा) 100

37. पंचायती राज के आर्थिक विकास में कल्याणकारी योजना का योगदान (जगतसिंह बामनिया, डॉ. सारा अत्तारी) 103

38. भारत में वन सम्पदा समस्याएं एवं समाधान (डॉ. सुनीता बाथरे) 106

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

39. Indian Constitution and Reservation Policy (Dr. Sulekha Mishra, Nisar Ahmad Nengroo) 108

40. Digital India (Dr. Anil Kumar Jain) 111

41. Agricultural Schemes Initiated By Government : Evolution (Dr. Anil Kumar Jain) 114

42. बंदी उत्पीड़न बनाम राष्ट्रीय सुरक्षा (डॉ. संजय कुमार मिश्रा) 116

43. भारतीय नवजागरण के अग्रदूत राजाराम मोहनराय -व्यक्तित्व एवं कृतित्व (डॉ. अनिल कुमार जैन) 119

44. युवाओं में बढ़ती नशा प्रवृत्ति का अध्ययन (निम्न वर्गीय परिवारों के विशेष संदर्भ में) (डॉ. भावना ठाकुर) 121

45. एक राज्य दो सरकारे-नागालैण्ड (डॉ. राजेन्द्र सिंह चंदेल) 123
46. प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की पहली अमेरिका यात्रा (डॉ. संजय मिश्र) 125
47. दहेज प्रतिषेध एवं प्रक्रिया अधिनियमों की विवेचना (डॉ. इन्द्रेश्वर कुमार दोहरे) 127
48. आतंकवाद (एक अध्ययन) (प्रो. अंजना सेठिया) 129
49. पर्यावरण सरंक्षण और महात्मा गांधी (डॉ. किशन यादव) 130

(History / इतिहास)

50. Tribes of Madhya Pradesh: Historical Background (Dr. Aditi Pitaniya) 132
51. ब्रिटिश कालीन बुंदेलखण्ड की आधुनिक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि 1761 से 1842 तक (डॉ. शिवप्रसाद बामने) 135
52. प्राचीन उत्तर भारत की मुद्रण कला (बनवारी लाल यादव) 138
53. बुंदेलखण्ड में अंग्रेजों का आगमन व नीतियाँ (डॉ. चेतना ठाकुर) 141
54. झण्डा सत्याग्रह में बालाघाट जिले का अवदान (डॉ. संकेत कुमार चौकसे) 143
55. मध्यप्रांत में सविनय अवज्ञा आंदोलन का अध्ययन (मण्डला जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. रूक्मणी परते) 145
56. वर्तमान राजनैतिक परिदृष्य और सामाजिक समरसता में गांधीजी की प्रासंगिकता (डॉ. संदीप श्रीवास्तव) 147
57. भारतीय संस्कृति और जैन वास्तुकला (निधि जैन (तार-बाबू)) 149

(Sociology / समाजशास्त्र)

58. Sales And Discounts : Grabbing Person's Wallet (Girish Makwana,Dr. Shraddha Malviya) 151
59. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शासकीय व निजी बैंकों की ई-बैंकिंग प्रक्रम का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सादिक मोहम्मद खॉन) 153
60. अनुसूचित जनजातीय में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना से संबंधित प्रावधानों एवं आने वाली बाधाओं का अध्ययन : बड़वानी जिले के संदर्भ में (डॉ. निशा जैन, रितेश मॉगरोलिया) 156
61. बालकों के मनोविकास में संज्ञानात्मक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व (डॉ. नीलम महाडिक) 159
62. जल संरक्षण आज की आवश्यकता (डॉ. राजेन्द्र कुमार यादव) 162

(Geography / भूगोल)

63. Comparison between dietary habits of Tribal and non-Tribal peoplesof Chhindwara, Madhya Pradesh, India (Pradeep Kumar Shrivastava) 164
64. Social Settlement in Villages : Problems and Solution (Dr. Neeraj Kumar Soni) 168
65. Water Harvesting : Special Referece to Nagar Panchayat Gautampura (Dharmendra Singh Chouhan) 171
66. रतलाम जिले में भू-क्षरण कारण प्रकार स्थिति (डॉ. ज्योति जैन) 173
67. शोध -प्रविधि में शोध समस्या का चयन (डॉ. बी. एल. पाटीदार, कैलाश डावर) 177

68. वेदों में पर्यावरण संरक्षण (महेश चन्द्र मीणा) 180

(Psychology / मनोविज्ञान)

69. Study Of Occupational Stress Among Married Working Women In Relation To Income 183
(Dr. Mamta Barman)

70. पति-पत्नी के बीच बदलते अंतर्वैयक्तिक संबंधों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन (भोपाल नगर के सन्दर्भ में) (ममता व्यास) 185

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

71. Marriage As A Discord In Anita Desai's Novels (Dr. Vishal Sen) 187

72. The Autobiographical Elements In Ravinder Singh's ' I Too Had A Love Story' (Tripti Lakra) 189

73. The Hollowness of Patriarchal code in Dattani's "Where There's a Will' 191
(Dr. Shweta Singh baghel)

74. Thematic study of Bharati Mukherjee's Major Novels (Saurabh Mehta) 193

75. Preeti Shenoy As A Modern Novelist (Dr . Manisha Dwivedi) 195

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

76. हिंदी के आंचलिक उपन्यासों में आधुनिक सभ्यता की चुनौतियों की विवेचना (अशोक कुमार) 197

77. लोकतांत्रिक प्रतिष्ठा में आधुनिक हिन्दी कविता-एक विश्लेषण (डॉ. अमित शुक्ल, डॉ. अनिता ठाकरे) 200

78. इतिहास,साहित्येतिहास और इतिहास लेखन की समस्याएँ (डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन) 203

79. आलोचना का स्वरूप (डॉ. विजय कुमार पाण्डेय) 205

80. श्रीकृष्ण सरल के काव्य रूपों में राष्ट्रीयता के स्वर (डॉ. दीपक कुमार गुप्ता) 207

81. वर्तमान में आहत नैतिक मूल्य (डॉ. बिन्दू परस्ते) 209

82. मीरा की भक्ति में प्रेम की उपासना (डॉ. मनीषा सिंह मरकाम) 211

83. प्रियंवद की कहानियों में वृद्ध जीवन (रामेश्वर धुर्वे) 213

84. नारी जीवन में संस्कृति (भारतीय संदर्भ में) (डॉ. विम्मी बहल) 215

(Drawing / चित्राकला)

85. धर्म व कला का सौन्दर्यात्मक सामंजस्य प्रस्तुत करती डॉ. जगमोहन की कलाकृतियाँ (प्रो. किरन सरना, प्रिया बापलावत) 217

86. प्रकृति के मानवीकरण में रहस्य का बोध कराती लालचन्द मारोठिया की कलाकृतियाँ (प्रो. किरन सरना, पारूल बापलावत) ... 220

87. टैगोर के चित्रजगत में रूपाकारों की अद्भुत विविधता (शालिनी रानी) 223

88. अमृता शेरगिल की पौर्वात्य एवं पाश्चात्य कृतियों का मनोवैज्ञानिक कलात्मक रूप (करूणा) 227

(Music / संगीत)

89. मध्यकाल में अवन्तिका की सांगीतिक परम्परा में कालिदास का योगदान (डॉ. कमलेश राठौर) 230

(Education / शिक्षा)

90. गरीब एवं वंचित वर्ग के बालकों के निजी विद्यालयों में प्रवेश संबंधी (आर.टी.ई- RTE) अधिनियम के 232
क्रियान्वयन से संबंधित समस्याओं का अध्ययन (नीलिमा पहारे)

91. बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये प्रोत्साहन योजनाओं की भूमिका (बालेन्द्र श्रीवास्तव, डॉ. एम. के. तिवारी) 235

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

92. A Comparative Study Of Locus Of Control And Personality Characteristics Of 237
Residential And Non Residential Schools Of Udaipur Region (Seema Gurjar, Gajender Sharma)

(Law/ विधि)

93. The Right to Life of Foetus (Dr. Narendra Sharma) 240

94. पर्यावरण संरक्षण के विधिक प्रावधानों के क्रियान्वयन का परिदृष्य एवं सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका- 243
(पोषणीय विकास की अवधारणा के क्रियान्वयन के विशेष संदर्भ में) (डॉ. रश्मि शर्मा)

95. महिला (पीड़ित) को दिए जाने वाले प्रतिकर से संबंधित विधिक प्रावधान - म.प्र. अपराध पीड़ित प्रतिकर योजना 246
2015 के विशेष संदर्भ में (कृष्ण वल्लभ विश्वकर्मा)

(Others / अन्य)

96. राजस्थानी हरजस (हरियश) में वैदिक, पौराणिक एवं भक्तिकालीन प्रभाव (डॉ. विनीता कौशिक) 249

97. छायानादोत्तर नारी की स्वाधीनता और दयानन्द दिनकर द्विवेदी (दत्तात्रेय गौतम) 253

98. राजस्थान की हिन्दी-कहानी : विकास यात्रा भाग - 5 (डॉ. राजकुमार चौधरी) 257

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू ..... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमौंडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू ..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव .....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत .....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन .....पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी .....प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय .....प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल .....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर .....प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र .....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट .....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा .....पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान .....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड .....संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी.....अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल .....अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे.....संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी .....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव .....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा .....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव .....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा ..... प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन .....प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. किशन यादव .....एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया .....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. नत्थरलाल गुप्ता .....अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम .....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता .....प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

****** विज्ञान संकाय ******

गणित:- .... (1) **प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(2) **प्रो.डॉ. नीरज दुबे,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... (1) **प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... (1) **प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(2) **प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... (1) **प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. अमृता खत्री,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... (1) **डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सुयश कुमार,** शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... (1) **डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:- .... (1) **अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

****** वाणिज्य संकाय ******

वाणिज्य :- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल ,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल,** शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

****** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ******

प्रबंध :- .... (1) **प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी ,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... (1) **प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... (1) **प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

****** विधि संकाय ******

विधि:- .... (1) **प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन,** प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

****** कला संकाय ******

अर्थशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा,** शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. अंजना जैन,** एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... (1) **प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अनिल जैन,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा,** मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:- ..... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:- ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:- ..... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:- ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:- ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:- ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:- ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:- ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:- ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:- .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:- ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:- ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत .....ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर .....शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी .....शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन .....शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा .....कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित .....जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार .....शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा .....शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक .....शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान .....शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान .....शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र .....शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन .....शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान .....शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित .....शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी .....शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी .....स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े .....शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित .....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता .....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना .....शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे .....पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी .....आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी .....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट .....शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद .....शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर .....सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल .....शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया .....शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी .....शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी .....महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा .....श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव .....शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे .....शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान .....शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर .....शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार .....शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश .....शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव .....सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी .....शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे.....शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी .....शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल.....शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल.....शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन .....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे .....शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा.....शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव .....शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला .....शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया .....शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल.....शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल.....शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान .....शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा.....शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा .....शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी .....शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान .....शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर .....शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा .....पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश .....शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे.....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित.....छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा .....एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री .....सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला .....शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. अपराजीता भार्गव .....अध्यापक ,आर. डी. पब्लिक स्कूल, बैतूल (म.प्र.) भारत
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई .....शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन.....वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ .....राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख .....एस.एस.जी. पारीख स्नातकोत्तर कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा.....पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया.....हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह .....केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल .....शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(96) प्रो. डॉ. कविता भदौरिया .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Ecophysiological study of medicinal plant *Cyathocline purpurea*

S.C Mehta * S.S Rawat **

Abstract - *Cyathocline purpurea* is an erect, strongly aromatic, glandular hairy annual or biennial short day plant. It is belongs to family Asteraceae. This plant gets *Physiological* maturities approximately in 6 month time period. Plants seed germinate in between august to September. Germinated seed after seedling attain 1.50 to 2.00 feet height during the growth period. Approximate growth and time schedule can be measured as vegetative, flowering and fruiting stages. The mean of the reading is considered for analysis. The maximum biomass of the plants is 20.4 g/ m^2 were observed in the flowering stage. The average density of these plants is 02 plants/m^2.
Key words - *Short day plant, seed germination, growth, biomass, density, Asteraceae.*

Introduction - *Cyathocline purpurea* is a strong aromatic, rare Indian medicinal plant. As the plant has a rare existence so it is not popular among the local inhabitants (Guoyi M *et al.,* 2009). Its vernacular name is Phultar and Mukki, regional name Jangli Dhaniya. The roots of *Cyathocline purpurea* are reported used to relieve stomach pains (Joshi R 2013). Some tribal's of Ratlam District, give the plant extract of twice per day with water to their cattle for removing the intestinal worms for two weeks. Dried leaves of powder are given 10gm with 250ml milk twice a day for 3weeks in the cases of anthelmintic activity against tapeworms. Extract of root and leaves is given in intermittent fever and jaundice, leaf juice and goat milk with mixed and applied externally in case of skin disease. *Cyathocline purpurea* are found in Ratlam district of Madhya Pradesh. It is a rare species which is found with *Blumea, Xanthium*, and *Sphaeranthus* species. These species shows some characteristics feature, they share common season, and climate. By the changing environment particular this species pushes near extinction state. It has the only two species *Cyathocline purpurea* and *Cyathocline lyrata* are found in Madhya Pradesh. For its conservation purpose necessary to preserve its natural resources and more over its medicinal value should be highlighted among the people so they can also involve is there conservation.

Material and Method - In this head, a study in selected area were carried out from December 2015 to august 2016 in different tribal inhabited of Ratlam district. Ratlam was the part of central India in 1946. After the independence of India, Ratlam district which is created in 1 November 1956 under it has been incorporate in Madhya Pradesh. The city of Ratlam lies 480 meters (1,575 feet) above sea level. There are Bhils, Bhilalas and Patidar are the main inhabitants of different villages of the district. These primitive people more or less use many common and uncommon local plants for the treatment of their routine ailments and various diseases.

The study sites of the district Ratlam were visited for the collection of plants in each season of the year. Field study in the tribal areas gives first hand information for these purpose extensive field trips were organized for collecting the plant species and data using an integrated approach of botanical collections group discussions, interviews and questionnaires. In Bhil tribe or in a village, normally there is a one elder person familiar with the surrounding plant he is a local physician and a very resourceful person who is called as Badwa, Babjees or Bhopa are the traditional rural medicine men or herbal practitioner of the tribe. This person was contacted for collecting information about ethnomedicinal plant. With an intension to give them the credit of their knowledge, Shankar Ba shahab patidar from Rupakheda, Nathu Lal and prakash nagdiya from Sejawta, Bal want Singh chouhan from Bajna, Mukesh khanguda from Sailna, the Bhopa and knowledgeable people were taken to the collect data and were recorded in the field book. Voucher specimens were collected for authentication of information and future reference. The collection of information on these plants was also including in the proposed work. Herbarium specimens prepared following the standard method (Jain & Rao 1978), and have been deposited in the herbarium cabinet of Botany Department Govt. arts & science college Ratlam (M.P) accordance with the guidelines supplied by (Martin 2008). Herbarium specimens were identified with the help of standard floras (Duthie 1903-29, Hookar 1872-1894, Maheshwari 1963), (Mudgal *et al*., 1997), (Oommachan 1977), (Singh *et al*., 2001), (Verma *et al*., 1993). The research work done on some medicinal plants with there are some

* Professor (Botany) Govt. Bhagat Singh P.G. College, Jaora, District Ratlam (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Govt. P.G. College, Sailana, District Ratlam (M.P.) INDIA

basic information such as botanical name, name of family vernacular and regional name, seed germination and growth, flowering & fruiting period, plant parts used, habitat ecology, regeneration and distribution in the study area also given.

Cyathocline purpurea is an erect, glandular hairy annual short day plant. Physiological maturities of these plants approximately 6 months are taken. Plant seed germinate in between august to September. The seed germination was observed daily and the data on daily seed germination was collected until the completion of germination (maximum up to 30 days). The seed with 0.5mm or more radical growth occur were counted as germinated seeds. The final germination percentage was calculated from the total seeds that germinated on the day of completion. We counted germinated seeds and its percentage was determined by Maguire equation (1962)

GP = Ni / N × 100, where Ni number of germinated seed in each day, N= total number of seeds. Results of data statistical analysis had been shown in table 3.3. Germinated seed after seedling 1.50 to 2.00 feet height again during the growth period. Approximate growth can be measure vegetative, flowering and fruiting stages time schedule. The total dry matter production was recorded at three different stages from seedling up to harvest by selected plants each time and average dry matter production plant^{-1} was worked out. This was multiplied by the average number of plants per m^2 to obtain the dry matter production per m^2.

Seeds of these herbaceous plant are very small, these seeds germinates in post rainy season specially it is grow after rainy season in between august - September month inoculation period of this seeds 2-6, weeks. It is depend upon the nature of seeds, it is viable up to one year. Many seeds exhibit dormancy and fail to germinate ever in favorable conditions. Seed germination is influenced by internal factors controlling dormancy including phytohormones inducing dormancy, and seed coat factors (Baskin and Baskin 1998; Holds worth *et al* 2008; Linkies and leubner-Metzger 2012). Depending on the plants species and type of dormancy, various method likes scarification, stratification, removal of inhibitors and treatment with growth regulators are used to break dormancy (Baskin and Baskin 1998; Hidayati et al 2012).

Observation:

Table 3.1,3.2 & 3.3 (See in next page)

Result and discussion - *Cyathocline purpurea* is a strongly aromatic, rare Indian medicinal plant. It is belongs to family *Asteraceae*, commonly found in moist habitats such as along watercourses and in rice fields. In Ratlam district, it is found to grown in Sailina and Bajna where bare land or uncultivated land rich is focus. Seed germination of this plant was observed in post rainy season, plant growth were measure in vegetative, flowering and fruiting stages. The maximum Biomass was recorded of this plant is flowering stage 19.9g/m^2. Density of this plant was calculated in study area. The maximum density 02plants/m^2 was recorded in Sailana region. The control over the growth, reproduction, survival, abundance and geographical distribution of this plant are affected by interactions between plants with their physical, chemical and biotic environment. It is used for medicinal purpose there for it need complete attention for its conservation. People should aware of its medicinal values (Ghimire SK et al., 2001). If the present environmental scenario going on continuous. This species would be soon extinct in this particular habitat.

References :-

1. Aainsworth Eliza; Stephen long February verafer 2005,What have We Learned from 15 years of free-air Co_2 Enrichment (FACE)?" (http://www.j. 1469- 8137. 2004.
2. Aldhous JR (1972) nursery practices, forestry, commission bulletin number-43, page Bro Lted, London 184 pp.
3. Baskin JM Baskin CC (1998) seeds ecology, biogeography and evaluation of dormancy and germination, academic press, New York USA.
4. Duthie, J. F. Flora of the upper Gangetic plain and of the adjacent siwalik and sub Himalayan tracts, vols. 1-3. Calcutta, 1903-29.
5. Ghimire SK, Lama YC, Tripathi GR, Schmitt S & Aumeeruddy-Thomas Y (2001) Conservation of plant resources, community development and training in applied ethnobotany at Shey-Phoksudo National park and its buffer zone, Dolpa. WWF Nepal Program, Report Series No. 41, Kathmandu, Nepal.
6. Hidayati SN Walck JL, Merritt DJ, Turner SR, Turner DW, Dixon KW (2012) Sympatric species of Hibbertia (Dilleniaceae) varies in dormancy break and germination requirements: Implications for classifying morphophysiological dormancy in Mediterranean biomes. Annals of Botany 109, 1111-1123.
7. Holds worth MJ, Bent sink L, Soppe WJJ (2008) molecular networks regnlating Arabidopsis seed maturation, after ripening, dormancy and germination, New phytologist 179, 33-54.
8. Joshi R. Chemical Constituents and antibacterial property of the essential oil of the roots of *Cyathocline purpurea*. J Ethnopharmacol 2013; 145: 621-625.
9. Maguire ID. 1962. Speed of germination – Aid in selection and evolution for seedling emergence and vigor. *Crop Sci.*, **2,** 176-177.
10. Maheshwari, J.K. A contribution to the flora of kanha National Park, M.P. Bull. Bot. Surv. India 5: 117-140. 1963.
11. Martin, G.J (2008) In 'Ethnobotany' a methods manual, Publi. Earth Scan, UK.
12. Oommachan M.The flora of Bhopal. Bhopal, 1977.

Table 3.1 : Plant growth (g/m²)

S.	Name of plants	Biomass (g/m²) of Vegetative stage	Biomass g/m²) of Flowering stage	Biomass (g/m²) of Fruiting stage
1.	*Cyathocline purpurea*	12.9	19.9	19.1

Table 3.2 : Plants height (cm) of the different species taken at 30 days intervals from seedling to harvesting stages

Plants Name	30 Days.	60 Days.	90 Days.	120 Days.	150 Days.	180 Days.
C. *purpurea,*	05.3	15.4	40.9	51.2	55.7	58.7

Where C= *Cyathocline,*

Table 3.3 : % of seed germination of each selected plants species

S.	Name of species	Germination period	% of Germination
1.	*Cyathocline purpurea*	2-6 week	70

****

Luminescence Studies of Nanocrystalline Films of Cadmium Sulphide Nanocrystals

Dr. U.S.Patle *

Abstract - CdS Nanocrystals films have been prepared on glass substrate by chemical bath deposition method. Their absorption spectra and photoluminescence have been studied. Absorption indicates increased forbidden band gap due to quantum confinement. Two PL peaks have been observed at energies lower than effective band gap. Peak A near 680 nm and peak B near 920 nm. Both the peaks shift towards blue by decreasing the crystal size. The results are explained by considering that the energy levels are produced within the band gap by surface states and due to excess Cd, and only the density of surface states increases by reducing the particle size.

Introduction - The change in the properties of nanoparticles are driven mainly by two factors, namely the increase in the surface to volume ratio and drastic changes in the electronic structure of the materials due to quantum confinement effects with decreasing particle size. Very often it is an interplay of these two effects that is responsible for the change in the properties [1]. Recent reports suggest that nanoparticles can be used to produce light of various colors by band gap tuning using particle size effects [2]. Experimental evidence for QSE was obtained by Ekimov and Onushchenko [3] for microcrystalline CuCl and CdS dispersed in a silicate glass. A blue shift in the absorption threshold and exitonic confinement effect resulted in theoretical development in these areas by Efros and Efros [4]. In the present work, films of CdS nanocrystals of different sizes have been prepared by chemical method and their optical absorption and PL have been investigated.

Experimental - Films of CdS nanocrystals were deposited on glass substrate using chemical precipitation technique as described by Nanda et.al. [6]. The absorption spectra of the samples in UV-VIS region were recorded with the help of Perkin Elimer Lemda-12 spectrometer in the wavelength range from 300 to 700 nm. The PL of the samples was investigated using grating monochromator HM 104 and photomultiplier tube RCA-931 and PL intensity was measured in the range 400 to 1000 nm.

Results And Discussion - The particle sizes of the samples obtained by various dipping times were estimated by SEM results in Table I. It is observed that the particle size increases with the dipping time. Fig.2 shows a typical absorption spectrum of CdS nanocrystalline film for deposition time of 20 minutes. The absorption edge is obtained at 382 nm revealing that band gap is 3.25 eV. It is greater than band gap of bulk CdS (2.4eV) by 0.85 eV indicating quantum confinement effect.

The PL studies of the CdS films show two emission-peaks at energies lower than band gap (Fig.3). Result shown in Table I. It is observed that the intensity of band A increases as the particle size is decreased, whereas that of band B remains practically the same. Slight blue shift is seen in both the bands with decreasing crystallite size. The variation of particle size and shifting of PL peaks with the deposition time are shown in Fig.4. It can be seen that the blue shift in both the PL peaks A and B is nearly same. Narrow peaks clearly indicate narrow size distribution of nanocrystals. The blue shift by about 0.06 eV in both the peaks by decreasing particle size can be understood by considering downward shift of valence band edge due to QSE.

References :-

1. S.A. Majetich and A.C. Karter, J. Phys. Chem. 97, (1993) 8727,
2. S.N. Sahu, and K.K. Nanda, PINSA, 67, A, 1 (2001) 103
3. A. L. Ekimov and A. A.Omshchenko JEPT Lett., 40 (1984) 1136.
4. A. L. Efross and A.L. Efros Sov. Phys. semiconductor 16,722, (1982).
5. Yhan Chih Chu, Chen Chien Wang, Yao Hui Haung and Chuh Yung Chen; Nanotechnology 16, (2005). 376.
6. K,K,Nanda, S.N.Sarangi, S.Mohanty and S.N.Sahu; Thin Solid Films; 322, (1998) 21-27.

* Department of Physics, Govt. Narmada P.G. College, Hoshangabad (M.P.) INDIA

Table –I: PL of CdS Nanocrystalline Films

S.	Sample	Deposition Time (min)	Crystal Size (nm)	PL Peak A		PL Peak B	
				Intensity (a.u.)	λ (nm) (a.u.)	Intensity	λ (nm)
1	I	20	21	120	670	100	903
2	II	30	26	80	680	100	911
3	III	40	31	50	685	97	923
4	IV	60	88	75	695	100	940

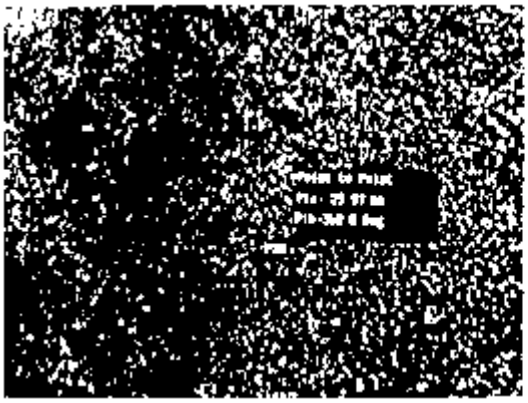

Fig.1 SEM of CdS

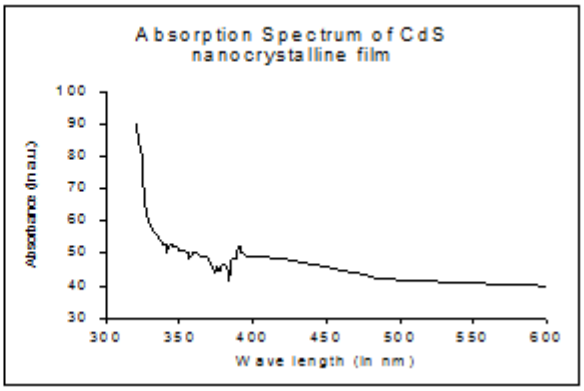

Fig.2 Absorption Spectrum of

Fig. 3 Photoluminescence Spectra of Films of CdS Nanocrystals of Various sizes

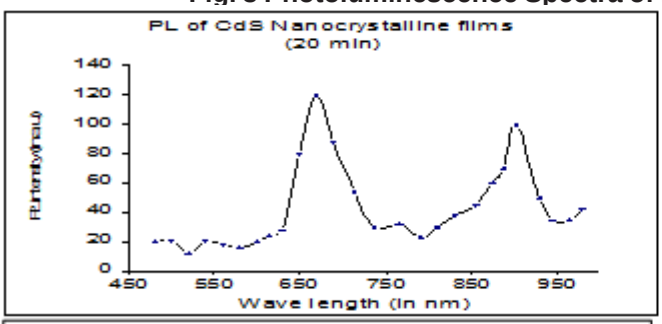

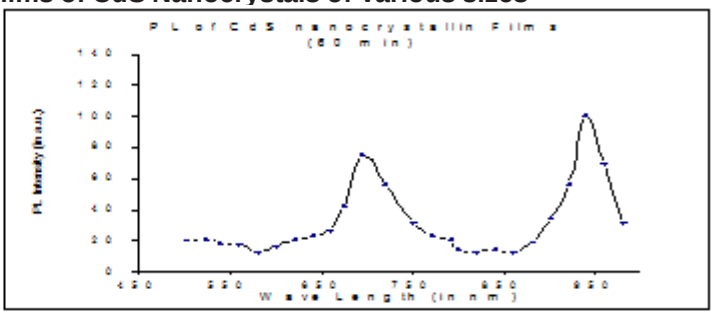

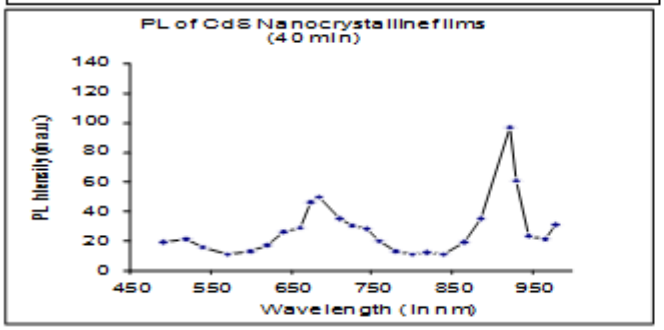

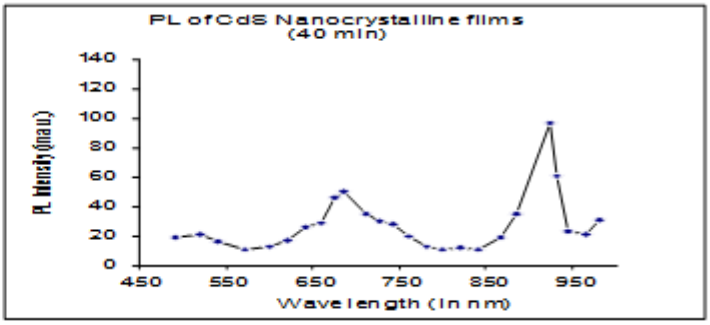

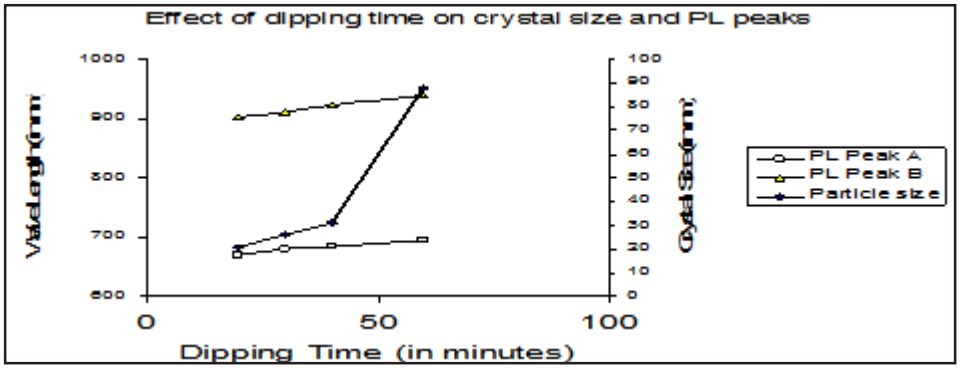

Fig. 4 Variation of particle size and shifting Nanocrystalline Film CdS Nanocrystalline Film of PL peaks with deposition time

BLASTing Flu Season 2105-2016

N. Khurana *

Abstract - As the monsoon advances further into the Indian mainland, the bulk of the country, barring the far north, is staring at the onset of influenza season. Influenza is a viral infection that affects mainly the nose, throat, bronchi and, occasionally, lungs. Infection usually lasts for about a week, and is characterized by sudden onset of high fever, aching muscles, headache and severe malaise. An annual seasonal flu vaccine (either the flu shot or the nasal spray flu vaccine) is the best way to reduce the chances that you will get seasonal flu and spread it to others. Flu vaccines cause antibodies to develop in the body about two weeks after vaccination. These antibodies provide protection against infection with the viruses that are in the vaccine. The seasonal flu vaccine protects against the influenza viruses that research indicates will be most common during the upcoming season. Traditional flu vaccines (called "trivalent" vaccines) are made to protect against three flu viruses; an influenza A (H1N1) virus, an influenza A (H3N2) virus, and an influenza B virus. There are also flu vaccines made to protect against four flu viruses (called "quadrivalent" vaccines). These vaccines protect against the same viruses as the trivalent vaccine and an additional B virus. To make the influenza vaccine, gene fragments that encode the H and N viral surface proteins are used from each strain. For the vaccine to give a person good protection against the virus, the **protein sequences** for the H and N proteins that are used in the vaccine should closely match the sequences in the strains the person may be exposed to. Every February, the World Health Organization (WHO), based on the analysis of various laboratories across the globe, will decide what influenza virus strains to include in the vaccine for the new year. A powerful Internet-based bioinformatics tool for aligning sequences is **BLAST**, which stands for Basic Local Alignment Search Tool. It aligns your query sequence of interest to a collection of sequences stored in the database, or to a specific second sequence you are interested in. It compares the results, telling you which sequences or segments are similar to your query sequence. This research aims to use blast tool along with flu databases to find out whether this year vaccine is effective or not.
Keywords - BLAST, influenza, vaccine, flu database.

Introduction - Influenza, commonly known as the flu, is caused by a **virus** that attacks the upper respiratory tract (i.e., the nose, the throat and the lungs). Cold and dry weather allows the virus to survive longer outside the body than in warm weather. There are three **types of influenza virus**: A, B and C. Type A can infect humans, other mammals and birds and can spread fast and affect many people. Types B and C affect only humans and type C causes only a mild infection. Influenza type A viruses are sub-typed into two categories based on proteins, specifically the proteins *hemagglutinin* and *neuraminidase*, on the surface of the virus. The virus uses the hemagglutinin protein (often abbreviated "H" or "HA") to latch on to the host's cell and uses the neuramidase protein (often abbreviated "N" or "NA") to spread the infection. Types A and B viruses continually evolve genetically, with changes being made to the *amino acid sequence* of the H and N proteins. Since hosts recognize the H and N **surface proteins** to identify and attack the virus, by changing these proteins a little bit the virus prevents the hosts from enjoying any prolonged protection against the virus.

When a person is vaccinated with the influenza **vaccine**, it should stimulate a protective immune response, particularly against the viral surface proteins in the viral strains used to make the specific vaccine. The influenza vaccine typically contains three **virus strains**, two are subtypes of type A and one is of type B. Type C is not included in the vaccine because it only causes a mild illness and does not lead to **epidemics**. To make the influenza vaccine, gene fragments that encode the H and N viral surface proteins are used from each strain. For the vaccine to give a person good protection against the virus, the **protein sequences** for the H and N proteins that are used in the vaccine should closely match the sequences in the strains the person may be exposed to. Every February, the World Health Organization (WHO), based on the analysis of various laboratories across the globe, will decide what influenza virus strains to include in the vaccine for the new year. A powerful Internet-based bioinformatics tool for aligning sequences is **BLAST**, which stands for Basic Local Alignment Search Tool. It aligns your query sequence of interest to a collection of sequences stored in the database, or to a specific second sequence you are interested in. It compares the results, telling you which sequences or segments are similar to your query sequence.

***Dept. Of Biotechnology, Holkar Science College, Indore (M.P.) INDIA**

All else being equal, we would expect that a strong match between the protein sequences for the H and/or N proteins used in the vaccine virus and the corresponding sequences in the "wild" virus to result in good protection against that virus. On the other hand, a poor match would result in weak protection against the virus.

All of the 2015-2016 influenza vaccine is made to protect against the following three viruses:

1. an A/California/7/2009 (H1N1)pdm09-like virus
2. an A/Switzerland/9715293/2013 (H3N2)-like virus
3. a B/Phuket/3073/2013-like virus. (This is a B/Yamagata lineage virus)

Some of the 2015-2016 flu vaccine is quadrivalent vaccine and also protects against an additional B virus (B/Brisbane/60/2008-like virus). This is a B/Victoria lineage virus.

Method - Gone to the Flu Activity & Surveillance webpage at The U.S. Centers for Disease Control and Prevention (CDC) Selected the influenza season 2015-16,found information about the 2015–2016 vaccine. For 2015–16, U.S.-licensed trivalent influenza vaccines will contain hemagglutinin (HA) derived from an A/California/7/2009 (H1N1)-like virus, an A/Switzerland/9715293/2013 (H3N2)-like virus, and a B/Phuket/3073/2013-like (Yamagata lineage) virus. This represents changes in the influenza A (H3N2) virus and the influenza B virus as compared with the 2014–15 season. Quadrivalent influenza vaccines will contain these vaccine viruses, and a B/Brisbane/60/2008-like (Victoria lineage) virus, which is the same Victoria lineage virus recommended for quadrivalent formulations in 2013–14 and 2014–15 .Taken the strain A/Switzerland/9715293/2013 (H3N2) virus and blast it at NCBI site.

Result And Discussion - THE strain was found to show similarity with the following viral strains.

1. Chain A, Structure Of Influenza A Neutralizing Antibody Selected From Cultures Of Single Human Plasma Cells In Complex With Human H3 Influenza Haemagglutinin
2. Chain A, Refinement Of The Influenza Virus Hemagglutinin By Simulated Annealing
3. Chain A, Crystal Structure Of A Influenza A Virus (AAICHI21968 H3N2) Hemagglutinin In C2 Space Group
4. Chain A, Refinement Of The Influenza Virus Hemagglutinin By Simulated Annealing
5. Chain A, Influenza Virus Hemagglutinin
6. Chain A, Refinement Of The Influenza Virus Hemagglutinin By Simulated Annealing
7. Chain A, Binding Of Influenza Virus Hemagglutinin To Analogs Of Its Cell- Surface Receptor, Sialic Acid: Analysis By Proton Nuclear Magnetic Resonance Spectroscopy And X-Ray Crystallography
8. Chain A, Hemagglutinin Precursor Ha0
9. Chain A, A New Conserved Neutralizing Epitope At The Globular Head Of Hemagglutinin In H3n2 Influenza Viruses
10. Chain A, Structure Of Influenza Haemagglutinin In Complex With An Inhibitor Of Membrane Fusion
11. Chain A, The Crystal Structure Of Hemagglutinin From 1968 H3n2 Influenza Virus
12. Chain A, Crystal Structure Of A Neutralizing Human Monoclonal Antibody With 1968 H3 Ha
13. Chain A, Crystal Structure Of Broadly Neutralizing Antibody Cr8020 Bound To The Influenza A H3 Hemagglutinin
14. Chain A, Crystal Structure Of The A/hong Kong/1/1968 (h3n2) Influenza Virus Hemagglutinin Ha1 Cys30, Ha2 Cys47 Mutant
15. Chain A, Bha Of Ukr63
16. Chain A, The Crystal Structure Of Hemagglutinin From A/port Chalmers/1/1973 Influenza Virus
17. Chain A, The Crystal Structure Of Hemagglutinin From A H3n8 Influenza Virus Isolated From New England Harbor Seals
18. Chain A, Crystal Structure Of Heterosubtypic Fab S1391 IN COMPLEX WITH Influenza A H3 Hemagglutinin
19. Chain A, Crystal Structure Of Broadly Neutralizing Antibody F045-092 In Complex With A/victoria/3/1975 (h3n2) Influenza Hemagglutinin
20. Chain A, Structure Of The A_equine_newmarket_2_93 H3 Haemagglutinin In Complex With 6so4-3sln
21. Chain A, Structure Of The A_equine_newmarket_2_93 H3 Haemagglutinin
22. Chain A, Structure Of The A_equine_richmond_07 H3 Haemagglutinin Mutant Ser30thr
23. Chain A, Structure Of The A_equine_richmond_07 H3 Haemagglutinin
24. Chain C, Influenza Virus Hemagglutinin, (Escape) Mutant With Thr 131 Replaced By Ile, Complexed With A Neutralizing Antibody
25. Chain A, Structure Of The A_canine_colorado_17864_06 H3 Haemagglutinin Ser30thr Mutant
26. Chain A, Structure Of The A_canine_colorado_17864_06 H3 Haemagglutinin Met29ile Mutant
27. Chain A, Structure Of The A_canine_colorado_17864_06 H3 Haemagglutinin
28. Chain C, Influenza Virus Hemagglutinin Complexed With A Neutralizing Antibody
29. Chain C, Influenza Virus Hemagglutinin, Mutant With Thr 155 Replaced By Ile, Complexed With A Neutralizing Antibody
30. Chain A, Haemagglutinin Of 2004 Human H3n2 Virus
31. Chain A, Haemagglutinin Of 2005 Human H3n2 Virus
32. Chain A, The Crystal Structure Of Hemagglutinin Of Influenza Virus A/victoria/361/2011
33. Chain A, Crystal Structure Of Broadly Neutralizing Antibody C05 Bound To H3 Influenza Hemagglutinin, Ha1 Subunit
34. Chain A, Crystal Structure Of Fab 39.29 In Complex With Influenza Hemagglutinin A/perth/16/2009 (h3n2)
35. Chain A, Crystal Structure Of Broadly Neutralizing Antibody F045-092 In Complex With A/victoria/361/2011 (h3n2) Influenza Hemagglutinin

36. Chain A, The Crystal Structure Of Hemagglutinin Ha1 Domain From Influenza Virus A/perth/142/2007(h3n2)
37. Chain A, Structure And Receptor Binding Preferences Of Recombinant Human A(h3n2) Virus Hemagglutinins
38. Chain A, Structure Of Influenza Haemagglutinin In Complex With An Inhibitor Of Membrane Fusion
39. Chain A, Structure Of The A_mallard_sweden_51_2002 H10 Avian Haemmaglutinin In Complex With Avian Receptor Analog Lsta
40. Chain A, Structure Of The A_mallard_sweden_51_2002 H10 Avian Haemmaglutinin
41. Chain A, Structure Of H10 From Human-infecting H10n8
42. Chain A, Human-infecting H10n8 Influenza Virus Retains Strong Preference For Avian-type Receptors
43. Chain A, Haemagglutinin Of H10n8 Influenza Virus Isolated From Humans In Complex With Human Receptor Analogue 6'sln
44. Chain A, The Crystal Structure Of Hemagglutinin From A/jiangxi-donghu/346/2013 Influenza Virus
45. Chain A, The Crystal Structure Of Hemagglutinin From A/green-winged Teal/texas/y171/2006 Influenza Virus
46. Chain A, H7 Haemagglutinin
47. Chain A, Structure Of The Hemagglutinin From A Highly Pathogenic H7n7 Influenza Virus
48. Chain A, Structure Of Medi8852 Fab Fragment In Complex With H7 Ha
49. Chain A, Crystal Structure Of An H7n3 Avian Influenza Virus Haemagglutinin
50. Chain A, The Structure Of Hemagglutinin From Avian-origin H7n9 Influenza Virus
51. Chain A, Human H7n9 Influenza Virus Haemagglutinin In Complex With Human Receptor Analogue Lstc
52. Chain A, Crystal Structure Of Fab H7.167 In Complex With Influenza Virus Hemagglutinin From A/shanghai/02/2013 (h7n9)
53. Chain A, The Crystal Structure Of Hemagglutinin From A H7n9 Influenza Virus (a/shanghai/2/2013) In Complex With Lstb
54. Chain A, Crystal Structure Of Broadly Neutralizing Antibody Cr9114 Bound To H7 Influenza Hemagglutinin
55. Chain A, The Structure Of Hemagglutinin L226q Mutant From A Avian-origin H7n9 Influenza Virus (a/anhui/1/2013)
56. Chain A, Crystal Structure Of A H7 Influenza Virus Hemagglutinin
57. Chain A, Crystal Structure Of The Haemagglutinin (with Asn-133 Glycosylation) From An H7n9 Influenza Virus Isolated From Humans
58. Chain A, Crystal Structure Of The "avianized" 1918 Influenza Virus Hemagglutinin
59. Chain A, The Structure Of Hemagglutinin From Avian-origin H7n9 Influenza Virus (a/shanghai/1/2013)
60. Chain A, The Crystal Structure Of Hemagglutinin Form A H7n9 Influenza Virus (a/shanghai/1/2013) In Complex With Lstb
61. Chain H, 1930 Swine H1 Hemagglutinin Complexed With Lsta
62. Chain H, 1930 H1 Hemagglutinin In Complex With Lstc
63. Chain H, Structure Of H1 Duck Albert Hemagglutinin With Human Receptor
64. Chain A, Crystal Structure Of Fab Cr6261 In Complex With The 1918 H1n1 Influenza Virus Hemagglutinin
65. Chain A, Crystal Sructure Of The 1918 Human H1 Hemagglutinin Precursor (Ha0)
66. Chain A, Crystal Structure Of 1918 Pandemic Influenza Virus Hemagglutinin Mutant D225g
67. Chain H, Structure Of H1 1918 Hemagglutinin With Human Receptor
68. Chain A, Crystal Structure Of H5 Hemagglutinin Mutant (n224k, Q226l, N158d And L133a Deletion) From The Influenza Virus A/chicken/vietnam/ncvd- 093/2008 (h5n1)
69. Chain A, Crystal Structure Of A Complex Formed Between Fld194 Fab And Transmissible Mutant H5 Haemagglutinin
70. Chain A, Crystal Structure Of The Haemagglutinin From A Transmissible Mutant H5 Influenza Virus
71. Chain A, Crystal Structure Of H5 Hemagglutinin Mutant (n158d, N224k And Q226l) From The Influenza Virus A/viet Nam/1203/2004 (h5n1)
72. Chain A, Crystal Structure Of H5 (vn1194) Asn186lys/gly143arg Mutant Haemagglutinin
73. Chain A, Crystal Structure Of H5 (vn1194) Influenza Haemagglutinin
74. Chain A, H5 (vn1194) Asn186lys Mutant Haemagglutinin In Complex With Avian Receptor Analogue 3'sln
75. Chain A, Crystal Structure Of H5 (vn1194) Gln196arg Mutant Haemagglutinin
76. Chain H, 1918 H1 Hemagglutinin
77. Chain A, Crystal Structure Of Fab H5m9 In Complex With Influenza Virus Hemagglutinin From A/goose/guangdong/1/96 (h5n1)
78. Chain A, Crystal Structure Of H5 Hemagglutinin Q226l Mutant From The Influenza Virus A/duck/egypt/10185ss/2010 (h5n1)
79. Chain A, Crystal Structure Of Aerosol Transmissible Influenza H5 Hemagglutinin Mutant (n158d, N224k, Q226l And T318i) From The Influenza Virus A/viet Nam/1203/2004 (h5n1)
80. Chain A, Crystal Structure Of H5 (vn1194) Ser227asn/gln196arg Gln196arg Mutant Haemagglutinin
81. Chain A, Crystal Structure Of The Hemagglutinin From A H1n1pdm A/washington/5/2011 Virus
82. Chain E, Influenza Virus (vn1194) H5 Ha With Lstc
83. Chain A, Crystal Structure Of H5 (tyty) Del133/ile155thr Mutant Haemagglutinin
84. Chain H, 1930 Swine H1 Hemagglutinin
85. Chain A, Crystal Structure Of A H5n1 Influenza Virus Hemagglutinin
86. Chain A, Crystal Structure Of Influenza Hemagglutinin (H5) In Complex With A Broadly Neutralizing Antibody F10

87. Chain A, Crystal Structure Of H5n1 Influenza Virus Hemagglutinin, Strain 437-10
88. Chain A, Influenza Hemagglutinin In Complex With A Neutralizing Antibody
89. Chain A, Structures Of Monomeric Hemagglutinin And Its Complex With An Fab Fragment Of A Neutralizing Antibody That Binds To H1 Subtype Influenza Viruses: Molecular Basis Of Infectivity Of 2009 Pandemic H1n1 Influenza A Viruses
90. Chain A, Structures Of Monomeric Hemagglutinin And Its Complex With An Fab Fragment Of A Neutralizing Antibody That Binds To H1 Subtype Influenza Viruses: Molecular Basis Of Infectivity Of 2009 Pandemic H1n1 Influenza A Viruses
91. Chain E, Influenza Virus (vn1194) H5 Ha A138v Mutant With Lsta
92. Chain A, Crystal Structure Of H1n1pdm Hemagglutinin
93. Chain A, Influenza Virus (Vn1194) H5 Ha
94. Chain E, Influenza Virus (vn1194) H5 Ha With Lsta
95. Chain A, Crystal Structure Of The Hemagglutinin Of Ferret-transmissible H5n1 Virus
96. Chain A, Structure Of A/egypt/n03072/2010 H5 Ha
97. Chain A, Structure Of Avian H5 Haemagglutinin Complexed With Lsta Receptro Analog
98. Chain A, Crystal Structure Of H5n1 Influenza Virus Hemagglutinin, Strain Yu562 .
99. Chain A, The Hemagglutinin Structure

Therefore the flu vaccine was found to be highly effective.

References :-

1. National Center for Biotechnology Information http://www.ncbi.nlm.nih.gov/genbank
2. Centers for Disease Control and Prevention (CDC). *Selecting the Viruses in the Influenza (Flu) Vaccine.* http://www.cdc.gov/flu/professionals/vaccination/virusqa.htm
3. http://www.ncbi.nlm.nih.gov/
4. http://www.ncbi.nlm.nih.gov/genomes/FLU/growth.html
5. *Flu Activity & Surveillance.* http://www.cdc.gov/flu/weekly/fluactivitysurv.htm

****

Ethnobotanical some plants used for Dental disorders by Tribal's of Dhar district, (M.P.) India

Dr. K.S. Alawa * Dr. N.S. Dawar **

Abstract - The present study was carried out of documents on Ethnobotanical knowledge of plants ofdistrict Dhar, Madhya Pradesh used for dental care as the area has diverse flora and high Ethnobotanical potential. The paper deals with communicates first-hand information on 19 plant species belonging to 19 genera and 15 families are used for dental disorder. The information is based on an Ethnobotanical field study of the district during 2014 to 2016.
Key Words - Dhar district, Dental disorder, Ethnobotanical plants, Tribal's, Madhya Pradesh.

Introduction - Dhar district is situated in the south-western part of Madhya Pradesh. The district lies between the latitude of 22º 00 to23º 10North and longitude of 74º 28 to 75º 42 East. Dhar is known as tribal district due to dense population of tribal. About 83.93 percent of total population of the district belongs to tribal respectively. The tribal communities like Bhil, Bhilala, Barela and Pateliya are inhabitating in the study area.All these tribal communities used plants for curing dental disorder.

The mouth is a mirror that can reflect the health of the rest of your body in there is a connection between oral health and general health. The tribal people depend much upon forest for various daily needs plants used for many diseases and for dental disorder. According to the survey over 90 percent were unconcerned about curing dental problem. Due to the increasing demand for herbal remedies as these have no side effects and sure eco-friendly, the present study has been undertaken in relation to dental disorder. Literature survey of Ethnobotanical work was done (Rawat et al., 2010, Jain, 1991, Rao. et al, 1996, Jain 2004, Khan et al. 2008, Jadhav2011, Srivastava, 1985, Wagh et al.2010). The present communication given results of Ethnobotanical survey done in south western part of Madhya Pradesh.

Materials And Methods - During the present work I had visited various villages and forests area. Field study was carried out during 2014 to 2016. Ethnobotanical explorations were carried out in the study area several times to ensure correct information about plants used in dental problems. For some local beliefs, habits and uses of plant, different categories of people like family heads, healers, old experienced and knowledgeable informants were repeatedly interviewed. These are different season the frequency was more than more available plants collection and plant specimens were identified with the help of flora of Madhya Pradesh (Verma*et al*. 1994; Mudgal, 1997; Singh *et al*.2001). Herbarium following standard method (Jain and Rao, 1977).And available literature. Field observation and Field data were noted down in field diary.

Results And Discussion - The present study out of 19 plants (Table-1) used for dental problem belonging to 19 genera and 15 families were discussed above are used as dental problem. The plants names are arranged in alphabetical order with families, local name and uses. The predominant families are Solanaceae with 3 plant spp., Verbinaceae and Euphorbiaceae with 2 plant spp each, Amaranthaceae, Meliaceae, Bambusaceae, Rutaceae, Zingiberaceae, Moraceae, Malvaceae, Anacardiaceae, Plambaginaceae, Caesalpiniaceae, Mimosaceae and Myrtaceae with 1 plant spp each. Out of 18 plant spp twig of 10, root, fruit and gum of 2 spp each, leaf, seed rhizome and latex of 1 plant each are used for dental disorder.

Acknowledgement - The authors are grateful to Dr. G.D. Gupta, principal and prof. S. Pathak, Head of Botany Department Govt. P.G. College, Dhar for providing research facilities. We are also thankful to Divisional forest Officer, Dhar for help during the tribal village's and forest areas. We are thankful to acknowledgeable for the important information giving regarding dental problem.

References :-

1. **Jain S.P.2004**. Ethno-Medico-Botanical Survey of Dhar district Madhya Pradesh. *Journal of Non-Timber Forest products*.,11(2) 152-157.
2. **Jain S.K.andR.R.Rao1977**.A handbook of field and Herberium methods.*Today and Tomorrow* Publishers, New Delhi.
3. **Jain S.K.1991**. Dictionary of Indian folk medicine and Ethnobotany.*Deep Publication,* New Delhi,India.
4. **Jadhav D.2011**.Wild plants used as a source of food by the Bhil tribe of Ratlam District, Madhya Pradesh. *Indian forester,136*(6) 843-846.

* **Department of Botany, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA**
** **Department of Botany, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA**

5. **Jain S.K. and Rao R.R. 1977.** A handbook of field and herbarium method, today and tomorrows. *Printers and publisher* New Delhi, India.
6. **Khan A.A., Jain S.K. and Shrivastav A. 2008**. Prevalence of dental caries among the population of Gwalior (India) in relation of different associated factors. *European journal of dentistry*. 2:81-85.
7. **Mudgal V.,Khanna K.K. and Hajara P.K. 1997**. Flora of Madhaya Pradesh.BSI Publication,Calcutta,India.
8. **Rawat D.S., Anjana D.K., and Rawat S. 2010**. Ethnobotanical studies on Dental Hygiene in district Hamirpur (H.P.) India. *Ethnobotanical Leaflets* 14: 584-92.
9. **Rao, N.S. Balaji, Rajasekhar D. Raju D. Chengal &Nagaraju J. 1996**. Ethnobotanical notes on some plants of Tirumala Hills for dental disorders. *Ethnobotany* 8:88-91.
10. **Srivastava R.K. 1985**. Herbal remedies used by the Bhilof Madhya Pradesh.*Oriental med Kyoto*. Japan, pp. 389-392.
11. **Singh N.P.;Khanna K.K.; Mudgal V. and Dixit R.D. 2001**. Flora of Madhaya Pradesh.BSI Publication,Calcutta,India.
12. **Verma DM, Balakrishnan NP and Dixit RD 1993**. Flora of Madhya Pradesh.BSI, Calcutta, India.
13. **Wagh, V.V. and A.K.Jain2010**.Ethnomedicinal observations among the Bheel and Bhilala tribe of Jhabua District, Madhya Pradesh, India. *Ethnobotanical Leaflets.,*14:715-720.

Table 1- Ethnobotanical plants used for Dental disorders by Tribal's of Dhar district.

Plant name (Family)	Local name	Uses
Achyranthes aspera L. (Amaranthaceae)	Andhijhara	Root used as a toothbrush for dental caries.
Acacia nilotica (L.) Willd.(Mimosaceae)	Babul	Twig used to clean teeth for dental caries and gum infection.
Azadirachta indica A.Juss.(Meliaceae)	Neem	Twig used to clean teeth for dental caries and gum infection.
Bambusa arundinacea (Retz.) Willd. (Bambusaceae)	Bans	Twig used to clean teeth for dental caries.
Capsicum annum L. (Solanaceae)	Mirch	Fruits with oil of sarson boiled as used for toothache.
Citrus limon (L.) Burm.(Rutaceae)	Nimbu	Fruits juice as used for toothache.
Clerodendrum multiflorum (Burm.f.) O.Ktze.(Verbinaceae)	Arni	Twig used to clean teeth for dental caries.
Curcuma longa L. (Zingiberaceae)	Haldi	Rhizome powder with mustered oil as applied on gums for pyorrhea.
Ficus racemosa L.(Moraceae)	Gular	Latex used for toothache.
Gossypium hirsutum L.(Malvaceae)	Kapas	Twig used to clean teeth for dental caries.
Jatropha curcas L. (Euphorbiaceae)	Ratanjot, Agarandi	Twig used as a toothbrush for dental caries.
Mangifera indica L.(Anacardiaceae)	Mango, Aam	Gum used for toothache.
Nicotiana tabacum L.(Solanaceae)	Tambaku	Leaf with loam mixed used for toothache.
Phyllanthu sreticulatus L. (Euphorbiaceae)	Datni	Twig used as a toothbrush for dental caries.
Plambago zeylanica L. (Plambaginaceae)	Chitrak	Root paste used as a toothache.
Pongamia pinnata (L.) Pierre (Caesalpiniaceae)	Karanj	Twig used as a toothbrush for dental caries.
Solanum virginianum L.(Solanaceae)	Kateli, Bhuiringni	Seed powder recommended for toothache.
Syzygium cumini (L.) Skeels. (Myrtaceae)	Jamun	Twig used as a toothbrush for dental caries.
Vitex negundo L.(Verbenaceae)	Nirgudi	Twig recommended to clean teeth and dental caries and toothache.

****

Nanocrystal

Dr. Neeraj Dubey *

Introduction - A nanocrystal is a crystalline particle with at least one dimension measuring less than 1000 nanometers (nm), where 1 nm is defined as 1 thousand-millionth of a meter (10^{-9} m).

Nanocrystals have a wide variety of proven and potential applications. They have been used in the manufacture of filters that refine crude oil into diesel fuel. Nanocrystals can also be layered and applied to flexible substrates to produce solar panels. Research at the University of Queensland (Australia) has yielded promising results in this field. Titania nanocrystals can be suspended in liquid form and applied to surfaces, making it possible to literally paint a solar panel onto an exterior wall or roof. The size of nanocrystals distinguishes them from larger crystals. For example, silicon nanocrystals can provide efficient light emission while bulk silicon does not and may be used for memory components.

When embedded in solids, nanocrystals may exhibit much more complex melting behavior than conventional solids and may form the basis of a special class of solids. They can behave as single-domain systems that can help explain the behavior of macroscopic samples of a similar material without the complicating presence of grain boundaries and other defects.

Semiconductor nanocrystals having dimensions smaller than 10 nm are also described as quantum dots.

Possible future uses of nanocrystals include:

1. Production of hydrogen
2. Removal of pollutants and toxins 3. Medical imaging
4. Bio-tags for gene identification
5. Drug manufacture 6. Protein analysis
7. Flat-panel displays 8. Illumination
9. Optical and infrared lasers
10. Optoisolators 11. Magneto-optical memory chips
12. Self-organized smart materials.

The traditional method to prepare nanocrystals of a new material requires choosing molecular precursors, surfactants, and solvents using optimized reaction conditions causing the atoms to self-assemble into monodisperse nanocrystals. A newer, simpler strategy uses preformed nanocrystals as templ ates & chemical transformation to change the composition.

Solution-based mechanisms can chemically transform nano materials, allowing atoms to be easily and precisely incorporated,removed, or replaced from preformed templates. The approach uses oxidation, reduction, alloying, or atomic exchange reactions. In ionic nano crystals, cation exchange can be driven by solvation energy differences between template and solvated ions. Ion solubilities can be controlled by adding selective coordinating species to the solution. In metal nanocrystals, atomic exchange reactions reflect reduction potential differences between the template metal and solvated metal ions. This *galvanic replacement* method involves a redox reaction. Placing a nanocrystal in a solution containing metal ions with a higher reduction potential oxidizes the templates' surface, dissolving its metal ions. The released electrons reduce the ions from the solution, which deposit at the template's surface.

Galvanic replacement also applies to ionic compounds. In oxide nanocrystals, a redox-couple reaction can occur between multivalent metallic ions. E.g., higher–oxidation state ions in manganese oxide nanocrystals have been replaced with solvated lower–oxidation state iron ions. Atomic diffusion is a key parameter in such reactions. Chemical transformation tools provide complete composition control only within the atomic diffusion length. High nanocrystal surface-to-volume ratios expose the entire lattice to diffusion. The effective particle size range for these tools depends on the material, but can reach hundreds of nanometers.

Nanotechnology will affect our lives tremendously over the next decade in very different fields, including medicine and pharmacy. Transfer of materials into the nanodimension changes their physical properties which were used in pharmaceutics to develop a new innovative formulation principle for poorly soluble drugs: the drug nanocrystals. The drug nanocrystals do not belong to the future; the first products are already on the market. The industrially relevant production technologies, pearl milling and high pressure homogenization, are reviewed. The physics behind the drug nanocrystals & changes of their physical properties are discu ssed. The marketed products are presented and the special physical effects of nanocrystals explained which are utilized in each market product. Examples of products in the develop -ment pipelines are presented and the benefits for in vivo administration of drug nanocrystals are summarized in an overview. Drug nanocrystals are crystals with a size in the nanometer range, which means they are nanoparticles with a crystalline character. There are discussions about the definition of a nanoparticle, which means the size of a particle to be classified as a nanoparticle, depending on the discipline, eg, in colloid chemistry particles are only considered as nanoparticles when they are in size below 100 nm or even below 20 nm. Based on the size unit, in the pharmaceutical area nanoparticles should be defined as having a size between a few nanometers and 1000 nm (=1 ìm); microparticles therefore possess a size of 1–1000 ìm.

A further characteristic is that drug nanocrystals are composed of 100% drug; there is no carrier material as in polymeric nanoparticles. Dispersion of drug nanocrystals in liquid media leads to so called "nanosuspensions''.In general

*Professor & Head (Physics) Govt. Arts & Commerce P.G. College, Sagar (M.P.) INDIA

the dispersed particles need to be stabilized, such as by surfactants or polymeric stabilizers. Dispersion media can be water, aqueous solutions or non aqueous media.

Depending on the production technology, processing of drug microcrystals to drug nanoparticles can lead to an either crystalline or to an amorphous product, especially when applying precipitation. In the strictest sense, such an amorph -ous drug nanoparticle should not be called nanocrystal. However, often one refers to "nanocrystals in the amorphous state".

Properties of nanocrystals - The main reasons for the increased dissolution velocity & thus increased bioavailability are:

The size reduction leads to an increased surface area and thus according to the Noyes-Whitney equation to an increased dissolution velocity. Therefore micronization is a suitable way to successfully enhance the bioavailability of drugs where the dissolution velocity is the rate limiting step. By moving from micronization further down to nanonization, the particle surface is further increased and thus the dissolution velocity increases too. In most cases, a low dissolution velocity is correlated with low saturation solubility. According to the Kelvin equation, the vapor pressure of lipid droplets in a gas phase increases with increasing curvature of the surface, which means decreasing particle size. Each liquid has its compound specific vapor pressure, thus the increase in vapor pressure will be influenced by the available compound-specific vapor pressure. The situation of a transfer of molecules from a liquid phase to a gas phase is in principal identical to the transfer of molecules from a solid phase (nanocrystal) to a liquid phase (dispersion medium). The vapor pressure is equivalent to the dissolution pressure. In the state of saturation solubility, there is equilibrium of molecules dissolving and molecules recrystallizing.

It is well known that amorphous drugs possess a higher saturation solubility compared to crystalline drug material. A classical example from the literature is chloramphenicol palmitate. The polymorphic modification I has a solubility of 0.13, the high energy modification II a solubility of 0.43 and the amorphous material of 1.6 mg/ml. The same is valid for drug nanoparticles. Amorphous drug nanoparticles possess a higher saturation solubility compared to equally sized drug nanocrystals in the crystalline state. Therefore, to reach the highest saturation solubility increase, a combination of nanometer size and amorphous state is ideal. However, a prerequisite for utilization in pharmaceutical products is that the amorphous state can be maintained for the shelf life of the product.Transferring all these facts to drug nanocrystals means that optimal drug nanoparticles with the highest increase in saturation solubility should have a size of eg, 50 nm or 20–30 nm, and be amorphous. It can be concluded that the size matters regarding the increase in saturation solubility and consequently the increase in dissolution velocity caused by a higher c_s. Of course, it needs to be kept in mind which blood profile is anticipated with a certain drug. In many cases a too-fast dissolution is not desired. For many applications there is the need to combine drug nanocrystals with traditio -nal controlled release technology to avoid fast dissolution, excessively high plasma peaks and premature t_{max}, and to reach prolonged blood levels. To summarize, the optimal drug nanocrystal size and crystalline/amorphous state will depend on:

1. Required blood profile.
2. Administration route.
3. Stability of the amorphous state during shelf life of the product.

In the case of IV-injected nanocrystals, the size should be as small as possible in case the pharmacokinetics of a solution are mimicked. In case targeting is the aim, the drug nanocrystals should possess a certain size to delay dissolution and give them the chance to reach the blood – brain barrier (BBB) for internalization by the endothelial cells of the BBB targets in the body or other target.

There are various possibilities to produce nanocrystals in the desired shape and size. Basically three principles can be used: milling, precipitation methods and homogenization methods, as well as a combination thereof. The industrially relevant methods are the top down technologies, ie, starting from a large-size drug powder to be reduced in size. The bottom up technologies is currently – to our knowledge – not used in the production of commercial products. Reasons may include the need for solvent removal, the difficulty in controlling the process, and the fact that many poorly soluble drugs are poorly soluble not only in aqueous, but also organic media.

The classical NanoCrystals technology uses a bead or a pearl mill to achieve particle size diminution. Ball mills are already known from the first half of the 20th century for the production of ultra fine suspensions. Milling media, dispersion medium, stabilizer and the drug are charged into the milling chamber. Shear forces of impact, generated by the movement of the milling media, lead to particle size reduction. In contrast to high pressure homogenization, it is a low energy milling technique. Smaller or larger milling pearls are used as milling media. The pearls or balls consist of ceramics, stainless steel, and glass or highly cross linked polystyrene resin-coated beads. Erosion from the milling material during the milling process is a common problem of this technology. To reduce the amount of impurities caused by erosion of the milling media, the milling beads are coated. Another problem is the adherence of product to the inner surface area of the mill. The main advantages of the nanocrystal technology in this product are the user friendliness and the higher bioavailability in comparison to the oral solution. As discussed previously, a smaller particle size leads to greater solubility and larger surface area, consequently increased dissolution velocity and thus greater bioavailability.

References :-

1. J. L. Burt (2005). "Beyond Archimedean solids: Star polyhedral gold nanocrystals". J. Cryst. Growth. **285**: 681. doi:10.1016/j.jcrysgro.2005.09.060.
2. J. Pakarinen (2009). "Partial melting mechanisms of embedded nanocrystals". Phys. Rev. B. **79**: 085426. doi:10.1103/physrevb.79.085426.
3. Ibanez, M.; Cabot, A. (2013). "All Change for Nanocrystals". Science. **340** (6135): 935–936. doi:10.1126/science.1239221. PMID 23704562.
4. P. Dutta and S. Gupta (eds.) (2006). Understanding of Nano Science and Technology (1 ed.). Global Vision Publishing House. p. 72. ISBN 81-8220-188-8.

मध्य प्रदेश की मिट्टियों में कॉपर की मात्रा एवं उपलब्ध कॉपर की न्यूनतम वाले क्षेत्रों का सीमा निर्धारण

डॉ. सलिल कु. उदयपुरे *

शोध सारांश – मध्य प्रदेश के 51 जिलो में से 17 जिलों की मिट्टियों में कुल कॉपर (Total Copper) एवं उपलब्ध कॉपर (Available Copper) की मात्रा का विस्तृत अध्ययन किया गया। एकत्रित मिट्टियों 5 भूमि प्रकार के अंतर्गत आती है। हेनरिक्सन द्वारा प्रस्तावित 1 पी.पी.एम उपलब्ध कॉपर की मात्रा को भूमि में कॉपर की न्यूनतम सीमा मानकर न्यूनतम वाले क्षेत्र का सीमा निर्धारण किया।

प्रस्तावना – मुख्य तत्व (Major elements) एवं सूक्ष्ममात्रिक तत्व (Micro elements) दोनो ही पौधो की बुद्धि के लिए महत्वपूर्ण है। किसी भी तत्व की कमी पौधों की वृद्धि मे बाधक हो सकती है। इसके अतिरिक्त जब मुख्य तत्व अधिक मात्रा में उपयोग किये जाते है तो उसी अनुपात में सूक्ष्म तत्वों की भी आवश्यकता बढ़ती जाती है। जैसे जैसे मुख्य तत्व का उपयोग बढता जा रहा है।, यह आवश्यक है कि भूमि में प्राप्त सूक्ष्म तत्वों की मात्रा उनकी उपलब्धि एवं उनकी न्यूनता वाले क्षेत्रों का भलीभांति ज्ञान प्राप्त हो।

पौधों के भोजन में कॉपर का कार्य बढ़ा ही महत्वपूर्ण एवं जटिल है। फ्रेंक और बिन्धम ने घोषित किया है कि फास्फोरस की अधिक मात्रा कॉपर की न्यूनतम कमी के कारण पौधों की उचित बाढ़ में बाधक है। कॉपर की न्यूनता के कारण पौधों में कई प्रकार के रोग भी पैदा हो जाते है, जैसे नींबू में डाईबैंक (dieback) सेब में विदर टिप (Weither tip) चुकंदर में क्लोरिसिस (chlorosis) इत्यादि। कॉपर की कमी पौधों में प्रकाश संश्लेषण (photosynthesis) तथा श्वसन की क्रिया को धीमे करती है। भूमि में स्थित कुछ कॉपर की अधिक मात्रा , पौधों को भी अधिक मात्रा में उपलब्ध हो ही यह आवश्यक नहीं। कॉपर की उपलब्धि कई स्थितियों पर निर्भर करती है।

प्रयोगात्मक – मिट्टियों के नमूनो से कुल तांबा निकालने के लिए होम्स की पद्धति अपनाई गई। उपलब्ध तांबा मोरगना निष्कर्ष (Morgans Extractant) से निकाला गया रंग मापी (colorimeter) द्वारा कॉपर की मात्रा चेंग एवं ब्रे की पद्धति से मापी गई।

एकत्रित मिट्टियों के नमूने निम्नांकित भूमि प्रकार में विभाजित किए गए–

भूमि प्रकार	नमूनो की संख्या
लाल–पीली भूमि	15
मिश्रित लाल काली भूमि	5
गहरी काली भूमि	5
उथली काली भूमि	5
मध्यम काली भूमि	10

विवेचना – भूमि में कूल कॉपर एंव उपलब्ध कॉपर की मात्राऐं विभिन्न जिलों की मिट्टियों मे सारणी 1 में अंकित है।

इस सारणी से ज्ञात होता है कि सिवनी जिले की मिट्टियों मे कुल कॉपर की मात्रा 108.52 पी.पी.एम सर्वाधिक है, किन्तु बैतुल जिले की मिट्टियों में सबसें कम 14.12 पी.पी.एम कुल कॉपर की मात्रा पाई गई।

उपलब्ध कॉपर की सर्वाधिक मात्रा 5.88 मंडला जिले की मिट्टियों में है जबकि रीवा जिले की मिट्टियों मे सबसे कम उपलब्ध कॉपर 0.83 पी.पी.एम की मात्रा पाई गई।

विभिन्न भूमि प्रकारों के अनुसार उनमें प्राप्त होने वाली कुल कॉपर एवे उपलब्ध कॉपर की मात्राए सारणी 2में अंकित है।

सारणी 1 : मध्यप्रदेश की मिट्टियों में कुल कॉपर एवं उपलब्ध कॉपर की मात्रा (औसत)

जिला	नमूनो की संख्या	कुल कॉपर की मात्रा	उपलब्ध तांबा
सीहोर	4	34.1	1.68
रायसेन	4	30.62	1.30
बालाघाट	4	41.00	2.17
खरगोन	4	28.1	1.10
खण्डवा	4	18.9	0.98
मंडला	4	104.25	5.88
सीधी	4	18.2	2.13
रीवा	4	25.45	0.83
जबलपुर	4	30.00	2.09
सागर	4	48.30	3.09
नरसिंगपुर	4	39.43	1.15
होशंगाबाद	4	32.12	1.87
बैतूल	4	14.12	0.98
सिवनी	4	108.52	3.67
छतरपूर	4	30.4	1.78
मन्दसौर	4	61.72	2.98
निमाड	4	98.97	3.12

* विभागाध्यक्ष (रसायनशास्त्र) शासकीय एन.एम. महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

सारणी 2 : मध्यप्रदेश की मिट्टियों में कुल कॉपर एवं उपलब्ध कॉपर की मात्रा (औसत)

भूमि प्रकार	नमूनो की संख्या	कुल कॉपर की मात्रा	उपलब्ध कॉपर के प्रकार
लाल-पीली भूमि	15	43.00	2.10
मिश्रित लाल काली भूमि	5	28.12	0.56
गहरी काली भूमि	5	36.60	2.43
उथली काली भूमि	5	62.00	2.73
मध्यम काली भूमि	10	51.43	2.61

उक्त टेबल से ज्ञात होता है कि कुल कॉपर एवं उपलब्ध कॉपर की मात्राएं मिश्रित लाल काली भूमि सबसे कम (क्रमश:28.12 पीपीएम) है जबकि कुल कॉपर की सर्वाधिक मात्रा 62.00 उथली काली भूमि में एवं सर्वाधिक उपलब्ध की मात्रा 2.61 मध्यम काली भूमि में पाई गई।

कुल कॉपर एवं उपलब्ध कॉपर की मात्राए मध्यप्रदेश के विभिन्न भूमि प्रकार मे निम्नांकित क्रमानुसार पाई गई

कुल तांबा – उथली काली भूमि > मध्यम काली भूमि > लाल पीली भूमि > गहरी काली भूमि > मिश्रित लाल काली भूमि।

उपलब्ध तांबा – मिश्रित लाल काली भूमि < लाल पीली भूमि < गहरी काली भूमि एवं उथली काली भूमि < मध्यम काली भूमि

काली मिट्टियों में कुल कॉपर की अधिक मात्रा मृतिका (Clay) की अधिकता से हो सकती है। अन्य कई कार्यकर्त्ताओं ने भी इस बात की पुष्टि की है कि कुल कॉपर की अधिकता मिट्टी में पाई जाने वाली मृत्तिका की अधिकता के कारण होती है। नीलकांतन एवं मेहता ने घोषित किया है कि जैसे-जैसे भूमियों में मृत्तिका की मात्रा बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे कुल कॉपर की मात्रा बढ़ती जाती है।

कुल कॉपर की मात्रा का वितरण मध्य प्रदेश की मिट्टियों में निम्न प्रकार से है :

सारणी 3 : कुल कॉपर की मात्रा का वितरण

परास (Range) PPM Cu	**नमनों की संख्या**	**कुल नमूनों का प्रतिशत**
10-20	11	23.12
20-20	6	12.68
30-40	13	26.45
40-50	3	7.86
50-60	3	5.87
60-70	2	3.91
70-80	1	1.66
80-90	1	1.77
90-100	2	3.73
100-110	0	0.0
110-120	1	1.76
120-130	2	4.87
130-140	1	1.97

इस टेबल से ज्ञात होता है कि समस्त नमूनों के 64.42 प्रतिशत नमूनों में कुल कॉपर की मात्रा 10.40 PPM के बीच है। 40 PPM से अधिक कुल कॉपर की मात्रा वाले नमूनों का प्रतिशत्व बहुत ही कम है। 40.80 PPM वाले नमूनों 19.6% है। 80.120 PPM वाले एवं 120 PPM वाले नमूनों का प्रतिशत 7.86 है।

उपलब्ध कॉपर का वितरण मध्य प्रदेश की मिट्टियों में सारणी 4 के अनुसार होगा।

उक्त सारणी से स्पष्ट है कि अधिकतर उपलब्ध कॉपर की मात्रा 1.1-2.0 PPM और क्रमश: 2.1-3.0 PPM में ही है जो कुल नमूनों का 80.06 प्रतिशत है। कुल नमूनों

सारणी-4 : उपलब्ध कॉपर का वितरण

परास (Range) PPM Cu	**नमूनों की संख्या**	**कुल नमूनों का प्रतिशत**
0.0-1.0	11	21.67
1.1-2.0	17	32.01
2.1-3.0	13	24.43
3.1-4.0	5	9.81
4.1-5.0	2	3.87
5.1-6.0	1	1.87
6.1-7.0	1	1.97
7.1-8.0	1	1.96

के 9.8 प्रतिशत नमूनों में उपलब्ध कॉपर की मात्रा 3.1- 4 PPM परास में है, जबकि 9.3 प्रतिशत नमूने 4.1 से 5.0 PPM परास में है।

उपलब्ध कॉपर की मात्रा की सीमा:

सामान्य पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक कॉपर की मात्रा 0.1 से 0.2 तक होती है। परंतु यह उस पद्धति पर भी निर्भर करता है, जिसके द्वारा उपलब्ध कॉपर की मात्रा मिट्टियों में निकाली जाती है। भूमि में जैवविधि (bio-assy) से प्राप्त 1 या उससे कम कॉपर की मात्रा निश्चय ही पौधों पर इस तत्व की कमी को दर्शाती है। यद्यपि पाइ पर 6 और नीलकांतन 5 ने यह घोषित किया है कि 0.5 PPM उपलब्ध कॉपर की मात्रा सामान्य पौधों की बाढ़ के लिए पर्याप्त है। परंतु मुल्डर 7 ने अपने एसपरजिलस नाइगर (Aspergillus niger) के प्रयोग में यह सिद्ध किया है कि 2 PPM से कम कॉपर की मात्रा कभी-कभी पौधों में इस तत्व की कमी के लक्षण पैदा कर देती है। हेनरिक्सन 1 ने ETDA और हाईड्रोक्लोरिक अम्ल के घोलों की तुलना ऐसपरजिलस नाइगर से की और यह दिखाया है कि ETDA घोल से प्राप्त उपलब्ध कॉपर की मात्रा ऐसपरजिलस नाइगर से प्राप्त कॉपर की मात्रा की 60.70% होती है। अत: हेनरिक्सन के द्वारा प्रस्तावित 1 PPM की मात्रा को ही न्यूनता सीमा मानकर प्रस्तुत अध्ययन में उपयोग किया गया है।

उपलब्ध कॉपर की कमी वाले नमूने का वितरण सारणी 5 में दिया गया है।

सारणी 5 : उपलब्ध कॉपर की कमी वाले क्षेत्र

क्र.	**जिला**	**नमूनों की संख्या**	**उपलब्ध कॉपर की मात्रा (PPM)**
1	जबलपुर	1	0.81
2	बैतूल	2	0.73
3	सागर	1	0.80
4	बालाघाट	2	0.91
5	होशंगाबाद	1	0.45
6	नरसिंहपुर	2	0.67
7	रीवा	1	0.12

उपलब्ध कॉपर की कमी मिट्टियों में कई कारण से हो सकती है। भूमि उपलब्ध कॉपर की मात्रा प्राय: भूमि के पी-एच0,, कार्बनिक पदार्थ की मात्रा, मृत्तिका प्रतिशत, खड़िया ($CaCo_3$) की मात्रा आदि पर निर्भर करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 हेनरिक्सन, ए0।नेचर, 1957 178, 499-500.
2 फ्रेंक, टी0 बिंघम एवं जेम्स पी0 मार्टिन।सॉयल साई0 प्रोसी अमे0, 1956, 20, 382-384
3 होम्स, आर0एस0।सॉयल साई0,1945, 59, 77-84.
4 चेंग, के0एल0एवं ब्रे, आर0जे0।अना0केमि0, 1953, 25, 251-256.
5 नीलकांतन, एवं मेहता बी0व्ही0।सॉयल साई0, 1961, 91, 251-256.
6 पाइपर, सी0एस0।जर्न0 एग्रि0साई0,1942, 32, 143-178.
7 मुल्डर, ई0 जी0।हेनरिक्सन तथा जैन्सन द्धारा उद्धृत, 1958.

****

गुणवत्ता में पारदर्शिता (विशेष संदर्भ – उच्च शिक्षा में चुनौतियाँ और सुधार के उपाय)

डॉ. सुनील कुमार सिकरवार *

शोध सारांश – यह सही है कि पाठ्यक्रम संरचना का कार्य विश्वविद्यालय स्तर पर होता है, परन्तु स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरुप महाविद्यालय को ही उनमें से किस कोर्स को अपने यहाँ लागू करना है, का चुनाव करना पड़ता है, ऐसे में कुछ अवरोध अवश्य आते हैं। विद्यार्थियों की मांग, प्रयोगशालाओं, तकनीकी सामग्री, विषय विशेषज्ञों, नियमित स्टॉफ, पुस्तकों व संसाधनों की उपलब्धता कितनी है, इसको ध्यान में रखकर ही संस्था को नये पाठ्यक्रम का चयन करना पड़ता है। फिर भी **करीकुलर एस्पेक्ट्स** के अंतर्गत शासन को निम्न **अवरोधों/रूकावटों** की ओर ध्यान देना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों की हर स्तर पर सहभगिता बढ़ सके।

प्रस्तावना –गुणवत्ता में पारदर्शिता भी सुनिश्चित होती है। पिछले कुछ वर्षो के दौरान उच्च शिक्षा के विस्तार से शैक्षिक कदाचार को भी बढावा मिला है। प्रवेश के समय निजी संस्थाओं में छात्रों से शिक्षा शुल्क और अन्य प्रभारों के अतिरिक्त प्रतिव्यक्ति शुल्क (कैपिटेशन फीस) भी लिया जाता है। बड़े पैमाने पर निजी संस्थाओं के प्रवेश से छात्रों शिक्षकों कर्मचारियों उच्च शिक्षा संस्थाओं के प्रबंधन और विश्वविद्यालयों तथा अन्य भागीदारों को लेकर होने वाले मुकदमों की संख्या में भी तेजी से वृद्धि हुई है। विवादों के निपटारे की कोई त्वरित न्यायिक व्यवस्था न होने के कारण विभिन्न सहभागियों के बीच असंतोष बढ रहा है। जिससे शिक्षा की गुणवत्ता और संस्थाओं के कुशल संचालन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसके अलावा 1990 के दशक के मध्य से देश में विदेशी शिक्षा संस्थाओं (एफईआई) की गतिविधियों में भी तेजी आई है। इनमें से कुछ तो प्रतिष्ठित संस्थाएं है, तो ऐसी भी अनेक संस्थाएं है जो छात्रों को विशेष रुप से छोटे शहरों और कस्बों से आकर्षित करने के लिए गलत तरीके अपनाती है। इनमें से अनेक संस्थाऐं इसलिए खुली है, क्योंकि देश में विदेशी शिक्षा संस्थाओं के नियमन के लिए कोई नियामक व्यवस्था अथवा केन्द्रीकृत नीति नहीं है। ले–देकर तकनीकी शिक्षा के संदर्भ में अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद द्वारा बनाए गए कुछ नियम भर ही हैं जो विदेशी संस्थाओं की कथित गड़बड़ियों को रोकने के लिए पर्याप्त नहीं है। 21वीं सदी के वर्तमान समय में सबसे बड़ी चुनौती है उच्च शिक्षा प्रत्येक देश की प्रगति वहॉ की उच्च शिक्षा को सार्थकता और सोद्देश्यता पर निर्भर है। उचित व मूर्त उद्देश्यों के निर्धारण में उदासीनता के कारणों का विश्लेषण करना आवश्यक है क्योंकि उच्च शिक्षा के स्वरुप का सामाजिक समस्याओं से कोई संबंध नहीं है। 21वीं सदी में उच्च शिक्षा की आवश्यकता अध्ययन की विषयवस्तु पर विशेष बल देने की है, जिनसे प्रवेश विधि एवं छात्र संख्या की समस्या का समाधान मिल सके। राजकीय सहायता ने उच्च शिक्षा संस्थाओं की स्वायत्ता पर गहरा आघात किया है। परिणामस्वरुप उच्च शिक्षा के स्तर पर न स्वायतता रह गई है और न स्वतंत्रता ये संस्थाए सरकारी दफ्तर की तरह कार्य कर रही है। इसलिए यह निर्णय करने की आवश्यकता है कि स्वायत्ता और स्वतंत्रता को बनाए रखने के लिए इन संस्थाओं के स्वरुप में क्या परिवर्तन अपेक्षित है। उच्च शिक्षा संस्थाओं का प्रमुख उतरदायित्व अध्ययन और अनुसंधान माना गया है। अध्ययन की स्थिति तो असंतोष जनक है ही अनुसंधान भी निरर्थक और अनुपयुक्त है। एच.एन. हार्न ने लिखा है कि शिक्षा अतीत का चित्र प्रस्तुत करने का उत्तम कार्य करती है, वह वर्तमान समय में भूतकाल की उपलब्धियों की रक्षा करने का उतम कार्य करती है तथा ज्ञान और शक्ति के वर्तमान संग्रह में वृद्धि करके भविष्य को भूत से बनाने की संभावना का सर्वोतम कार्य करती है। 21वीं सदी अन्तर्राष्ट्रीयता की सदी है इस सदी में शिक्षा के क्षेत्र में अन्य क्षेत्रों की तरह नहीं चुनौतियों का सामना करना है। 21वीं सदी में उच्च शिक्षा की चुनौतियों के परिप्रेक्ष्य में चार बातें अहम हो सकती हैं–शिक्षार्थी, शिक्षक, शैक्षणिक अधोसंरचना और परिवेश यदि वर्तमान चुनौतियों में शिक्षा को मानव विकास और आदर्श प्रेरित बनाना है तो इन्हीं माडलों के आधार पर उच्च शिक्षा की रुपरेखा तैयार करना होगा। उत्कृष्टता, पारदर्शिता तथा प्रतिबद्धता के धरातल पर उच्च शिक्षा से की जा रही मांग ही वास्तव में समाज की मांग के अनुरुप पूर्ति के साधन है। नवाचार तथा नवान्वेष सदैव ही प्रगति एवं विकास के वाहक तथा कारक रहे हैं तथा इन्हीं से क्रांतियों ने उद्घोष भी किया है। आज भारत की लगभग आधी आबादी युवाओं की है, लेकिन आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि उच्च शिक्षा जगत में विद्यार्थियों का नामांकन 10 प्रतिशत से भी कम है। 21वीं सदी के वर्तमान समय में विद्यार्थियों के समक्ष चुनौतियां अपार है, अनेक अनुतरित प्रश्न सुरसा की भॉति मुंह बाये हे। डगर कठिन हैं बाजारवाद पूंजीवाद तथा भू–मण्डलीकरण के इस दौर में ज्ञान के विस्फोट ने हक्का बक्का कर दिया है। उपस्थित चुनौतियों से निपटने हेतु उनका सामना करना तथा दौड में निरंतर जीतने हेतु बने रहना ही एकमात्र विकल्प है। आज के विद्यार्थी को भावी नागरिक बनाने की आवश्यकता है जिसके लिए शिक्षा ही एक मात्र हथियार दिखाई देता है। मूल्यों के संकट से गुजरता तथा रोजगार प्राप्ति हेतु आज का पढा लिखा युवा जागरुक है। जरुरत है पाठ्क्रम को नवीनता देने की सुव्यवस्थित प्रणाली देने तथा पारदर्शी मूल्यांकन रुपी सीढी देने की ताकि ज्ञान से सरोबार विद्यार्थी समुदाय समाजोत्थान का बीड़ा उठा सके उनमें नेतृत्व की क्षमता का विकास हो एवं वे प्रतियोगिता का कड़ा मुकाबला कर सके। 21वीं सदी में ज्ञानाधारित समाज की उच्च शिक्षा हमारे अस्तित्व की शर्त बन गयी है, क्योंकि उसके द्वारा प्रवर्तित नवाचार और अनुसंधान

* सहायक प्राध्यापक (रसायनशास्त्र) शहीद चंद्रशेखर आजाद, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

सार्वजनिक जीवन को प्रभावित कर नई–नई दिशा देने में कारगर सिद्ध हुए है। उच्च शिक्षा के अध्यापन अनुसंधान और विस्तार सेवा आयामों में से तीसरी आयाम अर्थात् विस्तार सेवा का समाज से सीधा संबंध रखता है, इस आयाम के जरिए जहाँ समाज के ग्राम समुदाय और शैक्षणिक सांस्कृतिक दृष्टि से वंचित वर्ग की सामाजिक सामुदायिक कार्यो में भागीदारी बढ़ाने के लिए उन्हें सचेत और जगरुक बनाया जाता है वही इन समुदायों के पारंपरिक ज्ञान और कौशल से उनके साथ कार्य करने वाले छात्र और शिक्षक भी लाभान्वित होते है, उच्च शिक्षा विचारों और आदर्शो का केन्द्र हैं। यहॉ के प्रत्येक सदस्य से आचरण के उच्च प्रतिमानों और ईमानदारी की अपेक्षा रहती है। यह सत्य उत्कृष्टता और सृजनशीलता का अनुसरण और अभिव्यक्ति पूरे साहस एवं निर्भीकता के साथ किया जाना चाहिए। 21वीं सदी के वर्तमान समय में उच्च शिक्षा की जो चुनौतियॉ हैं, उनकी संभावनाओं की तलाश करते समय कुछ प्रश्नों की ओर गंभीरता से विचार किया जाना आवश्यक है, जैसे कि क्या वर्तमान शिक्षा मानव को पूर्ण मानव बनाने के अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन कर रही है। क्या वर्तमान शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थी का शारीरिक मानसिक भावनात्मक और आत्मिक विकास हो रहा है, उच्च शिक्षा के जो घटक हैं। क्या वे स्वप्रेरणा से अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों के प्रति जागरुक है, क्या शिक्षा की प्राचीन अवधारणा और आधुनिक अवधारणा में किसी प्रकार के राष्ट्रीय बहस की आवश्यकता है, क्या उच्च शिक्षा के माध्यम से धरती को स्वर्ग बनाने की परिकल्पना समाज को अमानवीकरण की ओर तो अग्रसर नहीं कर रही है। उपर्युक्त प्रश्नों के सकारात्मक उत्तर ही उच्च शिक्षा की 21वीं सदी की वर्तमान चुनौतियों के बीच संग्रहीत है।

वर्तमान समय में जो सबसे बडी समस्या है, वह यह कि महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय में प्रवेश संख्या बहुत अधिक होने के बावजूद छात्रों की उपस्थिति अत्यंत कम हैं। वहीं शिक्षक द्वारा पढ़ाने में रुचि न लेने से और शिक्षा में परिवर्तन के प्रति उदासीनता के कारण शिक्षक छात्र में तालमेल नहीं बैठा पा रहे तथा परीक्षा संबंधी अनियमितताएं आदि कारण हो सकते है। पर ऐसा भी नही है कि सभी शिक्षक उदासीन है कुछ अपने कार्य के प्रति सजग है, पर उन्हें भरपूर सहयोग नहीं मिल पा रहा है। उन्हें कोई प्रोत्साहित करने वाला नहीं। अत: प्रशासनिक कार्य व्यवहार में परिवर्तन लाकर इसे दूर किया जा सकता है। साथ ही आवश्यकता इस बात की है कि पढाई और पाठ्यक्रम दोनों में आमूलचूल परिवर्तन लाया जाए। संस्थाओं में मुख्य रुप से दो तरह के पाठ्यक्रम होने चाहिए पांरपरिक पद्धति के आधार पर जॉ सैद्धान्तिक विवेचना व्यापक और विशद रुप में पढ़ाई जाए और उसमें केवल उन्हीं विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जाए जो शिक्षक बनना चाहते है या शोध कार्यो में जाना चाहते है। इस प्रकार की संख्या अत्यंत सीमित होनी चाहिए और जहॉ शिक्षकों की भर्ती नियुक्ति बहुत बडी कसौटियों से गुजरने के बाद की जानी चाहिए। इसमें तदर्थ या ठेके वाली व्यवस्था नही चल सकती। ये संबंधित विषयों में अधोसंरचना से लेकर उपर के ढॉचे को बनाने में सहयोग करने वाली संस्थाएं होनी चाहिए वहीं दूसरे तरह का पाठ्यक्रम पूर्णत: व्यावहारिक हो संस्थाओं को घिसे पिटे पाठ्यक्रमों को बंद कर देना चाहिए जिनमें थोड़ा–थोड़ा सभी सिद्धान्तों की चर्चा होती है और जिन्हें वर्तमान में रुटीन तरीके से पढ़ाया जा रहा है। इनमें से कई चीजें विद्यार्थी के लिए अनुपयोगी होती है और उनकी रुची उसमें नहीं होती पर उसे मजबूरन पढ़ना पड़ता है। इसके स्थान पर ऐसे पाठ्यक्रम होने चाहिए, जिनकी बाजार में मांग हो जैसे कि आजकल विपणन एवं रिटेल विपणन प्रबंधन आदि काफी प्रचलित क्षेत्र हैं, वहॉ अलग–अलग प्रकार की वस्तु के विपणन के लिए अलग–अलग प्रकार के पाठक्रम चलाए जाने चाहिए। छात्रों को उसी से संबंधित बातें सिखाई जानी चाहिए। जितने भी विषय हों सब उसी से संबंधित हों। संस्थाओं में पाठ्यक्रम बनाने का दायित्व विशेषज्ञों को दिया जाना चाहिए, जो किसी उत्कृष्ट विश्वविद्यालय से जुडा हो ये मौटे तौर पर व्यावहारिक ज्ञान देने वाले पाठ्यक्रम होने चाहिए। आज बैंकिंग बीमा पर्यटन, फैशन विश्व व्यापार संविलियन और अधिग्रहण पर्यावरण उनके क्षेत्र है, जिनमें पाठ्यक्रम प्रारम्भ किए जाने चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक भी अपने ज्ञान को बढायें।

उच्च शिक्षा के शैक्षणिक स्तर पर सुधार लाने एवं शिक्षा को रोजगारमूलक और समाजोपयोगी बनाने हेतु निम्नाकित सुझावों पर विचार किया जा सकता है।

1. उच्च शिक्षा मूल्य आधारित हो।
2. आने वाले समय का अध्ययन कर रोजगारों की मॉग के आधार पर शिक्षा दिलाए जाने की व्यवस्था हो।
3. शिक्षा व्यवस्था लचीली और गतिशील हो।
4. वंचित वर्ग के छात्रों हेतु नि:शुल्क उच्च शिक्षा की व्यवस्था हो।
5. शिक्षण में राष्ट्र एवं समाज हित को समहित किया जाए।
6. शिक्षा व्यवस्था व्यक्ति को नैतिकता के उच्च स्तर तक पहुॅचाने में सक्षम हो।
7. उच्च शिक्षा गुणवतावली शिक्षा व्यवस्था हो।
8. शैक्षणिक संस्थाओं को उपभोक्तावाद, बाजारवाद एवं भ्रष्टाचार से मुक्त रखा जाए।
9. उच्च शिक्षित प्रतिभाओं का पलायन रोका जाए और उसका उपयोग अपने ही राष्ट्र में किया जाए।
10. उच्च स्तरीय शोध सामग्री सृजित की जाए।
11. वर्तमान शिक्षा–प्रणाली एवं पाठ्यक्रम के अनुरुप शिक्षकों को समय–समय पर प्रशिक्षण दिया जाए।
12. कैरियर काउंसिलिंग के पाठ्यक्रम की कक्षाऍ एक विषय के रुप में प्रतिदिन संचालित की जाऐं जिसमें छात्र व अभिभावक दोनों की हिस्सेदारी हो।
13. पाठ्यक्रम में परिवर्तन किया जाए उनमें ऐसे विषय लाये जाये जिनका छात्र के भावी जीवन में वास्तविक उपयोग हो। प्रतिभा पलायन को रोकने के लिए शिक्षकों को उनके पालकों से संपर्क स्थापित कर उनकी सोच बदलना होगा।
14. शिक्षकों द्वारा छात्रों का मूल्यांकन किया जाता है। तो विद्यार्थीयों को भी शिक्षकों के मूल्यांकन की व्यवस्था होनी चाहिए।
15. मूल्यांकन पद्धति इस प्रकार की हो जिससे मेधावी एवं परिश्रमी शिक्षकों को प्रोत्साहित किया जाए। शोध कार्यो पर भी बल दिया जाए।
16. वर्तमान शिक्षा एवं शिक्षण कार्य को मूल्य प्रधान बनाने के लिए इसके सभी अवयवों में मूलत: ज्ञान, कौशल बोध एवं शिष्टता का अवश्य ही समावेश किया जाना चाहिए।
17. शिक्षकों को समय–समय पर प्रशिक्षण दिया जाए।
18. तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जाए एवं शिक्षण संस्थाओं में गुणात्मक एवं सौहार्द्रपूर्ण वातावरण बनाया जाए।
19. शिक्षण संस्थाओं में बढ़ते राजनैतिक हस्तक्षेप को रोका जाऐ।
20. शिक्षण संस्थाओं को अधिक से अधिक वित्तीय सहायता मिलनी चाहिए तथा छात्र संख्या के अनुपात में शिक्षकों की व्यवस्था की जानी चाहिए।
21. शिक्षकों का विद्यार्थियों से अधिक से अधिक वित्तीय सहायता मिलनी

चाहिए तथा छात्र संख्या के अनुपात में शिक्षकों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

22. पुस्तकालयों में सामाजिक ज्ञान से परिपूर्ण पत्रिकायें जर्नल, पुस्तकें, वार्षिक रिपोर्ट इत्यादि की व्यवस्था हो।
23. शिक्षण की ऐसी विधियों पर जोर देना चाहिए, जिसमें छात्रों का मौलिक विकास हो।
24. विश्वविद्यालयों तथा अनुसंधान संस्थाओं में उत्कर्ष हेतु गुण और उत्कृष्टता को स्थान देना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. म.प्र. शासन का दृष्टि पत्र गुणवत्ता वर्ष 2011–12 एवं गुणवत्ता विस्तार वर्ष 2012–13
2. रचना द्धिमासिकी अंक 97 अगस्त 2012 हिंदी ग्रथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 112,114
3. रचना द्धिमासिकी अंक 98 अक्टूबर 2012 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 36,40,48,60
4. रचना द्धिमासिकी अंक 67 अगस्त 2007 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 112,114
5. दैनिक जागरण समाचार पत्र इन्दौर 3 जून 2007 पृ0 10

****

Effect Of E-Shopping Factors On Consumer's Attitude In Jabalpur City

Saumya Mishra * Dr. Abha Tiwari **

Abstract - In this study to investigate consumers of Jabalpur city perception of E-shopping, as well as the factors influencing on their attitude toward E-shopping and their effect on their intention toward E-shopping. The current research was undertaken to understand the consumers intention to purchase through E-shopping. Sample of this study included E-shopping consumers of Jabalpur city. The study used survey to collect data with 100 respondents with valid data. The analysis was used to the relationship between variables. The results indicate that the consumers intention to purchase online is influenced by utilitarian value (like time saving), attitude toward E-shopping, availability of information. This study found that consumer innovativeness, perceived benefits and perceived risk are important determining factors influencing E-shopping. Also the findings shown that consumer innovativeness, perceived benefits had positive impact on consumer shopping attitude, and perceived risk had a negative impact on consumer E-shopping attitude. Moreover, consumer innovativeness, perceived benefits, perceived risk had an indirect effect on the intention of E-shopping. The results of this study nearly supported all hypotheses.
Key words- E-Shopping ,Consumers, Attitude.

Introduction - The usage of the Internet for purchasing and selling activity has changed the path to the buyer-sellers relationship. Prior studies that conducted study was focused on developed countries of their consumer's E-shopping behaviour and influencing factors. The E-shopping behaviour and intention of developing countries consumers would be the interested issue to reveal. The consumer's E-shopping behaviour can contribute to existing literatures of E-shopping behaviour. Electronic commerce has experienced rapid growth in the last few decades . The internet has changed the why consumers buy goods and services throughout the world and it is based on Business to consumer (B2C) and business to business (B2B) .

This Paper is based on E-shopping of consumers in Jabalpur city .The reason of this research to know the attitude and intention of E-shopping in consumers and we should know their awareness about E-shopping, like website, transaction method , products ,factors affecting their E-shopping and so on.

E-Shopping - "E-shopping or E-shopping is a form of electronic commerce which allows consumers to directly buy Goods and Services from a seller over the internet using a web browser . Alternative names are – e-web store, e-shop, e-store, Internet shop, web –shop , web store, online store, and online storefront etc."

Consumer - " A consumer may be Defined as any person, business firm or governmental unit that choose Goods and Services, spends money to obtain them primarily to satisfy his or it's own wants"

Attitude- "Attitude is a feeling and behaviour ,which is a consequence of the assessing process. This is the process involved when an individual or groups select purchase use or dispose of products, services, ideas, or expanses to satisfy needs and desires."

Objectives of the Study-

1. To know the percentage of consumers which are used to E-shopping in Jabalpur city.
2. To know which product is mostly buy from E-shopping
3. To study why moves towards E-shopping.
4. To identify which website is mostly used by consumers of Jabalpur city.
5. To study positive influencing factors responsible for online shopping and negative factors which stop Jabalpur users to buy online in Jabalpur.

Hypothesis of the Study :

1. Positive factor which influencing consumers for E-shopping is time saving .
2. Negative factor which stop consumers for E-shopping are delivery time and debase the product quality.
3. Consumers mostly buy from E-shopping Designer clothes and Tickets.

Limitations of the Study - The study has following limitations

1. The sample was selected from few consumers of Jabalpur city.

* **Research Scholar (Resource Management) Govt. M .H. College of Home science and science for women (Autonomous), jabalpur (M.P.) INDIA**
** **Professor (Human Development) Govt. M .H. College of Home science and science for women (Autonomous), jabalpur (M.P.) INDIA**

2. The sample was limited to 100 respondents.
3. The range limited only consumers , age group- 15 to 65 years.
4. Randomly selected respondents had been used for filling the questionnaire.

Review of Literature - Gurleen (2012) has reported that India has more than 100 million internet users out of which one half opt for online purchases and the number is rising sharply every year. Internet users were becoming comfortable to shop online. The capability of purchasing without leaving your place is of great interest to many consumers. Not only does E-shopping offer really good deals, but also brings optimum convenience to the consumers. Moreover, the use of Internet tools for price searching and comparison provides an additional advantage in consumer's final decision, as they could purchase their desired products in the lowest available price. According to this study Consumers are price sensitive and aware about the price of goods and services. This paper focuses on the understanding of demographic profiles of adopters and non-adopters of E-shopping. For this purpose the data from 400 respondents was collected in the form of questionnaires. The study has been conducted in 3 cities of Punjab, a sample of urban respondents were selected from the Jalandhar, Ludhiana and Amritsar The paper also analyses the various reasons for adoption and non-adoption of E-shopping .

Peng (2010) has reported that with new wireless technology constantly being developed , E-shopping is increasingly common now days .People can search for and buy products online much more conveniently and efficiently then shopping in retail online stores. In fact, the number of people who choose E-shopping is continuously increasing . This study is concerned with factors that affect student "decision making" as to whether to buy products online .this research used mix methodology , which includes quantitative and qualitative methods , and the information had been selected by survey and interview. A total of 92 students responded to the survey & 9 students were interviewed. The information gathered in the research is analysed in comparison with relevant literature. These factors (price , convenience, efficiency, safety , product range and services.) provide a structure to this research.

Sen(2014) has reported that The internet has become a new platform for electronic transaction and consumers in India are increasingly using the internet for E-shopping purposes. Online marketing has thus emerged to be the key to success for many companies and the online presence of organizations has become inevitable in nature. This paper identifies the key factors that influence the online purchase of products in Kolkata. In this study take sample of 150 respondents was selected in Kolkata and a self-administered questionnaire was used to collect primary data. The data was recorded by using a number of open ended questions, close ended questions, from the Likert Scale and interpreting the data. The findings of the study showed that the cost factor, convenience factor, product factor and seller related factor are the four important factors influencing the online purchase of products in Kolkata.

Scope of the Study - This study helps firms, organizations and websites improve their marketing strategies . Helpful for problem recognition and awareness of need through E-shopping of consumers. For social marketing getting idea across to consumers rather than selling something. Electronic commerce has become more important because marketer has some basis to market their product and services to the internet channel . It is more effectively and profitability marketer can serve their customer if they concern and understand their customer needs and wants.

Plan, Methodology/ Research Design :

i) Selection of method of Inquiry- The universe being too large and time & other resources being limited, Convenience Sampling method were selected for the present study.

ii) Selection of Samples- The sample selected on purposive random basis

iii) Selection of method for collection of Data- Questionnaire method used for collection of data .A trival survey was done to get an idea of the various problems. In the trival survey the same procedure was followed as was to be adopted in actual survey. The no. of cases in it was five on the basis of this pilot study necessary amendments are done in the schedule.

iv) Sources of Information :

a) **Primary Sources-** Respondents from age group 15 to 65 years were selected as the primary sources. It was collected from 100 respondents (consumers) in different places of Jabalpur city through questionnaire.

b) **Secondary Sources-** It may be termed as "Documentary Sources". The information was gathered from different books, magazines, journals, news scripts and websites etc.

Analysis of Data - After the data was collected it was tabulated and analyzed statistically, wherever needed statistical tests were applied to get the final results .The information gathered was from the 100 respondents (consumer) surveyed from Jabalpur city. The age running 15 to 65 years.

Table No. 01 : No.of Respondents according to adoption of E-shopping

Sr.	Adoption of E-shopping	No. of Respondents	Percentage%
1.	Yes	88	88 %
2.	No	12	12 %

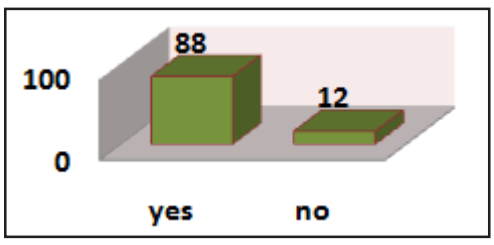

Here 88 % consumers of Jabalpur city accept the adoption of E-shopping. They use E-shopping like a trend or Fashion and 12% consumer do not accept the adoption of E-shopping because of some reasons (like- not knowledge about internet, limited resources, don't want to take any Risk etc.) Bajaj(2008) also reported that females were good adopters of E-shopping compared to male.

Table No.02 : No. of Respondents according to buying different products and services from E-shopping

Sr.	Buying Products / services from E-shopping	No. of Res-pondents	Percent -age%
1.	Clothes(Designer)	60	60 %
2.	Foot wears	08	08 %
3.	Jewellery	06	06 %
4.	Electronic Items	20	20 %
5.	Home appliance	02	02 %
6.	Gift Items	24	24 %
7.	Reading Materials	14	14 %
8.	Ticket	26	26 %
9.	stationary	16	16 %
10.	Cosmetics	06	06 %
11.	Other	04	04 %

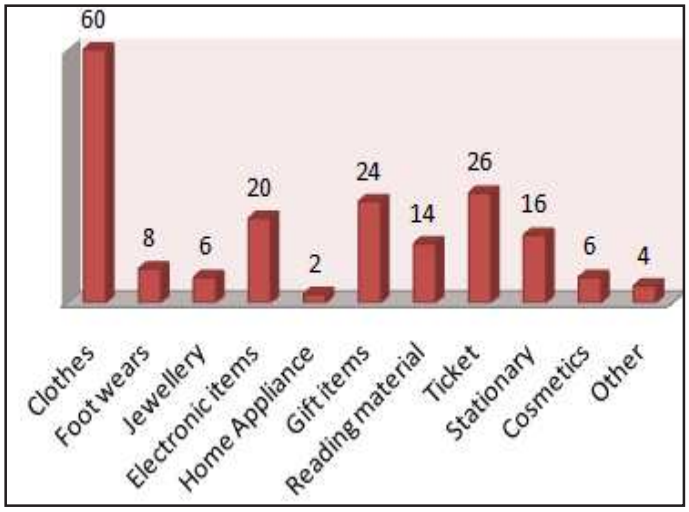

Here 60% consumers mostly buy designer clothes and 26% book online ticket. They also buy Gift items (24%), electronic items(20%), Stationary(16%),Reading materials(14%), Footwears (8%), Jewellary(6%), cosmetics(6%) and other(4%) respectively. AcNielson(2007)stated that the most popular items purchased on the internet airline tickets/ reservations(21%) and clothing/accessories/shoes (20%).

Table No.03 : No.of Respondents according to Causes moves towards E-shopping

Sr.	Causes moves towards E-shopping	No. of Resp -ondents	Percent -age%
1.	Time Saving	54	54 %
2.	Quality Products	04	04 %
3.	Low Cost	16	16 %
4.	Discount /Sale & Offers	26	26 %

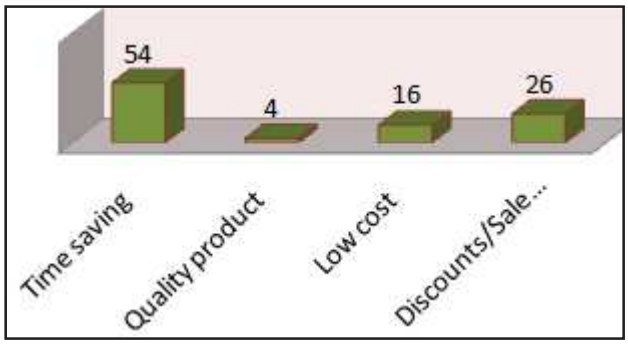

Here explain the reason & causes moves towards E-shopping by respondents for Time saving(54%), Discounts/Sale & offers(26%), low cost(16%), and Quality Product(4%) respectively. Gurleen (2012) reported that the consumer being Price Sensitive , Most of the consumers prefer to buy online because they will get heavy Discounts.

Table No.04 : No. of Respondents according to preference of different E-shopping websites

Sr.	E-shopping websites towards E-shopping	No. of Resp -ondents	Percent -age%
1.	Flipkart	32	32 %
2.	Snapdeal	28	28 %
3.	HomeShop18	28	28 %
4.	Amazon	36	36 %
5.	other	10	10 %

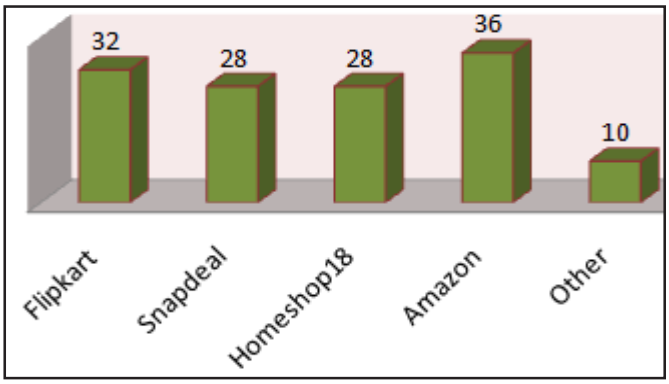

According this table, respondents prefer mostly Amazon.com(36%) to purchasing online but respondents not only choose the only website ,they are surfing different-different websites and choose their favourite deal in right websites. So they also prefer Flipkart(32%), Snapdeal(28%), Homeshop18 (28%), and other websites(10%).

Table No.05 : No. of Respondents according to the influencing factor of E-shopping and their intentions

Sr.	Influencing Factor	No. of Resp -ondents		Percent -age%	
	Positive Factors	Yes	No	Yes	No
1.	Time saving	89	11	89%	11%
2.	Discount and sell	56	44	56%	44%
3.	Quality product	18	82	18%	82%
4.	Convenience	72	28	72%	28%
5.	Promotion	45	55	45%	55%
6.	Security	46	54	46%	54%
7.	Others	35	65	35%	65%

	Negative Factors	Yes	No	Yes	No
1.	Delivery time	82	18	82%	18%
2.	Shipping charges	72	28	72%	28%
3.	Return policy is not very clear	54	46	54%	46%
4.	High transaction charges	42	58	42%	58%
5.	High price	35	65	35%	65%
6.	Security	49	51	49%	51%
7.	Others	53	47	53%	47%

Here explain, the Influencing factor of E-shopping of respondents to know their attitude & intention about E-shopping. Respondents positive factors which make their decision very definitive that is time saving(89%) and convenient method (72%) rather than other methods are also influenced the consumer buying on E-shopping, whereas negative factors like delivery time (82%) & high shipping charges(72%) and others change the attitude of consumers of E-shopping. Sen (2014) also stated that Respondent's reason for not buying from E-shopping in future that was touch and feel the product (25%), complex process & don't have internet facility(23%) and this process is not safe (security) (14%) in Kolkata.

Conclusion- The growth is the number of online shoppers is greater than the growth in internet users and in online purchasing we have larger option to choose products & services. It was seen from the study that most of consumers Jabalpur city , age group- 15 to 65 years were found to be most adopters of E-shopping. They buy mostly designer clothes and booked online tickets easily by online medium. They also purchase Gift items, Electronic items, Reading materials and Stationary etc.

Generally, they use E-shopping because it is a Time Saving & convenient method and every day a new Discounts and Offers comes on shopping websites. Some Negative influencing factors like delivery time and shipping charges are responsible to give unassertive attitude of consumers.Amzon.com (E-shopping website) is most preferable shop- ping website for consumers in Jabalpur city, they use also flipkart, snapdeal, homeshop18 websites to buy products & services.Overall, consumers of Jabalpur city are crazy about E-shopping because of saving time ,convenience & Discounts. Some consumers gave their suggestion about better Return Policy & quality product. So, E-shopping trend is increasing because of internet medium found very easily and in our today's life, our smart mobile phones helps to easier our hectic life and day-by-day risks.

References :-

1. Gurleen, Kanwal. 2012. Consumer's perception towards E-shopping- the case of Punjab. International Journal of Management & Information Technology. 1(1): 1- 6.
2. Jones, Christie and soyuong kim. 2010. Influences of online retail brand trust-clothing involvement and website quality on online apparel shopping intention . International Journal of Consumer Studies. 36(6): 627-637.
3. Peng ,li. 2010. Factors that affect student's decision making on buying online shops. Journal of product and brand management. 24(3): 15-21.
4. Reid ,Margaret G. "Consumers and the Market" N.Y.appleton century crafts inc.1938.
5. Sen argaha, Rahul. 2014. E-shopping: A Study of the Factors Influencing Online Purchase of Products in Kolkata. international Journal of Management and Commerce Innovations. 2(1): 44-52.

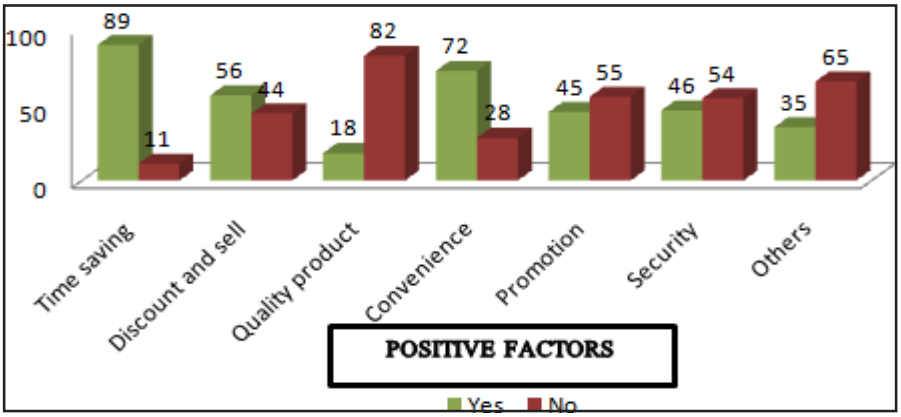

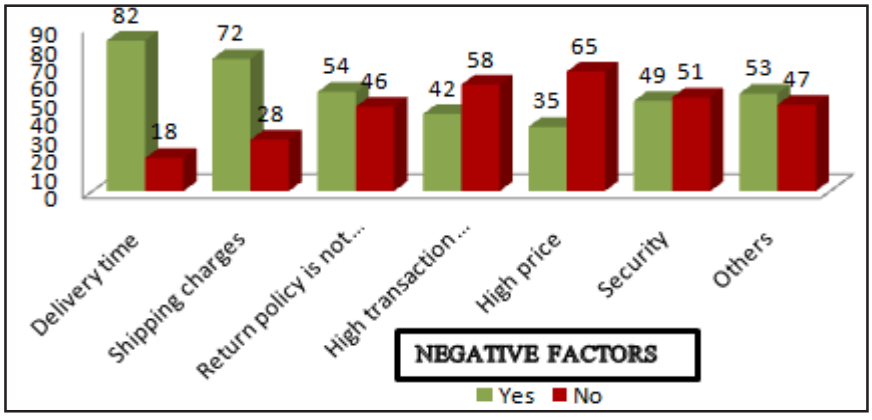

To Study The Impect Of Cartoons On The Daily Behaviour Of The Kids (Gorakhpur City)

Dr. Deepshikha Pandey *

Abstract - Children have become much more interested in cartoons over many years & it has become a primary action to some lives. So the main objective of this study to trace the impact of cartoon on the daily behaviors of the kids in Gorakhpur city in this research 100 children selected by random sampling methods from two convent school in Gorakhpur city. Data collection by survey methods, questionnaire method is used for data collection & percentage methods are used for statistical analysis. Study concluded that the impact of violence presented in cartoons on children behaviors their accessories & daily used material are also affected by cartoon characters. Their role models, eating patterns, social life & language development are more effected by cartoon characters.
Keywords - Aggressive, Angriness, Cartoon, Behavior Violence, Accessories.

Introduction - T.V. cartoons & movies are the most entertaining activities for the kids for many years. Cartoon has changed drastically over the years but have their lasting effects on children. Children begin watching cartoons on T.V. at an early age of six month and by the age of 2-3 children become enthusiastic viewers. As kinds most of us grew up. Watching cartoons like He-man, Spiderman , Jungle book & I recollect how thrilled & excited we got at the idea of watching these cartoons we would not want to miss a single episode.

Unlike the kids of today who have so many options to choose from. We were contend watching cartoon on Doordarshan But present day many cartoon channels that are available at the touch of bottom shin chain & Doremon are the most favorite cartoons of the schools going children's it has been watched in more than 80 million homes in the America & in 145 countries through the world (Hassan & Denial, 2013) today many activities of children inspired by shin chain & Doremon (survey report of a news channel 2016). So this study many effected children behaviors in small city Gorakhpur.

Objective - To check the impact of cartoons on the daily behavior of the kids (2-10 year) in Gorakhpur city.

Methodology - To selected the Gorakhpur city for this research. Survey method is used for study. Data collections are used by Questionnaire & Schedule method. 100 children selected by random sampling from two convent school & present age method is used by data analysis.

1. Frequency of cartoon **N=100**

Table-1.1

S.	Shin-chain	Doremon	Animated Films	All of them
1	30%	40%	25%	5 %

2. Favorite cartoon characters

Table-1.2

Shin-chain	Doremon	Chhota Bhem	Novita	Ninja Hatori	All
20%	32%	12%	7%	20%	09%

3. Interest of watching cartoons

Table-1.3

Yes	No	Some-time
82%	10%	8%

4. Time spend on watching cartoons

Table-1.4

½-1 hours	1-2 hours	2-4 hours	4-6 hours	more than 6 hours
10%	12%	18%	35%	25%

5. Cartoon is a material of

Table-1.5

Educati-onal	Interse-gment	Learning	Destructive	West of time
21%	44%	25%	8%	2%

6. Effect on behavior patterns

Table 1.6

1.	Behavior Just like cartoon characters	43%
2.	Aggressive behavior	13%
3.	Angriness	8%
4.	Effect on food Habits	20%
5.	Effect on Language	16%

* Head & Assistant Professor (Home Science) Chandrakanti Ramawati Devi Arya Mahila P.G. College, Gorakhpur (U.P.) INDIA

7. Effect on Physical Problems

Table 1.7

1.	Effect on eyes	67%
2.	Headed problems	20%
3.	Muscles pain	13%

8. Effect on Religious concept formation

Table-1.8

1.	Yes	No	Effect
	81%	15%	4%

9. Effect on Positive behavior

Table 1.9

1.	Yes	No	Effect
	29%	68%	3%

Analysis :

1. Table 1.1 Shows that 40% children prefer to watch Doremon cartoons over rest them
2. Table 1.2 shows that children favorite cartoon is Doremon (32%)
3. Table 1.3 shows that 82% children accept that interest in cartoon channels.
4. Table 1.4 shows that 35% children watching T.V. 4-6 hours on daily bases while other watches less.
5. Table 1.5 shows that 44% children consider cartoon as only source of entertainment material.
6. Table 1.6 shows that 43% children have behavior just like cartoon characters 20% children intake their food after watching cartoon channels. 16% children have bad language which is affected by favorite cartoon characters like shin chain or Novita. 13% children shows that Aggressive behavior like benten or Hennery. Children pay more attention cartoon. Whole story or specific character & craze affect their behavior to change them. While 8% children behavior gets changed after watching cartoon. They shows the anger behavior & use same techniques which they observed in cartoon during the fighting with each others.
7. Table 1.7 shows that 67% children have eyes site problems 20% Headec problems. children prefer cartoons over picnic & outdoor games insted rest of them. They more gain entertainment from cartoon different serious than the physical games & outdoor activities.
8. Table 1.8 shows that 81% children have. Religious concept like Ramayan & Mahabhart getting by watching cartoon they accept Krishna, Ram, Bheem are not a cartoon characters.
9. Table 1.9 shows that 68% children have no. positive behavior after watching cartoon channels. Creativity, moral, thinking, imagination behaviors are more affected by cartoon charters.
10. Table 1.10 shows that 59% children more prefer to use of dresses reflected by cartoon character like doremon benten, Spiderman, angry buds etc. They also shows that the frequency of children. Accessories are more affected of cartoon characters.

Conclusion - The result of this study indicates that children's behaviors are more affected by cartoon character. In the current era of powerful media & the children also affected by their most favorite programme on television. To conclude the study we can say that there is a strong impact of cartoon channels on children their life style, dressing aggressive, violent behaviors their languages & concept formation. It can be said in view of above mentioned facts that cartoon watching is the most favorite hoby of the children.

References :-

1. Das Asha, Internet publishing, Tuesday, march 24, 2015, www.boldysky.com/'Negative impact of cartoon on kids.
2. Daniyal muhammad, cartoon network & its impact on behavior of school. going children : A case study of Bahawalpur, Pakistan, International Journal of manage- ment economics & social Science, 2013, Vol 2 (1), PP. 6-11.
3. Diana, Pinto, Effects of cartoon violence on kids, August 27, 2014, www.parentous com.
4. Tardy, Amna, 'effect of cartoons on the daily life of children,Monday April. 8,2013 www.amaatraing.blogspot.in
5. Yousaf, Zahid, Shehzad, Munham, Hussam, Ali. "Effects of cartoon Network on the behaviour of school going children (A case study of Gujrat city) ; International Research Journal of interdisciplinary & multidisciplinary studies (IRJIMS), Vol (1), Feb; 2015 pp. 173-179.

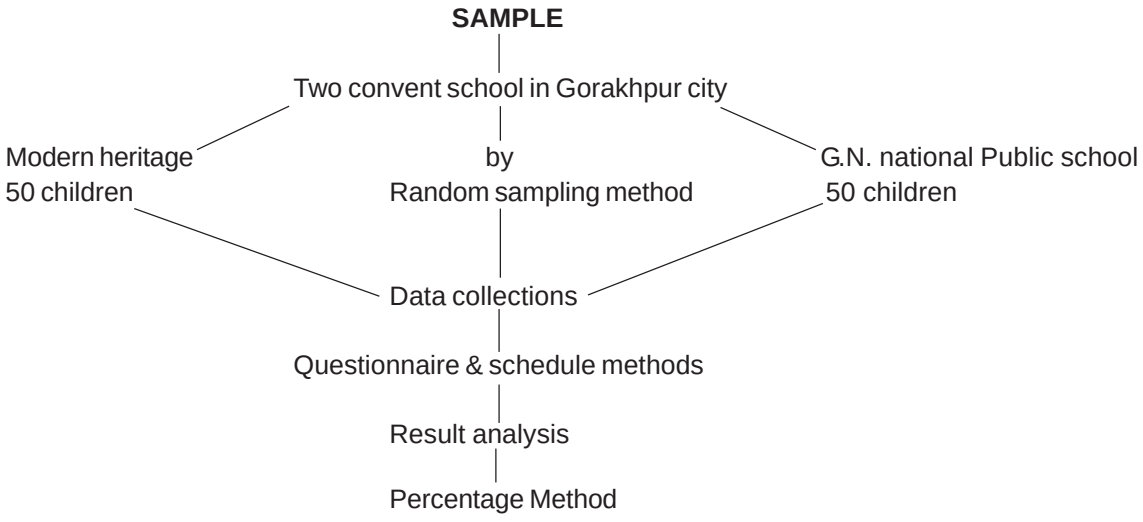

Marital Adjustment

Sangeeta Rachiyata *

Abstract - From the earliest months of our lives, we are indoctrinated into a variety of roles based on identification and reciprocal relation. Our basic role images are acquired in childhood from the examples of husband and wife that we observe at close range like parents, uncles, aunts and parents of friends etc. Inevitably this means that particular class, ethnic and religious, up-cultures in which we are brought up from the broad outline of the role image we carry into marriage. So far the meaning of roles ad their various dimensions examined suggest that prior performance of roles is very important for marital adjustment. Many Indian researchers agree that advancement in the process of industrialization, urbanization and education have brought about socio-cultural changes in the attitudes and values of the people of our country, especially among the urban population. A noted definite and vital with the general social change and change in the roles and functions of the family. Manifold expectations are made by husbands and wife on each other affecting the husband wife relationship and demanding more happiness & secretly from each other. The present paper louses on family roles and aspects of roles as related factors in marital adjustment.

Introduction - Young persons sometimes think that marriage are made in heaven in the sense all they have to do is marry the person they are destined to marry and that they will automatically live happy ever after. But in the practical life this may not work the way the young imagine of feel. When two individuals enter into marriage they have some perception of their own role as to what to do and role expectation of the spouse as to how one should behave. The bridegroom when enters into marriage cherishes a conception of himself as a husband and of his bride as a wife. Similarly the later over years enshrines an image in his heart of her role as wife and of the part to be played by the husband. Burgers and Locke (1945) opine that of these conception of the husband and wife are congruous the union may be harmonious whether the agreement is upon control by the husband or by the wife as by consensus. Further they feel that an element of discord may be introduced if the expectations of relatives of friends are in conflict with those of the couple.

Much of the ability of two individuals to meet the challenge of marital living depends on their capacity for adjustment. This adjustability is a product of a lifetime of behaviour and experience and their acquired reaction tendencies. Adjustment is a highly intricate process. Yet the initial adjustments are immensely critical. They necessitate the acquisition of new roles, habit systems, techniques of communication, household skils, careful financial planning and among other expectations to the arrival of an infant (Williamson, 1972).

Kapur (1970) assets that happiness or unhappiness in marriage today centres primarily round the husband wife relationship and spouses depend, to a very large extent, on each other for emotional security. She further states that this situation is prevalent in the urban educated nuclear families.

Since role performance is the key to the foundation of healthy and successful family living it becomes necessary to expand the meaning of roles and the various dimensions of roles involved in the fulfillment of roles such as role perception and awareness, role expectations, role performance and role conflict.

Meaning of Roles - These aspects of roles major issue in role definition. The way a person behaves in his role in a social situation depends in a large measure on his understanding of behaviors that direct or orient his thinking about the situation (William G. Dyer, 1962). According to pollution (197 Role may be defined as patter of beaviour tat members of a group except from another group member. He opines that some roles are formal duties and prerequisites that go with a given position or status in group and are formally defined into its charter are by law. Role or social role is defined as “a part of social position consisting of a more or less integrated or related sub set of social norms, which is distinguishable from other sub set of norms forming the same position” (Frederick L winch, 1956).

From the earliest months of our lives. We are indoctrinated into a variety of roles based or identification and reciprocal relation our basic role images are acquired in childhood from the example of husband and wife that we observe at close range like parents, uncles, aunts and parent of friends etc. Inevitable this means that particular class, ethnic and religions sub cultures in which we are brought up form the broad outline of the role image we carry into marriage. Pullerton (1972) believes that the way our parents play their roles fill in much of the detail. He states that learning to play

* Lecturer (Home Science) CH. B.R.G. Govt. Girls P.G. College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

role and gradually identifying with the role leads to a sense of belonging to the group where the role is played.

Role Perception - Stemming from the norms held by the persons involved each of the marriage partners comes into the new relationship with certain idea as to how he or she should behave as husband or wife. These perceptions of owns role in the new family are often not explicitly stated or understood by the persons. The husband may perceive his role on the patriarchal pattern while he wife may look forward to equalitarian one. The basic question is the degree of similarity with which the two partners perceive roles in marriage. Many studies concepts the expectations of roles was more accurate than his perceptions of her role concepts and expectations (Williamson, 1967). Perception of roles may also be discussed in the area of decision making. Studies in the Indian situation revealed that neither of the mate was extra ordinarily perceptive or conscious of what role he or she performed in making the major decisions.

Role Expectation - Role expectations brought into marriage not only predict what the husband or wife will do but are evaluative standards concerning the performance associated with a role i.e. without regard to individual who may be occupying the role at any given time. Role expectations then are the ways one person feels the other should behave (Parson, 1951). They are belief about what the spouse ought to do Each partner wants to be a good husband or wife and begins acting out his own preconceptions. Few of these conceptions are conscious. They are largely the residue of childhood observations of he parent's example.

Most couples realize their expectations sooner or later. Since women tend to be more feminist than men, it is rear to find woman whose husband is more equalitarian than she. When this combination occurs, it causes little conflict it the husband prefers to give the wife more equality than she wants to assume he may be disappointed (Blood, 1969).

Each partner usually has not only expectations of what should be done by the other but particular function should be carried out. A.R. Mangus (1951) Points out that expectations may also be of the marriage partner as a total personality. Each partner usually has not only expectations of what and how the other person should behave in his role, but perception does not agree with the perception of the marriage partner.

Role performance - Role performance is the key to the foundation of healthy and successful family living. Role performance is defined as the behaviour that an actor manifests while acting out a role, whether or not this behavior conforms to the norm. Although there are few cultural prescriptions specifying precisely how roles should be performed there are within a society, so me of the key roles of husbands and wives are thought to explain part o marital stability and the attitudes of spouse towards their marriage (Nye and Berardo, 1973).

Doing the transitional period in the family life cycle there are changes in the familial roles. –Patrick (1963) found that in a change in familial roles, each person wanted to — to keep to money she craned for her own use while expecting her husband to share her housekeeper role. He in turn, wanted to share her earnings while expecting her to continue to perform all the tasks she had done prior to her employment (as quoted by Nye & Baroda. 1973.)

Role Conflicts - Discrepancies between one's role conceptions and enactment might be called a kind of "role conflict" – intrapersonal conflict But since marriage is a social system, we are primarily interested in conflicts when one partner's enactment's violets the other's expectations, that is in interpersonal conflict. Most couples realign their expectations and enactment's concept or later It not the stare on the marital bond is serve (Blood, 1969).

In the life of each sensitive women today, there is likely to be a great deal of confusion in her concepts of her role due to her exposure to conflicting value system Part of her concept of what "her role ought to be is parent indoctrinated (Landis, 1965). One of the most certain aspects of the relationship of men and women today both before and after marriage is that of role conflict. Such conflict is inevitable because of the different perspective on roles which men and women hold for them selves and for each other The values of the female subculture today are very much in conflict. The men may expect of his wife the same role behaviour as his mother practiced. In fact, this will probably be the strongest conditioning concept in his upbringing, as far as attitudes toward the roles of his wife and concerned. Yet, nether husband nor wife may be able in marriage to follow out their own concept of with their role should be (Landis, 1965).

According to Dyer (1962) conflicts in the marriage situation may arise at the following places first. If the norms and personal preferences of the husbands are in conflict with those of the wife, second if the role performance of the husband does not agree with the role expectations of the wife, third if the role performance of the wife does not agree with the role expectations of the husband.

Marital Adjustment - Marital adjustments separable from the perception they have of each other's role. In view of a number of studies on roles conclude that marriage involve multiple roles, even through there is at times a fumbling consciousness of or an in adequate enactment or performance of roles among married partners. Disenactment may set in, and the marriage may become vulnerable to a crisis situation with the possibilities of role readjustment or a breakup of the marriage as a result (William Son, 1967).

Dyer (1962). Stated that conflicts in the marriage situation may arise at the following places first. If the norms and personal preference of the husbands are in conflict with those of the wife, second if the role performance of the husband does not agree with the role expectations of the wife, third if the role performance of the wife does not agree with the role expectations of the husband.

Stuckert as quoted by Williamson (1972) generalizes that 'Marital happiness' is the function of mutual interaction, which refers to role perception surrounding marriage. This mean roles depend on communication. In Williamsons'

(1972) opinion the way in which we perceive our roles determines how we verbalize them and conversely the language process determines perceptive, words and syntax selected, the tone of voice, depth of discussion and variation in mood. If harmony between two individual decline in the succeeding years of marriage, communication can suffer.

In the Indian set-up there are some traditions and customs which impede or hinder communication regarding the performance of roles. In joint family which were prevalent sometime ago and are now declining, the mother-in-law used to assign roles to each daughter-in-law relating to various activities of the household. With the break-up of joint family system and emergence of nuclear family set-up, the husband & wife, when not clear of their roles, wonder at to what and how one should perform Thus, any lage in communication between husband and wife can create complications or confusion in the understanding of role and hamper success in marriage.

Willian (1967) stated that Marital happiness is inseparable from the perception they have to each other's roles. In view of a number of studies on roles conclude that marriage involves multiple roles, even though there is at times a fumbling consciousness of or an inadequate enactment or performance of roles among married partners. Disenactment may set in and the marriage may become vulnerable to a cists situation with the possibilities of role-readjustment or a breakup of the marliage as a result.

Consequent to rapid industrialization and modernization, there is seen to be marked changes in the Indian women's role According to the census of India (1991) out of a population of 40 crore, two lakh women, eight crore fourteen lakh are working women. During last few years the increasing opportunities for women to have education and exposure to the various fields have brought a significant change in the position and status of women in our societies. There is great uncertainty regarding the specific roles of husbands and wives and rising trend in matrimonial disputes in Indian women due to change in there economic position. In developing country like ours, problem like conflicting situation and adjustment are prevalent to a great extend as both husbands and wife expect more and more each other (Akhani & Sharma, 1999).

References :-

1. Akhani, P. and Sharma, N. (1999). Indian wives-their roles, marital adjustment and counseling, Prachi Journal of Phychology-cultural Dimension, April (99) vol., 15 No.1
2. Blood, O. Robert (1969) : Marriage, The free press, new York.
3. Burgers, E.W. and Locke, H.J. (1945) : The family from institution to companionship, New York, American Book Co.
4. dyer W.G. (1962) : analyzing marital adjustment using Role theory, Journal of Marriage and the family, 1962, 24.
5. Fonseca, M. (1966) : Counseling for marital happiness, Manuktalas, Bombay.
6. Fullerton, G.P. (1972) : Survival in marriage (2nd edi) Hindsdale. Llionis the Dryden Press.
7. Herber and Jarvis : A modern approach to marriage counseling.
8. Kapur, P. (1970) : The changing status of working women in India, Vikas Pub. House.
9. Kuppuswamy, S. (1960) : Social change in India, Vikas Publishings.
10. Landis, Paul, H, (1965) : Making the most marriage-IIIrd edi. Mefridith publishing Company, New York.
11. Nye. F. J. & Berarodo, F. M. (1973 : The family its structure & interaction.The Macmillan company, New York.
12. Parsons (1951) : Cited by Talcolt and Bale, R.F. Family Sociolozation and Interaction, Process, Collier Macmillan Canada Ltd. Taranto.
13. Sharma, N. and Saxena (1999) : Role perception, expectation and performance as related factors in marital adjustment and marital counseling's, paper presented in national seminar on Mental health and Psychological counseling. Department of psychology, D.A.V. College, Kanpur, 22-23 Jan. 99.
14. Williamson, C.B. (1966) : Marriage and Family Relations, IIIrd edi. John Wiley and sons, Inc. New York.
15. Winch, F.B. (1956) : The modern family Holt, Rinehart and wiston, New York.
16. Winch, R.F. and Goodman, C.B. (1968) : Selected studies in Marriage and he family (3rd edi) New York, Holt, Rinehart & Winston, Inc.

****

किशोर बालक-बालिकाओं की विभिन्न समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. आभा तिवारी * सपना श्रीवास्तव **

शोध सारांश – जीवन के संघर्ष में किसी न किसी समय समस्याओं के दौर से गुजरना पड़ता है, ये समस्याएँ चाहे पारिवारिक हो या शैक्षिक बालक के जीवन को प्रभावित करती हैं। प्रस्तुत शोध कार्य का उद्देश्य किशोर बालक-बालिकाओं की विभिन्न समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करना है। इन बालक-बालिकाओं की विभिन्न समस्याओं को ज्ञात करने हेतु छात्र समस्या मापनी का प्रयोग कर निष्कर्ष स्वरूप पाया कि किशोर बालक-बालिकाओं में विभिन्न समस्याओं में से शैक्षिक समस्याओं एवं व्यक्तिगत समस्याओं में सार्थक अंतर नहीं है तथा पारिवारिक एवं कुल समस्यायें किशोर बालिकाओं की अपेक्षा किशोर बालकों में अधिक पायी गई।

प्रस्तावना – प्रत्येक समाज में ही नहीं बल्कि प्रत्येक परिवार में ऐसे किशोर वय के बालक-बालिकाएँ होते हैं जो जीवन के मार्ग में किसी न किसी स्थान पर रूक जाते हैं या भटक जाते हैं। जिससे उन किशोर बालक-बालिकाओं को अपने जीवन में विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ये समस्याएँ व्यक्तिगत, शैक्षिक व पारिवारिक होती है, जो बालक के विकास को प्रभावित करती हैं।

मानव विकास की प्रक्रिया में किशोरावस्था का महत्वपूर्ण स्थान है यह अवस्था परिपक्वता की अवस्था होती है। जिसमें जीवन संबंधी व्यवहार में असमानताएँ दृष्टिगोचर होने लगती हैं। जिनका होना जीवन में स्वाभाविक है परंतु किशोरावस्था में परिवर्तन विषमता व द्रुतगति के साथ होते हैं। इस अवस्था में बालक बालिका के भविष्य का निर्माण होता है।यह अवस्था 13 से 19 वर्ष तक की आयु होती है। इसमें किशोर बालक एवं बालिकाओं को शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, शैक्षिक और सामाजिक आदि विभिन्न समस्याओं के दौर से गुजरना पड़ता है।

वास्तव में किशोरावस्था जीवन का सबसे कठिन और समस्यात्मक काल होता है। किशोरवस्था के बालक-बालिकाएँ एक तूफानी दौर से गुजरते हैं, उन्हें अनेक प्रकार की मानसिक यातनाएँ, तनाव और दबाव सहन करने पड़ते है, जिससे वे अनेक समस्याओं से ग्रस्त हो जाते हैं। अत: वर्तमान में इन समस्याओं को जानना अत्यंत आवश्यक है जिससे किशोरों के विकास में आई असामाजिकता व अवरूद्धता को समाप्त किया जा सके।

उद्देश्य :

1. किशोर बालक-बालिकाओं की शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन करना।
2. किशोर बालक-बालिकाओं की व्यक्तिगत समस्याओं का अध्ययन करना।
3. किशोर बालक-बालिकाओं की पारिवारिक समस्याओं का अध्ययन करना।
4. किशोर बालक-बालिकाओं की विभिन्न समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ :

1. किशोर बालक-बालिकाओं की शैक्षिक समस्याओं में कोई अंतर नहीं होता है।
2. किशोर बालक-बालिकाओं की व्यक्तिगत समस्याओं में कोई अंतर नहीं होता है।
3. किशोर बालक-बालिकाओं की पारिवारिक समस्याओं में कोई अंतर नहीं होता है।
4. किशोर बालक-बालिकाओं की विभिन्न समस्याओं में कोई अंतर नहीं होता है।

चर :

स्वतंत्र चर - किशोर बालक-बालिकाएँ

परतंत्र चर - विभिन्न समस्याएँ (शैक्षिक, व्यक्तिगत, पारिवारिक)

न्यादर्श– प्रस्तुत शोध में जबलपुर शहर के 30 बालक एवं 30 बालिकाओं का चयन किया गया यह चयन यादृच्छिक न्यादर्श विधि के द्वारा किया गया है। विद्यालयों में अध्ययनरत् 11वीं के बालक-बालिकाओं को लिया गया है, जिनका विवरण निम्नानुसार है-

न्यादर्श तालिका क्रमांक-1

प्रकृति	**योग**
बालक	30
बालिकाएँ	30
योग	**60**

उपकरण – किशोर बालक-बालिकाओं की विभिन्न समस्याओं के मापन हेतु प्रोफेसर टी.पी. वैद्य द्वारा निर्मित छात्र समस्या मापनी (1998) आरोही मनोविज्ञान केन्द्र जबलपुर का प्रयोग किया गया है।

विधि – न्यादर्श में चयनित किशोर बालक-बालिकाओं पर छात्र समस्या मापनी का प्रशासन किया गया एवं फलांकन कुंजी के आधार पर फलांकन कर आंकड़े प्राप्त किये गये, इनका सारणीय विश्लेषण निम्नानुसार है।

परिणामों का विश्लेषण-

तालिका 2एवं ग्राफ 01 में किशोर बालक एवं बालिकाओं की समस्याओं एवं उनके विभिन्न क्षेत्रों के तुलनात्मक परिणाम से यह स्पष्ट होता है कि किशोर बालक एवं बालिकाओं की शैक्षिक एवं व्यक्तिगत समस्याओं में सार्थक अंतर नहीं है अर्थात् इनमें लिंग भिन्नताएँ नहीं है। बालकों की पारिवारिक समस्यायें

*प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शासकीय मो. ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर (म.प्र.) भारत
**शोधार्थी, शासकीय मो. ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर (म.प्र.) भारत

बालिकाओं की अपेक्षा अधिक हैं। समस्त क्षेत्रों की कुल समस्या संबंधी परिणाम भी यह स्पष्ट कर रहे हैं कि बालकों की समस्याएँ बालिकाओं की अपेक्षा अधिक हैं अर्थात् इनमें लिंग भिन्नता है।

परिणाम यह स्पष्ट कर रहे हैं कि जहाँ एक ओर शैक्षिक एवं व्यक्तिगत क्षेत्रों में लिंग भिन्नताएँ नहीं हैं। वहीं दूसरी ओर पारिवारिक एवं कुल समस्याओं में बालकों की समस्या अधिक है। यह स्वाभाविक है, क्योंकि विद्यालयीन किशोर बालक-बालिकाएँ न केवल अपनी पढ़ाई की ओर ध्यान देते हैं। वरन् वे स्वयं भी अपने को शैक्षणिक वातावरण में समायोजित करने का प्रयास करते हैं। जिससे उनकी उन क्षेत्रों में समस्याओं में अंतर नहीं होता। इसके विपरीत बालकों की अपेक्षा बालिकाएँ अपने परिवार को अधिक समय देती हैं एवं उनमें हर तरह से समर्पित, समायोजित होने का प्रयास करती हैं तथा अपने माता-पिता एवं अन्य परिवार जनों के मध्य सामंजस्य बनाने का प्रयास करती हैं। इसमें उनकी पारिवारिक क्षेत्रों में समस्याएँ बालकों की अपेक्षा कम रहती हैं।

जहाँ तक कुल समस्याओं का संबंध है। बालकों की समस्याएँ बालिकाओं की अपेक्षा अधिक हैं। यह प्रकृति के स्वभाव के अनुरूप है क्योंकि बालिकाएँ-बालको की अपेक्षा अधिक संयमी, अनुशासित, सहयोग भावना वाली आदि गुणों से परिपूर्ण होती है इसलिए बालिकाओं की समस्या कम होना स्वाभाविक है।

उपरोक्त परिणाम के परिप्रेक्ष्य में पूर्व में दी गई परिकल्पना शैक्षिक एवं व्यक्तिगत क्षेत्र के स्वीकृत होती है। जबकि पारिवारिक एवं कुल समस्याएँ में परिकल्पना स्वीकृत नहीं होती है।

निष्कर्ष :

1. बालक एवं बालिकाओं की शैक्षिक एवं व्यक्तिगत क्षेत्र की समस्याओं में सार्थक अंतर नहीं है।
2. बालकों की पारिवारिक समस्याएँ बालिकाओं की अपेक्षा अधिक हैं।
3. बालकों की कुल समस्याएँ बालिकाओं की समस्याओं की अपेक्षा अधिक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कपिल, डॉ. एच. के. (2011), 'अनुसंधान विधियाँ' राखी प्रकाशन, 12ए, चतुर्थ लाल यरमन टावर संजय पैलेस व्यवसायिक काम्पलेक्स, आगरा, पृ. सं. 280।
2. पाठक, पी.डी. (2007-2008), 'शिक्षा मनोविज्ञान' सैतीसवां संस्करण, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा-7, पृ. सं. 122-123।
3. वैद्य, टी.पी. (1998), 'निर्देश पुस्तिका' छात्र समस्या मापनी आरोही मनोविज्ञान केन्द्र साउथ सिविल लाइन, जबलपुर।

तालिका क्रमांक -2 : बालक एवं बालिकाओं की समस्या एवं उसके विभिन्न क्षेत्रों के तुलनात्मक परिणाम

समायोजन के क्षेत्र	लिंग	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
शैक्षिक समस्या	बालक	30	29.30	3.10	1.62	>0.05
	बालिकाएँ	30	26.60	3.70		
व्यक्तिगत समस्या	बालक	30	28.30	3.40	1.55	>0.05
	बालिकाएँ	30	27.80	3.60		
पारिवारिक समस्या	बालक	30	27.90	3.20	2.50	<0.05
	बालिकाएँ	30	26.10	2.40		
कुल	बालक	30	85.90	7.44	3.18	<0.05
	बालिकाएँ	30	79.60	7.95		

स्वतंत्रता के अंश - 58

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान -2.00

0-01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान- 2.66

ग्राफ क्रमांक 01 : किशोर बालक एवं बालिकाओं की विभिन्न समस्याओं के परिणामों का ग्राफीय निरूपण

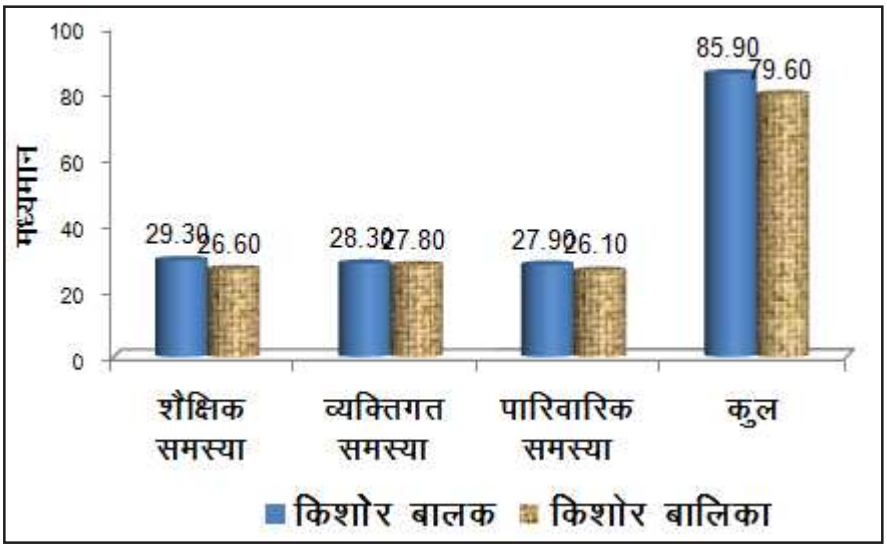

किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का अध्ययन

डॉ. आभा तिवारी *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध कार्य में किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन किया गया। अध्ययन का उद्देश्य किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर उच्च/निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन का अध्ययन है। न्यादर्श में बालाघाट क्षेत्र के शासकीय विद्यालय के 150 एवं अशासकीय विद्यालय के 150 किशोर एवं किशोरियों को लिया गया है। परिणामों से स्पष्ट होता है कि उच्च/निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन वाले किशोर/किशोरियों की संवेगात्मक बुद्धि निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन वाले किशोर/किशोरियों से अधिक है। अर्थात् अभिभावकीय प्रोत्साहन का किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

प्रस्तावना – किशोरावस्था में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं सांवेगिक विकास उत्तरोत्तर चरम की ओर अग्रसर रहते हैं। बाल्यावस्था के अन्त में जब बालक किशोरावस्था में पर्दापण करते है, तो निरन्तर विकास की गति तीव्र होने के कारण अनेक समस्याओं से जूझना पड़ता हैं। ऐसे में अभिभावकों का सहयोग धनात्मक प्रोत्साहन मिलने पर किशोर सहजता से परेशानियों का निवारण कर लेता है।

जिन किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि परिपक्व होती है वे स्वयं से परिवार से शाला तथा समाज से समायोजन करने में सफल होते है। संवेगात्मक बुद्धि ही समाज में व्यवहार करने में सहयोग प्रदान करती हैं। जिन किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि परिपक्व होती है, वे अपने पारिवारिक संबंधों, समाज द्वारा अपेक्षित व्यवहार तथा स्वयं की लाभ–हानि के प्रति अधिक जागरूक रहते हैं। वे सामाजिक बंधन, परिवार की सीमाओं, आर्थिक कठिनाइयों तथा अपनी योग्यताओं और कमजोरियों को समझने लगते हैं। इन सब बातों का प्रभाव उनके संवेग प्रदर्शन तथा नियंत्रण पर अवश्य पड़ता है।

वर्तमान काल में प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक डेनियल गोलमेन ने बुद्धिलब्धि के साथ–साथ संवेगात्मक बुद्धि को भी संवेगात्मक कुशलता के लिए आवश्यक माना हैं। संवेगात्मक बुद्धि का तात्पर्य हैं–'संवेगात्मक बुद्धि अपनी और दूसरों की भावनाओं को पहचानने की क्षमता है। स्वयं को प्रेरणा देने और स्वयं के तथा स्वयं से संबंधित लोगों के प्रति संवेगों के भली प्रकार से प्रबंधन हेतु संवेगात्मक बुद्धि एक योग्यता है। (**वार्सी 2007**) ने अभिभावकीय प्रोत्साहन का संवेगात्मक बुद्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। इन्होंने पाया कि अभिभावकों का प्रोत्साहन छात्र एवं छात्राओं की संवेगात्मक बुद्धि पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। सेठी एवं अंजवानी (2008) ने माता–पिता और बच्चों के संबंधों का संवेगात्मक बुद्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया गया कि जहॉ माता–पिता का बच्चों के साथ अच्छे संबंध थे। वहां माध्य 309.94 तथा जहॉ माता–पिता का बच्चों के साथ नकारात्मक संबंध थे। वहॉ माध्य 235.20 था। 0.01 स्तर पर (45.49 सहसंबंध) सार्थक अंतर पाया गया। इस प्रकार उपर्युक्त अध्ययनों से ज्ञात होता है कि अभिभावकों का प्रोत्साहन किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि को अत्यधिक प्रभावित करता है।

प्रस्तुत अध्ययन में किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव ज्ञात करने के पश्चात् अभिभावकों एवं किशोरों को उचित मार्गदर्शन हेतु प्रेरित किया जा सकता है।

उद्देश्य :

1. किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन।
2. किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन।
3. किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना :

1. किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता हैं।
3. किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

प्रयुक्त चर :

1. स्वतंत्र चर :– अभिभावकीय प्रोत्साहन
2. परतंत्र चर: – संवेगात्मक बुद्धि

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में बालाघाट क्षेत्र के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के 9वीं कक्षा के 150 किशोर एवं 150 किशोरियों को न्यादर्श के रूप में चयन किया गया। अभिभावकीय प्रोत्साहन मापनी के प्रशासन के पश्चात् किशोरों को निम्नानुसार उच्च एवं निम्न अभिभावक प्रोत्साहन समूहों में विभक्त किया गया।

शाला की प्रकृति	अभिभावकीय प्रोत्साहन	किशोर	किशोरियॉ	योग
शासकीय/अशासकीय	उच्च	150	150	300
शासकीय/अशासकीय	निम्न	150	150	300
	योग	300	300	600

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शा.मो.ह. गृह विज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

उपकरण :

1. अभिभावकीय प्रोत्साहन : डॉ. आर.आर. शर्मा (1988)
2. संवेगात्मक बुद्धि : डॉ. अशोक शर्मा (2009) डॉ. अनिता सोनी

विधि – शोध कार्य हेतु न्यादर्श में 9वीं कक्षा के 600 विद्यार्थियों पर अभिभावकीय प्रोत्साहन मापनी का प्रशासन कर इसके प्राप्तांको के आधार पर उच्च एवं निम्न अभिभावक प्रोत्साहन समूहों में विद्यार्थियों का विभाजन किया गया। तत्पश्चात् संवेगात्मक बुद्धि मापनी द्वारा किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि को ज्ञात किया गया। ऑकड़ों के विश्लेषण के लिये मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रांतिक अनुपात का प्रयोग किया गया।

विवेचना – अभिभावकीय प्रोत्साहन का किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि का अध्ययन करने हेतु न्यादर्श से प्राप्त परिणामों का विश्लेषण निम्नानुसार है।

ग्राफ तालिका – किशारों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणामों का ग्राफीय निरूपण

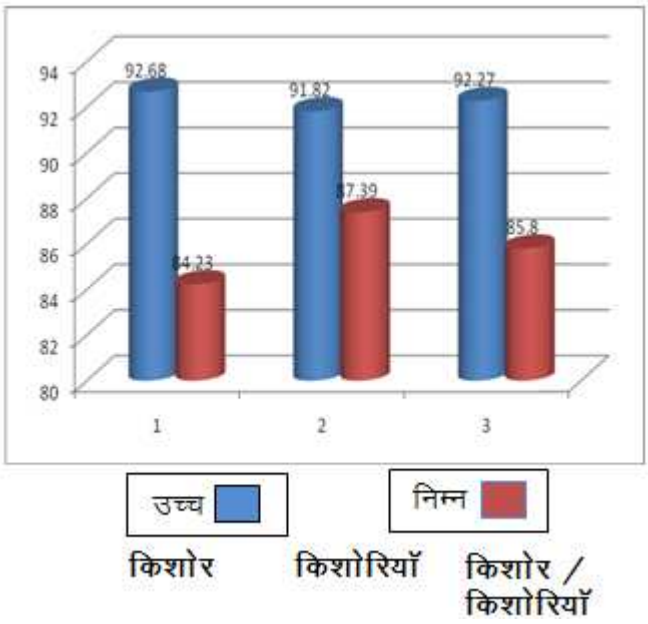

प्रस्तुत अध्ययन में किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के परिणामों से स्पष्ट होता है कि उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन के किशोर, किशोरियों एवं उनके सम्मिलित समूहों की संवेगात्मक बुद्धि निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन समूहों की अपेक्षा अधिक हैं। इस प्रकार उपरोक्त परिणाम अभिभावकीय प्रोत्साहन के महत्व को स्पष्ट कर रहें है कि अभिभावकीय प्रोत्साहन के अन्तर्गत अभिभावक अपने किशोरों के सर्वोत्तम विकास के लिए जिस स्नेही सहिष्णुतापूर्ण और हमेशा उत्साहित करने वाला वातावरण प्रदान करते हैं वह उनके पाल्यों के व्यक्तित्व के सकारात्मक विकास में सहायक होता हैं डेनियल गोलमैन ने इसी समप्रत्य को ध्यान में रखते हुए संवेगात्मक बुद्धि के विकास में महत्वपूर्ण कार्य किया। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में सफलता के लिए व्यक्ति की संवेगात्मक बुद्धि का उच्च स्तर होना आवश्यक है।

इस संबंध में उमा देवी (2010) के अध्ययन के परिणामों से स्पष्ट होता है कि अभिभावकों के उनके पाल्यों के साथ अच्छे अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि के विकास को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। इस प्रकार उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि किशोर/किशारियों की संवेगात्मक बुद्धि के विकास में अभिभावक के प्रोत्साहन की अहम भूमिका होती है। जिससे वे विपरीत परिस्थितियों में स्वयं को समायोजित कर सकें। एक सकारात्मक विकसित संवेगात्मक बुद्धि ही यह निश्चित करती है कि किशोर स्वयं के उद्देश्य एवं लक्ष्य तथा समाज, मित्र एवं विभिन्न कार्यक्षेत्रों में सफलता पूर्वक विकास कर सके।

निष्कर्ष – किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का सार्थक प्रभाव पड़ता हैं। उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन के किशोर, किशोरियों एवं किशोर तथा किशोरियों के सम्मिलित समूह की संवेगात्मक बुद्धि निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन समूह की अपेक्षा अधिक है। तीनों समूहों के लिए उच्च एवं निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन समूहों की संवेगात्मक बुद्धि में अंतर के लिए निकाले गये क्रांतिक अनुपात के मान क्रमश: 5.90, 2.67 एवं 5.93 हैं , जो 0.01 स्तर पर सार्थक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ. श्रीमती संतोष मित्त (2002) 'बाल विकास तथा पारिवारिक संबंध' प्रकाशक मेयर्स यूनिवर्सिटी बुक हाउस (प्रा. लि.) 79 चौड़ा रास्ता, जयपुर 302003 संस्करण पे. न. 183-186
2. डॉ. बी. के बक्शी (1997) 'बाल विकास का अर्थ एवं क्षेत्र' प्रकाशक साहित्य प्रकाशन आपका बाजार हॉस्पिटल रोड, आगरा-3 संस्करण पे.नं. 255
3. रामनारायण अग्रवाल एवं विपिन अस्थाना (1993) 'मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन' संस्करण द्वितीय पे.नं. 190-193
4. कुप्पुस्वामी, बी (1982) 'बाल व्यवहार और विकास' विकास पब्लिशिंग हाउस, भारती प्रिंटर्स, आगरा, पेज नं. 51.84
5. कुढ़ेसिया, उमेशचन्द्र (1998) 'शिक्षा मनोविज्ञान' प्रकाशन केन्द्र न्यु बिल्डिंग, अमीनाबाद, लखनऊ, I
6. hhttp://www.google.com.in

तालिका क्रमांक-2 : किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	अभिभावकीय प्रोत्साहन	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	पी मान
किशोर	उच्च	112	92.68	9.69	5.90	<0.01
	निम्न	153	84.23	13.61		
किशोरियॉ	उच्च	100	91.82	10.34	2.67	<0.01
	निम्न	150	87.39	15.85		
किशोर एवं किशोरियॉ	उच्च	212	92.27	9.98	5.93	<0.01
	निम्न	303	85.80	14.82		

स्वतंत्रता के अंश 263,248,513

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान 1.96

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान 2.59

Buying Behavior of Retailers in Modern Wholesale Stores (With Special Reference to Best Price at Indore)

Prof. Rajesh Jain* **Dr. Paritosh Awasthi**** **Dr. R.L. Dave***** **Dr. Deepika Chouhan******

Abstract - Best Price Modern Wholesale distinguishes itself from the competitors with the help of largest collection of brands, Events and Activations. Customers are more attracted towards best price store because its offers best product with good quality, regionable price and also because it also provide Kotak Mahindra credit facility. The main object of study to factors affecting the buying behavior of retailers in modern wholesale store in Indore. 40% customers came to know about BPMW by the visit of the best price associates then next by the advertisement which regularly comes in newspaper and outdoor hoardings also helped them a lot while identifying the store. Through analysis we came to know that customers are happy with the store visit. And they are ready to visit the store again and again.

Introduction - Best Price is a modern wholesale store for business member only and work in the format of SAM club or Walmart. Best Price is a cash and carry store and offers free membership to their members and hence allow them to purchase in their store. A easy process of membership making is followed in which a person who is reseller, have office and institution or belong to hotel or restaurant or catering have to summit their business license along with the invoice copy and a identity proof then the membership card is allocated to them with the name of their firm, person name and a photo of person to whom card is allotted.

Review of Literature - Rajagopal (2012) in his " Study on point of sales promotions and buying stimulation in retail stores" analyses buying behavior in reference to the point of sales promotion offered by retailing firm and the determinates of sensitivity towards stimulating shopping arousal and satisfaction customer in order to build store loyalty have been discussed in this paper. It is found that loyal customers are attracted to the store brands.

Adethya & Anand (2014) Research paper by Mr. Ghosh suggested about the information age which is data warehouses, web services, XML, wireless, the internet and portals are a few technologies dominating the business page of the daily newspaper. Distorted information from one end of a supply chain to the other can lead to tremendous inefficiencies.

Rational of Study - Customers are the basic pillars on which any organization may be small or large stands. They are the one that frame the path of success for the organization. And this post communication help lot to sustain customer for long period of time, but this is only possible when one do a kind of promotion which reach to the individual. Today in the fast growing competitive world of corporate the customers are considered as important assets and there is a need for every organization to take care of its customers to sustain in the market and retain the customer base of their organization.

Objective of Study - The whole study concentrates on the following objectives :

1. To study the factors affecting the buying behavior of retailers in modern wholesale store in Indore
2. To measure the satisfaction level of local retailers towards Best Price.

Hypothesis :

H0 – There is no impact of Best Price on buying behavior of retailers in Indore

H1 – There is an impact of Best Price on buying behavior of retailers in Indore

Research Methodology - To research in a market is an inquiry designed and carried out to problem information to solve the problem.

(a) Research Design - The research design will be descriptive research.

(b) Sample Design - Here we are taking Judgment Sampling technique because we decide to draw the entire sample from one small area of Indore even though, Indore have an very vast area of retail market but it is not possible to cover the whole city in this limited time periods.

(c) Sample Unit - Retailers of Indore and nearby Indore.

(d) Sample Size - Questionnaires will give to approximately 200 customers who take their products from Best Price as well as from Local Wholesalers.

* Asst. Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA
** Principal, Shree Vaishnav Vanijaya Mahavidhayalaya, Indore (M.P.) INDIA
*** Professor, Shree Vaishnav Vanijaya Mahavidhayalaya, Indore (M.P.) INDIA
**** Professor, Shree Vaishnav Vanijaya Mahavidhayalaya, Indore (M.P.) INDIA

(e) Tools for Data Collection :

1. Primary data through questionnaire and observation
2. Secondary data through magazines, journals, articles and information through the organization

(f) Tools for data analysis - Appropriate mathematical and statistical tools will be applied for analysis of the data namely

1. Percentage Analysis

Analysis and Interpretation of Results

1. Name of the Business

Reseller	Organization	Industry	Others
70%	10%	20%	0%

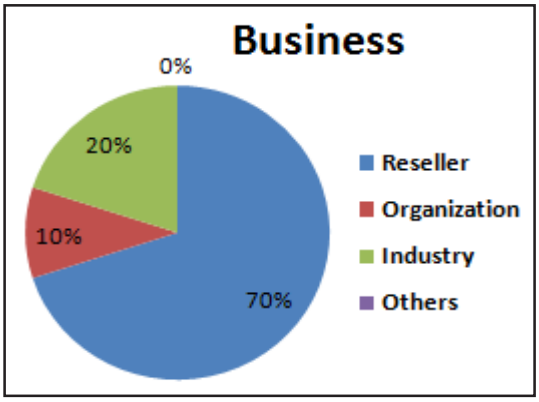

Interpretation : The above graph shows that 70% of business members are resellers, 20% are industry, 10% are organization. So the major portion of the business is catered by resellers.

2. What is the type of business that you are dealing with ?

Kirana Shop	42%
Fruits & Vegetables	10%
Stationery Shop	12%
Hotels	24%
Restaurant	4%
Caterer	4%
Office	2%
School / College	2%
Others	0%

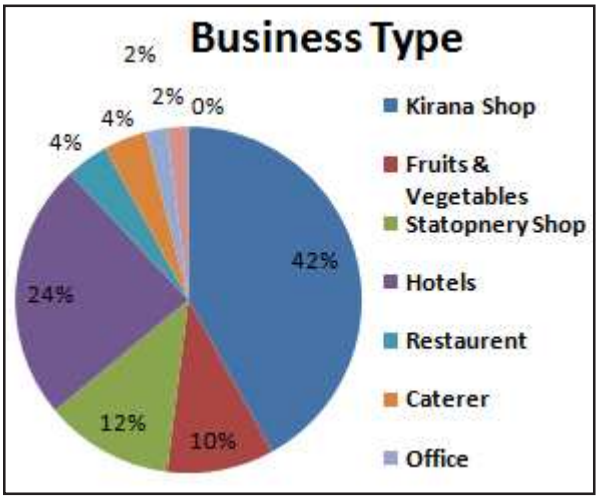

Interpretation : Most of our customers are from Kirana shops and hotels. Fruits and vegetables & stationery shops provide more customers to our store. And rests of our customers are from caterers, school / college and office.

3. How did you come to know about the store ?

SMS	2%
Cable TV	0%
Radio	0%
Outdoor Hoardings	16%
Flyer	4%
On ground activity in market	0%
Visit by Best Associates	40%
Invitations	12%
Newspaper AD	20%
Other People	6%

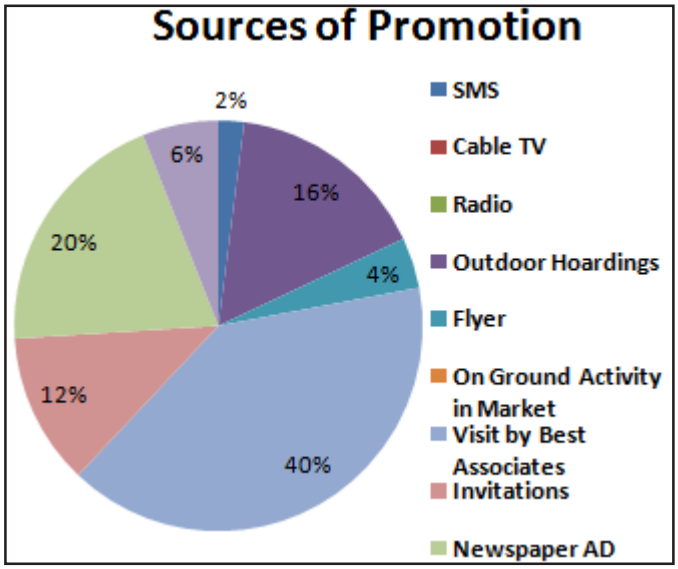

Interpretation : The above graph shows that 40% customers came to know about BPMW by the visit of the best price associates then next by the advertisement which regularly comes in newspaper and outdoor hoardings also helped them a lot while identifying the store.

4. How will you take the stocks with you ?

3PL	Own Vehicle
76%	24%

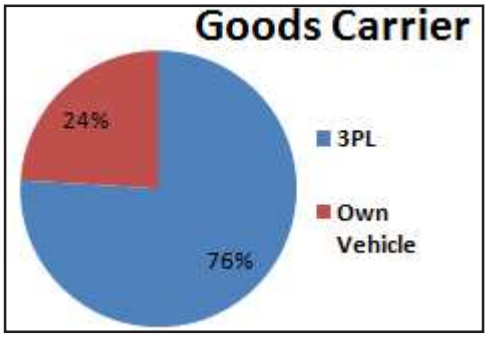

Interpretation : From the above pie it is clear that mostly members prefer 3PL rather than own vehicle.

5. Do you think that Best price modern wholesale store provide you with the required items of your need.

All the Items	Almost all the Items	All the nece-ssary Items	Some Items	Very Few
18%	30%	40%	8%	4%

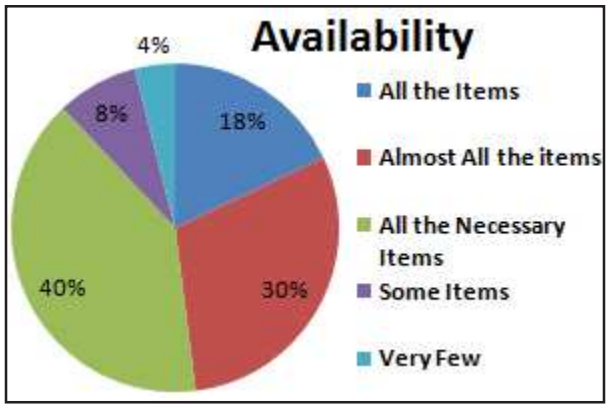

Interpretation : On the basis of availability the customers need for the entire necessary item is 40% which is the highest. For almost all items it is 30%. For all the items it is 18%. For some items it is 8% and the percentage of dissatisfactory customers is very few which 4% is.

6. Customer Service Survey :

Details	Excellent	Good	Average	Fair	Poor
Staff was avail able in a timely manner	44	34	12	6	4
Staff greeted you and offered to help you	22	36	14	22	6
Staff was friendly and cheerful throughout	34	38	18	8	2
Staff showed knowledge of the products/ services	4	20	38	34	4
Staff answered your questions	38	34	14	6	8

Interpretation : The satisfaction level of the customers was high as compared in the survey conducted by our team. The overall performance of the staff towards the customers was good.

7. Will you visit the Best Price store again ?

Yes	No
100%	0%

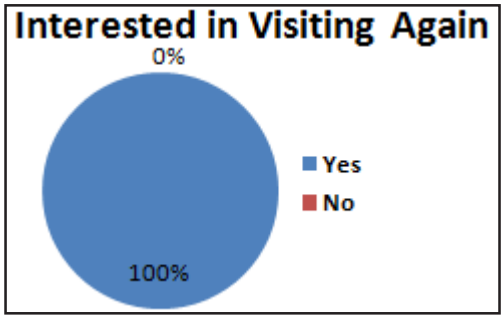

Interpretation : Through analysis we came to know that customers are happy with the store visit. And they are ready to visit the store again and again.

8. Will you recommend this store to other business member ?

Yes	No
100%	0%

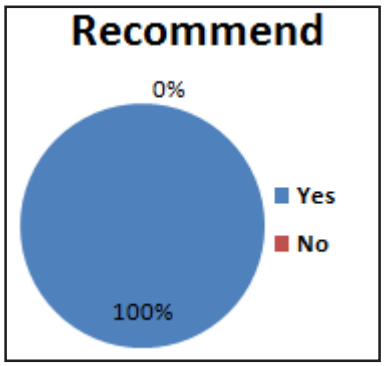

Interpretation : The affirmation of the customers for recommending the store to other business men was 100%.

9. How will you rank Best Price against other modern wholesale store in Indore ?

V. good	Good	Equal	Poor	V. Poor
40	30	20	5	5

Interpretation : It is to be interpreted through this analysis that, Peoples here in Indore prefer more to have shopping their business goods through Best Price.

Findings :

1. Most of the members are resellers as compare to organization and Industry
2. Kirana shops are highly engaged in this B2B marketing.
3. Membership drive plays the most important role in making the people aware about the BPMW.
4. Customers are more attracted towards best price store because its offers best product with good quality, regionable price and also because it also provide Kotak Mahindra credit facility.
5. Billing time taken at best price store is one the main drawback of the store.

6. As per the survey done it is found that people prefer more of the 3PL than own vechile.
7. It is found that almost all the necessary items are available in the store
8. As per the opinion of the customers staff of the BPMW store is almost up to the market.
9. Keeping the facilities offered by ' Best Price' store in mind people are more attracted and satisfied with services and products of the store and hence would recommend this store to others.
10. It is to be found that peoples here in Indore prefer Best Price to purchase their business products.

Suggestions :

1. BPMW Store should also concertrate and more link ups with organizations and industries so as to expand their business.
2. As per customers it is found that BPMW store should increase the Credit periods as per the customers need.
3. BPMW Store should increase the number of billing counter during peak time/day so as to avoid the wastage of time at counter or they have to enable auto billing system in there entire store area and start educating their customers/ members regarding this auto billing system.
4. BPMW store should give proper training session to their staff members according to their appointed sections.

Conclusion :

1. Best Price Modern Wholesale distinguishes itself from the competitors with the help of largest collection of brands, Events and Activations.
2. Best Price Modern Wholesale has a huge market potential.
3. Customers are delighted by the variety and price of the product available in the store.
4. Unique market strategy adopted by best price modern wholesale store for providing wholesale products at cheaper rates compared to other wholesalers and distributors.
5. The concept of providing all materials under one roof for wholesale products is new of its kind and has the potential of attracting more customers.

References :-

1. Rajagopal (2012) " Study on point of sales promotions and buying stimulation in retail stores".
2. Eldon M. Kenneth E. Miller (2009) " The Post purchase communication"
3. Robert A.Westbrook, (2013) " Consumer satisfaction for a large conventional department store"
4. http://www.bharti-walmart.in?AboutUs.aspx
5. http://en.wikipedia.org/wiki/retailing-in-india
6. http://www.wisegeek.com/what-is-a-cash-and -carry-trade.htm

****

Role of ICT & its impact on education

Dr. Manoj Mahajan * Dr. Sudhir Mahajan **

Abstract - A paradigm shift in the economy and society has been observed, for which transformation in the skills, capabilities and attitude of the masses is very much needed. The transformation requires a change in the delivery and method of education. In fact education is the backbone of a nation. Education system plays a major role in the required transformation. ICT plays a vital role in imparting education in modern scenario.

ICT increases the flexibility of delivery of education so that learners can access knowledge anytime and from anywhere. It can influence the way students are taught and how they learn as now the processes are learner driven and not by teachers. This in turn would better prepare the learners for lifelong learning as well as to contribute to the industry. It can improve the quality of learning and thus contribute to the economy.

The paper delineates in brief the impact of ICT on education.

Key words - ICT, Society, Education, Impact.

Introduction - Information communication and technology (ICT) is one of the most important driving forces promoting economic growth. The most discussed word today is "Technology" which is continuously affecting our way of living every day. In 20th century the rapid growth of technology led in rising the standard of living, literacy and health. And now as we it moved on in 21st century Information and Communication Technology (ICTs) brings to us both opportunities and challenges. The impact inspired by the use of ICT can be both positive and negative. However what it brings to an individual is totally dependent on how he/she uses it (ICTs).

Many countries across the globe are putting in place policies and plans designed to transform their economies into information and knowledge economy. Some of these countries implemented ICTs for socio-economic development as on area where they can establish global dominance to generate high quality employments to strengthen their lively hood.

One could ask whether these technologies will have an impact on education output and outcomes. As we see that ICTs are being increasingly used in the sector of education, indicators are required to measure the technology used and its impact on educational performance. There is also a need to show that education should be seen as using technology not only as an end in itself, but as a means to promote creativity, empowerment and equality and produce efficient learners and problem solvers.

Accordingly, the paper's purpose is to study and review few of the previous researches on impact of ICTs on education.

Definition of ICT - ICT i.e. Information and Communication Technology can be defined as use of hardware and software for efficient management of information. ICT refers to the form of technology which is used to transit, store, create, share or exchange particular task.

Defining ICT is an umbrella term that includes any communication device or application – including radio, television, cellular phones, computer and network hardware and software, and satellite systems, as well as the various services and application associated with them, such as video conferencing and distance learning.

It has become a part and parcel of life. The discoveries and inventions in science have improved the speed of communication and information share. By making use of available tools, it is helping common man to fulfill his needs. It has become an integral part of new era.

Scope of ICT in education - With the internet and the worldwide web a wealth of learning materials in almost every subject and in a variety of media can now be accessed from anywhere at any time of the day and by an unlimited number of people.

Improving the quality of education and training is a critical issue, particularly at a time of educational expansion. ICT can enhance the quality of education in several ways: by increasing learner motivation and engagement, by facilitating the acquisition of basic skills and by enhancing teacher training.

ICT such as videos, television and multimedia computer software that combine text, sound and colorful moving images can be used to provide challenging & authentic content that will engage the students in the learning process.

Different mediums used to communicate information are - Internet, Website, Digital books, Magazine and Library, Electronic Libraries , Blog, Social networking websites,

*Assistant Professor (Commerce) A.S.R.M. Govt. College, Sonkatch, Distt. Dewas (M.P.) INDIA
** Assistant Professor (Commerce) A.S.R.M. Govt. College, Sonkatch, Distt. Dewas (M.P.) INDIA

Virtual Classes, Search engine, Electronic encyclopedia, E-Mail, Cloud based computing, Online Exams, Smart classes, Mobile learning etc.

Impact of ICT on education - There are considerable benefits that ICT can bring to education. The Impact of ICT in education has been assessed in various studies, mixed result. It is difficult and may be even impossible to imagine future learning environment that are not supported by Information and Communication System. ICT promises of providing better to more people more efficiently rather than doing it without the use of technology. Countries around the world are immensely investing in ICT in education over the past few years.

Education is considered as one of the key pillars for the growth of an economy in a country. Education system is changing rapidly due to the new innovation in ICT which has led to the "Knowledge society also called 'The knowledge and information society."

ICT acts as a stimulant and foster analytical thinking and interdisciplinary studies. It networks the learner with the peers and experts and develops collaborative atmosphere. It plays the role of a guide and mentor by providing tailor made instructions to meet individual needs. Multimedia helps in enhancing the effectiveness of teaching-learning and hence proves crucial for learners. Modern ICT tools not only deliver the content but also replicate formal learning experience via virtual learning. It makes education accessible to all type of learners it caters to every single one of them, irrespective of the geographical barriers or resource constraints. Many studies done in recent times have concluded that mobile learning can make a positive and significant difference in the outcome performance than traditional methods of classroom lectures, notes and review.

In 21st century, every bit of information of the world is available on the mobile and also people use these medium to be informed and stay connected to the world around them. Where as, Mobile learning offers independent space and flexibility that comes from working away from the learning institute or tutor. It makes education accessible to all, irrespective of geographical barriers or resource constraints. Not only this, in the recent few years many of the educational institutes like schools and colleges have adopted ICT for training & teaching. Smart classes in schools and Virtual lectures and conferencing in colleges are been used. This means that people understand the need of ICT where everyone wants to become an edge better than the other.

Positive Impact - ICT has enabled more information to be readily available and shared through the use of the internet. The information now is readily accessible and cheap. This has led reduced load of books that students have to carry with them previously.

1. The amount of information available to students is vast, which has led to opportunities to explore the information across the globe.
2. ICT has helped to share and easier accessibility of book and scientific journal which was a few year back scare and very expensive
3. It has provided facility of distance learning programs which are being continued in many universities, where students can access teaching materials from all over the world.
4. In many countries where still education standard and literacy is way below than international standards technologies helped to cross the geographical boundaries and has entered in remote areas though teleconferencing.
5. ICT also has changed the experience of learning where by more interactive learning software's is being developed to teach subjects in an easier and understandable mode.
6. The cost earlier incurred on education material has reduced due to ICTs use. Students now access the information that they require in digital format.
7. It helps to prepare individuals for the workspace in representing competitive edge in an increasingly globalizing job market.
8. ICT has provided the ability to perform 'impossible experiments' by using stimulations and performing it several numbers of times.
9. It has made possible for every individual student through learning programs within a topic, instead of several people doing the same thing at same time at same speed.
10. Technology today has improved the level of education by creative learning and also it assists in enhancing teacher capabilities.
11. New modes of teaching formats have developed leading in higher quality education system. Example: - Electronic boards replacing traditional blackboards.

Negative Impact - Technology acts both positively and also creates a negative effect on the society. Every new technology we use today comes with both its pro's and con's. Technology makes people its addict, as person suffers from drug addiction there is also addiction technology.

1. Students today are spending more time today online and getting less fresh air and exercise which have increased the possibilities of various kinds of diseases.
2. There are inadequate instructors trained to use the new ICT gadgets due to obstacles they face in using the technology.
3. There is a lack of proper infrastructural facilities in many institutes which obstructs the flow of communication of information.
4. It has led to loss and shutdown of many publishing units which resulted in unemployment.
5. Poor students still are unable to access this innovative way of studying, which is ultimately acting as a factor in creating 'Digital Divide'.
6. ICT is nothing until the manner of teaching with the use of ICT is proper and effective.
7. A huge setup cost is incurred at the time of installation of such technique which is deferred revenue expenditure.

8. Students and sometimes teachers also gets hooked up in technology aspect rather than subject content.
9. ICT creates an impact and increases motivation to learn but soon it becomes the new normal.
10. Infringement of intellectual property due to illegal download and sharing of unlicensed learning software's.

Conclusion - Wider availability of better practices and better course material in education can be shared by means of ICT, which as a result can foster better and improved teaching. ICT can allow education institution to reach rural areas and also allows them access to international educational forums. Improvement in delivery, method and efficiency of education can thus influence students and would affect their lifelong learning as well as their contribution to the society. However there exist some risks and drawbacks with introducing ICT in education which have to be mitigated and for this proper controls and licensing should be ensured.

References :-

1. wikispaces.com
2. www.pressoffice.telefonica.com
3. www.academia.edu
4. www.edu.gov.mb.ca
5. ICT: Changing education, 2001, Chris Abbott
6. Report of United Nations conference on trade and development 2011
7. IQSR Journal of computer engineering vol.3 Issue 2 [July-Aug 2012]

****

Problems And Challenges In Adopting IFRS In India : An Inquiry

Dr. Abhay Pathak * Neha Bhandari **

Abstract - IFRS are the globally accepted accounting standards and interpretations adopted by the IASB.An upcoming economy on world economic map, India, too, decided to converge to International Financial Reporting Standards (IFRS). In India, ICAI has decided to adopt the IFRS by April 2011.The paper attempts to show the impact of convergence to IFRS on financial position of the company. The secondary data is studied to know the impact of convergence to IFRS on financial position with the help of case study of WIPRO limited. It also discusses the challenges faced by firms in the process of adoption of IFRS in India. The paper concludes the ways through which these challenges can be addressed.

Introduction - International Financial Accounting Standards (IFRS), formerly known as International Accounting Standards (IAS) are the Standards, Interpretations and Framework for the Preparation and Presentation of Financial statements adopted by the International Accounting Standards Board (IASB). IAS was issued in 1973 and 2001 by the board of the Internal Accounting Standards Committee (IASC). On April 1 2001 the new IASB took over the responsibility of setting International Accounting Standards from IASC. It has since then continued to develop standards called as the new standards IFRS. IFRS is a set of international accounting and reporting standards that will help to harmonize company financial information, improve the transparency of accounting, and ensure that investors receive more accurate and consistent reports. The use of common set of accounting standards throughout the world provides an easy way of comparability and transparency of financial information. It also reduces the cost of preparing financial statements. A constant use of accounting standards provide higher quality information which enables the investors to make a better decision, indirectly fund will allocate in more efficient manner in the market and the company can reduce its overall cost of capital.

Objectivies :

1. To study the benefits of convergence to IFRS.
2. To study the Problems and Challenges faced in the process of Convergence to IFRS.
3. To focus on the Measures taken to address the Challenges.

Literature Review - Armstrong et al (2010) found out a positive reaction to IFRS adoption events for firms with high quality pre adoption information, consistent with investors expecting net convergence benefits from IFRS adoption. In his study of 1084 European Union firms during the period of (1995-2006), Cai & Wong (2010) in their study of global capital markets summarized that the capital markets of the countries that have adopted IFRS have higher degree of integration among them after their IFRS adoption as compared to the period before the adoption. Paananen & Lin (2009) gave a contrary view to prior research that IFRS adoption ensures better quality of accounting information. Their analysis of German companies reporting showed that accounting information quality has worsened with the adoption of IFRS over time. They also suggested that this development is less likely to be driven by new adopters of IFRS but is driven by the changes of standards. Lantto & Sahlstrom (2009) in their study of key financial ratios of companies of Finland found that the adoption of IFRS changes the magnitude of the key accounting ratios. The study also showed that the adoption of Fair Value Accounting rules and stricter requirements on certain Accounting issues are the reasons for the changes observed in Accounting Figures and financial ratios. Chand & White (2007) in their paper on convergence of Domestic Accounting Standards and IFRS, demonstrated that the influence of Multinational Enterprises and large international accounting firms can lead to transfer of economic resources in their favor, wherein the public interests are usually ignored. Elena et al (2009) in their article dealing with the issues of convergence between US Generally Accepted Accounting Principles (GAAP) and IFRS were of the opinion that the adoption of IFRS in the USA undoubtedly would mark a significant change for many US companies. It would require a shift to a more principles-based approach, place for greater reliance on management (and auditor) judgment, and spur major changes in company processes and systems. 5 Ali & Ustundag (2009) in their paper on

* Professor (Commerce) Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA

development process of Financial Reporting Standards around the World and its practical results in a developing country, Turkey. They observe that Turkey has encountered several complications in adaption of IFRS such as complex structure of the International standards, potential knowledge shortfalls and other difficulties in application and enforcement issues. Epstein (2009) in his article on Economic Effects of IFRS adoption emphasized on the fact that universal financial reporting standards will increase market liquidity, decrease transaction costs for investors, lower cost of capital and facilitate international capital formation and flows.

Beneficiaries Of Convergence With IFRS - The researchers have pointed out several beneficiaries to the convergence of Indian Generally Accepted Accounting Principles (GAAP) with IFRS. Some of them are discussed here below.

1. The Investors - Convergence of Indian Accounting Standards with IFRS makes accounting information more reliable, relevant, timely and comparable across different legal and economic frameworks and requirements since it would then be prepared by using a common set of accounting standards which will facilitate the investors who willing to invest in the countries apart from India. It will also develop better understanding of financial statements worldwide which increase the confidence among the people as investors.

2. The Industry - The other important set of beneficiary the researchers came across is the industry which in the event of convergence with IFRS will be benefited because of some basic reasons. Firstly it will enhance confidence in the minds of the foreign investors, secondly, it decreases the burden of financial reporting, thirdly, it would make the process of preparing the individual and group financial statements easier and simplest, and the last and important one is that this will reduce cost of preparing the financial statements using different sets of accounting standards.

3. Accounting Professionals - However, there would be initially many problems but convergence with IFRS would surely benefit the accounting professionals and it will be helpful them to sell their talent and expertise across the globe.

4. The corporate world - Convergence with IFRS would build the reputation and long lasting relationship of the Indian corporate world with the international financial entities. Moreover, the corporate entities back in India would be benefited because of several reasons. The higher level of consistency will be maintained between external and internal reporting, two, because of better access to global financial markets, three, it will improve the risk rating and makes the corporate world more and more competitive globally as their comparability with the global competitors will increase.

5. The Economy - All the discussions made above explains how convergence with IFRS would help industry grow and is beneficial to the corporate entities in the country as this would make the internal and external highly consisted, and it will report improvement in the risk rating among the foreign investors. Moreover, the international comparability is also benefiting the industrial and capital markets in the country which lead to better economy across the country

Major Challenges In The Process Of Adoption Of Ifrs In India - IFRS is a set of international accounting and reporting standards which will help to harmonize company financial information, improve the transparency of accounting, and ensure that investors receive more accurate and consistent reports. Despite several benefits as may be looked out by the different people, there will be several challenges that will be faced on the way of IFRS convergence.

1. Difference in GAAP and IFRS - Adoption of IFRS means that the entire set of financial statements will be required to go through a severe change. There are ample of differences. It is the challenge to generate awareness of IFRS and to identify its impact among the users of financial statements.

2. Training:- Lack of training amenities and academic courses on IFRS will also pose challenge in India. There is a need to be educated on IFRS and its application.IFRS has been implemented with effect from 2011;but it is observed that there is acute shortage of trained IFRS staff.The Institute of Charted Accountants of India (ICAI) has started IFRS Training programmes for its members and other interested parties.

3. Legal and Regulatory considerations - Presently the reporting requirements are governed by various regulators in India and their provisions override other laws. IFRS does not recognize such overriding laws. The regulatory and legal requirements in India will act as a challenge unless the same laws have addressed by respective regulatory.

4. Taxation - Currently,Indian Tax Laws do not recognize the Accounting Standards.Therefore,a complete overhaul of Tax Laws is the major challenge faced by the Indian Law Makers immediately.In july 2009,a committee was formed by Ministry of Corporate Affairs of Government of India,with a view to identify the various legal and regulatory changes required for convergence and to prepare a roadmap for achieving the same.

5. Management compensation plan - This is because the financial results under IFRS are likely to be very different from those under the Indian GAAP.The contracts would have to be re-negotiated by changing terms and conditions relating to management compensation plans.

6. Measurement using fair value - Fair value approach is used by IFRS as a measurement base for valuing the majority of the items of financial statements. The application of fair value accounting can bring a lot of volatility and subjectivity to the financial statements. It also involves a lot of hard work in finding the fair value and experts valuation have to be used.

7. Reporting systems - Companies would have to make sure that the existing business reporting model is amended to go well with the reporting requirements of IFRS. The information systems should be planned to capture new requirements related to fixed assets, segment disclosures, related party transactions, etc.

Measures That Should Be Taken To Address The Challenges :

1. The companies should follow the recommendations given by Accounting Standard board for changes required in rules and regulations of various regulatory bodies.
2. The companies should use the interpretations of accounting standards issued by ICAI, with a view to resolve various complicated interpretational issues arising in the implementation of new accounting standards.
3. Companies should take benefit of the guidance notes, background materials on newly issued accounting standards issued by ICAI.
4. For the purpose of supporting its members, the ICAI council has created an expert advisory committee to answer queries from its members. Companies can ask to the experts for resolving the critical issues.

Conclusion - The switching over to IFRS is a major challenge, but it is also an opportunity for investors,company,and professionals to review their programs,practice and procedure more effective and efficient. convergence with IFRS is strongly recommended because the measures taken by ICAI and the other regulatory bodies to facilitate the smooth convergence to IFRS are creditable and give the positive idea that the country is ready for convergence. Keeping in mind the fact that IFRS is more a principle based approach with limited implementation and application guidance all accountants whether practicing or non practicing have to participate and contribute effectively to the convergence process so the need is to have a systematic approach to make the organization and the investors ready for the change and the standards ready for renovation.

References :-

1. Poria, Saxena, Vandana, 2009, IFRS Implementation and Challenges in India, MEDC Monthly Economic Digest.
2. Prof. Jyoti H. Pohane, International Indexed & Referred Research Journal, ISSN- 2250-2556; VoL. I *ISSUE-1, April, 2012.
3. Prof. Dr. Ravi Sharma, IFRS THE WAYAHEAD, International Referred Research Journal ISSN- 0975-3486 VOL,I *ISSUE-9 RNI: RAJBIL /2009/30097
4. Link: http://www.icai.org/resources
5. Mukherjee, Kanchan, 2010, IFRS Adoption: Cut-Over Challenges, The Chartered Accountant, 59 (6) pp 68-75.

****

Financial Performance of General Insurance in Indian Insurance Industry

Dr. N. K. Patidar * Nidhi Saxena **

Abstract - The performance of the company plays a leading role towards the growth of the industry which ultimately leads to the overall success of the economy. The present study attempts to examine the financial performance of Indian general insurance on the basis of various parameters. For measuring it, various financial ratios have been calculated taking into consideration liquidity, solvency, profitability and leverage of the insurance players. Generally, performance can be estimated by measuring the profitability of firm and insurers. In order to accomplish the aim, the study determines the impact of liquidity, solvency, leverage, size and equity capital on the profitability of general insurance in India.

The sample for this study includes 18 Indian general insurance (including 1 public and 17 private) and it analyses the data of 5 years from 2007-08 to 2011-12. The study uses multiple linear regression model to measure the extent to which these determinants exert impact on life insurers profitability. The results of the study reveal that profitability of life insurers is positively influenced by liquidity and size and negatively related with capital. Profitability does not show any relationship with solvency and insurance leverage.

Introduction - Insurance is the backbone in managing the risk of the country. The insurance providers offer diversity of products to business, providing protection from risk thereby ensuring financial security. It helps individual and organization to minimize the consequences of risk which impart significant cause on the growth and development of insurance industry. Indian insurance industry is facing major challenges in reaching out willing customers, providing them services, acquiring and retaining players, product and distribution innovation etc. Apart from addressing the challenges of customers, improving the performance to achieve profitable growth is another big challenge faced by Indian life insurers. To sustain the profitable growth, private companies are struggling in spreading awareness about need of insurance, developing brand strength, meeting regulatory demands, establishing wide network of distribution channels and setting infrastructure. Life insurance sector anticipate different segments of customers with different needs thereby raising the importance of new and competitive dynamics. To emerge as winners they reconsider strategies which help them to have a sustainable and profitable business. According to Mckinsey and Company (2012), consumer rank life insurance higher than any other investment options because of its ease and convenience in investing, tax benefits, and tax protection. Among all investments options in India, life insurance products enjoy high popularity and demand.

Growth of general insurance Industry - At the time of opening of the insurance sector in India there was no cut throat competition in the market. Till 2000, there was only one life insurance company operating in India i.e. Life Insurance Corporation (LIC) in the public sector. Indian government allowed privatization in insurance industry in 1999 setting up Insurance Regulatory Development Authority (IRDA) to regulate and develop insurance industry. IRDA issued licenses and has opened life insurance market to private companies. As a result, insurance sector in India has grown at a rapid rate after liberalization in 1999 and private players have been allowed to enter in life insurance market in India. The Indian Life insurance industry expanded tremendously from 2000 onwards in terms of premium income, new business policies, number of offices, agents, products, riders etc. Insurance industry in India is moving through a phase of high growth which is led by players who tries to change the dynamics of market through modernization and improvement. Presently in 2012-13 there are 23 private life insurers and 1 public life insurers operating in India. According to McKinsey study 2007, it was estimated that India is likely to emerge as the fifth largest market in the world by 2025.

Objectives of the Study - The present study made an attempt to examine the financial performance of general insurance in Indian insurance industry.

1. To measure the financial performance of selected life insurers during time period taken under the study.
2. To determine the impact of liquidity, solvency, leverage, size and equity capital on the profitability of life insurers.

Research Methodology - The study has taken 18 general insurance depending upon the availability of data. The study

*Professor (Commerce) Govt. College, Pipliya Mandi, Dist.t Mandsaur (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

is based upon secondary data which has been collected from annual reports of IRDA. Besides, a few websites have been consulted. The study covers the time period of 5 financial years i.e. 2007-08 to 2011-12. For determining the financial performance, financial ratios like current ratio, solvency ratio, return on asset ratio and leverage ratio is calculated for each life insurers taking into consideration liquidity, solvency, profitability and leverage of the company. The study uses multiple linear regression model to measure the extent to which these determinants exert impact on life insurers profitability. For this purpose, the firm characteristics such as liquidity ratio, solvency ratio, leverage ratio, size and equity share capital are regressed against Return on Assets. The assumptions of regression analysis like normality, stationarity and auto correlation have been checked. The growth rate of life insurers is calculated by taking natural log of variable year wise and thereby examining beta value. Software E-Views 6 has been used for obtaining regression results.

Profitability Analysis - Return on assets is a profitability ratio which measures how far a company is profitable in relation to its total assets. ROA tells the investor how well a company uses its assets to generate income. It is a key indicator of the overall productivity of the company, and shows the percentage of profit, company earns in relative to its total resources. A negative ROA suggests that a company is not properly utilizing its capital, and may have disputed management. A company with negative ROA, means it is investing a high amount of capital into its production and simultaneously receiving little income. The company can have a high return on assets even if it is bearing low profit margin.

Conclusion of the Study - The study has aimed to examine the financial performance of Indian life insurance companies through analyzing the determinants of their profitability. Measuring the performance of insurance companies has gained the relevance because they are not only providing the mechanism of saving money and transferring risk but also helps to channel funds in an appropriate way from surplus economic units to deficit economic units so as to support the investment activities in the economy. Performance of companies can affect economy as a whole and therefore it requires empirical analysis to judge the performance. For measuring financial performance, financial ratios such as current ratio, solvency ratio, return on assets ratio and insurance leverage ratio have been calculated. The study evaluated that public sector player LIC has sound liquidity position among all life insurers. As far as private players are concerned Companies like Future Generali, IDBI, Sahara, Shri Ram and SBI life have sound liquidity position. In case of solvency position, life insurers like Aviva, Bajaj Allianz, IDBI, Max Life, Sahara and SBI life insurance have higher solvency ratio as compared to others. Public life insurer is showing stability in its solvency position in five years. Return on asset measure of Bajaj Allianz and ICICI prudential sounds good. The ratio is stable and presents a healthy picture of public insurer. As far as leverage analysis is concerned the performance of LIC is far better than that of private players. Regression analysis of the study shows that profitability has significant positive relationship with liquidity and size. On the other hand there is significantly negatively relationship between profitability and capital. The result also illustrates that profitability has no significant relationship with solvency and insurance leverage. It is therefore imperative to identify factors which can help insurance companies and investors to increase their profitability.

References :-

1. Chaudhary, S.,Kiran, P. (2011) "Life Insurance Industry in India - Current Scenario" International Journal of Management & Business Studies, Vol 1, Issue 3, pp 146-150.
2. Darzi, T.A. "Financial Performance of Insurance Industry In Post Liberalization Era In India" Thesis, University of Kashmir, Hazratbal Srinagar.
3. Gour1. B, Gupta. M.C (2012), "A Review on Solvency Margin in Indian Insurance Companies" International Journal of Recent Research and Review, Vol. II, pp 43-47.
4. Gulati, N.C., Jain, C. M. (2011) "Comparative Analysis of the Performance of All the Players of the Indian Life Insurance Industry" VSRD-IJBMR, Vol. 1, No 8, pp 561-569 ISSN: 2223-9553
5. Malik, H. (2011) "Determinants Of Insurance Companies Profitability: An Analysis of Insurance Sector Of Pakistan" Academic Research International Vol. 1, Issue 3, pp 315-- 321.

****

म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केन्द्र से सहायता, अनुदान का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. एल. एन. शर्मा *

प्रस्तावना – सरकार की वित्त व्यवस्था एक सार्वभौमिक पहलू है, जिसके अन्तर्गत लोक सत्ताओं के आय एवं व्यय एवं उनका एक दूसरे से समायोजन का अध्ययन किया जाता है। लोक वित्त की विषय सामग्री में लोक व्यय, लोक ऋण, वित्तीय प्रशासन, राजकोषीय नीति आदि का अध्ययन महत्वपूर्ण है। 21 वीं शताब्दी में विकासशील देशों की समस्या तेजी से विकास की है। लगभग यही स्थिति देश के प्रदेशों की भी है। अत: बजट प्रावधानों में इसको समाहित किया जाता है। जिसमें आय का संग्रहण सबसे महत्वपूर्ण पहलू है।

म.प्र. सरकार के राजस्व में, राजस्व प्राप्तियों एवं पूंजीगत प्राप्तियों की अहम् योगदान है, विशेषकर राजस्व प्राप्तियों में कर राजस्व जिसके अन्तर्गत (अ) राज्यकर (ब) केन्द्रीय करों में हिस्सा महत्वपूर्ण एवं सबसे बड़ा भाग है इसके साथ–साथ राजस्व प्राप्तियों में कर विभिन्न राजस्व भी अपना योगदान देते है। परन्तु इसमें केन्द्र से सहायता, अनुदान भी एक महत्वपूर्ण घटक है। जो राजस्व प्राप्तियों में वृद्धि करता है। केन्द्र से सहायता, अनुदान के भी चार भाग है (अ) जिसमें राज्य आयोजनगत योजनाऐं (ब) केन्द्र प्रायोजित आयोजनागत योजनाऐं (स) केन्द्रीय आयोजनागत योजनाऐं (द) आयोजना भिन्न अनुदान, सम्मिलित है। चूंकि इस प्राप्ति में केन्द्र का महत्वपूर्ण योगदान होता है, अत: राजस्व की कमी में इस मद से अधिक से अधिक राशि केन्द्र से लाकर राज्यों का विकास किया जा सकता है।

शोध का उद्देश्य – म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केन्द्र से सहायता, अनुदान का कितना योगदान है। एवं उनकी उनकी वृद्धि दर क्या है साथ ही छत्तीसगढ़ सरकार की तुलना में म.प्र. में इस शीर्षक का योगदान एवं उनकी वृद्धि दर कितनी है, साथ ही दोनों प्रदेशों में एवं केन्द्र में एक ही पार्टी की सरकारे है, अत: उक्त शीर्षक में राज्यों में केन्द्र का कितना योगदान है किस राज्य में ज्यादा है। तथा किस राज्य में तुलनात्मक रूप में कम है। यह ज्ञात करना शोध का प्रमुख उददेश्य है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – शोध पत्र में म.प्र. सरकार एवं छत्तीसगढ़ सरकार के बजट के प्रकाशित द्वितीयक समंक वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 का तुलनात्मक उपयोग किया गया है। तथा आवश्यकता अनुसार चित्रों द्वारा प्रदर्शन भी किया गया है।

शोध के अध्ययन क्षेत्र की सीमाऐं – प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. सरकार एवं छत्तीसगढ़ सरकार के वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 के केवल बजट अनुमानो का ही अध्ययन किया गया है।

शोध व्याख्या –

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 1 के निष्कर्ष इस प्रकार हैं :–

1. म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में राज्य आयोजनागत योजनाओं के लिये वर्ष 2012–13, से 2015–16 तक लगातार वृद्धि हुई है। 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 253 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है, परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 264 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।
2. म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में केन्द्र प्रायोजित आयोजनागत योजनाओं के लिये 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 116 प्रतिशत की कमी हुई है, जो चिंता का कारण है। परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 100 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।
3. म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में केन्द्रीय आयोजनागत योजनाओं के लिये 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है, परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 47 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।
4. म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में आयोजना भिन्न अनुदान के लिये में वर्ष 2012–13 से 2015–16 तक लगातार वृद्धि हुई है। 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 37 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है, परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 83 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।
5. म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में वर्ष 2012–13, से 2015–16 तक लगातार वृद्धि हुई है। 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 83 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है, परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 100 प्रतिशत की गिरावट विशेष चिंता का विषय है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

तालिका 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 2 के निष्कर्ष इस प्रकार हैं :–

1. छत्तीसगढ़ सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में राज्य आयोजनागत योजनाओं के लिये वर्ष 2012–13, से 2015–16 तक लगातार वृद्धि हुई है। 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 06 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है, परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 76 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।
2. छत्तीसगढ़ सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में केन्द्र प्रायोजित आयोजनागत योजनाओं के लिये 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 293 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, जो शुभ संकेत है। परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 323 प्रतिशत की कमी हुई है जो चिंता का कारण है।
3. छत्तीसगढ़ सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में केन्द्रीय आयोजनागत योजनाओं के लिये 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 154 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 151 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।
4. छत्तीसगढ़ सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में आयोजना भिन्न अनुदान के लिये में वर्ष 2012–13, से 2015–16 तक लगातार वृद्धि हुई है। 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 19 प्रतिशत की कमी हुई, जो चिन्ता का विषय है तथा 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 05 प्रतिशत की गिरावट भी चिंता का विषय है।
5. छत्तीसगढ़ सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान में वर्ष 2012–13 से 2015–16 तक लगातार वृद्धि हुई है। 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 78 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 107 प्रतिशत की गिरावट विशेष चिंता का विषय है।

तालिका 3 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 3 के निष्कर्ष इस प्रकार हैं :–

1. राज्य आयोजनागत योजनाओं के लिये वर्ष 2012–13 से 2013–14 में मध्यप्रदेश में 21 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 07 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ से 14 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 में मध्यप्रदेश में 274 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 13 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 261 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2014–15 से 2015–16 में मध्यप्रदेश में 10 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में –63 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश 2014–15 से 2015–16 में छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 73 प्रतिशत आगे है।
2. केंद्र प्रायोजित आयोजनागत योजनाओं के लिये वर्ष 2012–13 से 2013–14 में मध्यप्रदेश में 16 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि छत्तीसगढ़ में 40 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ से 24 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 में मध्यप्रदेश में –100 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 333 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ से 433 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014–15 से 2015–16 में मध्यप्रदेश में 00 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश ,छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 10 प्रतिशत पीछे है।
3. केन्द्रीय आयोजनागत योजनाओं के लिये में वर्ष 2012–13 से 2013–14 में मध्यप्रदेश में 28 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 8 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 20 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 में मध्यप्रदेश में 38 प्रतिशत की वृद्धि हुई।जबकि छत्तीसगढ़ में 162 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 124 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014–15 से 2015–16 में मध्यप्रदेश में –9 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश 2014–15 से 2015–16 में छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 20 प्रतिशत आगे है।
4. आयोजना भिन्न अनुदान में वर्ष 2012–13 से 2013–14 में मध्यप्रदेश में 11 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 25 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश वर्ष 2012–13 से 2013–14 में छत्तीसगढ़ से 14 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 में मध्यप्रदेश में 47 प्रतिशत की वृद्धि हुई। जबकि छत्तीसगढ़ में 6 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 41 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2014–15 से 2015–16 में मध्यप्रदेश में –36 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 01 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 37 प्रतिशत पीछे है।
5. कुल केंद्र से सहायता अनुदान में वर्ष 2012–13 से 2013–14 में मध्यप्रदेश में 18 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 18 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 00 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 में मध्यप्रदेश में 101 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 96 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 05 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2014–15 से 2015–16 में मध्यप्रदेश में 01 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में –11 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 12 प्रतिशत आगे है।

सुझाव –

1. चूँकि म.प्र. एवं केन्द्र में एक ही पार्टी की सरकारें होने से राज्य आयोजनागत योजनाओं हेतु ज्यादा से ज्यादा राशि केन्द्र से लेने का भरसक प्रयास करना चाहिए। इसके लिए राज्य के अधिकारियों को इस बात का अध्ययन करना होगा कि केन्द्र इस शीर्षक के अन्तर्गत किन–किन योजनाओं में सहायता, अनुदान देती है। उनके अधिकतम प्रस्ताव केन्द्र को प्रेषित कर उन पर राशि स्वीकृत करवा कर प्रदेश तेजी विकास महत्वपूर्ण भूमिका अदा करना चाहिए। इस शीर्षक छत्तीसगढ़ सरकार की तुलना में म.प्र. स्थिति सन्तोषजनक है।
2. केन्द्र प्रायोजित आयोजनागत योजनाओं में भी राज्य के अधिकारियों को यह प्रयास करना चाहिए कि केन्द्र की ध्यान इस और खीचें कि ताकि केन्द्र अधिक से अधिक केन्द्र प्रायोजित योजनाऐं प्रदेश को मिले ताकि प्रदेश में तेजी से विकास हो। इस शीर्षक में छत्तीसगढ

सरकार की तुलना में म.प्र. की स्थिति चिन्ता जनक है।

3. केन्द्र आयोजनागत योजनाओं में भी राज्य को यह प्रयास करना चाहिए कि इसका लाभ प्रदेश को अधिकतम मिले इतना सुनहरा अवसर एक दशक के पश्चात् प्राप्त हुआ कि प्रदेश व केन्द्र में समान विचारधारा की पार्टी सत्ता में है। अत: प्रदेश के विकास का यह स्वर्णिम युग है। अत: अधिकतम प्रयास की आवश्यकता है। इस शीर्षक में छत्तीसगढ सरकार की तुलना में म.प्र. सरकार काफी पीछे है। अत: श्रेष्ठतम प्रयास की आवश्यकता है।
4. आयोजना भिन्न अनुदान भी राज्य के विकास में अहम भूमिका अदा करता है। अत: शीर्षक में किन-किन मदो में केन्द्र से अनुदान प्राप्त हो सकता है। अध्ययन पश्चात् तेजी से प्रयास की आवश्यकता है। इस शीर्षक में छत्तीसगढ सरकार की तुलना में म.प्र. सरकार की स्थिति ठीक ठीक है परन्तु और अच्छे प्रयास की आवश्यकता है।
5. कुल केन्द्र से सहायता ,अनुदान में केन्द्र में भा.ज.पा. की सरकार आने के पश्चात् म.प्र. में इस शीर्षक में काफी तेजी से योगदान में वृद्धि हुई है। परन्तु 2014-15 की तुलना 2015-16 में यह वृद्धि दर बहुत सन्तोषजनक नहीं है। बल्कि दोनों वर्षो में केन्द्र सहायता ,अनुदान लगभग समान है। परन्तु छत्तीसगढ सरकार की तुलना में म.प्र. सरकार की स्थिति बहुत अच्छी है फिर भी समय की अनुकुलता का लाभ उठाकर श्रेष्ठकर प्रयास की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एम.डी. अग्रवाल, गोपाल सिंह, आर्थिक विश्लेषण 2015, आर.बी.डी. पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली।
2. बी.एम.जैन, रिसर्च मैथ्डोलॉजी 2015, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर।
3. ममता जैन, दिनेश त्रिपाठी, मौद्रिक अर्थशास्त्र, 2014, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर।
4. रामप्रकाश सिंहल, वित्तीय क्षेत्र के सुधार, 2012, हिमालया पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली।
5. पवन कुमार, लोक अर्थशास्त्र, 2015, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
6. डी.एन. गुर्टू , लोक वित्त सिद्धांत एवं व्यवहार, 2014, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
7. पी.डी. माहेश्वरी, शीलचंद गुप्ता, उच्च आर्थिक विश्लेषण, 2015, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।
8. S.N.Chand , Public Finance 2012 Part II Atlantic, Publishers , Distributors (P)Ltd. New Delhi
9. Arjun Y. Pangannavar , Public Finance, Principles ,Policies and Practices 2014, Atlantic Publishers Distributors (P) Ltd. New Delhi
10. S.N.Chand , Public Finance 2012 Part I Atlantic, Publishers , Distributors (P)Ltd. New Delhi
11. Sudhanshu Bhushan , Public Financing and Deregulated Fees in Indian Higher Education 2012 Book Well New Delhi
12. R.L.Sehgal ,R.Asthana , Financing , Pricing and Cost Recovery of Urban Infrastructure 2012 Book WellNew Delhi
13. Deepak Chawla , Neena Sondhi , Research , Methodology Concepts and cases 2014
14. Naveen Shodh Sansar ISSN 2320-8767(International) Impact Factor 1.9411(2015)
15. Divya Shodh Samiksha ISSN 2394-3807 (International) Impact Factor 1.7591 (2015)
16. Budget, Govt.of Madhya Pradesh, Year 2012-2013, 2013-2014, 2014-2015, 2015-2016
17. Budget, Govt. of Chattisgarh, Year 2012-2013, 2013-2014, 2014-2015, 2015-2016

तालिका क्रं. 1 - म.प्र. सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान का तुलनात्मक अध्ययन

(करोड़ में)

क्र.	केंद्र से सहायता अनुदान के प्रमुख शीर्षक	2012-13 बजट अनु.	2013-14 बजट अनु.	2014-15 बजट अनु.	2015-16 बजट अनु.	वृद्धि प्रतिशत में		
						2012-13 से 2013-14	2013-14 से 2014-15	2014-15 से 2015-16
1	राज्य आयोजनागत योजनाओं के लिए	5126	6210	23222	25465	21	274	10
2	केंद्र प्रायोजित आयोजनागत योजनाओं के लिए	3430	3980	0	0	16	-100	0
3	केन्द्रीय आयोजनागत योजनाओं के लिए	1185	1518	2094	1909	28	38	-9
4	आयोजना भिन्न अनुदान	2930	3237	4747	3027	11	47	-36
5	योग (1 से 4 तक)	12670	14945	30063	30401	18	101	1

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

तालिका क्रं. 2 – छत्तीसगढ़ सरकार की राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान का तुलनात्मक अध्ययन

(करोड़ में)

क्र.	केंद्र से सहायता अनुदान के प्रमुख शीर्षक	2012–13 बजट अनु.	2013–14 बजट अनु.	2014–15 बजट अनु.	2015–16 बजट अनु.	वृद्धि प्रतिशत में		
						2012–13 से 2013–14	2013–14 से 2014–15	2014–15 से 2015–16
1	राज्य आयोजनागत योजनाओं के लिए	3360	3607	4074	1500	7	13	–63
2	केंद्र प्रायोजित आयोजनागत योजनाओं के लिए	1274	1778	7699	8497	40	333	10
3	केन्द्रीय आयोजनागत योजनाओं के लिए	396	429	1124	1249	8	162	11
4	आयोजना भिन्न अनुदान	1332	1664	1765	1748	25	6	01
5	योग (1 से 4 तक)	6363	7479	14662	12994	18	96	–11

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16

तालिका क्रं 3– मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ सरकारों के राजस्व प्राप्तियों में केंद्र से सहायता अनुदान की वृद्धि दरों का तुलनात्मक अध्ययन

(प्रतिशत में)

क्रं.	केंद्र से सहायता अनुदान के प्रमुख शीर्षक	मध्यप्रदेश			छत्तीसगढ़		
		2012–13 2013–14	2013–14 2014–15	2014–15 2015–16	2012–13 2013–14	2013–14 2014–15	2014–15 2015–16
1	राज्य आयोजनागत योजनाओं के लिए	21	274	10	7	13	–63
2	केंद्र प्रायोजित आयोजनागत योजनाओं के लिए	16	–100	0	40	333	10
3	केन्द्रीय आयोजनागत योजनाओं के लिए	28	38	–9	8	162	11
4	आयोजना भिन्न अनुदान	11	47	–36	25	6	01
5	योग (1 से 4 तक)	18	101	1	18	96	–11

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ सरकारों के केंद्र से सहायता अनुदान के अंतर्गत राज्य योजनागत योजनाओं की वृद्धि दर (प्रतिशत में)

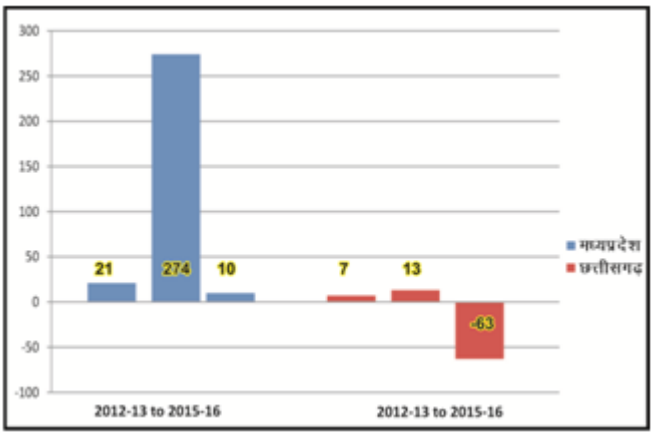

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ सरकारों के केंद्र से सहायता अनुदान के अंतर्गत केंद्र प्रायोजित आयोजनागत योजनाओं की वृद्धि दर (प्रतिशत में)

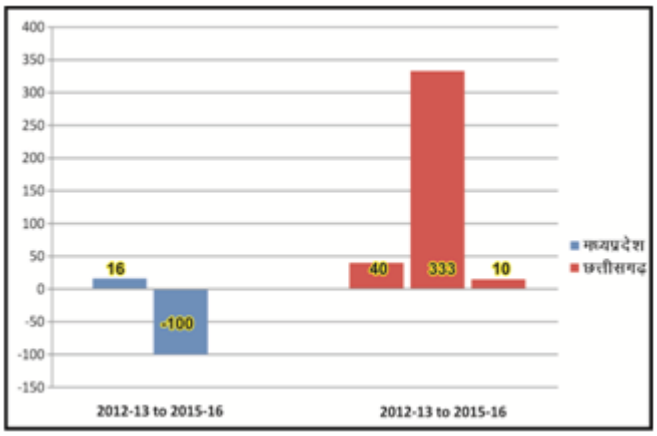

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ सरकारों के केंद्र से सहायता अनुदान के अंतर्गत आयोजना भिन्न अनुदान की वृद्धि दर (प्रतिशत में)

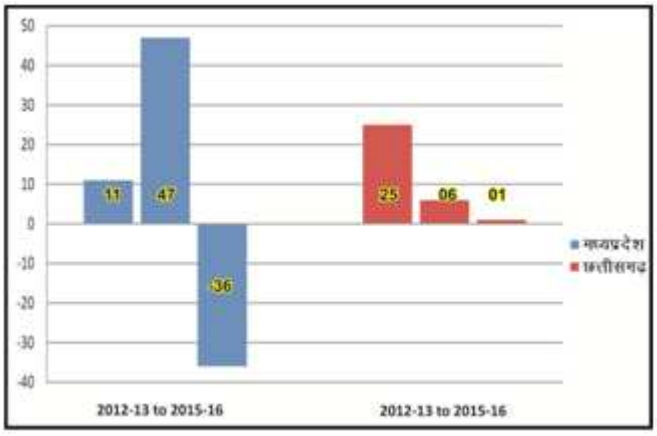

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ सरकारों के केंद्र से सहायता अनुदान के अंतर्गत केंद्रीय आयोजनागत योजनाओं की वृद्धि दर (प्रतिशत में)

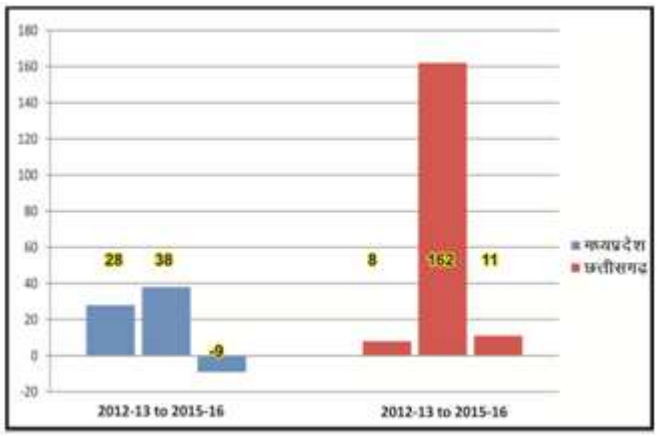

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ सरकारों के कुल केंद्र से सहायता अनुदान की वृद्धि दर (प्रतिशत में)

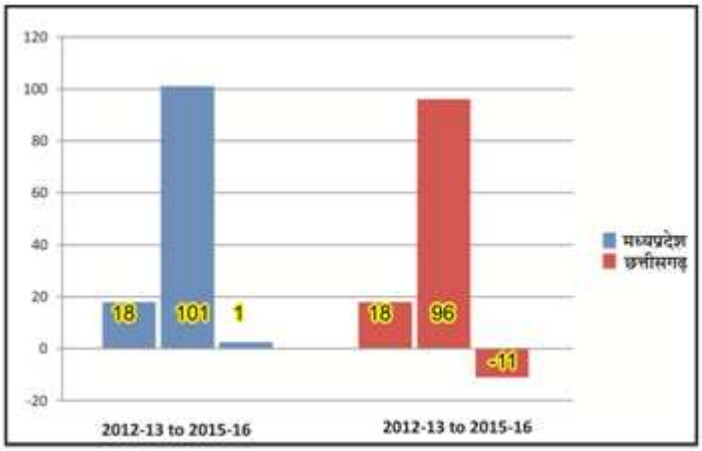

****

सार्वजनिक एवं निजी जीवन बीमा क्षेत्र की व्यवसाय संवर्द्धन नीतियों का तुलनात्मक अध्ययन (जबलपुर जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रिचा राय (मालवीय)* रश्मि चौरसिया **

शोध सारांश – बीमा का मुख्य उद्देश्य व्यक्तियों को जोखिमों से सुरक्षा प्रदान करना है। जीवन बीमा में सार्वजनिक एवं निजी जीवन बीमा क्षेत्र में व्यवसाय वृद्धि हेतु अपनाई जाने वाली विभिन्न नीतियों का उपयोग किया जाता है। अत: जीवन बीमा के सार्वजनिक एवं निजी जीवन बीमा क्षेत्र में उत्पादों एवं बाजार में प्रवेश एवं स्थापित करने में विविधता का सृजन देखा जा सकता है। जिससे जीवन बीमा व्यवसाय में प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण का निर्मित हो रहा है। अत: जीवन बीमा के दोनों ही क्षेत्र व्यवसाय संवर्द्धन नीतियों पर भी ध्यान केंद्रित कर रहे हैं जिससे जीवन बीमा व्यवसाय को समृद्ध किया जा सके।
कुंजी शब्द – सार्वजनिक जीवन बीमा क्षेत्र, निजी जीवन बीमा क्षेत्र, भारतीय जीवन बीमा निगम, निजी कंपनियाँ, व्यवसाय संवर्द्धन नीतियाँ।

प्रस्तावना – बीमा एक ऐसी सहकारी पद्धति है, जिसमें किसी एक व्यक्ति या उसके परिवार को होने वाली हानि को उन तमाम व्यक्तियों में वितरित किया जाता है, जो इस हानि से सुरक्षित होने के लिए बीमा कराते हैं। बीमा नियंत्रण विकास प्राधिकरण के दिशा निर्देशों के अनुसार निजी कंपनियों में विदेशी पूँजी 26 प्रतिशत चुकता पूँजी से अधिक नहीं होनी चाहिये। इस प्रकार जीवन बीमा के दोनों ही क्षेत्रों में विविधता पाई जाती है।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व – यद्यपि निगम और कंपनियाँ दोनों ही बीमा व्यवसाय की ओर गतिशील हैं परन्तु फिर भी जीवन बीमा के प्रति जागरूकता का अभाव प्राय: देखा जाता है। इसलिए जागरूकता लाने हेतु दोनों ही जीवन बीमा क्षेत्रों द्वारा विभिन्न उत्पाद नीतियों, विभिन्न उत्पादों एवं विभिन्न संवर्द्धन एवं विपणन माध्यमों को अपनाया जाता है।

शोध का क्षेत्र – जबलपुर जिले को भारत में मध्यप्रदेश की संस्कारधानी के रूप में जाना जाता है। जबलपुर की कुल जनसंख्या 2011 के अनुसार 24,60,714 है। यद्यपि बीमित जनसंख्या का प्रतिशत न्यून है। अत: जीवन बीमा के प्रति जागरूकता का विकास किया जाना अत्यंत आवश्यक है।

शोध-साहित्य का अध्ययन –

1. कुमारी शाइस्ता अंजुम, 2006 ' भारतीय जीवन बीमा निगम में दावा निपटारा'
2. श्रीमती संगीता कुंभारे, 2005 'भारतीय जीवन बीमा निगम की व्यवसाय संवर्द्धन नीतियों का आलोचनात्मक मूल्याँकन'
3. कुमारी सुरूचि निगम, 2003 'भारतीय जीवन बीमा निगम के श्रम संघों की भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन'

शोध का उद्देश्य

1. जबलपुर जिले में जीवन बीमा के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।
2. जबलपुर जिले में जीवन बीमा क्षेत्र के प्रभाव का अध्ययन करना।
3. ग्राहकों में विनियोग हेतु प्रभावी तत्वों का अध्ययन करना।
4. जबलपुर जिले में सार्वजनिक एवं निजी जीवन बीमा क्षेत्र की व्यवसायिक नीतियों के प्रभाव का अध्ययन करना।
5. जबलपुर जिले में सार्वजनिक एवं निजी जीवन बीमा क्षेत्र में ग्राहकों की संतुष्टि का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना :

1. सार्वजनिक जीवन बीमा क्षेत्र के प्रति ग्राहकों की जागरूकता निजी जीवन बीमा कंपनियों की अपेक्षा अधिक है।
2. ग्राहकों के दृष्टिकोण से सार्वजनिक जीवन बीमा क्षेत्र अन्य निजी बीमा कंपनियों की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय ब्राण्ड है।

शोध प्रविधि – उत्तरदाताओं का चयन – 200 बीमाधारकों को समंक संग्रह का प्रारंभिक आधार माना गया। 200 बीमाधारकों में भारतीय जीवन बीमा निगम के 100 बीमाधारक एवं चयनित कंपनियों एसबीआई लाइफ, एचडीएफसी स्टैण्डर्ड, आइसीआइसीआइ प्रोडेन्शियल, मैक्स लाइफ, पीएनबी मैट लाइफ के 100 बीमाधारक शामिल हैं।

समंक संकलन एवं विश्लेषण

जनसांख्यिकीय परिचय – इस प्रकार जनसंख्या को आयु वर्ग, लिंग वर्ग, आय वर्ग, व्यवसाय वर्ग, शैक्षणिक योग्यता वर्ग आदि आधारों पर वर्गीकृत किया गया है। विभिन्न आधारों पर जो ऑकड़े प्राप्त हुए उसे निम्न तालिका में दर्शाया गया है

तालिका क्रमांक 1 : जनसांख्यिकीय आधार पर जानकारियाँ

आयु वर्ग	कुल	प्रतिशत	आय वर्ग रू(मासिक)	कुल	प्रतिशत
30 वर्ष से कम	54	27	10,000 से कम	18	9
30-40 वर्ष	70	35	10000-20000	28	14
40-50 वर्ष	50	25	20000-30000	34	17
50 वर्ष से अधिक	26	13	30000-40000	62	31
कुल	200	100	40000 से अधिक	58	29
			कुल	200	100

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) माता गुजरी महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** व्याख्याता (एम.ओ.एम) शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.) भारत

लिंग वर्ग	कुल	प्रतिशत	वैवाहिक विवरण	कुल	प्रतिशत
पुरूष	140	70	विवाहित	130	65
महिला	60	30	अविवाहित	70	35
कुल	200	100	कुल	200	100
व्यवसाय (occupation)	**कुल**	**प्रतिशत**	**शैक्षणिक विवरण**	**कुल**	**प्रतिशत**
कर्मचारी	76	38	स्नातक से कम	26	13
व्यवसायी	60	30	स्नातक	68	34
पेशेवर	34	17	स्नातकोत्तर	70	35
कृषक	18	09	व्यवसायिक/ इंजीनियरिंग डिग्री	36	18
अन्य	12	06	कुल	200	100
कुल	200	100			

उपरोक्त तालिकाओं के आधार पर यह ज्ञात होता है कि जीवन बीमा में आयु वर्ग 30-40 वर्ष प्रतिनिधित्व सर्वाधिक 35 प्रतिशत , पुरूषों एवं महिलाओं का प्रतिशत क्रमश: 70 एवं 30 प्रतिशत है। सर्वाधिक आय वर्ग 30,000-40,000 का सर्वाधिक प्रतिशत 31 रहा है। सर्वाधिक 38 प्रतिशत कर्मचारी वर्ग का प्रतिनिधित्व जीवन बीमा में पाया गया।

ग्राहकों को जीवन बीमा निगम एव कंपनियों की जानकारी - ग्राहकों की जीवन बीमा कंपनियों के प्रति जानकारी को ऑकड़ों को निम्न सारणी द्वारा स्पष्ट किया गया है -

तालिका क्रमांक 2- जीवन बीमा कंपनी की जानकारी के प्रति दृष्टिकोण

बीमाकर्ता कंपनी	कुल संख्या	प्राप्त संख्या	प्रतिशत
एसबीआइ लाइफ	200	154	77
एचडीएफसी स्टैण्डर्ड	200	141	70.5
आइसीआइसीआइ प्रोडेन्शियल	200	139	69.5
पीएनबी मैटलाइफ	200	130	65
एलआइसी	200	198	99
मैक्स लाइफ	200	124	62

चार्ट संख्या 1 : कंपनियों के जानकारी

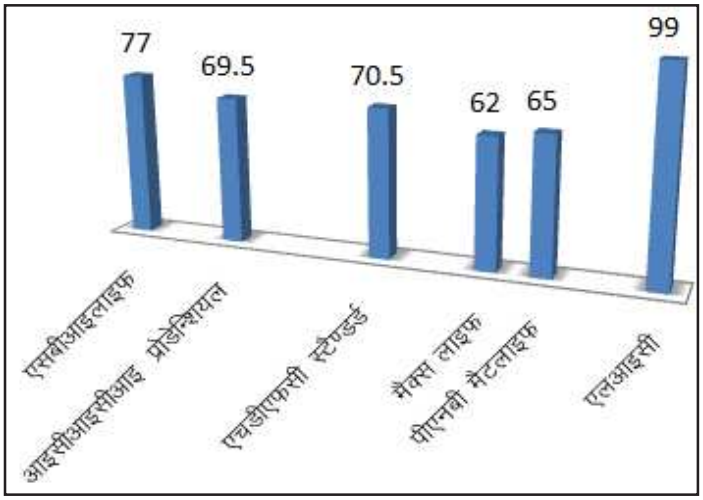

उपरोक्त तालिका एवं ग्राफ के आधार पर यह ज्ञात होता है कि कुल 200 बीमाधारकों मे लाइफ के जीवन बीमा कंपनियों में सर्वाधिक 99 प्रतिशत एलआइसी भारतीय जीवन बीमा निगम एवं निजी कंपनियों में 77 प्रतिशत एसबीआइ लाइफ से सर्वाधिक परिचित है। निजी में सर्वाधिक एसबीआइलाइफ को सर्वाधिक जानते हैं।

जीवन बीमा में निवेश का कारण - जीवन बीमा में निवेश के कारणों के लिए आयकर से छूट, बचत के रूप में , जोखिम से सुरक्षा, उचित रिटर्न को आधार माना गया है।

तालिका क्र. 3 - जीवन बीमा में निवेश का कारण

विवरण	उत्तरदाताओं की संख्या					
	सार्व	प्रतिशत	क्रम	निजी	प्रतिशत	क्रम
आयकर से छूट हेतु	34	34	1	18	18	3
विनियोग के रूप में	23	23	3	15	15	4
सुरक्षा के दृष्टिकोंण से	28	28	2	25	25	2
उचित रिटर्न को ध्यान मे रखकर	15	15	4	42	42	1
कुल	100	100		100	100	

चार्ट संख्या 2

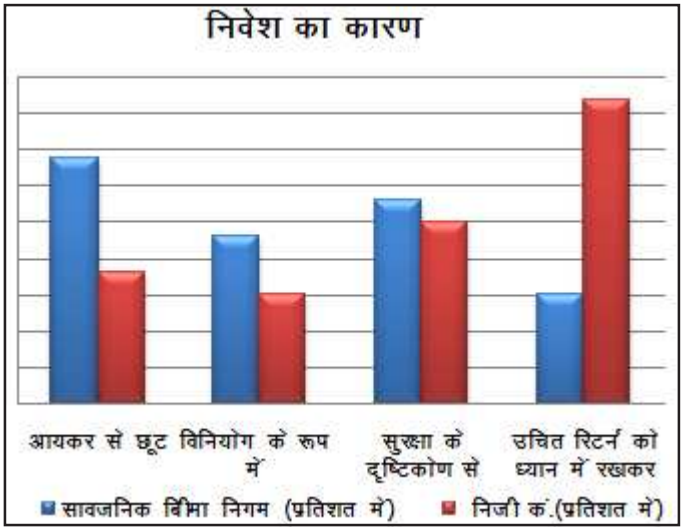

उक्त तालिका से सार्वजनिक निगम के बीमाधारकों की दृष्टि से जीवन बीमा में निवेश का सर्वाधिक 34 प्रतिशत कारण आयकर में छूट प्राप्त करना है,वहीं निजी क्षेत्र के बीमाधारक सर्वाधिक 42 प्रतिशत उचित रिटर्न को ध्यान में रखते हैं।

बीमाधारकों के अनुसार जीवन बीमा मे निवेश के लिए कंपनी के चयन का कारण - कंपनी के प्रभावी तत्वों में कंपनी की साख एवं वित्तीय पारदर्शिता ,शीघ्र दावा निपटारा, उत्पाद का प्रभाव, कुशल ग्राहक सेवा को शामिल किया गया है।

तालिका क्रमांक 4 : कंपनी चयन के कारण

कंपनी के चयन का कारण	उत्तरदाताओं की संख्या					
	सार्व	प्रतिशत	क्रम	निजी	प्रतिशत	क्रम
कम्पनी की साख एवं वित्तीय विश्वसनीयता	43	43	1	27	27	2
शीघ्र दावा निपटारा	31	31	2	26	26	3
उत्पाद का प्रभाव	13	13	3	37	37	1
ग्राहक सेवा	13	13	3	10	10	4
कुल	100	100		100	100	

चार्ट संख्या 3

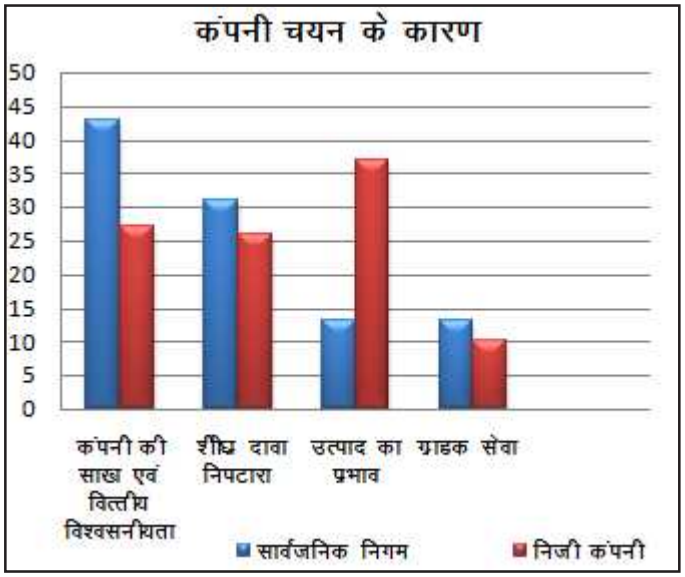

उक्त तालिका में बीमाधारक भारतीय जीवन बीमा निगम को साख एवं वित्तीय विश्वसनीयता के कारण सर्वाधिक 43 प्रतिशत, निजी क्षेत्र के सर्वाधिक 37 प्रतिशत कम्पनी के उत्पाद से प्रभावित होकर कंपनी का चयन करते हैं।

उत्पाद/पॉलिसी के चयन का कारण– जीवन बीमा उत्पाद/पॉलिसी के विभिन्न तत्वों जिनमें – विश्सवसनीय ब्राण्ड, आसान प्रीमियम दर, उचित रिटर्न , आयकर से छूट तथा जोखिम से सुरक्षा को आधार माना गया है –

तालिका क्रमाँक 5 : पॉलिसी चयन का प्रभावी तत्व

	सार्व	प्रतिशत	क्रम	निजी	प्रतिशत	क्रम
विश्वसनीय ब्राण्ड	33	33	1	29	29	2
आसान प्रीमियम दर	15	15	3	09	09	4
उचित रिटर्न	13	13	4	35	35	1
कर से छूट	13	13	4	08	08	5
जोखिम से सुरक्षा	26	26	2	19	19	3
	100	100		100	100	

चार्ट संख्या 4

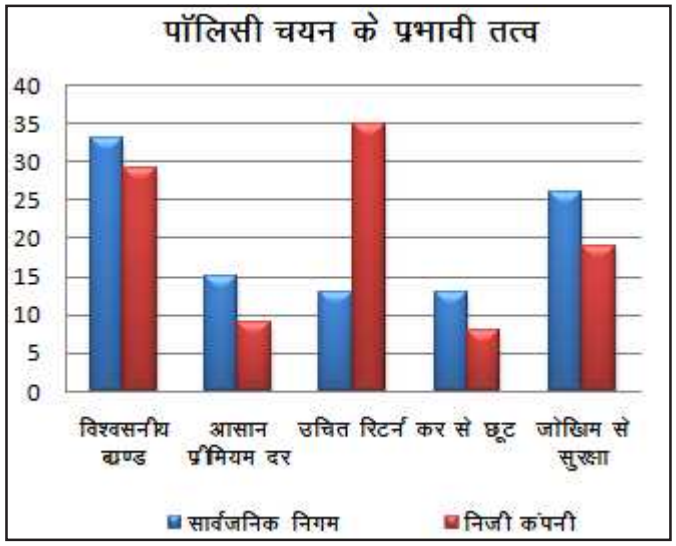

उपरोक्त तालिका एवं ग्राफ के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि निगम के संबंध में बीमाधारक सर्वाधिक 33 प्रतिशत निगम की विश्वसनीय ब्राण्ड से प्रभावित होने के कारण, वहीं निजी कंपनियों के संबंध में सर्वाधिक 35 प्रतिशत उचित रिटर्न के कारण पॉलिसी का चयन करते हैं।

विज्ञापन का प्रभावी माध्यम – विज्ञापन के प्रभावी माध्यमों में टेलीविजन एवं रेडियों में प्रसारण, समाचार पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशन, इन्टरनेट द्वारा विभिन्न साइट्स एवं अन्य माध्यमों के अंतर्गत होर्डिंग्स, ब्रोशर्स आदि को माना गया है–

तालिका क्र.6 : विज्ञापन का प्रभावी माध्यम

विज्ञापन का माध्यम	बीमाधारक					
	सार्व	प्रतिशत	क्रम	निजी	प्रतिशत	क्रम
टेलीविजन एवं रेडियो	32	32	2	35	35	1
समाचार पत्र–पत्रिकाएँ	35	35	1	27	27	3
इन्टरनेट	25	25	3	33	33	2
अन्य	08	08	4	05	05	4
कुल	100	100		100	100	

चार्ट संख्या 5 : विज्ञापन का प्रभावी माध्यम

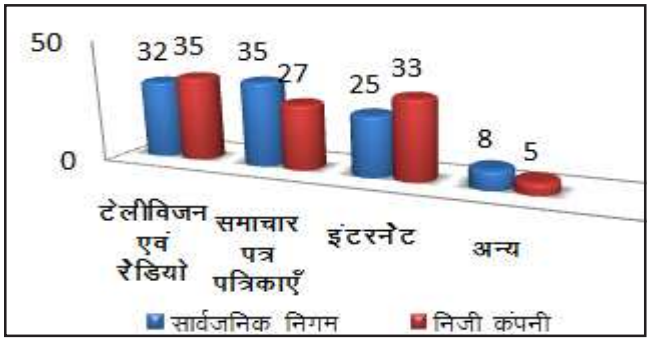

उपरोक्त तालिका एवं ग्राफ से स्पष्ट होता है कि सार्वजनिक निगम के बीमाधारक सर्वाधिक 35 प्रतिशत समाचार पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित विज्ञापन से प्रभावित होते हैं, वहीं निजी कम्पनी के बीमाधारक सर्वाधिक 35 प्रतिशत टेलीविजन एवं रेडियो पर प्रसारित विज्ञापनों से प्रभावित दिखे।

बीमाधारकों की कंपनी ग्राहक सेवा नीतियों के प्रति दृष्टिकोण – बीमाधारकों के कंपनी द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के लिए संतुष्टि स्तरों का अध्ययन किया गया –

तालिका क्र.7 : ग्राहक सेवा नीतियाँ

कंपनी ग्राहक सेवा	सार्व.	प्रति.	निजी	प्रति.
अतिसंतुष्ट	10	10	05	05
संतुष्ट	40	40	25	25
सामान्य	35	35	30	30
असंतुष्ट	15	15	40	40
कुल	100	100	100	100

चार्ट संख्या 6

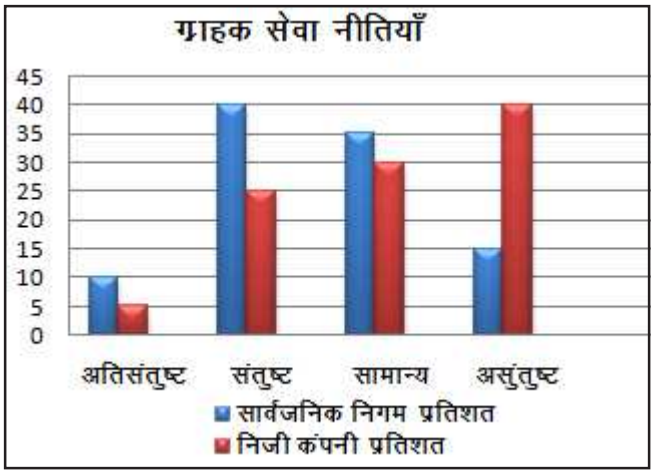

उपरोक्त तालिका एवं ग्राफ के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि सेवा नीतियों के प्रति ग्राहकों का दृष्टिकोण संतुष्टि के स्तर के आधार पर सार्वजनिक निगम हेतु 40 प्रतिशत एवं निजी जीवन बीमा क्षेत्र में 25 प्रतिशत देखा गया।

बीमा क्षेत्रों का बाजार अंश – बीमा व्यवसाय की प्रगति बीमा व्यवसाय में बाजार अंश के आधार पर ऑकलित की जा सकती है। जिसे वर्षानुसार निम्न तालिका में प्रस्तुत किया गया है

तालिका क्र. 8 : बीमा क्षेत्रों का बाजार अंश

वर्ष	सार्वजनिक जीवन बीमा	निजी जीवन बीमा
2007-08	74.39	25.61
2008-09	70.92	29.08
2009-10	70.10	29.90
2010-11	69.77	30.23
2011-12	70.68	29.32
2012-13	72..70	27.30
2013-14	75.39	24.61

आइआरडीए की वार्षिक रिपोर्ट 2013-14

चार्ट संख्या 7 : बीमा क्षेत्रों का बाजार अंश

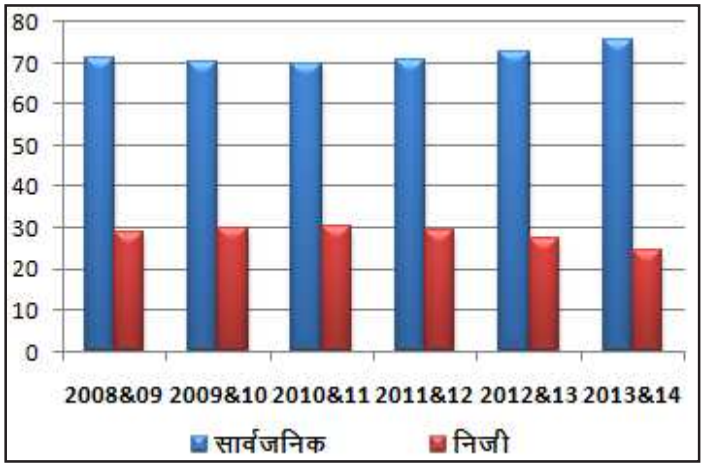

उपरोक्त आधार पर निगम का वर्ष 2007-08 में बाजार अंश 74.39 प्रतिशत से वर्ष 2013-14 में 75.39 प्रतिशत हो गया। निजी कंपनियों का बाजार अंश वर्ष 2007-08 में 25.61 प्रतिशत से घटकर 24.61 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार निगम के बाजार अंश में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि हुई है।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

1. जीवन बीमा कंपनियों की जानकारियों के संबंध में जागरूकता हेतु भारतीय जीवन बीमा निगम के बारे में प्रतिशत सर्वाधिक 99 प्रतिशत है।अत: निजी जीवन बीमा कंपनियों को भी व्यवसाय की व्यापक जागरूकता हेतु प्रयास किया जाना आवश्यक है।
2. जीवन बीमा में निवेश के लिए ग्राहकों की तत्परता सार्वजनिक क्षेत्र में आयकर से छूट एवं उचित रिटर्न के कारण मानी गई है।अत: दोनों ही क्षेत्रों को जीवन बीमा के मूल तत्व से अवगत कराना अति आवश्यक है।
3. निगम की साख का ग्राहकों पर अधिकाधिक प्रभाव पाया जाता है।अत: निजी कंपनियों को भी जीवन बीमा क्षेत्र में साख स्थापित करने हेतु प्रयास किया जाना आवश्यक है।
4. ग्राहकों का जीवन बीमा क्षेत्रों की सेवाओं में निगम के प्रति अधिक संतुष्ट है।अत: निजी जीवन बीमा क्षेत्रों द्वारा ग्राहक सेवा नीतियों पर अधिक ध्यान दिया जाना आवश्यक है।
5. निजी जीवन बीमा क्षेत्र को भी बाजार अंश में अपनी भागीदारी में वृद्धि करने हेतु प्रयास किया जाना आवश्यक है।
6. निजी कंपनियों द्वारा बीमापत्रों में दी गई जानकारियों को अत्यंत संक्षिप्त एवं अस्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया जाता है। अत: निजी कंपनियों को पारदर्शिता रखनी चाहिए।
7. व्यवसाय में विज्ञापन माध्यमों के साथ-साथ प्रदर्शनी व मेलों का आयोजन आवश्यक है।
8. जीवन बीमा को व्यावसायिक पाठ्यक्रमों से जोड़ा जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चतुर्वेदी डॉ. ममता,(2014), आधुनिक बीमा विधि, जैन बुक एजेन्सी, नई दिल्ली.
2. जैन डॉ. एस.सी. (2011), बीमा के सिद्धांत, कैलाश पुस्तक सदन,भोपाल.
3. मिश्रा डॉ. महानारायण,(2008), बीमा व्यवहार एवं सिद्धांत, लोकभारती प्रकाशन,
4. वर्मा डॉ. बालकृष्ण, (2007), बीमा के तत्व, साहित्य भवन पब्लिकेशन,आगरा.
5. www.irda.com

****

पन्ना जिले की हीरा खदानों एवं फर्शी पत्थर खदानों के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन

प्रदीप कुमार रावत *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में पन्ना जिले को हीरा एवं फर्शी पत्थर खदानों में काम करने वाले श्रमिकों की आर्थिक स्थिति बहुत शोचनीय है। यहां काम करने वाले श्रमिकों को अनेक परिस्थितयों का सामना करना पड़ता है। जिससे कभी भी बड़ी दुर्घटनाए हो जाती है और श्रमिक अपनी आधी उम्र में जीवन समाप्त कर लेता है। इन्हीं समस्याओं समाधान के लिए विभिन्न बातों को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

शब्द कुंजी –हीरा खदान, फर्शी पत्थर खदान श्रमिक, आर्थिक स्थिति, दुर्घटनाऐं ।

प्रस्तावना – 19 शताब्दी से पूर्व भारत में मजदूरों का कोई स्पष्ट वर्ग नहीं था। 20 वीं शताब्दी में भारत में मजदूरों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ी है। इसलिए इनकी समस्याओं पर ध्यान अकर्षित हुआ श्रमिकों की आर्थिक परिस्थियों पर का अध्ययन करने से भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में फैली बेकारी, व अर्द्धबेकारी, गरीबी, निम्न जीवन स्तर कृषि पर जनसंख्या भार आदि का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

एक विकासशील देश में तीव्र गति से आर्थिक विकास करने के लिए समुचित व दृढ़ श्रम नीति की आवश्यकता होती है। क्योंकि विकासशील अर्थव्यवस्था में श्रमिकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यहाँ तक भारत भी विकासशील देश में गिना जाता हैं, आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने में भारत दूसरे देशों का मार्ग प्रशस्त करने में समस्त क्षमताएं रखता है। परन्तु मानव क्षमताओं का पूर्ण उपयोग न हो पाने के कारण उद्योग विकसित नहीं हो पाये जिसके कारण बेरोजगारी, गरीबी जैसी स्थिति पर काबू नहीं पाया जा सका। श्रमिकों के विकास में उद्योगों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है।जिन क्षेत्रों में जितनी अधिक मात्रा उद्योगों को विकसित किया गया वहॉ उतनी ही गति श्रमिकों का आर्थिक विकास हुआ, उदाहरण के लिए जमशेदपुर, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश के रीवा,सतना जिले में स्थापित सीमेंट उद्योग।

इसी संदर्भ में यदि हम मध्यप्रदेश पन्ना जिले की ओर नजर डाले तो यह बात स्पष्ट हो जायेगी कि पन्ना जिला उद्योग कि दृष्टि से महत्वपूर्ण जिला है। जहां हीरा, एवं अन्य खनिज चूना पत्थर, फर्शी व इमारती पत्थर के दुर्लभ भंडार है, इन खनिज पदार्थो के आधार पर पन्ना जिले में हीरा, चूना पत्थर एवं फर्शी पत्थर की खदानें स्थापित है। जो यहां की अर्थव्यवस्था का मुख्य अंग है। इसके बाद यह जिला मध्यप्रदेश के पिछड़े जिलों में गिना जाता हैं ।

खनिज विदोहन की उत्खनन नीति दोष पूर्ण है। इस कारण से विदोहन में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है, पन्ना जिले का लगभग 70 प्रतिशत क्षेत्रफल वन क्षेत्र में तथा शेष 30 प्रतिशत में। लगभग 21 प्रतिशत राजस्व क्षेत्रफल में तथा 9 प्रतिशत क्षेत्रफल खदान के लिये स्वीकृत हैं। सन् 1980 में वन नीति एवं वन अधिनियम के आ जाने के बाद यहां पर वन भूमि में खदाने खोदना बन्द कर दिया गया। जो विकास में बाधा साबित रहा तथा शेष खदानों पर पूंजी पतियों द्वारा मजदूरों का शोषण, कम मजदूरी देना जो उनकी आर्थिक समस्या को जन्म देती है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से हीरा तथा फर्शी पत्थर खदानों पर श्रमिकों, आर्थिक समस्या का समाधान ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। जिससे श्रमिकों की पलायनता को रोका जा सकेगा।

उद्देश्य –

1. पन्ना जिले में हीरा एवं फर्शी पत्थर खदानों में बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराना।
2. श्रमिकों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना।
3. बन्धुआ मजदूरी प्रथा का अन्त कराना।
4. कुटीर एवं लघु उद्योगों का विकास।
5. श्रमिक को श्रमिक संघों में पंजीकृत होना।
6. समान कार्य के लिये समान मजदूरी।

परिकल्पना – पन्ना जिलें की हीरा एवं फर्शी खदानों में श्रमिक अभी बहुत अधिकारों एवं सुविधाओं से वंचित है।

इस क्षेत्र में सुधार के प्रयास किए जाए तो यहां अर्थव्यवस्था एवं श्रमिकों की आर्थिक स्थिति मजबूत हो सकती है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र पूर्णत: मौलिक है तथा जानकारी एवं आंकडों को एकत्र करने में प्राथमिक एवं द्वितीयक संमकों का सहारा लिया गया है। संमक सरकारी प्रकाशनों एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार से संकलित किए गए इसके लिए पूर्व से ही प्रश्नावलियां एवं अनुसूचियां तैयार करके आवश्यक आंकड़े एकत्र किए गए इस प्रकार प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण करके अन्य उपलब्ध तथ्यों एवं विचारों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। जिससे सही एवं ठोस तथ्य प्राप्त किये गये। जिसके आधार पर पन्ना जिलों में श्रमिकों के आर्थिक विकास की भावी योजनाऐं तैयार कर सके।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध में मध्यप्रदेश के पन्ना जिलों में हीरा खनिज उद्योग की 20 खदानों में विभिन्न गांवों के कार्य कर रहे श्रमिकों तथा फर्शी पत्थर उद्योग की पत्थर की 129 खदानें जो पन्ना, पवई, गुनौर, शाहनगर एवं अजयगढ़ तहसीलों पर हैं। इन खदानों में कार्य कर रहे विभिन्न गांवों मजदूरों की आर्थिक स्थिति के अध्ययन को सम्मिलित किया गया है।

संमक संकलन के स्त्रोत –

* शोधार्थी,अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

1. **प्राथमिक संमकों को संकलन** – प्राथमिक संमक के संकलन के लिए स्वनिर्मित साक्षात्कर खदान स्थल पर 400 मजदूरों की आर्थिक स्थिति से संबन्धित विभिन्न प्रश्न–उत्तर पूछ करके विश्लेषण किया गया है।

2. **द्धितीय संमकों का संकलन** – द्धितीय संमकों के संकलन के लिए संबंधित शोध पुस्तकों पत्र–पत्रिकाओं समाचार–पत्र संबंधी योजनाओं की रिपोर्ट, इन्टरनेट बेवसाइट से प्राप्त जानकारियां आदि।

प्रयुक्त सांख्यिकी विधि – प्रस्तुत अध्ययन में संकलित तथ्यों का वर्गीकरण,सारणीयन करके विचारों का तुलनात्मक अध्ययन किया तथा निष्कर्षो क विश्वनियता हेतु परिकल्पना की सार्थकता ज्ञात करने के लिये विभिन्न सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन का विवरण –

हीरा एवं फर्शी पत्थर खदानों की श्रमिकों आर्थिक स्थिति का अध्ययन– पन्ना जिले में पुरुष एवं महिला श्रमिकों के गांव की कृषि भूमि पर कार्य नहीं मिलने के कारण वे खनिज उद्योग की खदानों पर मजबूर होकर कार्य करना होता है। इसका कारण यहां धरातल असमतल होने के कारण पठारी एवं वनों आनाच्छादित होने पर अन्य उद्योग धन्धे नहीं है। तो इस कारण श्रमिक हीरा एवं फर्शी पत्थर खदानों पर कार्य करते हैं।इन खदानों पर महिला श्रमिकों का कार्य करना अत्यन्त जोखिम भरा होता है। इस कारण इनको शारीरिक, मानसिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या होती है।

पन्ना जिले में खदानें ऊँचे पहाड़ों एवं दुर्गम क्षेत्रों में है, जहाँ पहुँचना किसी चुनौती से कम नहीं है। इन खदानों पर श्रमिक को 24 घण्टों में से 10 से 12 घंटे तक निरान्तर कार्य करना पड़ता है क्योंकि श्रमिकों कार्य स्थल पर पहुँचनें के लिए निर्धारित समय से लगभग 4 घण्टे पूर्व घर से चलकर पैदल पहुँचना होता हैं। जिससे उनको शारीरिक थकान भी होती और उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। खदानों पर महिला श्रमिक को रूपये 100 प्रतिदिन तथा पुरूष श्रमिक रूपये 150 प्रतिदिन मजदूरी यहॉ के खदान ठेकेदारों ने निर्धारित कर रखा है। लेकिन यह शासन द्धारा निर्धारित मजदूरी दर से लगभग रूपये 150 कम है। इसके बाद भी श्रमिक बंधुआ बनकर कार्य करने के लिए मजबूर है, यहाँ पर श्रमिकों को दो वर्गो कुशल एवं अकुशल में बांटा गया है कुशल श्रमिकों में पत्थर तोड़ने वाले कारीगर तथा अकुशल श्रमिक में खदान का मलवा सिर पर ढ़ोने वाले श्रमिक है। इन दोनों वर्गो के श्रमिकों का शोषण खदान ठेकेदार–तन मन, धन से करते है।

जिलें में अन्य दूसरे उद्योग न होने के कारण यहॉ हीरा एवं फर्शी पत्थर खदान उद्योग के ठेकेदारों एवं पटट्दारों को एकाधिकार प्राप्त है। ठेकेदार मजदूरों नियमित मजदूरी पर नहीं लगाते है। ऐसी स्थिति श्रमिक आर्थिक रूप से परेशान होते है और पलायन करने के लिये मजबूर हो जाते हैं।

कुशल श्रमिकों की आर्थिक समस्याएं– पन्ना जिले की पत्थर एवं हीरा की खदानों पर कुशल श्रमिकों दी जाने वाली मजदूरों की दर बहुत ही कम है। यहां तक कि कुशल मजदूर कारीगर को 25 रूपयें प्रति चीप पत्थर तथा औसतन रूपये 450 प्रतिदिन के हिसाब से मिलते हैं। लेकिन कुल मजदूरी में रूपये 100 प्रतिदिन खदान जाने आने पर खर्च करने होते है शेष रूपये 350 से अपने घर पर खर्च करने होते हैं। वास्तव में देखा जाए तो इस श्रमिक संतुष्ट नहीं है। अन्य कोई रोजगार उपलब्ध न होने के कारण मजदूरी करने के लिये मजबूर है।

अकुशल श्रमिकों की समस्याएं – पन्ना जिले की खदानों पर अकुशल मजदूर को पूरे दिन में रूपये 150 प्राप्त होते जो शासन की न्यूनतम मजदूरी से कम है। इनके साथ यह मजदूरी भी यहॉ खदान ठेकेदार नहीं देते और लगातार काम करवाते है। इनकी निर्धनता और निम्न जीवन स्तर का नजायज फायदा उठाते है। निर्धनता एवं अल्प मजदूरी के कारण श्रमिकों का मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य खराब रहता है। पन्ना जिले में पत्थर एवं हीरा खदानों का कारोबार चलता है, इसमें भयानक धूल उड़ती है। जिससे श्रमिक रोगी हो जाते है। अपना इलाज नहीं करा पाते। इसके बाद कुछ श्रमिक अनैतिक बुराईयों का शिकार होने लगते है। और मदिरा, नशायुक्त गोलियां कुछ जहरीले पदार्थ, जुआ आदि क्रियाऐं करने लगते है। जिससे उनके आर्थिक, शारीरिक एवं मानसिक स्थिति पर घातक प्रभाव होते है।

खदानों पर काम करने वाले मजदूरों की स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं– पन्ना जिले में फर्शीपत्थर एवं हीरा खदान पर कार्य करने वाले श्रमिकों के साथ स्वास्थ्य संबंधी जो समस्यायें जो आती है। जैंसे– मलेरिया, पीलिया, टाईफाइड एवं हैजा आदि बीमारियों का इलाज तो मिल जाता है। परन्तु एक बीमारी खदानों से उड़ने वाली धूल से होती है। जिसका आज तक कोई उपचार नहीं हुआ वह बीमारी है। सिलकोसिस शोधार्थी ने पत्थर खदान पर काम करने वाले मजदूरों की स्थिति के बारे में जिले की संचालित पत्थर खदानों मजदूर संघ के अध्यक्ष श्री युसूफ बेग ने अपनी संस्था के माध्यम से विभिन्न पत्थर खदानों में कार्यरत मजदूरों की जिला चिकित्सालय में जॉच करवाई तो पता चला कि जिले 121 पुरूष तथा 6 महिलाएं इस बीमारी से ग्रसित है। सिलकोसिस फेफड़ों की एक ऐसी बीमारी है जो सिलिका नमक धूल के माहौल में सांस लेने से होती सिलिका की उत्पत्ति पत्थर खदानों पर पत्थर तोड़ने वाले हीरा खदानों का हीरा युक्त पत्थर चट्टानों को क्रेशर मशीन से पीसने से उड़ने वाली धूल से होती है।

उथली हीरा खदानों में श्रामिकों की समस्याएं – पन्ना जिले के विभिन्न भागों में संचालित हैं ये खदान पूरे वर्ष नहीं चलती अर्थात् गर्मी के मौसम में बंद रहती है, जिससे मजदूर बेरोजगार हो जाते है। दूसरी समस्या मजदूरों को खदान पर 10 मीटर की गहराई पर पत्थर तोड़ना होता है। और टूटे पत्थर को क्रेशर मशीन से पीसना होता है। जिसमें बड़ी मात्रा धूल उड़ती जो उनके शरीर के अन्दर प्रवेश कर रोगी बनाती है। कुछ समस्यायें महिला श्रमिकों की है। खदानों पर महिला मजदूरी की हीरा युक्त चाल मिट्टी की धुलाई हेतु कार्य पर लगाया जाता है और यह कार्य दिन में केवल 3 घण्टे तक चलता है। इसके बाद धुलाई का काम बंद हो जाता है । श्रमिकों मजदूरी के रुपये 100 मात्र प्राप्त होते जिससे कुल मिलाकर सप्ताह में रूपये 700मिलते इसी मजदूरी से पूरे सप्ताह का खर्च चलता हैं। इससे यह बात सामने आई यहॉ के गरीब श्रमिकों के पास कृषि भूमि नहीं है। जिससे वे खदानों पर कम मजदूरी मिलने के बाद भी मजदूरी करने मजबूर है।

खदानों में कार्य के आधार पर श्रमिकों का वर्गीकरण

तालिका क्र0–1 पत्थर एवं हीरा खदानों में कार्य करने के कारणों का वर्गीकरण

क्र.	कार्य करने के कारण	श्रमिकों की संख्या	कुल से प्रतिशत
1	मजबूरी	200	50
2	आर्थिकतंगी	148	37
3	परिवार की इच्छा	004	01
4	स्वयं की इच्छा	048	12
	कुल	**400**	**100**

स्त्रोत– खदान स्थल पर सर्वेक्षण के आधार पर ।

तलिका क्र0-2 श्रमिक का दैनिक मजदूरी के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	मजदूरी राशि	संख्या	प्रतिशत
1	80 से कम	104	26
2	81-160	152	38
3	161-240	088	22
4	241-320	040	10
5	321-400	016	04
	कुल योग	**400**	**100**

स्त्रोत-सर्वेक्षण के आधार पर।

तलिका क्र0-3 पत्थर खदानों से श्रामिकों की स्वास्थ्य संबंधी बीमारियों की स्थिति

क्र.	बिमारी के प्रकार	कुल संख्या	प्रतिशत
1	सिलकोसिस	130	32.5
2	क्षय रोग	200	50.0
3	मलेरिया	034	8.5
4	सामन्य	036	9.0
	कुल योग	**400**	**100**

स्त्रोत - मजदूर संघ कार्यालय से प्राप्त रिपोर्ट।

तालिका क्र0-4 हीरा एवं पत्थर खदानों पर कार्य करने वाले श्रमिकों की आवास स्थिति-

क्र.	आवास का प्रकार	कुल संख्या	प्रतिशत
1	पक्के मकान	20	05
2	कच्चे मकान	180	45
3	झुग्गी झोपड़ी	200	50
	कुल योग-	**400**	**100**

स्त्रोत - सर्वेक्षण पर आधारित।

तालिकाओं का विश्लेषण - तालिका क्र0-1 के विश्लेषण से स्पष्ट कि 80 प्रतिशत श्रमिक आर्थिक तंगी और मजदूरी तथा अन्य कोई रोजगार न मिलने के कारण पत्थर एवं हीरा खदानों पर काम करते है।

तालिका क्र0-2 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कुल 400 श्रमिकों में से 256 लोग 80 रू0 से 160 प्रतिदिन की मजदूरी पर कार्य करते है तथा 4 प्रतिशत लोग ही ऐसे हैं जो 321 से 400 के मध्य कुशल श्रमिक के रुप में प्रतिदिन मजदूरी प्राप्त करते हैं।

तालिका क्र0-3 के विश्लेषण से खदानों पर काम करने वाले श्रमिकों को गम्भीर बीमारी प्राप्त हो रही 400 श्रमिकों में से 330 श्रमिक सिलकोसिस तथा क्षय रोग से पीड़ित है। 82.5 प्रतिशत लोग भंयकर बीमारी से तड़प कर आधी जिन्दगी में घर, परिवार संसार छोड़कर मृत्यु के मुख में समा जाते है।

तालिका क्र0-4 के विश्लेषण से यह बात सामने आई कि कुल 400 श्रमिकों में से 200 श्रमिक कच्चे एवं पक्के मकानों में रहकर गुजर करते है तथा शेष 200 श्रमिक खदानों के पास झुग्गी-झोपड़ी ही रात्रि विश्राम का सहारा है। इसका परिणाम उनके स्वयं कुछ बुरी आदतें है। जैसे- शराब पीना, गांजा, अफीम खाना, जहरीले मादक पदार्थ लेना आदि।

निष्कर्ष- शोधार्थी शोध पत्र के माध्यम से निष्कर्ष के रूप में यह बात रखता है कि पत्थर एवं हीरा खदानों में श्रामिकों की मजबूरी एवं आर्थिक तंगी का नजायज फायदा उठाकर बंधुआ बनाकर शोषण किया जाता है जो एक गंभीर समस्या है। श्रमिकों का पत्थर की खाईयों में तो कभी ऊँची चट्टानों में चढ़कर पत्थर की बड़ी-बड़ी सिलों को काटना तथा विस्फोटन करना होता हैं। खदानों पर सुरक्षा व्यवस्था न होने के कारण अनेक बार में मजदूर अपने अंग गँवा बैठते है। इसी के साथ खदानों से उड़ने वाली धूल ने श्रमिकों की पत्नियों को आधी उम्र में ही विधवा कर दिया है। यहॉ सिलकोसिस बीमारी का आज तक कोई उपचार नहीं निकला श्रमिकों को न तो उपचार मिल पाता न ही मृत्यु के बाद परिवार के सदस्य को मुआवजा दिया जाता है।

पन्ना जिले के खदान उद्योग, पर्यावरण, श्रमिकों के स्वास्थ्य की पर मानसिक सामाजिक दृष्टिकोण से विपरीत प्रभाव डालता है। सरकार और समाज द्वारा इसे रोकने के लिए कई योजनाएं बनाई गई लेकिन वे सिर्फ कागजों पर चल रही है। आवश्यकता हैं श्रमिकों के जीवन स्तर को विकसित करना तथा उनको सामाजिक सुरक्षा देना राष्ट्र का विकास करना है।

भविष्य हेतु सुझाव - किसी न किसी कार्य को करने के दौरान अनेक समस्याएं आती हैं लेकिन देश को विकसित करने हेतु सरकार एवं समाज को समाधान खोजना आवश्यक हैं -

1. श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अन्तर्गत निर्धारित दर पर मजदूरी देना।
2. खदानों पर कार्य करने वाले श्रमिकों का पंजीयन होना।
3. श्रमिकों की इच्छा के अनुसार कार्यों का वर्गीकरण।
4. खदान पर विस्फोट करने के पहले पानी का छिड़काव ताकि धूल न उड़े और सिलकोसिस जैसी बीमारी पर काबू पाना आदि।
5. खदानों पर विस्फोट के समय चेतावनी के झण्डे या सायरन तथा हुटर का प्रयोग।
6. श्रमिकों के लिए चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी हेतु शिविर का आयोजन।
7. खदानों पर श्रमिकों को मास्क उपलब्ध करवाना तथा लगाने हेतु प्रेरित करना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रम सुरक्षा एवं सामाजिक सुरक्षा - डॉ.एस.सी.सक्सेना।
2. पर्यावरण अध्ययन- डॉ.एस.एम.सक्सेना एवं श्रीमति शोभा मोहन।
3. पत्थर खदान मजदूर संघ कार्यालय से प्राप्त सूचनाएं।
4. इन्टरनेट बेवसाइट से प्राप्त जानकारी।
5. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।
6. पत्रिका समाचार-पत्र।

****

वित्तीय समावेशन के माध्यम से बैंकिंग जागरूकता (एक अध्ययन)

डॉ. प्रियंका श्रीवास्तव *

शोध सारांश – वित्तीय समावेशन के लिए भारत सरकार; भारतीय रिजर्व बैंक एवं नाबार्ड निरंतर अनुसंधान कर रहे है। इस कार्य में सरकारी क्षेत्र के बैंक ग्रामीण बैंक एवं जिला स्तरीय सहकारी बैंक भी अपना योगदान दे रहे है। ग्रामीण और वित्तीय सुविधाविहीन इलाकों में वित्तीय साक्षरता और हमारी सक्रिय कार्यप्रणाली के माध्यम से वित्तीय समृद्धि के लिए सफलता प्राप्त की जाऐगी।

वित्तीय समावेशन एवं ग्रामीण विकास के पहलुओं पर अध्ययन करने से ज्ञात हो रहा है। कि आगामी दिनों में वित्तीय समावेशन की कार्यप्रणाली अधिक गतिमान एवं समस्या रहित होगी। जिससे ग्रामीण इलाकों में विकास योजनाए सक्रिय रूप से कार्यान्वित होगी और डॉ.अब्दुल कलाम का नव निर्माण का सपना वास्तव में बदल जाऐगा। सभी भारतीयों को भरपूर मात्रा में अनाज की आपूर्ती होगी;मजदूरों को रोजगार मिलेगा और वित्तीय समावेशन के माध्यम से बैंकों के राष्ट्रीयकरण का उददेश्य पूरा हो सकेगा।

प्रस्तावना –भारत की आर्थिक नीतियों में तथा बैंकों की घोषित दृष्टिकोण पत्रों में हम अक्सर वित्तीय समावेशन (financial inclusion) शब्द को सुनते है।

वित्तीय समावेशन का अर्थ–वित्तीय समावेशन समाज के हर वर्ग के व्यक्ति;विशेष रूप से आर्थिक रूप से कमजोर लोग;तक उपयुक्त वित्तीय उत्पाद तथा सेवाऐं उपलब्ध कराने के लिये प्रारंभ की गई एक नीति है। इसमें वित्तीय उत्पाद तथा सेवाओं को मुख्यधारा की वित्तीय संस्थाओं द्वारा इन्हें यथोचित मूल्य तथा पारदर्शी तरीके से उपलब्य कराने पर जोर दिया जाता है। यानि ऐसा ना हो कि गरीब वर्ग को वित्तीय सेवाऐं उपलब्ध कराने के नाम पर ऐसी वित्तीय संस्थाओं को मौका दे दिया जाऐ जो इसका अनुचित लाभ उठाऐं।

वित्तीय समावेशन या फायनेंशियल इन्क्लूजन शब्द का आसान भाषा में अर्थ यह होता है। कि समाज के निचले से निचले स्तर पर बैठे व्यक्ति को देश की वित्तीय मुख्यधारा को (financial mainstream) का हिस्सा बनाया जाऐ। वित्तीय विश्लेषकों के अनुसार वित्तीय धारा से जोड़ने का सबसे सहज तरीका और पहला कदम होता है, बैंक में खाता खोलना। इसलिये कहा जा सकता है। कि वित्तीय समावेशन का उददेश्य ही यह सुनिश्चित करना है। कि समाज में रहने वाले हर व्यक्ति का बैंक में खाता हो।

लेकिन जब समाज के सबसे निचले स्तर पर बैठे व्यक्ति को बैंक से जोडने की बात की जाती है, तो यह बात भी महत्वपूर्ण हो जाती है कि बैंक से लोगों को जोड़ते समय इस बात का ध्यान रखा जाऐ कि वर्तमान स्थितियों में बैंकों के तामझाम ऐसे लोगों के मन में डर ना पैदा करें। यानि वित्तीय समावेशन नो फ्रिल बैंकिंग (दिखावा तथा आडम्बर रहित बैंकिंग) प्रणाली अपनाने पर जोर दिया जाता है।

वित्तीय समावेशन का एक ओर पहलू है यह सुनिश्चित करना की आम लोगों को समय पर सस्ता कर्ज मिल सके तथा समाज के निचले तबके के प्रति भी सभी वित्तीय संस्थान जबावदेही सुनिश्चित करें।

वर्ष 2004 में भारतीय रिजर्व बैंक (आर.बी.आई) ने भारत में वित्तीय समावेशन की जाँच करने के लिये खान आयोग का गठन किया। इस आयोग की सिफारिशों के आधार पर आर.बी.आई ने देश के वाणिज्यिक बैंकों को एक मूलभूल नो फ्रिल बैंक अकांउट (basic no frill account) बनाने की अपील की। भारत में अधिकारिक रूप से वित्तीय समावेशन को एक बैंकिंग नीति के रूप में वर्ष 2005 में के.सी.चक्रवर्ती समिति की रिपोर्ट के बाद अमल में लाना शुरू किया गया। इसके बाद बैंकों ने निचले स्तर पर रहने वाले लोगों को ध्यान में रखकर बैंक खाता खोलने की शर्तों को आसान करने की प्रक्रिया शुरू की। वित्तीय समावेशन की नीति बनाने की आवश्यकता इसलिए पड़ी क्योंकि भारत की जनसंख्या का अधिसंख्य हिस्सा कृषि कार्य में संलग्न है। और कृषि वर्ग को तमाम समस्याओं से दो चार होना पड़ता है। जैसे ऊँची ब्याज दर;कृषि क्षेत्र में भारी अनिश्चिता; इस क्षेत्र में बीमा कवर का अभाव; लगाातार बढती लागत ; महाजनी सूद का लगातार मजबूत होता शिकंजा आदि। इन समस्याओं के चलते यह वर्ग बैंकिंग क्षेत्र से भी उसी तरह के दुराग्रह पालने लगता है, जैसे महाजनों तथा अन्य सूदखोर प्रवृति के लोगों के प्रति उसने पाला था। इसलिए यह आवश्यक है कि वित्तीय क्षेत्र; विशेषकर बैंकिंग के प्रति इस वर्ग के दुराग्रहों को दूर किया जाऐ। इसलिये वित्तीय समावेशन की नीति के तहत निचले तथा अभी तक वित्तीय क्षेत्र. के प्रति उपेक्षा रखने वाले वर्ग को वित्तीय धारा से जोड़ने का प्रयास किया गया।

वित्तीय समावेशन पर हाल फिलहाल के समय में केन्द्र सरकार व भारत की तमाम वित्तीय संस्थाओं द्वारा ध्यान दिए जाने का एक प्रमुख कारण यह है। कि इनका मानना है कि वित्तीय समावेशन ही समावेशित विकास को प्राप्त करने का सर्व प्रमुख माध्यम है।

वित्तीय समावेशन से जुडे मुख्य तथ्य –

1. वित्तीय समावेशन का अर्थ है, समाज के निचले से निचले स्तर पर बैठे वर्ग तक वित्तीय उत्पादों तथा सेवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित कराना।
2. वित्तीय समावेशन में यह ध्यान रखा जाता हैं कि ऐसा करते समय मुख्यत:मुख्यधारा की वित्तीय संस्थाओं की ही मदद ली जाए।
3. वित्तीय समावेशन का सबसे लोकप्रिय व आसान तरीका बैंक खाता खोलना माना जाता है।
4. वित्तीय समावेशन को समावेशित विकास को प्राप्त करने का सर्वप्रमुख माध्यम माना जाता है।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, करैरा, शिवपुरी (म.प्र.) भारत

5. केरल;हिमाचल प्रदेश तथा पांण्डिचेरी 100 प्रतिशत वित्तीय समावेशित प्रशासनिक क्षेत्र घोषित किए जा चुके है।
6. मंगलम (पाण्डिचेरी) भारत का पहला पूर्णतया वित्तीय समावेशित राज्य था।

वित्तीय समावेशन की आवश्यकता – भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा केन्द्र सरकार को प्रस्तुत 'भारत में बैंकिंग की प्रवृति एवं प्रगति संबंधी रिपोर्ट 2009–10' के अनुसार वित्तीय समावेशन की निम्नगत रूप से आवश्यकता स्पष्ट की है जो –

1. वित्तीय विस्तार व वित्तीय सघनता के स्तर को कम करने के लिए एवं जीडीपी की तुलना में निजी कर्ज के अनुपात के अनुसार तुलना करने पर भारत में बैंकिंग क्षेत्र का आकार एवं विस्तार बढाने के लिये वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया को सुद्रढ करना आवश्यक है।
2. 'नो फ्रिल्स खाता' खोलने और लेनदेन प्रणाली को बनाये रखने के लिए तथा खाता धारक को कम राशि की ओवरड्राफ्ट सुविधा का लाभ प्रदान करने के लिए वित्तीय समावेशन आवश्यक है।
3. भारतीय रिजर्व बैंक ने सन् 1992 को प्रायोगिक स्तर पर शुरू किया गया'स्वंय सहायता बैंक संपर्क कार्यक्रम (एसबीएलपी)' जो स्वंय सहायता समूहों को बैंकिंग के से जोडता है। इस कार्यक्रम में काफी वृद्धि दर्शायी है।इस स्थिति को बनाये रखने के लिए वित्तीय समावेशन आवश्यक है।

भारत सरकार और नाबार्ड का योगदान – नाबार्ड में वित्तीय समावेशन निधि और वित्तीय समावेशन प्रौधोगिकी निधि इन दो निधियों का गठन रंगराजन समिति की सिफारिश के अनुसार किया। भारत सरकार; भारतीय रिजर्व बैंक और नाबार्ड द्वारा 5 वर्ष की अवधि में क्रमश: 40:40:20 के अनुपात में अंशदान किया जाऐगा। केन्द्रीय बजट 2010–11 में प्रत्येक निधि की मूलराशि में 100 करोड रूपये की वृद्धि की है। (स्त्रोत 'भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति संबंधी रिपोर्ट 2009–10' भारतीय रिजर्व बैंक पृष्ठ संख्या 33;54)

ग्रामीण विकास के योगदान में वित्तीय समावेश की भूमिका – वास्तव में ग्रामीण इलाकों में वित्तीय समावेशन सफल रूप से कार्यान्वित किया जा सकेगा। जिसके लिये हमें निम्न कार्य करने होगें–

1. ग्रामीण लोगों को रोजाना बचत की आदत लगाने के लिए प्रोत्साहित करना एवं उन्हे वित्तीय सुविधाओं से अवगत कराने और इन सुविधाओं का लाभ उठाने के लिएवित्तीय रूप से उन्हें साक्षर करना। बैंक द्वारा बचत खाते खोलना एवं आवश्यकता पड़ने पर ऋण सुविधाऐं मुहैया कराना। इस कार्य में स्वंय सहायता समूह या व्यवसाय प्रतिनिधि या सुविधादाता से सेवा ली जा सकती है।
2. ग्रामीण इलाकों में स्थित डाकघर की आम आदमी बीमा योजना एवं वरिष्ठ नागरिक जमा योजना के बारे में वित्तीय सुविधा विहीन लोगों को जानकारी देना और उन्हें इन सुविधाओं से जोड़ना तथा केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही रोजगार गारंटी योजनाओं से प्राप्त रोजगार मजदूरी इन लोगों के खाते में जमा किया जा सके ताकि आवश्यकता पड़ने पर वे नगद निकासी कर सकेगें। अन्य राशि बचत की जाऐगी जिसमे वे अपना पारिवारिक आर्थिक नियोजन कर सकते है।
3. वित्तीय साक्षरता के अभियान को सक्रिय करना होगा।इस अभियान में न केवल भारतीय रिजर्व बैंक या नाबार्ड का ही योगदान हो बल्कि राज्य सरकार एवं स्थानीय प्रशासन को भी अपनी भूमिका निभानी होगी। प्रचार माध्यमों एवं क्षेत्रीय समाचार पत्रों को वित्तीय साक्षरता अभियान में पहल करनी होगी।
4. सरकारी क्षेत्र के बैकों ग्रामीण बैकों एवं सहकारी बैंकों के द्वारा किसानों को जारी की गई। किसान क्रेडिट कार्ड योजना (के.सी.सी.) के अंतर्गत कृषि एवं कृषि उत्पादकता को बढावा देने के लिये किसानों को क्रेडिट कार्ड जारी किया जाना चाहिये ताकि उन्हे समय पर पर्याप्त राशि उपलब्ध हो सके।
5. ग्रामीण मजदूरों को आत्म निर्भर बनाने एवं उन्हें कुशल व्यवसायिक बनाकर उनके कारोबार को बढाने के लिये प्रयास किया जाना चाहिए। भारत सरकार द्वारा स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के माध्यम से इस दुस्कर कार्य को पूरा करने के लिये कृषक मजदूरों में आशा पल्लवित की है। इस कार्य में सरकारी क्षेत्र के बैंक भी अपना योगदान दे रहे है।

वित्तीय समावेशन में बैंकों की भूमिका के संदर्भ में एक अध्ययन– वित्तीय समावेशन में ग्रामीण स्तर पर किए गए व्यापक प्रचार प्रसार एवं बैंकों द्वारा लगाए गए कैम्पों की भूमिका के संदर्भ में हमारे द्वारा मध्याचंल ग्रामीण बैंक की प्रमुख तीन शाखाओं द्वारा आयोजित कैम्पों का सर्वे किया गया है। इन कैम्पों के माध्यम से हमें निम्नानुसार तथ्य प्राप्त हुऐ है। **(सारणी देखे अगले पृष्ठ पर)**

आयोजित कैम्पों में बैंक अधिकारियों द्वारा उपस्थित जनसमूह को बैंक संबंधी विभिन्न योजनाओं की जानकारी देने के साथ ही बैंक में खाते खुलवाने हेतु लोगों को प्रेरित किया गया तथा इससे मिलने वाले लाभों के बारे में भी जानकारी दी गई। ऐसे लोग जो अभी तक किसी बैंक आदि से नही जुडे है से चर्चा की गई तो उनसे इस प्रकार की जानकारी सामने आई है।

1. कुछ लोगों के पास अभी भी के बाय सी नॉर्म्स की पूर्ति के क्रम में दस्तावेज उपलब्ध नहीं है।
2. कुछ लोगों के मन में बसे डर की वजह से वह बैंकों से नही जुडे है।
3. कुछ कृषक के सी सी बनवाने हेतु बांछित दस्तावेजों को प्राप्त करने में आ रही परेशानियों की वजह से बैंक तक नही जा रहे है।

ग्रामीण विकास और वित्तीय समावेशन के समक्ष चुनौतियां – ग्रामीण विकास के परिप्रेक्ष्य में वित्तीय समावेशन को कार्यन्वित करना वास्तव में उतना आसान नहीं है। जहां हम वित्तीय जागरूकता एवं वित्तीय साक्षरता का प्रचार ग्रामीण एवं वित्तीय सुविधाविहीन लोगों को वित्तिय सहायता प्रदान करने में कुछ समस्याऐं भी है। वित्तीय समावेशन के माध्यम से ग्रामीण विकास के लिये हमें जिन चुनौतियों का सामना करना होगा उनके कुछ बिन्दु इस प्रकार है।–

1. वित्तीय सुविधाविहीन लोगों से बचत खाते नो फ्रिल्स खाते खुलवाने एवं उनके लेनदेन के निरीक्षण के कार्य करने वाले व्यवसाय प्रतिनिधि अथवा सुविधादाता का पारिश्रमिक उस स्तर का हो जिससे वे अपनी आजीविका सुचारू रूप से चला सकें।
2. वित्तीय समावेशन के अंतर्गत वित्तीय सेवाऐं प्रदान करने के लिए व्यवसाय प्रतिनिधियों और सुविधा दाताओं (बीसी–बीएफ) को योग्य प्रशिक्षण दिया जाना होगा। भारतीय बैंकिंग और वित्तीय संघठन (आईआईबीएफ) एवं नाबार्ड के माध्यम से इनको प्रशिक्षण देने का प्रबंध किया गया है। लेकिन ग्रामीण या वित्तीय सुविधाविहीन लोगों की जरूरत को ध्यान में रखकर क्रमश: जिला एवं राज्य स्तर पर प्रशिक्षण प्रणाली कार्यन्वित की जानी चाहिऐ। योग्य प्रशिक्षण के अभाव में

बीसी–बीएफ मॉडल के अंतर्गत काफी शिकायतें प्राप्त हो रही है।

3. वित्तीय समावेशन के कार्यन्वयन के लिये ग्रामीण इलाकों एवं वित्तीय सुविधाविहीन क्षेत्रों से आशानुरूप सहयोग न मिलना।

निष्कर्ष – ऐसे लोगों को वित्तीय रूप से साक्षर बनाकर वित्तीय समावेशन से जोड़ने की अत्यंत आवश्यकता है। ताकि इनके मन से डर/संकोच को समाप्त किया जा सके। ग्रामीण स्तर पर उपलब्ध सभी शासकीय एजेन्सी को इस हेतु वांछित दस्तावेजों की उपलब्धता हेतू सक्रिय सहयोग देने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

मध्याचंल ग्रामीण बैंक शाखा	करैरा	करही	भौंती
कैम्प का ग्राम	निचरोली	सुनारी	उमरीकला
कैम्प में उपस्थित ग्रामीणों की संख्या	548	365	872
कैम्प में उपस्थित ग्रामीणों में से बैंक से जुडे लोगों की संख्या	412	201	825
ऐसे कृषकों की संख्या जिनके केसीसी बने हुऐ है	300	267	788
ऐसे ग्रामीण /कृषकों की संख्या जिनके बैंक/पो.ऑ. में बचत खाते है।	452	295	844
ऐसे ग्रामीण जिनका बैंक आदि में कोई बचत खाता नहीं है।	96	70	28
कैम्प की उपस्थिति संख्या में वित्तीय समायोजन का प्रतिशत	82	81	97

****

अंतर्राष्ट्रीय पूँजी और वैश्वीकरण

डॉ. राजू रैदास *

शोध सारांश – वैश्वीकरण पूँजीवादी विकास के मौजूदा चरण ही साम्राज्यी वैश्वीकरण है। इसका मुख्य प्रेरणा स्रोत आज के दौर की अंतरराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी है। इसके चलते अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय पूंजी दुनिया के सभी देशों के पूंजी के बाजारों में निवेश कर सकती है, वित्तीय परिसंपत्तियां जैसे शेयर, बांड, सरकारी प्रतिभूतियां आदि – के हाजिर व वायदा बाजार दोनों में बेरोक–टोक खरीद–बेच कर सकती है। इसी प्रकार औद्योगिक पूंजी भी विश्व के किसी भी कोने में जाकर निवेश कर सकती है, उद्योग स्थापित कर सकती है, अपनी तकनीक और प्रबंध व्यवस्था लागू कर सकती है, अपने उद्योग के लिए दुनिया के किसी भी कोने से कच्चा माल ला सकती है और तैयार माल को दुनिया के हर कोने में बेच सकती है। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी और तैयार माल को दुनिया के हर कोने में बेच सकती है। अंतराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी और औद्योगिक पूंजी , दोनों को पूरे विश्व में कहीं भी निवेश करने की, मुनाफा कमाकर उसे घर ले जाने की और कारोबार को अपनी मर्जी के हिसाब से चलाने व बंद करने की पूरी–पूरी आजादी है। ऐसा सब करने के लिए पूंजी की बेरोक–टोक आवाजाही की पूरी आजादी ही वैश्वीकरण है। ऐसी आवाजाही दिलाने के लिए सभी विकासशील देशों पर उदारीकरण, निजीकरण व वैश्वीकरण की नवउदारवादी नीतियां, आर्थिक नीतियां अपनाने के लिए दबाव बनाया गया लेकिन श्रम की आवाजाही पर पूरी तरह नियंत्रण है, मनाही है।

प्रस्तावना – वैश्वीकरण का शाब्दिक अर्थ स्थानीय या क्षेत्रीय वस्तुओं या घटनाओं के विश्व स्तर पर रूपांतरण की प्रक्रिया है। इसे एक ऐसी प्रक्रिया का वर्णन करने के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है , जिसके द्वारा पूरे विश्व के लोग मिलकर एक समाज बनाते हैं तथा एक साथ कार्य करते हैं। यह प्रक्रिया आर्थिक, तकनीकी, सामाजिक और राजनीतिक ताकतों का एक संयोजन है। वैश्वीकरण का उपयोग अक्सर आर्थिक वैश्वीकरण के सन्दर्भ में किया जाता है, अर्थात, व्यापार, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश, पूंजी प्रवाह, प्रवास और प्रौद्योगिकी के प्रसार के माध्यम से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का अंतरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं में एकीकरण (शैला एल. क्रोचर.) वैश्वीकरण के दौर की शुरूआत 1980 के दशक में हुई और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी के वर्चस्व के चलते 2008 में विश्व पूंजीवादी व्यवस्था में एक भीषण आर्थिक संकट आ गया जो अपनी तीव्रता में 1930 के दशक के महामंदी के आर्थिक संकट जैसा ही था। अमेरिका, यूरोपीय संघ व जापान में सकल घरेलू उत्पाद पांच साल बाद भी 2007 के स्तर से नीचे है। भारत भी आर्थिक संकट का सामना कर रहा है। विदेशी निवेशक, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी तथा भारत में उनके पैरोकार भारतीय आर्थिक संकट के बजट में घाटे का लगातार ऊँचे स्तर पर बने रहना (4–5 प्रतिशत सकल घरेलू उत्पाद का), भारत के विदेशी व्यापार में भी घाटे का लगातार ऊँचे स्तर पर बने रहना (4–5 प्रतिशत सकल घरेलू उत्पाद का) और हाल ही में भारतीय रूपए के विदेशी विनिमय मूल्य में तीव्र गिरावट (एक डालर 66 रूपए का) से परेशान हैं। भारतीय जन मानस को आर्थिक संकट के दो और आयाम बहुत अधिक सता रहे हैं। उपभोक्ता मूल्यसूचक अंक में साल दर साल 10 प्रतिशत से ज्यादा की बढ़ोतरी, खाद्य पदार्थों में इससे भी ज्यादा तथा बढ़ती हुई बेरोजगारी, जो कि रोजगार विहीन विकास का परिणाम है। आर्थिक विकास की दर में भी लगातार गिरावट दर्ज की जा रही है। यह कहना गलत नहीं होगा कि वैश्वीकरण की दौड़ में शामिल होने से भारतीय अर्थव्यवस्था में विकास की जो भी संभावनाएं उत्पन्न हुई थीं, वे सब अब पूरी हो चुकी हैं। देश में जो बहुआयामी आर्थिक संकट व्याप्त है।

भारतीय रूपए का तीव्र अवमूल्यन हमारी अर्थव्यवस्था के संकट के नवीनतम रूप में सामने आया है। सरकार इस अवमूल्यन के लिए पेट्रोलियम के ऊंचे दाम और उसका बढ़ता हुआ आयात तथा सोने के ऊंचे दाम व उसका बढ़ता आयातों को दोसी बता रही है। लेकिन वह वैश्वीकरण की मुहिम के चलते आयात व्यापार के उदारीकरण की जो नीतियां अपनाई गई, उन पर वह पर्दा डालने में लगी है। आयात पर सभी प्रतिबंध लगभग हटा लिए गए। आयात कर न्यूनतम स्तर पर आ गया। सभी प्रकार की वस्तुओं के लिए आयात खोल दिया गया। नतीजा यह है कि आज कल गुड़गांव में 4–5 करोड के ऐसे लग्जरी फ्लैट उपलब्ध हैं जिनमे टाईल,मार्बल,दरवाजे– खिड़की, सभी प्रकार की फिंटिंग आदि आयातित हैं। इन फ्लैटों में रहने वाले की चमड़ी देशी हो सकती है, पर बाकी सब विदेशी है। सोने के आयात के पीछे दो मुख्य कारण हैं। लगातार बढ़ती हुई महंगाई और बढता हुआ काला धन। रूपए के अवमूल्यन से निपटने के लिए सरकार वित्तीय उदारीकरण की नीतियों को और अधिक बढ़ावा देने को तत्पर है। जल्दी ही अर्थव्यवस्था के बचे खुचे क्षेत्र भी विदेशी पूंजी निवेश के लिए खोले जाएगे जैसे सुरक्षा उद्योग क्षेत्र,बीमा क्षेत्र, न्यूज मीडिया क्षेत्र तथा इलेक्ट्रानिक व प्रिंट मीडिया आदि। आयात पर प्रतिबंध लगाने व निर्यात को प्रोत्साहन देने की बजाए अंतरराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी को और अधिक बढ़ावा देकर फौरन हल ढूढ़ाँ जा रहा है। सभी जानते हैं कि इस पूंजी का चरित्र सट्टेबाजाराना है और यह किसी की सगी नहीं है। विश्व पूंजीवादी अर्थव्यवस्था और भारतीय अर्थव्यवस्था भी सभी आज वैश्वीकरण की नीतियों के संकट का सामना कर रहे हैं। इस संदर्भ में वैश्वीकरण, उसकी नीतियों, सट्टेबाजाराना वित्तीय पूंजी, इस पूंजी निवेश के दुष्परिणामों पर एक बार फिर नजर डाली जा सकती है।

लेटिन अमेरिकी देश चिली में इन नीतियों को सबसे पहले लागू किया गया। चिली के कम्युनिस्ट राष्ट्रपति अलांदे की हत्या के बाद वहां की अमेरिका समर्थित सेना ने सत्ता हथिया ली और इन नीतियों को तेजी से लागू किया। पूंजी की बेरोक–टोक पूरी–पूरी आवाजाही को सुनिश्चित करने के लिए यह जरूरी है कि सरकारें अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में उदारीकरण व निजीकरण

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, उमरिया (म.प्र.) भारत

की नीति अपनाएं। व्यापार उदारीकरण विदेशी व्यापार, विशेषकर आयात से सभी प्रतिबंध हटा दे, 'उदारता' बरते। आयात में लाइसेंस–कोटा व्यवस्था समाप्त करें, आयात कर न्यूनतम कर दे। औद्योगिक उदारीकरण देश में औद्योगिक लाइसेंस नीति, कोटा – परमिट , एकाधिकार पर रोक , मूल्य नियंत्रण जैसी नीतियां समाप्त कर दे। विदेशी पूंजी निवेश के लिए अपने देश के दरवाजे पूरी तरह खोल दे। देशी व विदेशी पूंजी के साथ समानता का व्यवहार करें। राजस्व उदारीकरण बजट नीति के संदर्भ में संपन लोगों व कम्पनियों पर आय कर में भारी कटौती कर देय शिक्षा, चिकित्सा आदि सामाजिक क्षेत्र पर सरकारी व्यय में कटौती करे स्वजनिक क्षेत्र के विस्तार पर रोक लगाएं बजट के घाटे को खत्म कर दे सब्सिडी को कम से कम कर दे। वित्तीय उदारीकरण बैंक व बीमा जैसे क्षेत्र देशी विदेशी निजी पूंजी के प्रवेश के लिए खोल दें। देशी मुद्रा की विदेशी विनिमय दर को पूर्ण परिवर्तनीय बना दें। सरकार के कार्यभार व दायित्व न्यूनतम कर दें। लेकिन देशी–विदेशी बड़ी पूंजी के लाभ को सुनिश्चित करने व सुरक्षा प्रदान करने के लिए सरकार की दखलंदाजी न केवल बनी रहे, बल्कि बढ़ती रहे। सार्वजनिक क्षेत्रों को बेच दें, निजीकरण की नीति अपनाएं।

दूसरे महायुध्द के बाद विकसित पूंजीवादी देशों ने ऊंची दर से आर्थिक वृध्दि दर्ज की। पूंजी की मात्रा मे बहुत तेजी से वृध्दि हुई। 1973 के बाद विकसित पूंजीवादी देशों मे आर्थिक विकास की दर में गिरावट आ गई। जिसके कारण पूंजी निवेश की मांग में कमी हुई, पूंजी निवेश के लाभप्रद अवसरों में गिरावट आयी। इन परिस्थितियों में साल–दर साल निरंतर बढ़ती हुई पूंजी के लाभप्रद निवेश के लिए नए रास्ते खोजने जरूरी हो गए। इस विशालकाय पूंजी को, वित्तीय पूंजी और औद्योगिक पूंजी दोनों को अपने प्रसार और फैलाव के लिए सारी दुनिया ही एक मंडी के पर चाहिए। एक ऐसी मंडी जहां उन्हें बेरोक टोक आवाजाही की पूरी–पूरी आजादी हो। इस तरह वैश्वीकरण के दौर की शुरूआत हई। विकासशील देशों ने विकसित देशों की वित्तीय–पूंजी और औद्योगिक पूंजी की बेरोक,–टोक आवाजाही को क्यों स्वीकार किया? इसके बाह्य एवं आंतरिक कारण है (साम्राज्यवादी देशों की सरकारें, अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष व विश्वबैक अंतरराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी वैश्विक (ग्लोबल) कंपनियों के हितों के लिए सभी विकासशील देशों की सरकारों पर दबाव डालती हैं कि वे इन दोनों के मुनाफे के लिए अपने देश के दरवाजे पूरे पूरे खोल दे। और सभी रूकावटें दूर कर दे। विश्व व्यापार संगठन के समझौतों का दबाव भी काम करता रहा है। 1990 के बाद सोवियत संघ व पूर्वी योरोप के देशों में समाजवाद के पतन के बाद विकासशील देशों की साम्राज्यवाद के सामने डटे रहने की ताकत कमजोर पड़ गई। ये समाजवादी देश विकासशील देशों के लिए पूंजी , तकनीक व मशीनरी आदि के स्रोत थे और उनके निर्यात के लिए मंडी भी उपलब्ध कराते थे।

भारत के संदर्भ में दो मुख्य आंतरिक कारण है। एक, 1950 के बाद भारत सरकार ने विकास की जो रणनीति अपनाई थी, 1980 के दशक के आते–आते वह अपने विकास की संभावनाओं को भुनाकर चुक गई थी, खोखली हो गई थी। दो आर्थिक नियोजन व विकास के 40 वर्षों में , 1951–1990 भारत का इज्जतदार पूंजीपति भी बेतहाशा फूला फला था, उसकी परिसंपत्तियों में अपार वृद्धि हुई थी। आर्थिक विकास की तत्कालीन रणनीति के चुक जाने के कारण वह अपने और आगे विकास के लिए साम्राज्यी पूंजी से गठजोड के लिए तैयार हो गया। उसने भी आर्थिक क्षेत्र में सरकार को सभी नियंत्रणों को समाप्त करने की और सार्वजनिक क्षेत्र को भी उसके हवाले कर देने की मांग की।

नवउदारवादी आर्थिक नीतियों के मामले में अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष (इंटरनेशनल मोनेटरी फंड या आइएमएफ), विश्व बैंक (वर्ल्ड बैंक) और विश्व व्यापार संगठन (वर्ल्ड ट्रेड ऑर्गेनाइजेशन या डब्लूटीओ) की विशेष भूमिका रही है। 1980 के दशक में अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष ने विकासशील देशों को ऋण लेकर निर्यात उद्योग स्थापित करने का सुझाव दिया। एक निर्यातोन्मुख विकास की रणनीति अपनाने का। अनेक विकासशील देशों ने इस सलाह को मानकर लागू कर दिया। इस प्रकार वित्तीय पूंजी का अंतरराष्ट्रीयकरण सामने आया। 1980 के दशक में विकसित पूंजीवादी देशों में विकास की दर में गिरावट आ रही थी। इसका सीधा – सीधा असर निर्यातोन्मुख विकासशील अर्थव्यवस्थाओं पर पड़ा, उनका निर्यात कम हो गया और उनकी विदेशी विनिमय अर्जित करने की क्षमता कम हो गई। परिणामस्वरूप वे विदेशी कर्जे की किस्त और उसका ब्याज नहीं चुका पाए, विदेशी विनिमय के संकट में फंस गए। परिणामस्वरूप उनको अन्तरराष्ट्रीय मुद्राकोष की शरण में जाना पड़ा। पिछले 25 वर्षों में जब भी कोई विकासशील देश आर्थिक संकट में फंसकर अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष व विश्व बैंक के पास मदद के लिए गया तो उन्होंने कर्जा तो दिया लेकिन साथ ही नई आर्थिक नीति, आर्थिक सुधार, उदारीकरण, निजीकारण आदि नीतियां अपनाने के लिए बाध्य भी किया। 1991 में भारत भी ऋण लेने के लिए अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष के पास गया था और उसने नई आर्थिक नीति और के लिए अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष के पास गया था और उसने नई आर्थिक नीति और आर्थिक सुधार को लागू करने का दबाव डाला था।

विश्व व्यापार संगठन के समझौतों ने यह सुनिश्चित कर दिया है कि कोई भी देश, देशी और विदेशी पूंजी के बीच भेदभाव नहीं कर सकता। औद्योगिक नीति, कर नीति, व्यापार नीति, मूल्य नीति तथा अन्य आर्थिक नीतियां, देशी–विदेशी कंपनियों के लिए एक जैसी चाहिए। ग्लोबल कंपनियों के पेटेंट–दवाईयों, रासायनिक उत्पाद, कृषि बीजों आदि–को भी पूरी सुरक्षा प्रदान की गई। व्यवहार में दोहरे मापदंड देखने को मिलते हैं। साम्राज्यवादी देशों ने वैश्वीकरण के अंतर्गत अपनी औद्योगिक पूंजी और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी, दोनों के लिए तो बेरोक–टोक आवाजाही हासिल कर ली है, लेकिन विकासशील देशों को व्यवहार में यह सुविधा प्राप्त नहीं हुई है। श्रम की आवाजाही पर पूरी तरह मनाही है। विकासशील देशों के निर्यात पर अनगिनत प्रतिबंध हैं। गैर–तटकर अवरोध, जैसे खाद्य पदार्थ के निर्यात पर साफ–सफाई के नाम पर, गलीचे, चमड़ा उत्पाद, सिले–सिलाए वस्त्र आदि पर बाल–मजदूरी के नाम पर, दवाईयों के निर्यात पर विश्व व्यापार संगठन के पेटेंट समझौतों के उल्लंधन के नाम पर। विकसित देश, विकासशील देशों को सब्सिडी कम करने की लगातार सलाह देते हैं। दूसरी ओर अमेरिका और यूरोप अपने किसानों को बड़ी भारी मात्रा में तरह–तरह की सब्सिडी प्रदान करते हैं।

क्या इससे कोई अलग विकास हो गया है? नहीं! वैश्वीकरण का दौर कोई अचानक नहीं आया है। यह पूंजीवाद के विकास के अपने नियमों और अपनी गति का ही नतीजा है, जिन नियमों को मार्क्स ने अपनी महान पुस्तक पूंजी में उजागर किया। पूंजीवाद में हर पूंजीपति का, हर कंपनी का यह धर्म है कि संचय करो, संचय करो, संचय करते ही रहो, इसी प्रवृत्ति के चलते वैश्वीकरण का दौर सामने आया। कम्युनिस्ट घोषणापत्र (1848) में भी लिखा है कि पूंजी सभी बाधाओं को तोड़ने–लांघते हुए पूरे विश्व में अपना प्रसार करेगी। अपने माल को बेचने के लिए लगातार ज्यादा से ज्यादा बढ़ती हुई मंडी की जरूरत के चलते पूंजीपति दुनिया के हर कोने तक दौड़ेगा।

वैश्वीकरण, व वित्तीय पूंजी के वर्चस्व के चलते साम्राज्यी देशों के बीच अंतर्विरोध मंद जरूर पड़ गए हैं पर वे समाप्त नहीं हुए हैं जैसे मुद्रानीति व विदेशी व्यापार नीति पर मतभेद अपने देश में कृषि क्षेत्र को भारी सब्सिडी देने पर मतभेद। दुनियाभर में प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा करने की होड़ और अपनी-अपनी पैठ बनाने की होड़ आदि। भविष्य में इन अंतर्विरोधों के तीव्र होने की भी संभावना है।

वैश्वीकरण का दौर अपने विनाशकारी प्रतिकूल प्रभावों के चलते ज्यादा दिन टिक नहीं सकता। कुछ मुख्य प्रभाव हैं। रोजगार विहीन विकास जो व्यापक व तीव्र वैज्ञानिक-प्रौद्योगिक प्रगति का परिणाम है, जिसके चलते कंपनियों के मुनाफे तो बढ़ते जाते हैं लेकिन नए रोजगार नहीं पैदा होते हैं। सच तो यह है कि भविष्य में रोजगार की संभावना भी घट जाती है। दुनिया में संगठित औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार में कमी आती जा रही है। दुनिया के विभिन्न देशों में और एक ही देश के विभिन्न वर्गों में असमानताएं बढ़ रही है जिससे मजदूरों का राष्ट्रीय आय में हिस्सा घट रहा है, मुनाफा दिन दुगना-रात चौगुना बढ़ रहा है। वैश्वीकरण का सारा सिलसिला विकसित पूंजीवादी देशों ने शुरू किया और इसके सारे नियम उन्हीं के पक्ष में हैं , जिसके चलते इन विकसित पूंजीवादी देशों और तीसरी दुनिया के देशों के बीच में असमानताएं बढ़ रही हैं। वैश्वीकरण के चलते विकासशील देशों में बड़ी पूंजी व उच्च मध्यवर्ग को भी फायदा पहुंचा है, असमानताएं बढ़ी हैं। दुनिया की आबादी के सबसे गरीब 20 फीसदी के हाथों में कुल परिसंपत्तियों का हिस्सा घटते-घटते एक प्रतिशत रह गया है। दुनिया के देशों में बढ़ता हुआ दरिद्रीकरण सामने आया है। हाल ही की मानव विकास रिपोर्ट दिखाती है कि वैश्वीकरण के चलते दुनिया के 46 देश, अपनी स्थिति के मुकाबले आज कहीं ज्यादा गरीब हो गए हैं। दरिद्रीकरण का एक अर्थ यह भी है कि आम लोगों की उपभोग की क्षमता भी घट रही है। यह वैश्वीकरण के पूरे सिलसिले को ही बर्दाश्त के बाहर बना देता है। आर्थिक पुन: उपनिवेशीकरण की प्रक्रिया की शुरूआत के साथ-साथ ही बढ़ता साम्राज्यवादी प्रभुत्व हुआ है।

1980 के बाद के वैश्वीकरण के दौर में पिछले तीन दशकों में पूंजी संचय ने विशालकाय रूप हासिल कर लिया है। इसके विपरीत मजदूरी और वेतन पाने वाले श्रमिकों, मेहनतकशों, कर्मचारियों तथा नौकरीपेशा तबकों की आय न्यूनतम स्तर पर ही बनी रही है। कल राष्ट्रीय उत्पादन में उनका हिस्सा निरंतर कम होता रहा है। इसका नतीजा होता है। 'अति उत्पादन' की समस्या, आर्थिक संकट, आर्थिक ठहराव व मंदी का दौर। जैसे-तैसे पूंजीवाद संकट से बाहर तो निकल आता है लेकिन इसी प्रयास में वह भविष्य के लिए एक और अधिक तीव्र संकट के बीच बो देता है। पिछले दशकों में सट्टेबाजी बाजार को बहुत ज्यादा बढ़ा-चढ़ाकर अर्थव्यवस्था में कुछ जान फूंकने की बार-बार कोशिश की गई। लेकिन सट्टेबाजी बाजारी कारोबार का बुलबुला आखिर एक दिन फट ही जाता है और फिर देश उसी आर्थिक संकट के सामने अपने को खड़ा पाता है। वर्तमान आर्थिक संकट से निपटने के लिए वित्तीय पूंजी सभी देशों को 'कमर कसने' व अपने सार्वजनिक व्यय में भारी कटौती करने का दबाव बनाए हुए है जिसके चलते संकट और लंबा खिंचता जा रहा है।

पिछले 30 वर्षों में पूंजीवादी व्यवस्था में जो भी बदलाव आए हैं, उनसे साम्राज्यवाद और पूंजीवाद के चरित्र में कोई मूलभूत तब्दीली नहीं हुई है। पूंजीवाद के विकास के अपने नियम हैं और वह आज के वैश्वीकरण के दौर में भी लागू होते हैं। पूंजीवाद के मुख्य अंतर्विरोध को हल करना मुमकिन नहीं है। यह मुख्य अंतर्विरोध हैं उत्पादन का बढ़ता हुआ सामाजीकरण और निजी हाथों में उसका स्वामित्व होना। सोवियत समाजवादी प्रयोग की असफलता इस वैज्ञानिक सच को किसी तरह से भी नहीं झुठलाती। पूंजीवाद आर्थिक शोषण व आर्थिक संकट दोनों के बगैर जिंदा नहीं रह सकता। इसलिए पूंजीवाद को पलटकर ही इनसे निजात पाई जा सकती हैं।

सन्दर्भ गन्थ सूची :-

1. रोजगार और निर्माण पत्रिका 2016
2. नव भारत पत्रिका 2016
3. www.google.com/wikipedia.com

****

वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) – एक सैद्धांतिक विवेचन

डॉ. मनोज महाजन * डॉ. सुधीर महाजन **

प्रस्तावना – स्वतंत्र भारत की कर संरचना त्रि–स्तरीय है – (अ) केन्द्रीय कर (ब) प्रांतीय कर एवं (स) स्थानीय कर। भारत में संघीय वित्त व्यवस्था होने से भारतीय संविधान में केन्द्र व राज्यों को अलग अलग कर लगाने के अधिकार प्राप्त है, जिसका उपयोग करते हुए केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा अनेक प्रकार के प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष कर लगाए जाते रहे हैं।

भारत में प्रत्यक्ष करों में यथा समय आवश्यक सुधार होते रहे हैं व इनकी संख्या भी बहुत अधिक नहीं है। किन्तु अप्रत्यक्ष करों में विविधता होने से एकरुपता की कमी, क्रियान्वयन सम्बंधी बाधाएं, दोहरा करारोपण, संभावित राजस्व की अनिश्चितता एवं कर अपवंचन जैसे दोष समय के साथ साथ परिलक्षित होने लगे एवं इनमें व्यापक सुधार की आवश्यकता सम्बंधी चिन्तन पिछले कई वर्षो से नीति निर्धारकों एवं सरकार द्वारा किया जाता रहा है। इसी के परिणामस्वरुप सभी अप्रत्यक्ष करों को समाहित करते हुए एकीकृत कर प्रणाली के रुप में जीएसटी को क्रियान्वित करने का निर्णय सरकार द्वारा किया गया।

विभिन्न अवरोधों एवं विरोध का सामना करते हुए जीएसटी के लिए संविधान संशोधन बिल (122 वॉ संशोधन) 2014 लोकसभा में 06 मई 2015 को (संशोधन उपरान्त 08 अगस्त 2016को) एवं राज्य सभा में 03 अगस्त 2016 को पारित हो चुका है। इस बिल पर दोनों सदनों की मुहर लगने के बाद कम से कम 15 राज्यों की विधानसभाओं की मंजूरी की आवश्यकता थी। शोध पत्र लिखे जाने तक 16 राज्यों की विधानसभाओं में यह बिल पारित हो चुका है और दिनांक 08 सितम्बर 2016 को राष्ट्रपति के हस्ताक्षर उपरान्त यह बिल कानून की शक्ल ले चुका है तथा जीएसटी कॉउन्सिल के गठन की प्रक्रिया आरंभ हो चुकी है। कॉउन्सिल के अध्यक्ष केन्द्रीय वित्त मंत्री तथा सदस्य राज्यों के वित्त मंत्री होगें। कॉउन्सिल अन्य चीजों के अलावा जीएसटी की दर व नई टेक्स प्रणाली को अमल में लाने के लिये एक मॉडल बिल तैयार करेगी। स्वतंत्रता पश्चात् अप्रत्यक्ष करों में यह अब तक का सबसे बड़ा व ऐतिहासिक सुधार होगा। प्रस्तावित जीएसटी को 1 अप्रेल 2017 से लागू किए जाने के प्रयास वर्तमान सरकार द्वारा किए जा रहे हैं।

जीएसटी की अवधारणा – जीएसटी का पूरा नाम Goods and Service Tax है। यह एक अप्रत्यक्ष कर है, जो कि व्यापक पैमाने पर पूरे देश के निर्माता, व्यापारी और सेवाप्रदाताओं के माध्यम से वस्तुओं और सेवाओं के उपभोक्ताओं पर लगेगा। यह कर केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा लगाए जा रहे अधिकांश करों का प्रतिस्थापन होगा। अर्थात् यह कर एकल कर के रुप में वस्तुओं और सेवाओं की आपूर्ति पर देय होगा। लगभग सभी राज्यों में जीएसटी के दायरे में आने वाली वस्तुएं व सेवाएं एक ही दाम पर उपभोक्ताओं को उपलब्ध होंगी अर्थात् एक बाजार एक दाम का सिद्धान्त लागू होगा।

जीएसटी के मुख्य बिन्दु –

1. प्रस्तावित जीएसटी तीन स्वरुप में रहेगा –

अ. केन्द्रीय वस्तु एवं सेवा कर CGST

ब. राज्य वस्तु एवं सेवा कर SGST (जिसमें सप्लाय पर कर देय होगा)

स. एकीकृत वस्तु एवं सेवा कर IGST (जो कि राज्यों के बीच होने वाले सौदो पर आधारित होगा)

2. जीएसटी के अन्तर्गत् केन्द्र के – सीजीएसटी में सर्विस टेक्स, सेन्ट्रल सेल्स टेक्स, सेन्ट्रल एक्साईज ड्युटी, एडिशनल एक्साईज ड्युटी, एडिशनल कस्टम ड्युटी, स्पेशल एडिशनल कस्टम ड्युटी ओर सिक्युरटी मनी एक्सचेंज टेक्स आदि समाहित होंगे तथा राज्य के – एसजीएसटी में वेट/विक्रयकर, स्टेट एक्ससाईज टेक्स, प्रापर्टी टेक्स, इंटरटेनमेंट टेक्स, लग्जरी टेक्स, आक्ट्राय एवं इन्ट्री टेक्स आदि समाहित हो जाऐंगे।
3. जीएसटी में करयोग्य वस्तुओं और सेवाओं को एक दूसरे से अलग परिभाषित नहीं किया गया है और इसके साथ ही कर की दर भी एक समान रखी जाना प्रस्तावित है जो पूरी सप्लाय चेन पर लगेगी जिसके द्वारा वस्तु या सेवा अंतिम उपभोक्ता तक पहुॅचेगी।
4. वस्तुओं और सेवाओं के क्रय–विक्रय के प्रत्येक चरण पर लगने वाले इस कर में इनपुट टेक्स क्रेडिट पद्धति प्रयोग में लायी जावेगी। इस पद्धति के अन्तर्गत् वस्तु एवं सेवाकर के अधीन पंजीकृत व्यवसायी को टेक्स क्रेडिट क्लेम करने की सुविधा मिलेगी जिन्होंने अपनी सामान्य व्यवसायिक गतिविधियों के दौरान यह टेक्स भुगतान किया था।
5. फिलहाल चार सेक्टर्स बिजली, पेट्रोलियम व पेट्रोलियम पदार्थ, रियल एस्टेट और एल्कोहल को जीएसटी से बाहर रखा है।
6. केन्द्र द्वारा राज्यों को पहले पॉच साल तक 100 प्रतिशत राजस्व नुकसान का पूर्ण मुआवजा देने की संवैधानिक गारंटी दी गई है।
7. मौजुदा डीलरों को नये रजिस्ट्रेशन की जरूरत नहीं होगी। वैट, सर्विस टेक्स और सेंट्रल एक्साइज में रजिस्टर्ड डाटा जीएसटी नेटवर्क पर ट्रांसफर हो जायेंगे। नए डीलरों को ऑनलाईन आवेदन करना होगा तथा तीन दिन में उनका रजिस्ट्रेशन हो जाएगा जो कि PAN आधारित होगा। प्रत्येक डीलर को एक युनिक आयडी GSTIN दी जावेगी।
8. कारोबारियों को सप्लाय का रिर्टन हर माह की 10 तारीख और खरीद का 15 तारीख तक भरना होगा।
9. राज्य एवं केन्द्र के लिये एक ही रिटर्न दाखिल किया जाना प्रस्तावित है।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) अ.श.रा.म.शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, देवास (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) अ.श.रा.म.शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, देवास (म.प्र.) भारत

10. मुख्य रुप से अधिकांश करदाताओं को कुल 08 प्रकार के जीएसटीआर में से 4 प्रकार के फार्म (सप्लाय के लिए, क्रय के लिए, मासिक रिर्टन एवं वार्षिक रिटर्न) ऑन लाईन ही भरना होंगे एवं कर का भुगतान भी ऑन लाईन किया जा सकेगा। जीएसटीआर 1,2,3 को रिवाइज करने का अधिकार कारोबारियों को नहीं है, लेकिन इसे तय समय-सीमा में सुधारा जा सकेगा।
11. ऐसे छोटे करदाता जो कम्पोजिशन का विकल्प देते है उन्हें तिमाही रिटर्न फाईल करना होंगे।
12. जब दोनों कारोबारी अपने-अपने स्तर पर जीएसटी का भुगतान कर उसकी रसीद और वस्तु के बिल की कॉपी अपलोड करेगें तो सिस्टम उसे वेरीफाई कर देगा। अगर वह वेरीफाई नहीं होगा तो दोनों में से किसी भी कारोबारी को जीएसटी का क्रेडिट नहीं मिलेगा ऐसे में उन्हें पुरा टेक्स जमा करना होगा।

जीएसटी के प्रत्याशित लाभ – करों का एकीकरण, देश के विकास में वृद्धि, देश में एक बाजार का सृजन एवं इसके अनुपालन में आसानी जैसे बिन्दुओं को जीएसटी की विशेषताओं के रुप में रेखांकित किया जा सकता है। जीएसटी लागू होने से निम्नांकित लाभ अपेक्षित है –

देश की अर्थव्यवस्था को लाभ –

1. देश में एकीकृत आम बाजार बनने से विदेशी निवेश तथा 'मेक इन इंडिया' अभियान को बढ़ावा मिलेगा।
2. आर्थिक गतिविधियों में गतिशीलता से रोजगार के अधिक अवसर पैदा होंगे।
3. कर में छुट/एकमुश्त कर भुगतान (कम्पाउंडिग) योजना के कारण छोटे खुदरा विक्रेताओं के एक बडे वर्ग का माल उपभोक्ताओं के लिए सस्ता होगा।
4. व्यापारियों द्वारा पक्का बिल जारी होने पर ही जीएसटी क्रेडिट मिल सकेगा। ऐसा होने से न सिर्फ टैक्स की चोरी रूकेगी बल्कि काले धन पर अंकुश भी लगेगा। जीएसटी लागू होने के बाद जब वस्तुओं की आवाजाही पूरे देश में होगी तो कहीं न कहीं उसे जीएसटी के नेटवर्क में आना ही होगा। मसलन अगर कोई वस्तु एक कारोबारी से दूसरे के पास जाती है, तो दोनों कारोबारियों को उसका बिल जीएसटी नेटवर्क पर अपलोड करना होगा।
5. अविकसित राज्यों को अधिक राजस्व की प्राप्ति होगी।

व्यापार के लिए अनुकूल –

1. अब अनेक करों के लिए अलग-अलग रिकार्ड रखने की आवश्यकता नहीं है, जिससे अनुपालन खर्च में कमी आएगी।
2. सूचना प्रौद्योगिकी के ज्यादा प्रयोग से करदाता और कर प्रशासन में सीधे संपर्क की आवश्यकता कम होगी।
3. जीएसटी से छोटे व्यवसायों को भी सपोर्ट मिलेगा और क्षेत्रिय पक्षपात भी खत्म होंगे।

कर संरचना सम्बंधी लाभ –

1. सरल कर व्यवस्था एवं छूटों में कमी होगी।
2. विभिन्न प्रक्रियाओं जैसे पंजीकरण, रिटर्न, रिफंड्स, कर भुगतान आदि के लिए सरल एवं स्वचलित कार्यप्रणालियॉ होंगी।
3. वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति पर औसत कर भार में कमी होगी, जिससे खपत बढ़ेगी।
4. दोहरे करारोपण और Cascading effect खत्म होगा इसका फायदा राष्ट्रीय बाजार को होगा और आम आदमी जो अभी 25-30 प्रतिशत कर वहन करता है उसमे कमी आयेगी।

जीएसटी सम्बंधी चुनौतियां –यद्यपि राष्ट्रपति की मुहर लगने के बाद जीएसटी लागू करने की संवैधानिक चुनौतियां लगभग दूर हो चुकी है किंतु अन्य चुनौतियॉ अब भी सरकार के समक्ष है, जिसे उसे निपटना होगा जिनमे प्रमुख है –

1. केन्द्र-राज्य के रेवेन्यू बेस और मुआवजे का आकलन किया जाना।
2. जीएसटी की सर्वमान्य दर (न्यूनतम, अधिकतम और औसत) का निर्धारण करना।
3. इसके दायरे से बाहर रखी जाने वाली वस्तुओं का निर्धारण करना।
4. मॉडल जीएसटी कानून पर आम राय बनाना।
5. कर देयता हेतु न्यूनतम व्यावसायिक टर्नओवर का निर्धारण किया जाना।
6. कंपाउडिंग की सीमा तय करना।
7. दोहरे नियंत्रण की परेशानी न हो, ऐसी सुदृढ़ व्यवस्था बनाना।
8. जीएसटी काउंसिल को संवैधानिक दर्जा दिया जाना ताकि उसकी सिफारिशे राज्यों द्वारा मानी जाए।
9. जीएसटी लागू होने से यदि महंगाई बढ़ती है, तो उसे नियंत्रित करने हेतु वैकल्पिक समाधानों पर विचार करना।
10. जीएसटी का निर्धारित समय सीमा में लागू किया जाना।

जीएसटी दर बनाम् संभावित प्रभाव – जीएसटी का वर्किंग पेपर तैयार करने वाले टेक्स विशेषज्ञ श्री सत्या पौद्यार के अनुसार ड्राफ्ट बिल में ही जीएसटी की चार दरें सामने आ रही है। पहली दर सोने चॉदी पर होगी जो लगभग 3 से 4 प्रतिशत होगी, दूसरी 12 प्रतिशत होगी। जो खाद्य वस्तुओं पर लगेगी, तीसरी 18 से 20 प्रतिशत होने की बात चल रही है व चौथी दर 40 प्रतिशत की होगी। भारत जैसे देश में यदि 20 से चालीस प्रतिशत टेक्स प्रस्तावित होगा, तो इससे से जीएसटी का लक्ष्य ही पूर्ण नहीं हो सकेगा। सरकार ने फिलहाल चार सेक्टर्स बिजली, पेट्रोलियम, रियल एस्टेट और एल्कोहल को जीएसटी से बाहर रखा है। इन सेक्टर्स का भारतीय अर्थव्यवस्था में 40 प्रतिशत योगदान है। ऐसे में जीएसटी का बेस 60 प्रतिशत रह गया है, इसके चलते एक बाजार की संकल्पना को नुकसान पहुँचेगा साथ ही विभिन्न राज्यों की इनपुट लागत में असमानता भी बनी रहेगी।

श्री पोद्यार के अनुसार जीडीपी से कुछ फायदा होगा, कितना उत्साह आएगा, अर्थव्यवस्था में कितनी बढ़ोतरी होगी, यह सब इस बात पर निर्भर करता है कि जीएसटी की दर क्या होगी? फिलहाल जिन वस्तुओं और सेवाओं पर जीएसटी लगाने का प्रस्ताव है, उन पर लगने वाले सभी अप्रत्यक्ष करों को मिलाकर केन्द्र और राज्य सरकार फिलहाल जीडीपी का 6 फीसदी के बराबर टैक्स वसूल रही है। टैक्स का फार्मूला है कि जीडीपी के एक प्रतिशत के बराबर टैक्स वसूलने को 2 प्रतिशत टेक्स लगाना पडता है। ऐसे में जीडीपी के 6 प्रतिशत के बराबर टेक्स वसुलने को जीएसटी की 12 प्रतिशत दर पर्याप्त है। यदि जीएसटी कि दर 14 प्रतिशत हो तो यह जीडीपी का एक प्रतिशत और वर्तमान कर संग्रह का 16 प्रतिशत अधिक कर संग्रह कर देगी।

बैंकिंग एवं टेलिकॉम सेक्टरों पर वर्तमान में 15 प्रतिशत की टेक्स दर है, यदि जीएसटी लागू होता है, तो ये दरें 18 से 20 प्रतिशत तक हो जाएगी, बैंकिंग सेक्टर में तो इसका मामूली असर दिखेगा। जबकि टेलीकॉम सेक्टर पर इसका नकारात्मक असर होगा। ऐसे बढ़े हुए टेक्स का बोझ कम्पनी ग्राहकों पर डाल सकती है। इसी प्रकार आईटी सेक्टर पर भी अभी 15 प्रतिशत टेक्स

लगता है। जिसमें 4 से 5 प्रतिशत की वृद्धि हो सकती है, जिससे इस सेक्टर के प्रोडक्ट और सर्विस की लागत भी बढेग़ी।

भारतीय उद्योग का एक बड़ा वर्ग चाहता है कि जीएसटी दर 20 प्रतिशत से कम रखी जाए अन्यथा महंगाई बढ़ेगी विशेष रुप से सेवाओं पर असर होगा। इसके अलावा दूरसंचार, बैंकिग स्वास्थ्य सेवा और रेल्वे को सामाजिक भलाई की दृष्टि से महत्वपूर्ण सेवाओं की सूची में रखा जाना भी अपेक्षित है।

उद्योग मण्डल एसोचेम के महासचिव डी एस रावत के अनुसार कोई भी कर सुधार तब तक सफल नहीं हो सकता है, जब तक कि केन्द्र और राज्यों दोनों के लिए पर्याप्त राजस्व सुनिश्चित न हो इस तरह जीएसटी के मामले में राजस्व निरपेक्ष दर (आरएनआर) का निर्धारण कर संग्रहण के स्तर में उछाल को ध्यान में रखकर निकालना होगा। आरएनआर वह दर है, जिसमें जीएसटी व्यवस्था में केन्द्र और राज्यों को कोई राजस्व नुकसान नहीं होगा। इसके अलावा अन्तर्राज्य सीमा पर चुंगी तथा प्रवेश शुल्क समाप्त होने से परिचालन दक्षता सुधरेगी और इसका लेनदेन की लागत पर सकारात्मक असर होगा।

जीएसटी उत्पादन आधारित मौजूदा प्रणाली को उपभोक्ता आधारित कराधान में तब्दील करेगा। जिससे मेनुफेक्चरिंग उत्पादों पर शुल्क कम होने जबकि उपभोक्ताओं पर सर्विस टेक्स का बोझ बढ़ने की संभावना है। विशेषज्ञों के अनुसार जीएसटी से आम आदमी पर टेक्स का बोझ कम ही होगा क्योंकि मौजूदा प्रणाली की वह कमी खत्म हो जाएगी। जिसमे कर पर कर लगने से करों का प्रभाव बढ़ने की समस्या है, इससे विभिन्न किस्म के उत्पादों की कीमत कम करने में मदद मिलेगी किन्तु जब तक टेक्स की दरों का ढॉचा तय नहीं हो जाता तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि किन वस्तुओं एवं सेवाओं पर राहत मिलेगी।

उपसंहार – वर्तमान में कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, सिंगापुर सहित दुनिया के 150 से 160 देशो में जीएसटी लागू है, जिनमें से अधिकांश देशों में केवल केन्द्र सरकार जीएसटी वसूलती है। यद्यपि आरंभ में जीएसटी लागू होने से महंगाई बढ़ी किन्तु कालान्तर में सरकार के राजस्व में वृद्धि हुई। न्यूजीलैंड ने जीएसटी लागू करते समय 10 प्रतिशत को वह दर मानी थी जिस पर वह कर संग्रह मे न्युट्रल रहता। एक साल बाद 10 प्रतिशत जीएसटी का परिणाम सामने आया तो न्यूजीलैंड सरकार के राजस्व में 42 प्रतिशत की वृद्धि हो गयी थी। भारत में भी इसे सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ लागू किए जाने का प्रस्ताव है किन्तु इसकी सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि जीएसटी की दर क्या होगी ? अगर जीएसटी 14 फीसदी के आसपास भी आया तो अर्थव्यवस्था के अनुकूल होगा, आम आदमी को राहत मिलेगी, व्यापारियों को ज्यादा उलझना नहीं पडेग़ा, कर अपवंचन कम हो जाएगा। अगर सरकार ने जीएसटी को सरल और सस्ता नहीं बनाया तो इसकी सफलता पर संदेह ही रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. www.en.wikipedia.org - Goods & Service Tax Bill
2. www.pradhanmamntri yojna.co.in
3. www.cbec.gov.in
4. www.oces.gov.in
5. www.deepawali.co.in
6. www.thehindu.com
7.. भारतीय कर प्रणाली एवं आयकर विधान (श्रीपाल सकलेचा) सतीश प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स, इन्दौर।
8. दैनिक समाचार पत्र – नई दुनिया/पत्रिका/दैनिक भास्कर में प्रकाशित आलेख एवं समाचार।

****

भारतीय खाद्य निगम व छत्तीसगढ़ राज्य में इसकी स्थिति

नीलिमा कौशिक * डॉ. राजेश कुमार शुक्ला **

शोध सारांश – भारतीय खाद्य निगम की स्थापना सन् 1965 में की गई। यह भारत का सबसे बड़ा खाद्य आपूर्ति करने वाला निगम है। भारतीय खाद्य निगम द्वारा राज्य एजेन्सियों की सहायता से सार्वजनिक वितरण प्रणाली का संचालन किया जाता है। मध्यप्रदेश से अलग होने के बाद छत्तीसगढ़ में भारतीय खाद्य निगम 01 मई 2001 को अस्तित्व में आया व इसका मुख्यालय रायपुर को बनाया गया। धान छत्तीसगढ़ का मुख्य फसल है व छत्तीसगढ़ को धान का कटोरा कहा जाता है। छत्तीसगढ़ में धान का उत्पादन आवश्यकता से अधिक होता है। इसलिए इसकी सप्लाई भारतीय खाद्य निगम द्वारा दूसरे राज्यों में की जाती है। छत्तीसगढ़ में विकेन्द्रीकृत खाद्यान्न योजना लागू है जिसके तहत छत्तीसगढ़ राज्य शासन किसानों से छत्तीसगढ़ राज्य विपणन संघ के द्वारा धान खरीद करता है व उसके द्वारा धान चांवल बनाने के लिए मिलरों को दे दिया जाता है। मिलरों से अधिकता वाले स्टॉक को भारतीय खाद्य निगम को सौंप दिया जाता है। भारतीय खाद्य निगम सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत छत्तीसगढ़ में गेहूँ व अन्य कल्याणकारी योजनाओं के तहत सामाग्री प्रदान करता है।

शब्द कुंजी – भारतीय खाद्य निगम, खाद्यान्न, सार्वजनिक वितरण प्रणाली।

प्रस्तावना – देश में खाद्यान्नों के न्यायपूर्ण वितरण एवं उनके मूल्यों में स्थायित्व लाने के उद्देश्य से भारतीय खाद्य निगम की स्थापना एक संसदीय अधिनियम के अंतर्गत 1965 में हुई थी जिसे खाद्य निगम अधिनियम 1964 कहा जाता है। भारतीय खाद्य निगम खाद्यान्नों के विदेशी व्यापार में भी सक्रिय भूमिका निभाता है। इसका कार्यक्षेत्र संपूर्ण भारत में स्थित है व मुख्यालय नई दिल्ली में है। भारतीय खाद्य निगम 5 जोनल व 25 रीजनल कार्यालयों में विभक्त है, जो कि निम्नानुसार है :-

1- उत्तर जोन :
1. दिल्ली
2. पंजाब
3. हरियाणा
4. हिमाचल प्रदेश
5. उत्तरप्रदेश
6. राजस्थान
7. जम्मू एवं कश्मीर
8. उत्तराखण्ड

2- पूर्वी जोन :
1. उड़ीसा
2. पश्चिम बंगाल
3. झारखण्ड
4. बिहार

3- पश्चिमी जोन :
1. महाराष्ट्र
2. मध्यप्रदेश
3. छत्तीसगढ़

4- दक्षिणी जोन :
1. तमिलनाडु
2. आंध्रप्रदेश
3. केरल
4. कर्नाटक

5- उत्तर-पूर्वी जोन :
1. असम
2. NEF
3. नागालैण्ड
4. अरूणाचलप्रदेश
5. मणिपुर

भारतीय खाद्य निगम 5 क्षेत्रीय कार्यालयों में बंटा हुआ है व पांचों क्षेत्रीय कार्यालयों के अंतर्गत अलग-अलग कार्यालय आते हैं व छत्तीसगढ़ राज्य पश्चिमी जोन के अंतर्गत आता है, जिसका मुख्य कार्यालय रायपुर में स्थित है व इसके तीन जिला कार्यालय रायपुर, बिलासपुर व दुर्ग जिले में स्थित है। यहां से भारतीय खाद्य निगम से संबंधित कार्यों को संपादित किया जाता है।

भारतीय खाद्य निगम के उद्देश्य :

1. **उचित समर्थन मूल्य –** भारतीय खाद्य निगम किसानों के उत्पाद को उचित समर्थन मूल्य पर खरीदना, जिससे कि किसानों के हितों की रक्षा हो।
2. **खाद्यान्नों का वितरण –** सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत उचित मूल्य पर खाद्यान्नों का वितरण करना जिससे कि गरीब उपभोक्ताओं को लाभ प्राप्त हो।
3. **भण्डारण करना –** राष्ट्री खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए खाद्यान्नों के प्रचालन तथा बफर स्टॉक के संतोषजनक स्तर को बनाए रखना।
4. **मूल्य स्थिरता –** भारतीय खाद्य निगम का उद्देश्य मूल्यों में स्थिरता लाना है जिससे कि निर्धन वर्ग के लोग भी वस्तुओं की प्राप्ति कर सके व देश में खाद्यान्नों के कीमतों के उतर-चढ़ाव के मध्य संतुलन स्थापित हो।

* शोधार्थी, डॉ.सी.वी.रमन विश्वविद्यालय,कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, सी.एम.डी. महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

5. खाद्यान्नों की सुरक्षा व गुणवत्ता – भारतीय खाद्य निगम का उद्देश्य खाद्यान्नों की सुरक्षा व गुणवत्ता बनाए रखना है जिससे कि अच्छी किस्म की वस्तुएँ उपभोक्ताओं तक पहुंचे।

भारतीय खाद्य निगम के कार्य – भारतीय खाद्य निगम खाद्यान्न की अधिप्राप्ति मूल्य सुनिश्चित करती है और इसके साथ–साथ समाज के कमजोर वर्ग को किफायती मूल्यों पर खाद्यान्न की उपलब्धता भी सुनिश्चित करती है। भारतीय खाद्य निगम भारत सरकार की केन्द्रीय एजेन्सी है, जो कि अन्य राज्य एजेन्सियों के साथ मिलकर समर्थन मूल्य योजना के अधीन गेंहूँ, धान तथा मोटे अनाज की अधिप्राप्ति करता है। समर्थन मूल्य के अंतर्गत अधिप्राप्ति मुख्यत: किसानों को उनकी फसल का लाभकारी मूल्य सुनिश्चित करने के लिए की जाती है, ताकि वे बेहतर फसल उत्पादन के लिए प्रोत्साहित हो सकें। खाद्यान्न अधिप्राप्ति को सुगम बनाने के लिए भारतीय खाद्य निगम तथा अन्य राज्य एजेंसियाँ राज्य सरकार के परामर्श से विभिन्न मंडियों तथा प्रमुख केन्द्रों पर बड़ी संख्या में खरीद केन्द्र स्थापित करती हैं।

भारतीय खाद्य निगम देश के विभिन्न स्थानों में अपने भण्डारण केन्द्रों में गुणवत्ता के निर्धारित मापदण्डों के अनुसार खाद्यान्न खरीद कर भण्डारित करता है एवं आवश्यकतानुसार एक स्थान से दूसरे स्थान तक परिवहन करता है एवं सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से खाद्यान्नों को उपलब्ध कराता है।

छत्तीसगढ़ में भारतीय खाद्य निगम – छत्तीसगढ़ राज्य में भारतीय खाद्य निगम का मुख्यालय रायपुर में स्थित है व तीन जिला कार्यालय कार्यरत हैं। छत्तीसगढ़ राज्य में भारतीय खाद्य निगम के 20 बेस डिपो कार्यरत हैं। जिसके माध्यम से सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत खाद्यान्नों का वितरण किया जाता है। ये बेस डिपो बिलासपुर, दुर्ग, रायपुर जिले के अंतर्गत आते हैं, जिसका विवरण निम्नानुसार है :–

रायपुर जिला कार्यालय के अंतर्गत कार्यरत बेस डिपो

क्र.	केन्द्र का नाम	क्षमता
1	रायपुर	25090
2	नेवरा तिल्दा	26240
3	राजिम	15640
4	मंदिर हसौद	12500
5	महासमुंद	14233
6	बागबहरा	10670
7	धमतरी	15440
8	भाटापारा	11200
9	अर्जुनी	93200
योग		**252833**

दुर्ग जिला कार्यालय के अंतर्गत कार्यरत बेस डिपो

क्र.	केन्द्र का नाम	क्षमता
1	दुर्ग	53950
2	राजनांदगांव	71625
3	जगदलपुर	10640
योग		**136215**

बिलासपुर जिला कार्यालय के अंतर्गत कार्यरत बेस डिपो

क्र.	केन्द्र का नाम	क्षमता
1	बिल्हा	8340
2	बिलासपुर	35120
3	विश्रामपुर	13340
4	खरसिया	13640
5	नैला	14640
6	रायगढ़	10640
7	सक्ती	12500
8	करगीरोड	15000
योग		**12,32,20**

उपर्युक्त तालिका से पता चलता है कि जिला कार्यालय रायपुर के अंतर्गत सबसे अधिक 9 बेस डिपो कार्यरत है व बिलासपुर जिला कार्यालय के अंतर्ग 8 व दुर्ग जिला कार्यालय के अंतर्गत 3 बेस डिपो कार्यरत हैं जिसकी कुल क्षमता 512268 मीट्रिक टन है।

निष्कर्ष – भारतीय खाद्य निगम खाद्यान्नों की आपूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके द्वारा ज्यादा उत्पादन वाले अनाजों को कम उत्पादन वाले राज्यों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत वितरित कर दिया जाता है। भारतीय खाद्य निगम का कार्यक्षेत्र संपूर्ण भारत में फैला हुआ है व सभी राज्य इससे लाभान्वित हो रहे हैं। भारतीय खाद्य निगम के द्वारा खाद्यान्नों के उठाव भण्डारण व आबंटन का कार्य किया जाता है। भारतीय खाद्य निगम छत्तीसगढ़ राज्य में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत केन्द्र सरकार द्वारा चलाये जा रहे कल्याणकारी योजनाओं को पूरा करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। जिसका लाभ गरीब तबके के लोगों को प्राप्त हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डब्ल्यू.डब्ल्यू.डब्ल्यू. डॉट एफ.सी.आई. डॉट जी.ओ.व्ही. डॉट इन।
2. डब्ल्यू.डब्ल्यू.डब्ल्यू. डॉट डी.एफ.पी.डी. डॉट एन.आई.सी. डॉट इन।
3. भारतीय खाद्य निगम विभाग से प्राप्त जानकारी।
4. दैनिक समाचार पत्र – दैनिक भास्कर, नवभारत

****

सिवनी एवं छिन्दवाड़ा जिले में लघु एवं कुटीर उद्योगों का योगदान

डॉ. सुमन यादव *

प्रस्तावना – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देशों में विभिन्न योजनाकालों में अनेक क्षेत्रों में हमने कई उपलब्धियां अर्जित की है तथा विदेशी विश्लेषण एकमत से इन प्राप्तियों से प्रभावित हुए हैं। लम्बी दासता तथा मानसिक कुंठाओं ने हमारे सामाजिक तथा आर्थिक ढाँचे को जितना झकझोरा है। शायद उतना किसी अन्य राष्ट्र के साथ नहीं हुआ है। यही कारण है कि पिछले 55 वर्षों में हमने जो प्रयास किये है, उनकी ओर से आंखे बंद करने का साहस अब किसी में नहीं है। विकास की गति इन वर्षों में चाहे अनापेक्षित ही क्यों न रही हो परन्तु जो दिशा हमने सम्भाली है, वह अपेक्षित लक्ष्य की ओर अग्रसर होने के लिये अच्छा कदम है। चरमराते आर्थिक तंत्र को पटरी में लाने में समय तो लगेगा ही तथा किसी करिश्में की कल्पना भी न्याय संगत नहीं होगा।

मध्यप्रदेश के औद्योगिक मानचित्र में जो नये चित्र उभरे हैं, वे एक नई आशा की किरण दिखाते हैं। महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब जैसे प्रदेश एक समय औद्योगिक वातावरण के लिये आदर्श क्षेत्र माने जाते रहे थे। इन राज्यों में उद्योगो का जो विकास हुआ, वह आश्चर्य का विषय रहा है। प्राकृतिक संपदाओं से विपुल यह प्रदेश अन्तवोगत्वा आज उद्यमियों के लिए आकर्षण का प्रमुख केन्द्र हो गया है। आकर्षण महज शासकीय घोषणाओं का नहीं रहा वरन् आकर्षण है, यहाँ उपलब्ध आधारभूत संरचनाओं का तथा इनका आर्थिक एवं उत्पादक दोहन ही इस प्रदेश को मानचित्र पर उभरने में सहायक रहा है। बिखरे-बिखरे औद्योगिक संस्थान जानी अनजानी धरती पर चिमनियों का धुँआ अटपटे स्थानों में विनाशों का विकास एक लम्बे अर्से तक चलता रहा तथा इस विकास ने अर्थहीन दिशा की ओर मुड़ना ही चाहा था कि जिला उद्योग केन्द्र कायम करने की महत्वकांक्षी योजना ने नये आयाम दिए। समूचे राष्ट्र में इस नई विचार धारा को क्रियान्वित करने का अभियान प्रारंभ किया गया और इसी क्रम में मध्यप्रदेश में भी सभी जिलों में जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना की गई। लघु एवं कुटीर उद्योग के विकास में किन-किन चुनौतियों का सामना उद्योग केन्द्रों के द्वारा करना पड़ता है। उन कठिनाईयों से निपटने के लिए क्या-क्या प्रयास किए जाते हें। जिले में प्रमुख औद्योगिक इकाइयां सीमित संख्या में है। जिले में लघु उद्योगों की स्थिति इन प्रमुख इकाइयों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाती है। **(सारणी देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

जिले में प्रमुख औद्योगिक इकाईयाँ सीमित संख्या में है। जिले में लघु उद्योगों की स्थिति इन प्रमुख उद्योगों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाती है ।

कृषि पर आधारित प्रमुख उद्योग – सिवनी जिले में अधिकांश लघु कुटीर उद्योग कृषि पर आधारित है, जो स्वतंत्र रूप से तथा कृषि के सहायक धंधो के रूप में स्थापित है कृषि पर आधारित मुख्य उद्योग निम्न है-

1. चावल मिलें – जिले की मुख्य उपज चावल है। जिले में अन्य लघु उद्योगों के अपेक्षा चावल मिले जिले के बरघाट तहसील में स्थापित है। बरघाट में 6 बड़ी चावल मिलें है, गंगेरूआ में 3, अरी में 2, मोहबर्रा में 2, उगली में 1, भोमा में 2, कान्हीवाड़ा में 1, धारना क्षेत्र में 3, खैरी में 1, सिवनी में 1, गोपालगंज क्षेत्र में 1 तथा बोरी में 1 मिल स्थापित हैं। इस प्रकार जिले में कुल 24 चावल मिले स्थापित है इन बड़ी चावल मिलों के अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में छोटी चावल मिलें भी है। इनकी चावल मीलिंग की क्षमता कम होती है।

2. पोहा एवं मुरमुरा उद्योग – यह उद्योग धान उपज पर आधरित है। जिले में धान से पोहा एवं मुरमुरा निर्माण की इकाईयां अधिकाशंत: चावल मिलो के साथ स्थापित है। पोहा निर्माण की इकाइयां बरघाट में 3, खारी में 1, धारना में 1, मोहबर्रा में 1, सिवनी में 1 इस प्रकार लगभग 7 बड़ी इकाइयां इसमें लगी है। इसके अतिरिक्त गांवो में कुटीर उद्योग के रूप में ढीमर जाति के अनेक परिवारों द्वारा भी मुरमुरा, चिवड़ा बनाने का कार्य किया जाता है।

3. तेल मिलें – तिलहन फसलों पर आधारित तेल मिलें भी जिले में स्थापित है। यद्यपि ये मिले छोटी है किन्तु स्थानीय मांग एवं आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त है। अधिकांश तेल मिलें सिवनी नगर में स्थापित है। जिनमें पालीवाल आइल मिल, गुरूनानक आइल मिल प्रसिद्ध है। केवलारी, बरघाट, लखनादौन में भी कुछ छोटी तेल मिले है। इन प्रमुख तेल मिलों के अतिरिक्त छोटी-छोटी तेल छन्नियां भी है, जो कई स्थानों भोमा, बोरी, मलारा, उगली, छपारा, आदेगांव, घंसौर, धूमा आदि में स्थित है।

4. दाल मिलें – ये सीमित संख्या में है जो प्रमुखत: सिवनी नगर में स्थापित है इन मिलों में मुख्य राजेश्वरी दाल मिल, खेमुका दाल मिल, मनोरमा दाल मिल अग्रवाल दाल मिल आदि है, जो अधिकांशत: स्थानीय आधार पर कारोबार करती है।

5. आटा एवं मसाला चक्कियां – ये अधिकांशत: कुटीर उद्योगों के रूप में स्थापित है । छोटी आटा चक्कियां जो स्थानीय तौर पर स्थापित है। मिर्च मसाले पीसने से संबंधित चक्कियां स्थापित है।

6. पशुपालन – जिले में पशुपालन धंधा मूलत: कृषि पर आधारित है। कृषि कार्य में मुख्य रूप से पशुओं का ही प्रयोग किया जाता है। फलत: प्रत्येक कृषक परिवार द्वारा पशु पाले जाते है।

कृषि से संबंधित संभावित कृषि उद्योगों की विवेचना के आधार पर यह निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि 1980 के बाद जिले में लघु उद्योगो की स्थापना में वृद्धि हुई है, तथा पूंजी विनियोजन रोजगार के अवसर एवं उत्पादन के क्षेत्र में वृद्धि हुई है। जिन वस्तुओं के उत्पादन की पूर्व में कल्पना भी नही की जा सकती थी। उन वस्तुओं का उत्पादन संभव हुआ है। उपरोक्त अवधि में जिला उद्योग केन्द्र के द्वारा लघु व कुटीर उद्योगों के अन्तर्गत उत्पादित वस्तु के विक्रय हेतु जिला उद्योग केन्द्र द्वारा कुछ सीमा तक सहायता प्रदान की गयी है। जिले में औद्योगिक प्रगति का प्रभाव जिले के परिवहन एवं संचार विद्युत आपूर्ति स्वास्थ्य व शिक्षा तथा बैकिंग जैसी महत्वपूर्ण सुविधाओं पर असर पड़ा है। इस अवधि में इन सुविधाओं का पर्याप्त विस्तार हुआ है। जिससे

*अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

जिले के शहरी व ग्रामीण व्यक्ति प्रभावित हुए है। उद्योगों से जहां कृषकों की आय में वृद्धि हुई है, वहाँ उनके जीवन स्तर में भी सुधार हुआ है। जिले में लघु उद्योगों की व्यापक संभावनाएं विद्यमान है। परन्तु आवश्यकता है नियोजित एवं समयबद्ध कार्य निष्पादित करने की है। जिसके आधार पर जिला उद्योग केन्द्र अपना कार्य कर रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ओ.एस.श्रीवास्तव - मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास (1997) मध्यप्रदेश हिन्दी अकादमी भोपाल प्रकाशन।
2. डॉ.जी.के.अग्रवाल - सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान (1985-86) आगरा प्रकाशन।
3. डॉ. शुक्ला - सांख्यिकी के सिद्धांत (1990)
4. एच.के.शर्मा - जबलपुर संभाग के आर्थिक विकास में लघु उद्योगों की भूमिका एक आर्थिक विवेचना रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर।
5. जिला सांख्यिकी - जिला सांख्यिकी कार्यालय, संक्षेपिका छिन्दवाड़ा व (1995-2009) सिवनी द्वारा प्रकाशित।
6. लघु उद्योग - मासिक पत्रिका, उद्योग समाचार मंत्रालय नई दिल्ली।

जिले में स्थापित उद्योगो की संख्या एवं नियोजन

वर्ष	जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से स्थापित उद्योग		कुल स्थापित उद्योग	नियोजन
	संख्या	नियोजन	संख्या	नियोजन
1996-97	294	575	294	575
1997-98	317	551	317	551
1998-99	208	486	208	486
1999-2000	177	456	177	456
2000-01	109	378	109	378
2001-02	140	422	140	422
2002-03	173	475	173	475
2003-04	308	672	308	672
2004-05	302	641	302	641
2005-06	303	498	303	498
2006-07	300	429	300	429
2007-08	304	504	304	504
2008-09	389	443	389	443

स्त्रोत: जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2009

****

भावी नेतृत्व की नींव – छात्रसंघ चुनाव

डॉ. ज्योति सोनी *

प्रस्तावना – विश्वविद्यालयों में छात्रसंघ चुनाव के आयोजन के पीछे यह अवधारणा रही कि यदि हमें नई पीढ़ी के नेता तैयार करने हैं, तो उन्हें छात्र जीवन में ही राजनीति का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। पहले उम्रदराज एवम् अनुभवी व्यक्तियों के लिए ही राजनीति उपयुक्त मानी जाती थी परन्तु देश की बढ़ती जनसंख्या में युवाओं के बढ़ते प्रतिशत ने इस विचार पर बल दिया कि युवाओं की आवाज भी महत्वपूर्ण है, उनकी राजनीति में भागीदारी अनिवार्य है। नीतिश कुमार, लालू प्रसाद यादव, सीताराम येचुरी, प्रकाश करात और अरूण जेटली छात्र राजनीति से आये नेता ही हैं। राष्ट्रीय राजनीति के स्तर पर उत्पन्न खालीपन को अप्रशिक्षित, अशिक्षित व अपराधी तत्व न भर दें, इसीलिए छात्र राजनीति को बढ़ावा दिया जाता है। छात्र संघ सामाजिक अन्याय के खिलाफ, सामाजिक न्याय के लिए, नारी सुरक्षा हेतु, आरक्षण एवम् शैक्षणिक स्वतंत्रता हेतु कार्य करते है। छात्र संघ के पदाधिकारी जो भविष्य में देश के मार्गदर्शक होंगे, के लिए प्रजातंत्र एवम् संविधान की गहरी जानकारी आवश्यक है। एक अच्छा इंजिनियर, वकील, डॉक्टर, प्रबंधक व विषय विशेषज्ञ कुशल राजनेता भी बन सकता हैं। विश्वविद्यालय राजनीति प्रशिक्षण की नर्सरी तो है परन्तु उससे पहले वे शिक्षा के मंदिर हैं। इसलिए शिक्षा की गुणवत्ता की कीमत पर राजनीति को बढ़ावा नहीं दिया जाना चाहिए।

'हो सकता है कि मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊँ फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा।'

– प्रसिद्ध विद्वान वाल्तेयर

हमारा संविधान हमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करता है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की गाइड लाईन भी विश्वविद्यालयों में विचारों की अभिव्यक्ति की पक्षधर है। यदि किसी मसले को लेकर मतैक्य न भी हो तो उस पर स्वस्थ बहस होनी चाहिए। ऐसा नहीं होना चाहिए कि किसी को सिर्फ इसलिए अपनी बात कहने से रोका जाये कि अमुक व्यक्ति अथवा संगठन किसी विशेष विचारधारा का है अथवा नहीं। विश्वविद्यालयों या महाविद्यालयों में छात्र गुट अनावश्यक मुद्दों को लेकर झगड़ते हैं अथवा सड़कों पर विरोध प्रदर्शन करते हैं तो यह उचित नहीं है। विश्वविद्यालयों में जहाँ विरोध तर्क–वितर्क के जरिये होता था, वह इस तरह सड़कों पर क्यों दिखे ?

देश के सर्वाधिक प्रतिष्ठित कहे जाने वाले विश्वविद्यालयों में से एक जेएनयू में संसद पर हमले के दोषी ठहराये गये पाकिस्तानी आतंकी की फॉसी को लेकर भारत के विरोध में नारेबाजी की घटना हो या हैदराबाद यूनिवर्सिटी के 25 वर्षीय शोध छात्र द्वारा की गई आत्महत्या की घटना हो। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय जहॉ 2014 में छात्र और विश्वविद्यालय प्रशासन में चुनाव के तरीके को लेकर विवाद तीखा हो गया था, दूसरी ओर राजस्थान विश्वविद्यालय जहाँ छात्र संघ के चुनावों को राज्य के उच्च न्यायालय ने इस आधार पर रद्द कर दिया कि चुनावों में लिंगदोह समिति की अनुशंसाओं का उल्लंघन हुआ। ये विश्व विद्यालय में जाति व राजनीति की अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण घटनाऐं थी। छात्र नेताओं द्वारा चुनाव के दौरान नियमों का उल्लंघन करने, अनावश्यक रूप से नारेबाजी करने, विवाद खड़ा करने, जीत का जश्न मनाने में असामाजिक कृत्यों कों बढ़ावा देने की घटना आम हो गई है। कोई भी शिक्षण संस्थान चाहे वह विश्वविद्यालय हो या महाविद्यालय, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर कोई अनर्गल प्रलाप करे तो उसे न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता।

विश्वविद्यालय में चुनावों का मकसद छात्रों को लोकतांत्रिक भागीदारी के जरिये राजनीतिक प्रशिक्षण देना था परन्तु ये धनबल व बाहुबल का अड्डा बन गये हैं। चिंता इस बात की भी है कि छात्रों को राजनीतिक प्रशिक्षण के नाम पर कराए जाने वाले इन चुनावों में छात्र राजनीति से ज्यादा आपराधिक गतिविधियों का प्रशिक्षण प्राप्त न करने लगें। भविष्य के लिए बेहतर नेता गढ़ने के बजाए विश्वविद्यालयों के चुनावों में राजनीति की बुराइयॉ न हावी होने लगे।

छात्र संघ चुनाव के निर्बाध संचालन के लिये वर्ष 2006 में पूर्व चुनाव आयुक्त जेम्स माइकल लिंगदोह की अध्यक्षता में समिति का गठन किया गया जिसकी प्रमुख सिफारिशें निम्न हैं–

- उम्मीदवार सिर्फ 5000 हजार रूपए तक ही चुनाव में खर्च कर सकता हैं। उसको चुनाव के बाद दो सप्ताह के भीतर चुनाव अधिकारी को खर्च के अंकेक्षित लेखे प्रस्तुत करने होते है। अधिक खर्च पाए जाने पर उम्मीदवार का चुनाव रद्द किए जाने का प्रावधान है।
- उम्मीदवार या उनके संगठन राजनीतिक दलों से चंदा नहीं ले सकते।
- चुनावों में प्रचार के लिए हाथ से बनाए गए पोस्टर ही काम में लिए जा सकते हैं। इनका उपयोग भी विश्वविद्यालय / महाविद्यालय द्वारा अधिसूचित स्थानों पर ही हो सकेगा।
- विश्वविद्यालय/महाविद्यालय के बाहर कोई भी उम्मीदवार सभा या रैलियाँ नहीं कर सकता। शिक्षण संस्थान के बाहर प्रचार सामग्री भी वितरित नहीं की जा सकती है। विश्वविद्यालय/महाविद्यालय में रैली या सभा के लिए भी संबंधित संस्था प्रशासन की पूर्व अनुमति लेनी होगी।
- छात्रसंघ चुनावों का कोई भी उम्मीदवार ऐसी किसी प्रक्रिया या गतिविधि में लिप्त न हो, जिससे जाति, धर्म, सम्प्रदायों के बीच आपसी वैमनस्य उत्पन्न हो। दूसरे उम्मीदवारों की सिर्फ नीतियों या कार्यक्रमों की ही आलोचना की जा सकती है। निजी जीवन संबंधी आलोचना नहीं की जा सकती।
- चुनाव के प्रचार में लाउडस्पीकर या वाहनों का उपयोग नहीं हो सकता। लिंगदोह समिति की सिफारिशों को सर्वोच्च न्यायालय के आदेश पर

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, धरमजयगढ़, रायगढ़ (म.प्र.) भारत

लागू किया गया पर विश्वविद्यालयों में अक्सर छात्रसंघ चुनावों के दौरान न तो छात्र नियमों का पालन करते हैं, न ही प्रशासन नियमों का पालन करा पाता है।

वर्तमान में भारत में अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (ABVP), भारतीय राष्ट्रीय छात्र संघ (NSUI), भारतीय विद्यार्थी परिषद (STUDENT FEDERATION OF INDIA), ALL INDIA STUDENT ASSOCIATION & ALL INDIA DEMOCRATIC STUDENT ORGANISATION , आदि बड़े छात्र संघ हैं। छात्रसंघ का प्रमुख उद्धेश्य जिसे आधार मान कर इनकी परिकल्पना की गई थी निम्न हैं–

- छात्रों, अध्यापकों, कार्यालयीन कर्मचारियों, समाज को अनुकूल, साफ सुथरा वातावरण उपलब्ध कराना जिससे शिक्षण–संस्थाओं में समरसता का भाव उत्पन्न हो।
- विश्वविद्यालय प्रबंधन की योजनाओं से छात्रों को अवगत कराना एवम् प्रबंधन व छात्रों के मध्य सेतु का कार्य करना।
- ग्रामिण परिवेश से विश्वविद्यालय/महाविद्यालय में प्रवेश लेने वाले छात्र–छात्राओं की शिक्षण संबंधी आवश्यकताओं– प्रवेश ,परीक्षा फार्म, लाइब्रेरी, कैंटिन आदि की उचित व्यवस्था, छात्रावास एवम् परिसर में आवश्यक संसाधनों की उपलब्धता पर संस्था का ध्यान आकर्षित कर व्यवस्था में सहयोग प्रदान करना।
- प्रत्येक छात्र–छात्रा को एनएसएस/एनसीसी लेने हेतु प्रेरित करना जिससे प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से देश सेवा में प्रत्येक छात्र योगदान कर सके। इनके अतिरिक्त छात्र–छात्राओं को सांस्कृतिक एवम् खेलकुद संबंधी गतिविधियों में भाग लेने हेतु प्रेरित करना जिससे छात्रों का सर्वांगीण विकास हो सके।

छात्रसंघ अपने उपरोक्त उद्धेश्यों को ध्यान में रखकर छात्रों के हित में कार्य करें। राजनीतिक आदर्श प्रस्तुत करें न कि गुटबाजी का प्रदर्शन। अनावश्यक रूप से गुटबाजी अथवा अपने अहम् को महत्वपूर्ण मानते हुए विश्वविद्यालय प्रबंधन को परेशान करना, सड़कों पर नारेबाजी, प्राचार्य/कुलपति पर आक्षेप कतई उचित नहीं।

छात्र राजनीति हमारे स्वतंत्रता आंदोलन का हिस्सा रही इसलिए इसकी आवश्यकता से इंकार नहीं किया जा सकता। छात्र राजनीति में मुख्य धारा की राजनीति का प्रभाव सकारात्मक रहे इस हेतु प्रयास करने की आवश्यकता है। लिंगदोह जो कुछ कर सकते थे उन्होंने किया । किसी कमेटी का काम सिफारिशें देना है किन्तु उन्हें लागू सरकार को ही करना होगा। सरकार को इसके अलावा भी अन्य मॉडल बनाने चाहिए, जिनमें शांतिपूर्ण और नियमों के तहत चुनाव हो पाए। साथ ही विद्यार्थी अपनी शैक्षणिक आवश्यकताओं पर भी पूरा ध्यान लगाए। केवल राजनीति में दिलचस्पी लेकर अपने अध्ययन को नजरअंदाज करना सही नहीं है। हमारी शिक्षण संस्थाओं को भी वैश्विक फलक पर अपना परचम लहराने के लिए शोध श्रेष्ठता साबित करनी होगी, उच्च मानक अपनाने होंगे तभी हमारे छात्र राजनीति व शिक्षा दोनों ही क्षेत्रों में उच्च स्थान प्राप्त कर सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'लोकतांत्रिक राजनीति की प्राणवायु है छात्रसंघ'– नईदुनिया (23.08.2016)
2. 'जेएनयू : खुले विचारों की अभिव्यक्ति के नाम पर लगे भारत विरोधी नारे'–पत्रिका (13.02.16)
3. राजनीति से मुक्त हो शिक्षा परिसर '–दैनिक भास्कर (21.01.16)
4. 'कार सेवा के केन्द्र बने विश्वविद्यालय'–केलो प्रवाह (18.01.16)
5. 'उच्च शिक्षा :संस्थानों में विचारों की अभिव्यक्ति पर सियासत'–पत्रिका (13.01.16)
6. 'छात्र संघ चुनाव: हुड़दंग पर लगे लगाम, बेहतर कल के लिए प्रशिक्षण हो लक्ष्य'–पत्रिका (03.12.14)
7. 'उच्च शिक्षा में फिसड्डी हम' – पत्रिका (17.03.14)

****

मन्दसौर स्लेट पेंसिल उद्योग में कर्मकार कल्याण मंडल का योगदान

डॉ. अंतिमबाला जैन *

प्रस्तावना – किसी भी देश के अर्थव्यवस्था में छोटे–छोटे उद्योग की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, विशेषकर भारत जैसे देश में क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है एवं यहां की जनता ग्रामों में निवास करती है। अत: लघु एवं कुटीर उद्योग ग्रामीण जनता के रोजगार के अवसर बढ़ाते है। अत: इनका महत्व जनता व देश के लिये महत्वपूर्ण है।

महात्मा गांधी के अनुसार –'भारत का कल्याण उसके कुटीर उद्योग में निहित है।'

देश के हृदय स्थल मध्यप्रदेश के पश्चिमी उत्तर भाग के मनोहारी मालवा अंचल में गुप्तकालीन प्रसिद्ध अष्ठमुखी भगवान पशुपतिनाथ के छत्र–छाया में मन्दसौर जिला स्थित है। इस जिले में शैल पत्थरों की खदानों के बीच स्लेट पेंसिल उद्योग स्थित है। स्लेट पेंसिल के उत्खनन व उसे पेंसिल का रूप प्रदान करने हेतु इस उद्योग की प्रथम इकाई सन् 1942 में स्थापित की गई थी और उस समय कार्यरत व्यक्तियों की मात्र 89 थी। वर्तमान में मंदसौर जिले में 138 स्लेट श्रमिक कार्यरत है।

वर्तमान में इस उद्योग में कार्यरत श्रमिकों को विषय परिस्थितियों में काम करना पड़ता है और उन्हें सिलिकोसिस बिमारी होने की संभावना रहती हैं स्लेट पेंसिल श्रमिकों के कल्याणार्थ मध्यप्रदेश स्लेट पेंसिल कर्मकार कल्याण निधि अधिनियम 1982 के अंतर्गत मंदसौर जिले में स्लेट पेंसिल उद्योग में कार्यरत श्रमिकों के लिये एक कल्याण निधि की स्थापना की गई है। जिसका गठन 24.12.1985 को प्रभावशील हुआ। इसके संचालन के लिये एक मंडल गठित है, जिसका कार्यकाल तीन वर्ष का होता है। मंडल की आय का मुख्य स्त्रोत स्लेट पेंसिल निर्माण पर लगाया गया उपकर हैं, यह दर सितम्बर 1996 से तीन रूपये प्रति 1000 विनिर्मित स्लेट पेंसिल निर्धारित है।

निधि का उद्देश्य :

1. स्लेट पेंसिल कारखानों में कार्य करने वाले श्रमिकों के कल्याण वृद्धि हेतु वित पोषण के लिये निधि का गठन करना।
2. स्लेट पेंसिल कर्मकारों को स्वच्छ पर्यावरण उपलब्ध कराना।
3. स्लेट पेंसिल कर्मकारों को आवश्यक चिकित्सा एवं शैक्षणिक सुविधाएं उपलब्ध कराना।
4. स्लेट पेंसिल कर्मकारों के जीवन स्तर को सुधारना।

उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मंडल द्वारा किए गए कार्य :

1. समूह बीमा– श्रमिकों के हित लाभ को देखते हुए प्रति श्रमिक रूपये 1,00,000/– (रूपये एक लाख मात्र) का सामूहिक बीमा भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा करवाया गया।
2. विधवा सहायता– स्लेट पेंसिल श्रमिकों की मृत्यू उपरान्त उनकी विधवाओं को मण्डल द्वारा रूपये 350/– (रूपये तीन सौ पचास मात्र) प्रतिमाह सहायता प्रदान की जाती है।
3. छात्रवृत्ति – श्रमिकों के परिवार के बच्चों को मण्डल द्वारा छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है।
4. विवाह सहायता– मृत एवं बीमार श्रमिकों की पुत्रियों के विवाह हेतु मण्डल द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। दो पुत्रियों के विवाह हेतु रूपये 1751/– (रूपये एक हजार सात सौ इक्कावन मात्र) का विवाह अनुदान दिया जाता है।
5. आश्रितों के आर्थिक सहायता सिलिकोसिस से पीड़ित श्रमिक की मृत्यू पर उनके आश्रितों को रू. 7000/– (रूपये सात हजार मात्र) की एक मुश्त राशि एवं दाह संस्कार हेतु रूपये 2000/– (रूपये दो हजार मात्र) की सहायता राशि प्रदान की जाती है।
6. परिवार नियोजन– स्लेट पेंसिल श्रमिक के परिवार नियोजन आपरेशन करवाने हेतु प्रोत्साहन स्वरूप प्रथम संतान होने के उपरांत रूपये 2000/– (रूपये दो हजार मात्र), द्वितीय संतान होने के उपरांत रूपये 1500/–(रूपये एक हजार पांच सौ मात्र) एवं तृतीय संतान के होने के उपरांत रूपये 1000/– (रूपये एक हजार मात्र) रूपये प्रदान किये जाते है।
7. महिला पुनर्वास – स्लेट उद्योग में काम करने वाले श्रमिकों की सिलिकोसिस बीमारी से पीड़ित होकर उनकी मृत्यु होने पर उनकी महिलाओं को पुर्नवास के कदम उठाए गए है। सिलाई प्रशिक्षण, कम्बल एवं कताई प्रशिक्षण, व्यावसायिक प्रशिक्षण, महिला शिक्षा व्यवस्था, औपचारिक शिक्षा व्यवस्था आदि।
8. श्रमिकों के निराश्रित बच्चों को भरण पोषण के लिये रूपये 75/– (रूपये छित्तर मात्र) प्रतिमाह सहायता।
9. सिलिकोसिस से पीड़ित श्रमिकों के उपचार के यिले 600/– (छ: सौ मात्र) प्रतिमाह प्रति श्रमिक की दर से आर्थिक सहायता दी जाती है।
10. सिलिकोसिस से पीड़ित श्रमिकों के उपचार के लिये चिकित्सक के परामर्श अनुसार दवाईयां का नि:शुल्क प्रदाय।
11. श्रमिकों को स्वास्थ्य परीक्षण तीन–तीन माह के अंतराल में कराया जाता है।
12. पीड़ित श्रमिकों के मनोरंजन हेतु आसान किश्तों पर टेलीविजन एवं पंखे वितरण, सिलाई मशीन वितरण।
13. श्रमिकों को कम्बलों का नि:शुल्क वितरण।
14. श्रमिकों की विधवाओं को सिलाई मशीन वितरण।
15. श्रमिकों के चिकित्सा उपचार हेतु रूपये 2,05,000/– (रूपये दो लाख पांच हजार मात्र) की लागत से सिलिकोसिस बोर्ड का निर्माण एवं

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य एवं प्रबंध) अटल बिहारी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

उसमें पंखे, गद्दे, बिस्तर, कम्बल आदि मण्डल द्वारा प्रदान किये गये।

16. श्रमिकों के लिये स्वच्छ जल हेतु मुल्तानपुरा, रलायता, बोतलगंज, मन्दसौर काम्पलेक्स में टंकी निर्माण पेयजल व्यवस्था, कुंआ निर्माण एवं प्याऊ निर्माण का कार्य भी किया गया।
17. मण्डल द्वारा श्रमिकों के स्वास्थ्य परीक्षण हेतु नि:शुल्क एक्स-रे फिल्म की व्यवस्था की गई है।
18. श्रमिकों को स्वच्छ पर्यावरण हेतु काम्पलेक्स एवं जिला चिकित्सालय परिसर में बगीचा निर्माण करवाया गया।
19. स्लेट पेंसिल श्रमिकों की महिलाओं को सिलाई प्रशिक्षण हेतु सिलाई केन्द्रों की भी स्थापना की गई है।
20. मण्डल के व्यय से स्लेट पेंसिल उद्योग वाले क्षेत्र में स्ट्रीट लाईट लगवाकर प्रकाश की व्यवस्था की गई।
21. श्रमिकों के बच्चों के पढ़ने हेतु मण्डल व्यय से मुल्तानपुरा, रलायता, पिपलियामण्डी में कमरों का निर्माण भी करवाया गया।
22. सिलिकोसिस से पीड़ित श्रमिकों के बच्चे के लिये नि:शुल्क पुस्तकें एवं पट्टियों का वितरण किया गया।
23. निधि से महिलाओं के लिए अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र भी ग्रामीण क्षेत्र में स्थापित किए।

उपलब्धियों का मूल्यांकन – कर्मकार मण्डल द्वारा श्रमि अधिनियमों का प्रभावी पालन करवाया जा रहा है। वर्तमान में स्टेल पेंसिल बाहुल्य गांव मुल्तानपुरा में जगह-जगह घनी बस्ती में स्लेट पेंसिल कारखाने चल रहे है। स्लेट पेंसिल काम्पलेक्स के निर्माण पश्चात ग्राम के सभी कारखाने उसमें स्थानांतरित हो जायेंगे जिससे गांव में स्लेट पेंसिल की धूल से पीड़ित होने वाले श्रमिकों एवं ग्रामवासियों को इस समस्या से छुटकारा मिल जायेगा। स्लेट पेंसिल उद्योग में कार्य करने वाले श्रमिकों के लिये कर्मकार कल्याण निधि द्वारा विभिन्न योजनाओं का सम्पादन किया जा रहा है। इस तरह विभाग की सजगता से पूर्व वर्षों की अपेक्षा वर्तमान में कार्यरत श्रमिक सिलिकोसित जैसी जानलेवा बीमारी से कम पीड़ित हो रहे है।

संदर्भ ग्रन्थ की सूची :-

1. मध्यप्रदेश स्लेट पेंसिल कर्मकार कल्याण मंडल, मन्दसौर।
2. वार्षिक प्रतिवेदन जिला सांख्यिकी विभाग, इन्दौर।
3. स्लेट पेंसिल उद्योग स्वच्छ पर्यावरण की ओर जनसंपर्क कार्यालय जिला मंदसौर।
4. भारत की आर्थिक समस्याएं डॉ. भाभोरिया एवं जैन, साहित्य भवन, आगरा।
5. सामाजिक सुरक्षा एवं श्रम कल्याण डॉ. रविन्द्र नाथ मुखर्जी, सरस्वती सदन, जयपुर।
6. मध्यप्रदेश सम्पूर्ण अध्ययन डॉ. एस.एस. सिद्की, साहित्य भवन, आगरा।

****

भारत में स्वतंत्रता से पूर्व सड़क यात्री परिवहन

डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ *

प्रस्तावना – मनुष्य स्वभाव से जिज्ञासु प्रकृति का रहा है। वह निरन्तर अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रयत्नशील रहता है और इसके लिए अपने चारों ओर की परिस्थतियों में नई संभावनाओं की खोज करता रहता है। खोज की इसी जिज्ञासा ने पगडंडियों को जन्म दिया, जो कालांतर में लम्बी – चौडी सड़को में परिवर्तित होती चली गयी। जो आज देश में 16 लेन के सुपर एक्सप्रेस हाईवे के रुप में हमारे सामने है। एकाकी मानव, समूह में मानव , कुछ झोपड़िया ,गांव, कस्बा, नगर, महानगर तथा अब स्मार्ट सिटी एक के पश्चात् दूसरे स्थापित होते चले गए। अच्छी सड़के तथा सरल परिवहन व्यवस्था , सभ्यता एवं सभ्य प्रशासन के साथ जुड़ी हुई है। हम कह सकते है कि – 'इन्हीं पगडण्डियों और सड़कों पर चल कर सभ्यता और समाज विकसित हुए है। इसी तारतम्य में सड़के आगे–आगे चली तथा सभ्यता पीछे–पीछे। भारतवासी अति प्राचीन काल से ही सड़क निर्माण कला में अत्यन्त निपुण रहे है , साथ ही वे व्यापार व सभ्यता के विकास के लिए सड़कों का महत्व समझते थे। विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में **'महापथ'** का वर्णन मिलता है। मोहन जोदड़ों (सिन्ध) की खुदाई से मिली सड़के यह सिद्ध करती है कि प्राचीन भारतीय सभ्यता में सड़के अत्याधिक महत्वपूर्ण ही नहीं थी , बल्कि यहॉ 8000 वर्ष पूर्व सड़क निर्माण की कला अति उन्नत अवस्था में थी। पंजाब में हड़प्पा की खुदाई में **दो पहियों वाली ताम्बें के रथ की कृति** मिली थी, जिसमें सामने रथवान बैठा है। इस कृति को पहियों वाली **गाड़ी का प्राचीनतम** रूप कहा जा सकता है। यह इस तथ्य का प्रतीक है कि हमारे देश में सड़क परिवहन अति प्राचीन काल से प्रचलन में है और यहाँ सड़कें तथा वाहन दुनिया के दूसरे देशों की तुलना में अति प्राचीनकाल से है। यह वह समय था, जब हमारा देश 'सोने की चिड़िया' कहलाता था।

हिन्दुस्तान में राजकीय बस सेवा का इतिहास – 1855 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सार्वजनिक निर्माण विभाग (PWD) बनाया। जिसका कार्य सार्वजनिक निर्माण कार्य करना था। अंग्रेज शासन काल में उन्हीं मार्गो का विकास किया गया, जो सैनिक तथा व्यवसायिक हितों से अंग्रेजों के अनुकूल थे। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में **ब्रिटेन में रेल** की सफलता से प्रेरित होकर अपने सामरिक व राजनीतिक हितों को साधने के लिए हिन्दुस्तान में भी ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सारे आर्थिक **संसाधन रेलों** के विकास में ही लगा दिये। फलस्वरुप **सड़क परिवहन** उपेक्षित ही रहा। यह तथ्य आश्चर्यजनक है कि आज जिस मुम्बई की जीवन रेखा BEST में बसती है उसी मुम्बई नगर निगम द्वारा 1869 में शहर में जन सामान्य के लिए मोटर बस को खतरनाक मानते हुए परिवहन के लिए अस्वीकार कर दिया था।

हिन्दुस्तान में 1898 में पहली बस आयात की गयी थी किन्तु 12 वर्षो के बाद भी 1910 में कलकत्ता नगर निगम ने नगर का कचरा उठाने के लिये **मोटर बस पर घोड़ा गाडी को प्राथमिकता** दी थी। ब्रितानी हुकुमत ने 1919 में नये संविधान के अन्तर्गत सड़कों को प्रान्तीय विषय बना दिया गया। इससे सड़कों के विकास की समस्या और भी गंभीर हो गई। ब्रिट्रेन सरकार अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो गयी और इसने अपना ध्यान रेलों के विकास में लगा दिया। इसके परिणामस्वरुप प्रान्तीय सरकारों के लिए सड़कों का विकास करना अत्यन्त कठिन हो गया। राजनैतिक व आर्थिक कारणों से सड़कों के विकास में कोई प्रगति नही हो सकी।

हिन्दुस्तान में सड़क परिवहन के क्षेत्र में प्रथम विश्वयुद्ध के बाद क्रान्ति आई। प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात फौज के कार्यो से अलग हुए ट्रक, मोटर वाहन जनता के उपयोग के लिए बड़ी संख्या में उपलब्ध हो गये तथा विश्वव्यापी महामन्दी (आर्थिक मन्दी) के दौर में मोटरबसें–रेलों के साथ प्रतिस्पर्धा करने लगी थी। जबकि इस समय तक केवल युद्धकाल से निवृत हुए मोटर–ट्रक ही यात्री परिवहन के काम आ रहे थे , जिन्हें हिन्दुस्तानी उद्यमियों ने खरीद कर यात्री बसों में परिवर्तित कर लिया था। 1918–20 की अवधि में मोटर परिवहन का विकास तीव्र गति से हुआ। क्योंकि प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् बहुत अधिक संख्या में मोटर उद्योग में पूंजी विनियोजन हुआ। 1930 के पश्चात् सड़क तथा रेल परिवहन में प्रतिस्पर्धा बहुत बढ़ गई थी तथा आज यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस अवधि में सड़क परिवहन के कारण रेल्वे को हानि का सामना करना पड़ने लगा था।

आधुनिक भारत में यात्री सड़क परिवहन सेवाओं का इतिहास भूतल परिवहन के दूसरे माध्यम रेलवे (प्रथम रेल 16 अप्रैल 1853 को मुम्बई में बोरीबंदर से ठाणे के बीच चली थी) से पुराना नही हैं इसे बीसवीं षताब्दी की महत्वपूर्ण देन कहा जा सकता है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान ब्रितानी शासन की सम्पूर्ण प्राथमिकताएँ रेलों की ओर केन्द्रित हो गयी थी तथा बस यात्री परिवहन पर निजी व्यवसायियों का ही पूर्ण नियंत्रण स्थापित हो गया था। निजी बस संचालकों ने अपने प्रभावशाली नियंत्रण के परिणाम स्वरूप अधिकतम लाभ प्राप्ति को ही अपना एकमात्र लक्ष्य बना दिया था जिसके कारण यात्रियों को भारी असुविधाओं का सामना करना पड़ता था। बसों में यात्रियों को क्षमता, से कहीं ज्यादा भेड़ बकरियों के समान भरा जाता था।

हिन्दुस्तान में राजकीय बस सेवाएँ – देश में **प्रथम** राजकीय बस सेवा ग्वालियर (सिंधिया) स्टेट ट्रस्ट ने 'ग्वालियर रेल्वे स्टेशन से मुरार' के मध्य प्रारम्भ की थी, 1916–17ग्वालियर (मध्यभारत), 1932 हैदराबाद (निजाम), 1938 त्रावणकोर (कोचीन),1942 कच्छ में राजकीय नियंत्रण में बसें संचालित होने लगी थीं। मगर इनका संचालन व्यवसायिक नजरिये से ही किया जा रहा था। स्वतंत्रता के पश्चात् 1947 में उत्तरप्रदेश व मद्रास

* प्राध्यापक (वाणिज्य)शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

(तमिलनाडु) 1948 में असम, बिहार, बम्बई, उड़ीसा, पंजाब, प.बंगाल, मैसूर, दिल्ली, सौराष्ट्र तथा 1949 में हिमाचल प्रदेश में सड़क परिवहन का राष्ट्रीयकरण हो चुका था। इसलिए यह ओर भी आसान हो गया था। स्वतंत्रता के पश्चात् चूंकि जनोपयोगी सेवा होने के कारण सड़क परिवहन यातायात का महत्वपूर्ण साधन था और निजी बस संचालकों द्वारा अपनायी गयी। अत्यधिक लाभार्जन की नीति, सिर्फ लाभदायक मार्गो पर ही बसों का परिचालन, कर्मचारियों व यात्रियों का शोषण, सार्वजनिक हितों की लगातार उपेक्षा आदि कारणों के फलस्वरूप सड़क परिवहन के राष्ट्रीयकरण की भूमिका तैयार होती जा रही थी।

संक्षेप में व्यवसाय में **एकाधिकार के कारण बस सेवा का स्तर निम्नतम** था, जिसके कारण इन बसों से यात्रा करना यात्रियों के लिए कठोर कारावास के समान था, मगर यह यात्रा करना अनिवार्य भी था। बसों में प्रवेश जितना सरल था। उससे सकुशल बाहर आना उतना ही कठिन था। बस मालिकों की दृष्टि में यात्रियों की स्थिति निर्जीव सामान से अधिक नहीं थी। कर्मचारियों का यात्रियों के साथ व्यवहार भी असम्मानजनक रहता था, यही नहीं बस मालिकों द्वारा कर्मचारियों के साथ भी अमानवीय व्यवहार किया जा रहा था। कर्मचारियों का शोषण मालिकों का अधिकार बन गया था। समय पर वेतन न देना, रोजगार की सुरक्षा न होना तथा अन्य शोषण सामान्य बात थी। स्वतंत्रता पूर्व के इस काल में सभी व्यवसायों में श्रमिकों का शोषण सामान्य बात थी।

निजी बस संचालकों के दृष्टिकोण से यह समय (1939–44) वित्तीय लाभ का स्वर्णयुग था। नियंत्रण के अभाव में निजी बस मालिकों का जनता के साथ व्यवहार असभ्य तथा नरभक्षी पशुओं के समान था। यह कहना अतिश्योक्तिपूर्ण न होगा कि बस (यात्री) परिवहन में **'जंगल का कानून'** चल रहा था। बस मालिक स्वच्छन्दता पूर्वक बसों का संचालन कर रहे थे। कानून का भय नहीं होने के कारण यात्रियों का शोषण इनका अधिकार बन गया था। यात्री भाड़ा प्रत्येक इकाई में अलग–अलग प्रकार से निर्धारित होता था। अर्थशास्त्र का मांग का नियम, यात्रा भाड़ा निर्धारित करने का प्रमुख सिद्धांत था। इस काल में बस मालिक मनचाहे तरीके से लाभार्जन कर रहे थे। जनता के पास दूसरा कोई परिवहन विकल्प न होने से वह इन बसों में यात्रा करने को विवश थी क्योंकि रेल सुविधा कुछ निश्चित शहरों के मध्य ही उपलब्ध थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।
2. भारत में परिवहन : डॉ. कुलश्रेष्ठ
3. सड़क एवं राजमार्ग मंत्रालय परिवहन , दिल्ली
4. Indian Transport System : P Jagdish Gandhi,G. Jon Guaseelan
5. Management of State Transport in India : K. N Ramanujam

****

Agriculture policy of Jammu & Kashmir

Nisar Ahmad Wani * Dr. Pavan Kumar Shrivastava **

Introduction - Livelihood of the majority of the population of the Jammu & Kashmir State revolves around the agriculture and allied sectors. These sectors constitute the mainstay of the State's economy and contribute nearly 50 per cent to GSDP. Over 70 per cent of the population, of more than 1.25 crores depends, directly or indirectly, on agriculture and its allied sectors. The diversification in the physiographic features and agro-climatic variation at macro- and micro-level, involving cold arid, temperate, intermediate and sub-tropical zones, within a small geographical area of 2.22 lakh sq. km indicates the inherent agricultural potential of the State. The net sown area (NSA) of 7.35 lakh ha (2013-14) is 35 per cent of the reported area as against the national average of 46 per cent. About 70 per cent of the net sown area is under the food crops. The average size of holding is very small (0.545 ha/holding) as compared to 1.66 ha at the national level with more than 93% of owners of these farm holdings subsisting on agriculture and allied activities.

Over the years, agriculturists and farmers have adopted several area- specific and time-specific cultivation practices to meet the requirement of their staple food crops. Rice, maize, wheat, pulses, fodder, oilseeds, potato and barley are the main crops of the State. There is currently a shift towards cultivating low volume high-value cash crops, such as, flowers, vegetables, quality seeds, aromatic & medicinal plants, mushrooms etc. round the year. Honey, Bee-keeping, fodder intensification, production of quality saffron, 'Basmati' rice, 'Rajmash', off-season vegetables, potatoes etc. are also being cultivated in specific areas, belts and clusters depending upon the agro-climatic suitability.

Agriculture in the State faces several challenges that, primarily, include the following:-

1. Agriculture in the hills and mountains of the State suffers from inherent constraints of remoteness and inaccessibility, marginality and fragility in terms of moisture stress and poor soil conditions and a short growing season. Added to this, are socioeconomic constraints that, primarily, includes small land holdings, poor productivity, poor production management, labour shortages, poor post-harvest management, poor market networks (lack of market development) and lack of entrepreneurship. All these factors have led to under utilization of available resource base leading to limited generation of surpluses.
2. Arable lands are about 18% of the total geographical area, whereas the net sown area is only about 7%. More than half of the cultivable area is un- irrigated.
3. Though area, production and productivity of different crops have increased over time, the rate of development has been very slow.
4. Capital inadequacy, lack of adequate infrastructural support and agriculture being carried out as a subsistence option of livelihood have also influenced the economic viability of the agriculture sector resulting in new generation of farm youth shying away from agriculture and looking for urban centric vocations.

Present Scenario - The State is blessed with varied agro-climatic zones, expressing in a wide variety of agricultural and horticultural produce, some of which are unique to the State. While Jammu region is home to high quality 'Basmati', 'Rajmash', Black Caraway ('zeera') etc., Kashmir region is rich in high quality Saffron, 'Zeera', fresh and dry temperate fruits and commercial floriculture. Ladakh region is endowed with high quality apricots and seabuck-thorn berry etc. Enormous potential exists for bio-diversification due to varied agro-climatic and soil conditions.

Food-grain production in the State has more than trebled, since the year 1950-51, when the production was 4.53 lakh MTs. Despite such significant strides, the state still imports about 40% and 20% of its requirements of food grains and vegetables,respectively. In the field of horticulture, the state has made phenomenal progress in the post independence period. In the year 1953-54, area under fruit cultivation was just 12.4 thousand hectares with a production of only about 16 thousand MTs. At present, an area of 3.30 lakh hectares of land is under fruit cultivation and the fruit production has touched an all time high of 24 lakhs MTs. The State has 60% share in the production of apples in the country.

At present, a little over 1.05 lakh tones of vegetables is imported into the State annually. It is, however, gratifying to note that imports of vegetables into the State have declined over the years despite a spike in the demand.In order to improve income of the farmers and generate employment opportunities as also to provide nutritious food to the consumers, offseason vegetable cultivation through protected cultivation under low cost green house technology and hybrid

* Research Scholar (Economics) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Asst. Professor (Economics) Govt. P.G. College, Shivpuri (M.P.) INDIA

vegetable production in the open have been given a special thrust.

The livestock count of the State as per the last census has been estimated at 104.73 lakh as compared to 40.08 lakh in the year 1956. Livestock breeding is very important to the State's economy as this sector contributes roughly 13% to the State's GDP. The State has traditionally been deficit in the production of mutton, poultry and milk due to low productivity of local breeds. The situation has, however, started changing due to up gradation of local livestock through crossbreeding with high quality exotic breeds and implementation of various other schemes for provision of health cover, vaccination, fodder production etc. Most of the antipoverty schemes mainly funded by the Government of J&K are livestock based.

It is important to note that 56% up gradation of local cattle into crossbred (jersey, Holstein, Friesian) has already been achieved. This has substantially increased the milk Production, which is estimated at 20 lakh MTs (ending 2012-13). The per capita availability of milk in J&K is estimated at 330 ml, as against an average of 220 ml at national level and the level of 285 ml. recommended by the ICMR and the WHO. Besides, 58.5% up-gradation of the local sheep into genetically improved cross-bred sheep has already been achieved in the State. This has improved the availability of wool and mutton in the State. Nature has bestowed the State with rich floral resources required for production of quality honey conforming to international standards. Apiculture, which was on a high growth path until 1986 was, unfortunately, hit by an epidemic of sac brood disease.

Policy Framework For Future Agriculture Development - Agriculture development in the state would be guided in future not only by the objective of attaining food and nutritional security, but also by the concerns of declining profitability, environmental degradation and ecological unsustainability. Therefore, agriculture based development strategies should rely on increase in profitability, especially of the small and marginal farmers, together with creation of employment opportunities for rural youth, both in farm and non-farm sector. The share of high value agriculture in the agriculture is increasing steadily and this segment of agriculture is perishable in nature and, therefore, requires a very different approach than has been the case in food grains.

The State Agriculture Policy is, therefore, aimed at developing a road map that will seek to actualize the vast untapped growth potential of the agriculture, promote value addition, accelerate the growth of agri-business, create employment in rural areas, secure fair standard of living for the farmers and agricultural workers and their families, discourage migration to urban areas and face the challenges arising out of economic liberalization, globalization and climate change. The policy framework will broadly aim to achieve the following.

1. Growth rate of about 4% per annum.
2. Prevent conversion of agricultural land for non-agricultural use. To achieve the objective, strict laws have been promulgated involving punitive action for any violation,particularly in respect of more productive lands (Abi-awal etc.).
3. Promote sustainable use of natural resources and adoption of practices that conserve soil, water and biodiversity. This will also involve transition of hilly regions to "Organic Farming". Efforts will be made to combine the tradition and innovation, so that future generations will have a fertile soil and clean drinking water.
4. Promote closer cooperation and interaction between government agencies, research institutions and farmers to attain growth in agricultural productivity and income based on local conditions. Foster an efficient mechanism of assessment, delivery and control for providing timely and quality inputs to the farmers as per optimum requirement.
5. Promote diversification to crops and such other agricultural activities that are commercially more viable for increasing farmers' income as per local agro-climatic and market conditions.
6. The Government will devise measures to promote agriculture that enable it to fulfil its multifarious tasks.
7. Adopt and implement plans for growth in productivity and income based on specific geographical, agro-climatic and traditional practices within different agro-climatic zones.
8. Promote dry land technologies and adopt specific water conservation initiatives like watershed development etc., to raise farm production and income in rain fed ecosystems of the State.
9. Promote value addition, agri-business and market initiatives to secure higher incomes for agricultural produce.
10. Foster interface between farmers and the banks and insurance companies as also with other concerned agencies to secure farm credit facilities and crop insurance for the farmers.
11. Promote growth that is technologically sound, economically profitable and environmentally sustainable, so that the agriculture in the state develops in a socially acceptable way.

Strategic Planning :

The strategic policy objectives shall be realized/achieved through the following specific interventions:-

i) Research/Farmers' Interface:
ii) Resource Management for Sustainable Agriculture:
iii) Strengthening Input Supply:
iv) Development of Homogeneous Groups/Clusters:
v) Post Harvest Technology and Marketing:
vi) Increasing Profitability from Farm Enterprise:

The Government will promote contract farming as symbiotic contracts confer benefits to both producers and purchasers in terms of ensuring assured and remunerative marketing opportunities.

Other Specific Thrust Areas :

i) Vegetable Production

ii) Basmati Rice Production
iii) Saffron Production.
iv) Mushroom Development
v) Apiculture Development
vi) Good management Practices
vii) Quality Control Management

Policy Framework On Agricultural Research And Education - Green revolution technologies are scale neutral but not resource neutral. The inputs bear direct co-relation with the outputs. Experience shows that the vast areas inhabited by resource poor farmers of the state have remained outside the benefits of the universally acclaimed green revolution technologies. The crops and cropping systems on the un-irrigated sloping farmlands were not touched by the green revolution technological options. Even as there is an urgent need to scale up food grain production to meet the annual shortfall of 5 MTs of food grains, the downsides represented by the shrinking crop lands, declining water availability, technological fatigue, and the lack of timely and adequate input services support are coming in the way of stemming the migration of farmers to other profitable enterprises. The stagnation in the agriculture growth in recent years has brought into focus new sectors and regions.

Livestock, fisheries, horticulture and specialty enterprises (spices, medicinal aromatic, organic) represent low volume high value crop segment. The share of high value agriculture in total agriculture has gradually increased over the years and today it accounts for a little less than a third of the total value of agriculture. This segment is highly perishable in nature and needs a different approach than that followed in the case of food grains. The agro- ecological environment of the state has a distinct and widely recognised niche for this high value agriculture. Paradigm shift to strengthen Technology led Revitalization of Agriculture in J&K. At a time when, dependence of farmers on agriculture, both for food and economic security is declining and new generation of youth is moving away from farming, the challenge lies in giving new direction to technological research so as to help contain and reverse the trend. And this sets the farm research agenda for the future in J&K. The state is fortunate to have, both wet and dry, temperate agroclimatic regions, plenty of water bodies, waste forest and pasture lands, which offer it distinct comparative advantages of diversity of farming cultures, such as, rice, horticulture and saffron farmers in the valley to maize and potato farmers in the Jammu region to the 'bakkarwals', yak herders and shepherds of Changthang. Such diversity needs to be considered as an opportunity not a constraint.

Opportunity lies in redirecting research to address issues of their farming cultures to make these productive and sustainable. Diverse technological solutions to diverse problems leading to diversity of sustainable farming cultures—has to be the vision of farm research for the mountain state. Technology is the engine of growth and transformation and must, therefore, address the above issues for sustainable growth opportunities. In association with traditional and conventional technologies, cutting edge technologies, such as,biotechnology, ICT, space and GIs for land use planning, and weather forecasting etc.will need to be channelized to meet the needs of farmers of the state.In the state, the generation and dissemination of technology is hampered not only by lack of investible resources, but also by its sub-optimal priorities across crops, regions and institutions, and lack of support in most of the public research institutions. Broadly, the issues related to technology can be put in two categories. One, where productivity levels are high and moved closer to the economic potential. Two, where productivity levels are low and far below the economic potential of available technology. The former require breakthrough in technology and the latter require extension and favourable policy environment like remunerative prices, supply of inputs and infrastructure support, etc. The state agriculture research and technology initiatives, therefore, should ensure that technological research is a prime mover of change and that wherever the technological frontiers need to be transcended and new technologies created, they are done, and in a time bound manner.

Policy Framework On Investment In Agriculture - The new technologies responsible for substantial increase in production are, by and large capital led, implying, thereby, that the growth in agricultural sector depends substantially on investment to develop infrastructure, improve quality of natural resources and create productive assets. In this context, however, investments in the hilly state like Jammu & Kashmir will have to be prioritized differently due to several mountain specificities.

1. The stagnant productivity (02 tonnes/hectare) of major food crops grown in the State not only discourages investment, but also makes the farming business a suboptimal proposition. Over 93% of holdings in the State belong to either marginal or small farmer category. The returns from small surpluses to this category do not suffice to cover even the input expenditure. Besides, the undulating topography in various geographies hinders movement of tractors and, thereby, prevents mechanization of agriculture and, in turn, investment on implements and machinery. Therefore, agricultural productivity, aimed at improving investible surpluses, will have to be improved to enhance appetite for private investments in agriculture.
2. The evolution of technology, to make agriculture a sustainable livelihood option for rural masses, should not be a one-off phenomenon/event but a continued process together with its prompt dissemination. Accordingly, the need for strategic allocation of adequate resources for research will be an overriding focus going forward.
3. Investments are required to harness the potential technological gains for improving the irrigation infrastructure to tap the potential of HYVs for high production and productivity. Investments in soil, water conservation and irrigation will not only help to improve

agricultural productivity but also generate employment on long term basis.

4. More than half of the gross cropped area is rainfed. Developments in dry land farming are absolutely imperative to sustain the production system. Since the State agriculture is diversifying towards high value crops like fruits and vegetables, substantial investments would be required in horticulture sector for capacity building, post-harvest infrastructure & human resource development.
5. Despite significant progress made in terms of spread, network and outreach of credit delivery, the quantum of flow of financial resources to the agriculture and allied sectors continues to be inadequate. The flow of investment credit to various sectors of agriculture is constrained by the host of factors such as, high transactional costs, structural deficiencies in the rural credit delivery system, issues relating to credit worthiness and lack of collaterals in view of low asset base of farmers.
6. The national level financial institutions, particularly 'NABARD' have not been able to infuse credit into the agriculture and allied sectors to the desired level so far,as they have not been able to achieve appropriate outreach to the farming community and in the process upscale the limits of investment in these sectors. These financial institutions shall have to improve their footprints in all the regions/areas of the State. The State Government shall proactively pursue with these institutions to achieve this objective.

The Need For A Paradigm Shift For Sustainable Growth - Agriculture has, after a very long time, occupied the centre stage in the economic and administrative discourse in the State at a time when all seemed lost due to the dwindling interest of the younger generation in the agriculture activities. The concerted efforts of the Agriculture Production Department have triggered a new hope among the people, which promises profitability and dignity in the agriculture as an occupation.

1. In the changed scenario, the survival of agriculture as a viable activity shall primarily depend upon the ability of the department to adequately address the downsides of shrinking crop lands, water scarcity, technological fatigue, institutional support, opportunities for marketing etc. The nature and scale of resource endowments, diversity in environment and complex socio-economic setting of the people would be the important dots to connect in drawing a holistic picture of sustainable and inclusive agriculture growth in the sector.
2. Diversification of agriculture in the State is the need of hour. The natural endownments of the State may have constrained growth in the conventional agriculture, but their effective leveraging can help the State to script a spectacularly transformational story in the diversified agriculture. The State's long standing weakness can easily become its USP. The switch to low volume high value segment of agriculture can deliver both improved incomes and better options for the stakeholders.
3. Therefore, efforts shall be made to identify different linkages and develop the comparative advantages that agriculture in these diversified areas has to offer.
4. Strategies will be developed to bring about paradigm shift in thinking from mere productivity enhancement of crops and commodities to job led agricultural growth. Some of the areas that need special focus would include:
5. Promoting cultivation of 'basmati' rice and converting the Basmati growing areas in Jammu into a special economic zone.
6. Doubling the production of saffron in Kashmir in next four years and harnessing the benefits of this important cash crop in non-traditional areas.
7. Harnessing local bio-diversity to increase income opportunities and develop resilience against the emerging climate change challenges.
8. Promoting value addition in horticulture produce as well agriproduce (wherever surpluses are available) to add value and generate considerable employment and income generation opportunities.
9. Experience shows organic farming reduces health hazards and in time reduces dependence upon higher level of inputs. There are also reports that the organic produce commands premium prices in the market. Accordingly, efforts shall be made to encourage farmers to adopt organic farming.
10. The switch over to high value agriculture has to be demand led and very closely coordinated between input suppliers, farmers (especially small holders by clustering them into groups),logistics players (including cold storage and warehouses), large scale modern processors and organized retails in an integrated value chain of the modern agrisystem.

References :-

1. Khan, A.R. and Bhat, A.S. Jammu, Kashmir and Ladakh: A geographical study (sgr. Gulshan Publishers 2001), P.12.
2. Krishnaji N (1992), Agricultural Price Policy, in Ashok Mitra (ed), Pauperizing Agriculture: Studies in Agrarian Change and Demographic Structure, oxford Calcutta.
3. Approach paper to the tenth five year, planning commission, Gol, N. Delhi, 2002
4. Balakrishnan Pulapre (2000), Agriculture and Economic Reforms: Growth and Welfare, Economic and Political Weekly, Vol. 35, No. 16, March 18.
5. Directorate of Economics and Statistics, Economic survey J & K 2013-14.
6. District information Centre (DIC).
7. District statistical and evaluation office Anantnag.
8. Economic Survey 2012-13, op, cit, p.173.
9. Govt. of Jammu and Kashmir, Economic Review of Jammu and Kashmir, 1984-1985 department of planning and development PP.23-24.
10. Hussain Majid," Geography of Jammu and Kashmir",(New Delhi: Rawat publications 2003) P.137.

Impact Of Climate Change On Economy

Dr. Archana Singhal *

Abstract - Vulnerability to climate change will mainly depend on economic position and infrastructure capacity of nations. Climate change effects will impose significant additional stress on ecological and socioeconomic systems, but currently these systems are burdened by pollution, natural resource scarcities and other unsustainable practices. Technologically advanced countries are prepared well for responding to climate change, particularly by developing and establishing suitable policy, institutional and social capable for dealing with the consequences. But the poor and developing countries are mostly affected by climate change, because they are not having enough and sound technologies or scientific development to deal with this impact. In developing countries like India, climate change is an additional burden because ecological and socioeconomic systems are already facing pressures from rapid population, industrialization and economic development. India's climate could become warmer under conditions of increased atmospheric carbon dioxide. The average temperature change is predicted to be in the range of 2.33° C to 4.78° C with the doubling in CO2 concentrations.

Introduction - Climate change is defined as change in climate over time, whether due to natural variability or as a result of human activity. Adaptive capacity is the ability of a system to adjust to climate change (including climate variability and extremes) to moderate potential damages, to take advantage of opportunities, to cope with the consequences. Agriculture and climate change are inextricably linked—crop yield, biodiversity, and water use, as well as soil health are directly affected by a changing climate.

Climate change, which is largely a result of burning fossil fuels, is already affecting the Earth's temperature, precipitation, and hydrological cycles. Continued changes in the frequency and intensity of precipitation, heat waves, and other extreme events are likely, all which will impact agricultural production. Furthermore, compounded climate factors can decrease plant productivity, resulting in price increases for many important agricultural crops.

Vulnerability is the degree to which a system is susceptible to and unable to cope with adverse effects of climate change including climate variability and extremes new option for carbon sequestration in agriculture and forestry and land -use change as deforestation contributes to respectively ,13 and 17 percent of total anthropogenic greenhouse gas emissions while carbon dioxide emission from agriculture are small the sector account for about 60 percent of all nitrous oxide (N_2O, mainly from fertilizer use) and about 50 percent of methane (CH_4, emitted mainly from natural and cultivated wetlands and enteric fermentation) .The Ipcc estimates that the global technical mitigation potential for agriculture (excluding forestry) will be between 5 500 and 6 600 mt co_2 - equivalent per year by 2030, 89 percent of which are assumed to be from carbon sequestration in soils.

How Do We Predict Climate Change Impacts - Climate models have been developed that consider social and economic factors (population and carbon emissions). By combining these factors with an understanding of global and regional climate science, experts have developed climate scenarios that express the potential for different behaviors to impact climate patterns. Climate scenarios have the ability to inform our choices about the likely impacts of temperature, precipitation, and seasonality on food production. They also allow us to guide agricultural sectors on the best methods to adapt to various climate consequences by evaluating impacts and identifying tradeoffs.

What are the Agricultural Impacts and Tradeoffs

1. The net effect of climate change on world agriculture is likely to be negative. Although some regions and crops will benefit, most will not.
2. While increases in atmospheric CO2 are projected to stimulate growth and improve water use efficiency in some crop species, climate impacts, particularly heat waves, droughts and flooding, will likely dampen yield potential.
3. Indirect climate impacts include increased competition from weeds, expansion of pathogens and insect pest ranges and seasons, and other alterations in crop agro ecosystems.

How Can Agriculture Adapt - Adaptation strategies are short and long-term changes to human activities that respond to the effects of changes in climate. In agriculture, adaptation will require cost-effective investments in water infrastructure, emergency preparation for and response to extreme weather events, development of resilient crop varieties that tolerate temperature and precipitation stresses, and new or improved land use and management practices.

* Lecturer (Economics) D.A.V. (P.G.) Collage, Muzaffarnagar (U.P.) INDIA

Tools for Adaptation

1. Crop breeding for development of new climate tolerant crop varieties is a key tool for adapting agriculture to a changing climate. History and current breeding experience indicate that natural biodiversity within crops has allowed for plant adaptation to different conditions, providing clear evidence that plant breeding has great potential to aide in the adaptation of crops to climate change.
2. Cropping system development is another tool that can help agriculture adapt. For example the use of crop mixtures that have several crops growing at one time can help systems exhibit greater durability during periods of high water or heat stress.

Impact of Climate Change on Agriculture and Food - Agriculture production is direct dependence on climate change and weather, is one of the widely studied sector in the context of climate change. The possible changes in temperature, precipitation and CO2 concentration are expected to significant impact on crop growth. So that overall impact of climate change on worldwide food production is considered to be low to moderate with successful adaptation and adequate irrigation, global agricultural production could be increased due to the doubling of CO2 fertilization effect. There are two ways to climate change can affect the food production system. One is direct and another is indirect. In direct changes through temperature, water balance and atmospheric composition as well as extreme weather events and indirectly changes through in the distribution, frequently and severity of pest and disease outbreaks, incidence of fire and in soil properties. These direct and indirect effects on agricultural system will not only responding to climate change but through fluctuating yield have a negative impact on production and distribution. The social-economic impacts associated with the above physical impact on crops will be influenced by the interaction between producer and consumer behaviour as well as the possible adaptation that farmers could undertake in response to climate change. Agricultural and allied activities constitute the single largest component of India's economy. It is contributing 22% of the total Gross Domestic Product (GDP). Indian's agricultural activity continues with fully dependence of the weather. A few studies on the impact on agriculture have been reported for India in the IPCC Third Assessment Report . Saseendran et al., have reported decrease in rice yields by 3% to 10% under a scenario of 1.50C rise in temperature and a 2 mm day-1 increase in precipitation. Most of the recent studies found that possible adverse effect on developing countries agricultural sector, but all of them focus on physical impact alone.

Impact of Climate Change on Available Water - Agriculture of any kind is strongly influenced by the availability of water. Climate change will modify rainfall, evaporation, runoff, and soil moisture storage. Changes in total seasonal precipitation or in its pattern of variability are both important. The occurrence of moisture stress during flowering, pollination, and grain-filling Is harmful to most crops and particularly so to corn, soybeans, and wheat. Increased evaporation from the soil and accelerated transpiration in the plants themselves will cause moisture stress; as a result there will be a need to develop crop varieties with greater drought tolerance.

Impact of Climate Change on Forests - Climate is an important determinant of the geographical distribution, composition and productivity of forests. Forest area would be affected by climate depends on various factors like species and age of trees, possibilities for forests to migrate, and quality of forest management. Climate change over forestry turn to have profound implications for traditional livelihood, industry, biodiversity, soil and water resources and these leads to changes in agricultural productivity. Most of the estimates of the forestry sector have been carried out without considering the influence of land use changes in the future.

Forests have a large capacity to stock the sequester carbon. Increasing level of carbon loads to increase the Net Primary Productivity of forests. So that Net Primary Productivity and Carbon have a direct relationship. But some forests are also likely to disappear due to higher temperature and an increase in the number of pests and pathogens. But the how is the net effect from these phenomena on the level of carbon is not yet found clear from existing research. Climate will have the greatest impact on boreal forests. But temperature first will be affected to a lesser extent and tropical forests will be least affected under climate change condition

Impact of Climate Change on Human Health - As the quality of life strongly depends on climate, climate change would affect human amenity.Though warm climate is generally preferred over cooler climate, if the warming were beyond optimal temperature, it would have adverse effects. The vulnerability of human health is depends on function of causative factors. But the causative factors depend on nutrition status, population health, and health infrastructure. These factors are relatively poor in the developing countries, so that health impacts due to climate change in these countries are expected to be more adverse.

One of the major direct health impacts of climate change would be an increase in heart-related deaths and illness (primarily from cardio respiratory failure). Studies have been shown that heart related deaths could increase because of climate change, at the same time deaths due to cold weather conditions would decrease as a result of global warming. The indirect effect of climate change would expansion of the area under the influence of the malaria mosquito, these leads to increased global population exposed to malaria from current 45% to 60% by the latter half of the next century. However actual increase in the number of people with malaria-estimated to be between 50 and 80 million. Matsuoka and Kai have concluded that population exposed to risk of malaria would increase by about 30% in the Asia-Pacific region under a 2 x CO2 climate.

Increase the heart related diseases (asthma, allergic disorders, and cardio respiratory) would probably also occur due to climate-induced changes. Based on studies have estimated that climate change would increase the mortality by about 27-40 persons per million populations. Regarding the human loss in monetary terms is controversial.

Conclusion - The effects of global climate change could be potentially serious over the next century include regional increases in floods and droughts, inundation of coastal areas, high-temperature events, fires, outbreaks of pests and diseases, significant damage to ecosystem, and threats to agricultural production. Climate change will also pose a major risk to human health and safety, especially among poorer communities with high population densities in areas like river basins and low-lying coastal plains, which are vulnerable to estimate related natural hazards such as storms, floods, and droughts. The world's leading experts working under the aegis of the IPCC have recently concluded that increases in global mean surface temperature during the past century are unlikely to have been caused entirely by natural effects, and that changes in both average temperature and the geographic, seasonal, and vertical patterns of temperature indicate the influence of human actions on global climate.

References :-

1. Agarwal, P. K. (2009). Global Climate change and Indian agriculture: Case studies from ICAR network project. Indian Council of Agricultural Research. 148p.
2. CRIDA (2009). Annual Report 2009. Central Research Institute for Dryland Agriculture, Indian Council of Agricultural Research, New Delhi.
3. Das, M. K. (2009). "Impact of recent changes in weather on inland fisheries in India." In: Global Climate Change and Indian Agriculture: Case Studies from the ICAR Network Project (ed. by Aggarwal, P. K.). ICAR Publication. pp.101 103.
4. Singh, A. K., Aggarwal, P. K., Gogoi, A. K., Rao, G. G. S. N., and Ramakrishna, Y. S. (2009). "Global Climate Change and Indian Agriculture: Future priorities." In: Global Climate Change and Indian Agriculture: Case studies from the ICAR Network Project. (ed. by Aggarwal, P. K.). ICAR Publication. pp.146 148
5. Lobell, D. B., and Field, C. B. (2007). "Global scale climate-crop yield relationships and the impacts of recent past." Environmental Research Letter, 2, 1–7.
6. Kumar, K. (2009). "Impact of climate change on India's monsoon climate and development of high resolution climate change scenarios for India." Presented at MoEF, New Delhi on October 14, 2009. <http: moef.nic.in> (accessed Jan. 2012).

****

कन्या भ्रूण हत्या कराने वाली महिलाओं का समाज शास्त्रीय अध्ययन (धार जिले की कुक्षी तहसील के सन्दर्भ में)

डॉ. प्रकाशचंद रांका * विजय यादव **

शोध सारांश – आधुनिक युग की नवीनतम वैज्ञानिक खोजों के नकारात्मक पहलू से उपजी अमानवीय त्रासदी पर एक समाजशास्त्रीय चिन्तन है। समाज की निरन्तरता को बनाए रखने के लिए आवश्यक है 'शिशु जन्म' दाम्पत्य जीवन एवं परिवार की सार्थकता शिशु जन्म से ही होती है, महिला मातृत्व की अधिकारी शिशु जन्म के पश्चात ही होती है। गर्भवती स्त्री के लिए गर्भधारण के नौ माह का समय असीम आनन्द कौतुहल और उत्सुकता लेकर आता है तथा शिशु जन्म के साथ ही पूर्णता को प्राप्त होता है किन्तु कभी कभी ऐसा होता है जबकि स्वप्न टूट कर बिखर जाते है और किन्ही शारीरिक, प्राकृतिक तथा मानसिक विपदाओं, दुर्घटनाओं के कारण भ्रूण पूर्णता प्राप्त करने के पूर्व ही गर्भ में ही असमय काल कवलित हो जाता है चिकित्सा विज्ञान की भाषा में शिशु की जन्म से पूर्व हुई मृत्यु को गर्भपात कहा जाता है, जो कि अनचाहे और अनजाने में हो जाता है, लेकिन जानबूझकर और चाहकर कराया गया गर्भपात भ्रूण हत्या कहलाता है। भ्रूण परीक्षण एवं भ्रूण हत्या की आधुनिक तकनीकों के फलस्वरूप बढ़ रही शिशु कन्या हत्याओं पर चिन्तन करना आवश्यक है। विज्ञान के आविष्कार जहाँ मानव जाति के लिए लाभकारी होते है, वहीं वह विनाशकारी भी होते है, गर्भ परीक्षण की यह सुविकसित तकनीक निश्चित ही अमानवीय एवं अप्राकृतिक है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में शिशु कन्या भ्रूण हत्या करने वाली महिलाओं का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना –आमतौर पर बालिकाओं का जीवन के बुनियादी अधिकारों से वंचित रखा जाता है। उनके प्रति भेदभाव सामाजिक जीवन पद्धति का एक हिस्सा बन गया है। लडकियों की अपेक्षा लड़कों की चाहत आज भारतीय परिवारों में देखने को मिलती है, फिर वह परिवार हिन्दू हो, मुसलमान हो, जैन हो, ईसाई हो या फिर अन्य किसी भी धर्म को मानने वाला है। वर्तमान समय में लड़को की चाहत का मुख्य कारण परिवार का पालन पोषण करना और वंश को आगे बढ़ाना है। दहेज की बढ़ती मांग और उनसे जुड़ी अनेक समस्याओं के कारण माता पिता लड़की के जन्म से कतराते है। यही कारण है कि माता पिता गर्भस्थ का 'लिंग' वैज्ञानिक तकनीकों के द्वारा जानने के लिए भी प्रयासरत रहते है और जब उन्हे पता लगता है कि गर्भस्थ शिशु 'कन्या' है तो उसे अविलम्ब समाप्त भी करवा देते है। हमारी भारतीय संस्कृति का सबसे बड़ा अभिशाप है कि हमारे यहा लड़के के जन्म पर तो अपार खुशियाँ मनाई जाती है, किन्तु लड़की के जन्म पर खुशी की बात तो दूर, अफसोस ही मनाया जाता है।

वर्तमान में भ्रूण परीक्षण कन्याओं के लिए अभिशाप सिद्ध हो रहा है। उन्हें गर्भावस्था में ही मारा जा रहा है। इसके परिणामस्वरूप कन्याओं की संख्या इतनी तेजी से घट रही है कि जिससे सम्पूर्ण मानव जाति खतरे में पड़ती हुई दिखाई पड़ रही है। यदि गर्भस्थ कन्याओं की हत्या इसी तरह होती रही तो मनुष्य अस्तित्व के लिए संकट खड़ा हो जायेगा।

साहित्य समीक्षा –

डॉ.यू.सी.गुप्ता 2010 – कन्या भ्रूण समापन के लिए कानून है, इसके बावजूद रोजाना हजारों कन्या भ्रूण हत्या हो रही है। कानून एक अंधा औजार है, जिससे की सैकड़ों तरीके व्यक्ति तलाश लेता है, जैसे गर्भाशय का मुँह चौड़ा करके औजार डालना, भ्रूण के टुकडे करना, गर्भाशय में हवा भरकर भ्रूण को समाप्त करना, रासायनिक घोल के जरिए भ्रूण के टुकडे कर उसे योनी द्वार से बाहर निकालना आदि।

परमहंस प्रताप सिंह (2008) – आज कन्या भ्रूण हत्या की दर में वृद्धि का मुख्य कारण है, हमारी सामाजिक संरचना। हमारे समाज में लड़की का पालन–पोषण और उनके जीवन के मूल संस्कारों तथा विवाह आदि का संपन्न करना बहुत ही खर्चीला और दुष्कर कार्य है।

अध्ययन विधि – किसी भी सामाजिक शोध को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करना आवश्यक होता है। अत: अध्ययन को सुव्यवस्थित रूप से पूरा करने के लिए यह आवश्यक है कि अध्ययन के पूर्व क्रमबद्ध रूप रेखा तैयार कर लेना चाहिए। प्रस्तुत शोध पूरा करने लिए प्राथमिक समंको का उपयोग किया गया है। प्रश्नावली के माध्यम से शोध क्षेत्र कुक्षी तहसील की 50 महिलाओं का चयन किया गया है। चयनित 50 महिलाओं का प्रत्यक्ष रूप से साक्षात्कार लेकर संमको का संकरलन किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. भ्रूण परीक्षण की आवश्यकता क्यों होती है।
2. कन्या भ्रूण हत्या करने के कारणो का अध्ययन करना।
3. महिलाओं में भ्रूण हत्या करवाने की सहमति का अध्ययन करना।
4. कन्या भ्रूण हत्या समाज में लिंगानुपात के अंतर के लिए उत्तरदायी है इस का अध्ययन करना।
5. कन्या भ्रूण हत्या के सामाजिक, धार्मिक एवं कानूनी पक्षों का अध्ययन करना।

तालिका क्र.1.

भ्रूण परीक्षण एवं भ्रूण हत्या कानून अपराध है उत्तरदाताओ की जानकारी दर्शाने वाली तालिका

क्र.	जानकारी	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	42	92%

* विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

2.	नहीं	08	08%
	योग	**50**	**100.00**

अध्ययन में सम्मिलित 92.00% महिलाओं यह जानकारी थी कि भ्रूण परीक्षण एवं भ्रूण हत्या करना कानूनी अपराध है, मात्र 8 प्रतिशत महिलाओं को इसकी जानकारी नहीं थी। स्पष्ट होता है कि अधिकांश महिलाओं का इस तथ्य की जानकारी होने के पश्चात भी इन महिलाओं ने शिशु कन्या भ्रूण की हत्या कराई कानूनी की सजा या दण्ड का भय इन महिलाओं एवं इनके पतियों को नहीं है, जो कि इन शिशु भ्रूण हत्या करना आसान सा कार्य हो गया है।

तालिका क्र.2.
उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्थिति

क्र.	शिक्षा	संख्या	प्रतिशत
1.	माध्यमिक	03	0.6
2.	हायर सेकेण्डरी	07	14.00
3.	स्नातक	21	42.00
4.	स्नात्कोत्तर	17	34.00
5.	अन्य	02	04.00
	योग	**50**	**100.00**

अध्ययन में सम्मिलित सर्वाधिक स्नातक स्तर तक शिक्षित है इन की संख्या 21 (42.00%) रही है। 17 (34.00%) महिलाएँ स्नात्तकोत्तर स्तर तक शिक्षित है। 07 (14.00%) महिलाए हायर सेकेण्डरी स्तर तक शिक्षित है। 03 (06.00%) महिलाएँ माध्यमिक स्तर तक शिक्षित है जब कि 02 (04.00%) महिलाओं ने अन्य उपाधि प्राप्त कर रखी है। स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलत कन्या हत्या करने वाली महिलाओं में निरक्षर महिलाएँ कोई नहीं है। अधिकांश महिलाए उच्च शिक्षित है।

तालिका क्र.3
कन्या भ्रूण हत्या हेतु उत्तरदाता महिलाओं की सहमति को दर्शाने वाली तालिका

क्र.	सहमति	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	28	56.00
2.	नहीं	16	32.00
3.	तटस्थ	06	12.00
	योग	**50**	**100.00**

अध्ययन तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित 28 (56.00%) महिला उत्तरदाताओं के अनुसार शिशु कन्या भ्रूण हत्या कराने के लिए उनकी सहमति थी।16 (32.00%) महिला उत्तरदाताओं के अनुसार शिशु कन्या भ्रूण हत्या कराने के लिए सहमति नहीं दी जब कि 06 (12.00%) महिला उत्तर दाता इस प्रश्न के प्रति तटस्थ रही। स्पष्ट है कि कन्या भ्रूण हत्या हेतु महिला उत्तरदाताओं की सहमति थी।

तालिका क्र.4
भ्रूण हत्या कहाँ पर करवाई

क्र.	स्थिति	संख्या	प्रतिशत
1.	निजी चिकित्सालय	48	96.00
2.	शासकीय चिकितत्सालय	00	00.00
3.	दाई	02	04.00
	योग	**50**	**100.00**

अध्ययन में सम्मिलित सर्वाधिक 43 (96.00%) महिलाओं ने निजी चिकित्सालय में कन्या भ्रूण हत्या कराई थी। 02 (04.00%) महिलाओं ने दाई के माध्य से कन्या भ्रूण हत्या कराई थी। शासकीय चिकित्सालय में किसी भी महिला ने कन्या भ्रूण हत्या नहीं कराई है। स्पष्ट है कि निजी चिकित्सालय के प्रति लोगों का विश्वास बढ़ता जा रहा है। जहाँ पैसे के द्वारा सभी काम आसानी से हो जाते है।

तालिका क्र.5
कन्या भ्रूण हत्या करने के पश्चात पछतावा होने की स्थिति दर्शाने वाली तालिका

क्र.	स्थिति	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	31	62.00
2.	नहीं	13	26.00
3.	तटस्थ	06	12.00
	योग	**50**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित सर्वाधिक 31 (62.00%) महिलाओं को कन्या भ्रूण हत्या कराने के पश्चात पछतावा हुआ। 13 (26.00%) महिलाओं को कन्या भ्रूण हत्या कराने के पश्चात किसी प्रकार का पछतावा नहीं हुआ। जबकि 06 (12.00%) महिला उत्तरदाता इस प्रश्न के प्रति तटस्थ रही। स्पष्ट है कि शिशु कन्या भ्रूण हत्या कराने के पश्चात मानसिक रूप से पछतावा होता है।

तालिका क्र.6
क्या भारत में कन्या भ्रूण हत्या को रोका जा सकता है।

क्र.	स्थिति	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	32	64.00
2.	नहीं	18	36.00
	योग	**50**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित 32 (64.00%) महिला उत्तरदाताओं के अनुसार भारत में कन्या भ्रूण हत्या को रोका जा सकता है। जब कि 18 (36.00%) महिला उत्तरदाताओं के अनुसार भारत में कन्या भ्रूण हत्या को नहीं रोका जा सकता है। स्पष्ट है कि अधिकांश महिलाओं का आज भी मानना है कि भारत में कन्या भ्रूण हत्या को रोका जा सकता है, इसके लिए बने हुए कानून पर्याप्त नहीं है। इन कानूनों में सुधार की आवश्यकता है।

निष्कर्ष – वर्तमान समय निजी चिकित्सालय के प्रति लोगों का विश्वास बढ़ता जा रहा है। शासकीय चिकित्सालय की अपेक्षा निजी चिकित्सालय में सुविधा अत्याधिक होती है और पैसे के द्वारा सभी कार्य आसानी से सम्पन्न हो जाते है। वर्तमान में लगभग सभी निजी नर्सिंग होम्स में भ्रूण परीक्षण करने की मशीन उपलब्ध है। यही कारण है कि निजी चिकित्सालय में कन्या भ्रूण हत्या को एक व्यवसाय के रूप में अपना लिया है इस प्रकार यह चिकित्सालय कन्या भ्रूण हत्याओं को सम्पन्न कराते रहते है।

कन्या भ्रूण परीक्षण एवं भ्रूण हत्या करना कानूनन अपराध की श्रेणी में आता है। इसके बावजूद इन केन्द्रों पर चोरी छीपे यह कार्य होता रहता है आज के समय में हमारी समानताऐं परिवर्तित नहीं हो रही है। संकीर्ण मान्यताओं के कारण न सिर्फ नारी जाति का विनाश हो रहा है। अपितु उसके अस्तित्व पर भी प्रश्न चिन्ह लगता जा रहा है। इस प्रकार प्रस्तुत शोध का सम्पूर्ण अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि कन्या भ्रूण हत्या का षड़यंत्र निजी चिकित्सालय वह निजी नर्सिंग होम्स में चल रहा है उस पर रोक लगाई जाना

चाहिए कन्या भ्रूण हत्या पर सरकार द्वारा रोक नहीं लगाई तो एक समय ऐसा आयेगा की महिला पुरूष अनुर्पात में इतना अन्तर आ जायेगा की लड़को के तुलना में लडकियों के संख्या काफी कम हो जाएगी। जो कि वास्तविक स्थिति में नहीं होना चाहिए।

सुझाव –

1. कन्या भ्रूण हत्या रोकने के लिए सामाजिक संगठनों को प्रयास करना होंगे, ताकि वे जनजागृति लाकर लोगों की मानसिकता को परिवर्तित कर सकें।
2. भ्रूण परीक्षण केन्द्रों को शासकीय नियंत्रण में लेना चाहिए ताकि कन्या भ्रूण हत्या पर रोक लगाई जा सके।
3. महिला को स्त्री–पुरूष जनसंख्या के बारे में तथ्यों को बताना होगा ताकि वे इस दिशा में अपने अस्तित्व को बनाए रखने में सहभागी बने।
4. महिलाओं को किसी भी स्थिति भ्रूण हत्या कानून अपराध है इस बात का व्यापक प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए ताकि लोगों में डर की भावना उत्पन्न हो और वे कन्या भ्रूण हत्या नहीं करावे।
5. दहेज जैसी विकराल समस्या का अन्त किया जाना चाहिए ताकि दहेज के डर से कन्याओं को जन्म के पूर्व ही भ्रूण हत्या न हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **डॉ.यू.सी.गुप्ता (2010) –** 'जनसंख्या एवं विकास : समस्या एवं समाधान' अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस 4831/24, प्रहलाद गली, अंसारी रोड़, दरियागंज नई दिल्ली – 110002
2. **परमहंस प्रताप सिंह (2008) –** 'भारती समाज में दहेज – समस्या 'बी.के. तनेजा क्लासिक पब्लिशिंग, कम्पनी 28, शापिंग काम्प्लैस, कर्मपुरा, दिल्ली 110028
3. **अफ़ज़ाल अहमद अगस्त (2009) –** 'गर्भपात: तथ्य, सन्दर्भ और तर्क' डी–69/3, डी ब्लॉक, अबुल फ़जल एन्कलेब पार्ट 2, जामिया नगर, ओखला, नई दिल्ली – 110025

****

गरीबी रेखा की अवधारणा, समस्या एवं समाधान

डॉ. हरदयाल अहिरवार *

प्रस्तावना – भारत में किस हद तक दरिद्रता है, इसे दरिद्रता रेखा की भाषा में हल किया जा रहा है। FAO प्रथम निदेशक लार्ड बॉयड ओर (Lord Boyd Orr) पहला व्यक्ति था जिसने भुखमरी रेखा संधारण 1945 में प्रस्तुत की थी। जो कि 2300 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन के कम उपभोग को निर्दिष्ट करती है। इस विचार को 'दरिद्रता रेखा' में रूपान्तरित कर दिया गया है। भारतीय योजना आयोग ने ग्रामीण क्षेत्रों के लिये 2400 कैलोरी और शहरी क्षेत्रों के लिये 2100 कैलोरी के आधार पर गरीबी रेखा को परिभाषित किया गया है।

भारत में एक अध्यपन समूह ने जिसमें डी. आर गाडगिल पी. एस. लोकनाथन, बी एन, गांगुली और अशोक मेहता थे राष्ट्रीय दरिद्रता निकाली और वह 'समूह' इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि (1960-61 की कीमतों पर) 20 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास निजी उपयोग व्यय न्यूनतम निर्वाह स्तर है; चतुर्थ योजना में इसी को आधार माना गया। पंचम योजना 1972-73 की कीमतों के मुकाबले यह राशि 40.6 रूपये थी। छटी योजना में 79-80 की कीमतों के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों के लिए 51.3 रूपये शहरी क्षेत्रों के लिए 59.7 रूपये बैठती है। 1979-80 में 33.9 करोड़ लोग गरीबी रेखा के नीचे रह रहे थे। एक सरकारी अनुमान के अनुसार 1980 में 51 प्रतिशत से गिरकर 198.4 में 37 प्रतिशत हो गया। प्रो. राजकृष्ण के अनुमान के अनुसार गरीबी रेखा के नीचे लोगों की संख्या 37 लाख प्रतिवर्ष बढ़ रही है। (एम. एल. झिगन पृ. 610)

1- Lester R. Brwn ward without borders 1972.

नि: सन्देह दीर्घकालीन व्यापक गरीबी भारत के औपनिवेशक इतिहास में शुरू से ही चली आ रही है। अपनी आर्थिक समस्याए हल करने और सर्वतोमुखी विकास हमारी पंचवर्षीय योजनाओं के साथ शुरू हुए। गरीबी की यह रेखा पहले 3500 रूपये के उपभोग स्तर पर थी और बाद में संशोधित रूप में 6400 रूपये के उपभोग स्तर पहुँच गई। अनुसूचित जनजातियों में गरीबी का स्तर शोचनीय है। 1983-84 में समूह के अनुसार 1991 में 99.24 लाख जनजाती परिवार गरीबी रेखा के नीचे थे (पृ.163,165 नढीम) ट्रिईसेम तथा आई.आर.डी.पी. विस्तार सर्वथा लाभ-हीनो तक पहुँचने तथा प्रभाव डालने में थोड़ा बहुत सफल हो सका।

भारत में सामान्यत: उन लोगों को गरीब कहा जाता है, जो एक निश्चित न्यूनतम उपभोग स्तर से नीचे जीवन यापन कर रहें है। परन्तु वह निश्चित न्यूनतम स्तर क्या हो इस पर अर्थशास्त्रियों में मतभेद है। जैसा कि तेन्दुलकर समिति ने कहा है 'गरीबी रेखा की आवधारणा मूल मानवीय आवश्यकताओं को पूरा कर पाने में असमर्थता से जुड़ी हुई है। ये मूलभूत आवश्यकताएं- पर्याप्त पौष्टिक आहार प्राप्त करना, पहनने के लिए उपयुक्त वस्त्र, रहने के लिए उपयुक्त स्थान, बीमारियों से बचने की क्षमता कुछ न्यूनतम स्तर तक शिक्षित होना एवं आर्थिक गतिविधियों में हिस्सा लेने के लिए गत्यात्मकता' गरीबी रेखा की अवधारणा बहु-आयामी है। परन्तु इस बहु-आयामी संकल्पना को आधार बनाकर गरीबी रेखा को न्यूनतम आय स्तर पर परिभाषित करना संभव नहीं हैं, क्योंकि इस संकल्पना में कुछ ऐसी बाते हैं, जिन्हें मापा नहीं जा सकता। इसलिए गरीबी रेखा को परिभाषित करते समय केवल भौतिक आयामों को शामिल किया जाता है। अत: इस सम्बन्ध-में केवल न्यूनतम उपभोग आवश्यकताओं पर विचार किया जाता हैं इसे योजना आयोग ने ग्रामीण क्षेत्रो में 2400 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन स्वीकार किया जाता है। 2004-05 में यह आहार प्राप्त करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में 356.30 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास तथा शहरी क्षेत्रों में 538.60 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास माना गया है। वर्ष 2011-12 में योजना आयोग ने गरीबी रेखा को ग्रामीण क्षेत्रों में 27.20 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्रों में 33.33 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिदिन। इसका अर्थ था कि ग्रामीण क्षेत्रों के लिए 816 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास तथा शहरी क्षेत्रों 1000 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास। (पृ.187 188 मिश्र एवं पुरी)

सम्बन्धित आकड़ों को एकत्रित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया है। अत: निर्धनता की सीमा का सही तथा विश्वसनीय आधार पर अनुमान लगाना कठिन है। परन्तु राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण NSS (National Sample Survery or NSS) के उपभोग व्यय के आंकड़ों से ग्रामीण और शहरी निर्धनता की सीमा का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है।

बी. एम. मिन्हास ने 1956-57 और 1967-68 के बीच ग्रामीण क्षेत्र की सीमा का अनुमान लगाया। उन्होंने 1960-61 की कीमतों के आधार पर 240 रूपये प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग को निर्धारित रेखा मानकर बताया कि 1956-57 में जहाँ 65 प्रतिशत व्यक्ति निर्धनता रेखा से नीचे थे वही 1967-68 में 50.6 प्रतिशत व्यक्ति निर्धनता रेखा के नीचे थे। योजना आयोग के 79-80 की कीमतों के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में 76 रूपये तथा शहरी क्षेत्रों में 88 रूपये प्रति व्यक्ति प्रति मास व्यय को निर्धनता (गरीबी) रेखा माना है। वर्तमान में 2004-05 की कीमतों के आधार पर आयोग ने शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के क्रमश: 965 रूपये तथा 781 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमाह को गरीबी की रेखा मानकर निर्धनता व्यापकता के अनुमान दिए गए है।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) पं. शम्भूनाथ शुक्ल शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

तालिका 2.1 : निर्धनता रेखा के नीचे जनसंख्या का प्रतिशत

वर्ष	ग्रामीण	शहरी	कुल या संयुक्त
1973-74	56.4	49.0	54.9
1977-78	3.1	45.2	51.3
1983-84	45.7	40.8	44.5
1987-88	39.1	38.2	38.9
1993-94	37.3	32.4	36.0
2004-05	41.8	25.7	37.2
2011-12	25.7	13.7	21.9

तेन्दुलकर पद्धति से अनुमानित (Source_Economic Survey 2015_16)

उपयुक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 1973-74 और 1977-78 के मध्य निर्धनता की व्यापकता में साधारण कमी आई परन्तु इसके पश्चात् 1977-78 से 1993-94 के मध्य निर्धनता के प्रतिशत में भारी कमी हुई। आयोग के अनुसार सफलता का कारण आर्थिक विकास की ऊँची दर, कृषि उत्पादन में वृद्धि तथा रोजगार प्रयत्न करने वाले कार्यक्रमों की सफलता है। (डॉ. अनुपम गोयल पृ. 132,133)

राष्ट्रीय सेंपिल सर्वेक्षण के दौर पर आधारित गरीबी के अनुमान

Poverty Estimates Based on 61st Round of the NSSO - राष्ट्रीय सेंपिल सर्वेक्षण के 61 वें दौर में गरीबी के संदर्भ में 2004-05 के लिए ये विधियाँ थी (1) समान याददाश्त विधि (Uniform Recall Period) तथा दूसरी (2) मिश्रित याददश्त विधि (Mixed Recall period) सभी उपयोग वस्तुओं के लिए 30 दिन की याददाश्त विधि को किया गया है। मिश्रित याददाश्त विधि के अन्तर्गत 5 मदों के लिए 365 दिन याददाश्त अवधि ली गई है। अन्य वस्तुओं के लिए 30 दिन याददाश्त अविध-ली गई है।

(प्रतिशत में)**सन्दर्भ काल**	कुल	ग्रामीण	शहरी
समान याददाश्त अविध (URP) विधि	27.5	28.3	25.7
मिश्रित याददाश्त अवधि (MRP) विधि	21.8	21.8	21.7

स्त्रोत- Govt. of India Economic Survey 2007-08 (मिश्र एवं पुरी, पृ. 191)

राष्ट्रीय सेंपिल सर्वेक्षण के अनुसार 61 वें दौर के तहत् समान याददाश्त विधि के आधार पर 2004-05 में 27.5 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे थे। जबकि मिश्रिम याददाश्त विधि अनुसार 21.8 प्रतिशत लोग ग्रामीण क्षेत्र में थे। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि (MRP) नविधि के अनुसार ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में यह लगभग बराबर ही था। तेन्दुलकर समिति के वर्ष 2005-06 के लिए कई गरीबी रेखा को ग्रामीण क्षेत्रों में 446.68 रूपये प्रतिव्यक्ति प्रति मास तथा शहरी क्षेत्रों में 578.80 रूपये प्रतिव्यक्ति प्रतिमास परिभाषित किया है। इस आधार पर 41.8 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या 25.74 प्रतिशत शहरी जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे थी। सम्पूर्ण देश में 37.2 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे थी।61वें दौर में (URP) विधि के आधार पर 28.3 प्रतिशत ग्रामीण लोग (MRP) विधि के अनुसार 21.8 प्रतिशत ग्रामीण लोग गरीब रेखा के नीचे थे।

राष्ट्रीय सेंपिल सर्वेक्षण के 66 वें दौर पर गरीबी का अनुमान

Poverty estimates Based on 66St Round of the NSSO - 19 मार्च 2012 योजना आयोग ने वर्ष 2009-10 में 66 वें दौर का सर्वेक्षण किया जिसमें ग्रामीणों क्षेत्रों में गरीबी रेखा का 22.40 प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्रों में 28.60 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिदिन किया गया है। इस आधार पर 2009-10 के आधार पर 29.8 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे थे। इससे स्पष्ट होता है कि 2004-05 से 2009-10 पाँच वर्ष की अविधि में गरीबी के अनुपात में 7.4 प्रतिशत की गिरावट हुई। (पृ. मिश्र एवं पुरी 192)

गरीबी की समस्या एवं समाधान - राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के आधार पर विभिन्न अर्थशास्त्रियों के निर्धिनता के सम्बन्ध में जो अनुमान लगाये उनके आधार पर कहा जा सकता है कि भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापाक निर्धनता है। जो विभिन्न वर्गो में बँटे हुए है।

1. ऐसे कृषि श्रमिक जिनके भूमि स्त्रोत का अभाव है।
2. ऐसे कृषि श्रमिक जिनके पास छोटी स्त्रोत है। ऐसे श्रमिक कुल कृषि श्रमिकों का 40 प्रतिशत है।
3. ऐसे गैर कृषि श्रमिक जिनके पास भूमि स्त्रोत का अभाव है।
4. ऐसे किसान जिनके पास कृषि 5 एकड़ से कम है, ऐसे वे किसान भी शामिल है, जिनके पास कृषि भूमि 2.5 एकड़। उपर्युक्त निर्धनता की आवधारणा से दो बाते समाने आतीं हैं। छोटे किसान तथा भूमिहीन मजदूर। वास्तव में ये दोनों वर्ग एक दूसरे में मिले हुए है। जहाँ तक शहरी निर्धनता का प्रश्न है, दाण्डेकर एवं रथ के अनुसार ये लोग ग्रामीण क्षेत्रों से आये है और इनकी जडें भी गाँवों में है। उसी वर्ग का विशेष हिस्सा है ग्रामीण निर्धन व्यक्ति है।

भारत में निर्धनता के कारण :

1. भूमि का असमान वितरण
2. उत्तराधिकार के कानून
3. जनसंख्या वृद्धि
4. कीमतों में अत्यधिक वृद्धि
5. बेरोजगारी में वृद्धि। डॉ गोयल -पृ. (134)

बहुआयामी निर्धनता (Multidimensional Poverty) - 1997 की (Human Dvalopment Report) में कहा गया कि कोई व्यक्ति ऐसा हो सकता है कि वह स्वस्थ्य जीवन का निर्वाह कर रहा हो लेकिन अशिक्षित हो और उसका ज्ञान से कोई नाता न हो अपने विचारों के आदान-प्रदान में असमर्थ-हो महत्वपूर्ण निर्णय निर्धारण से कोई मतलब ने हो मृत्यु की संभावना जल्दी हो। अत: गरीबी समूह के लिये बहुत सारी बातों पर गौर करना पड़ेगा। Human devalopment Report रिपोर्ट 1997 में मानव गरीबी सूचकांक पहली बार स्पष्ट किया गया। इस रिपोर्ट में तीन अभावों पर बल दिया गया। जीवन की लम्बी अवधि न होना, ज्ञान का अभाव, अच्छे जीवन स्तर का न होना। HDI 2009 में 133 देशों में आये मानव गरीबी सूचकांक का आकलन किया गया था। इसके अनुसार में (HDI) (Funan Poverty Report) को मान 28.0 प्रतिशत था, जो गरीबी की व्यापक्ता को प्रकट करता है। 135 देशों में भारत 88 वें स्थान पर है। (पुरी 194,195)

गरीबी निवारण के कार्यक्रम (Poverty Alleviation Programmes) - ग्रामीण विकास व ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों के माध्यम से गरीबी पर सीधा प्रहार किया गया। 1970 के दशक से ग्रामीण गरीब जनता के लिए बहुत से कार्यक्रम तैयार किए गए जिनमें प्रमुख लघु किसान विकास एजेन्सी, सीमान्त किसान व खेतिहर मजदूर विकास एजेन्सी सूखा संभाव्यता क्षेत्र कार्यक्रम। इनमें से कुछ कार्यक्रम ऐसे थे जो कुछ राज्यों में चल रहे थे। इसके अतिरिक्त इन कार्यक्रमों में लम्बे समय तक रोजगार प्रदान करने की सामर्थ्य नहीं थे। इसके अतिरिक्त इन कार्यक्रमों की आवश्यकता

महसूस की गई, जो न केवल देशव्यापी बल्कि ग्रामीण पर सीधा प्रहार कर सकें। इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण खेतिहर मजदूर रोजगार गारन्टी कार्यक्रम, नाबार्ड, महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी कार्यक्रम फिर भी इन कार्यक्रमों के बावजूद 40 प्रतिशत से ज्यादा लोग गरीब की रेखा को पार नहीं कर पाए। अलग-अलग अध्ययनों में यह संख्या 18 प्रतिशत से लेकर 49.4 प्रतिशत तक है। (मिश्र एवं पुरी 198, 199)

गरीबी निवारण की रणनीति (Strategy of Poverty Alleviation) – गरीबी निवारण के कार्यक्रम से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि आयोजकों ने यह मान्यता ली थी कि गरीबी एक जैसे हैं। उदाहरण के लिये समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम में उन सब परिवारों को गरीब माना गया था जिनकी वार्षिक आय 3500 रूपये वार्षिक अर्थात प्रति व्यक्ति आय 700 रूपये से कम थी। आयोजकों ने इन्हें अलग बाँटने की जरूरत नहीं समझी। इन्दिरा हीरले के अनुसार, गरीब दो वर्गों में बाँटना चाहिए-एक वर्ग वो है जिसके पास कोई कौशल है (और इसलिए वे स्वरोजगार कार्यक्रम के लिए उपयुक्त हैं) दूसरे वे गरीब होंगे जिने पास कोई कौशल या प्रशिक्षण नहीं है (इसलिए मजदूरी पर ही रोजगार कार्यक्रमों में काम कर सकते है। इनमें से प्रत्येक वर्ग को अलग-अलग मानकर उनके लिए अलग-अलग नीति बनाई जानी चाहिए) नीलकण्ठ रथ के अनुसार उत्पादक परिसम्पतियाँ प्रदान करने की समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की नीति उपयुक्त नही है। परन्तु इन्दिरा हीरवे तथा एम. एल. दंतेवाला के अनुसार गरीबी निवारण के परिप्रेक्ष्य में स्वरोजगार कार्यक्रमों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। इनका कारण यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार के द्वारा बहुत से लोगों को रोजगार मिला हुआ है। इसके अलावा मजदूरी पर रोजगार प्रदान करने वाले कार्यक्रम पर जोर देने से वे पूरी तरह सम्भव है कि आय की असमानताएँ न बढ़ जायें। इसलिए सही रणनीति वही है, जिसमें स्वरोजगार व मजदूरी पर रोजगार के कार्यक्रमों के बीच उचित समन्वय किया जाए।

अत: योजनाओं के तहत अलग-अलग बातों पर बल दिया गया –

सातवीं योजना में – उत्पादक रोजगार प्रदान करने पर जोर दिया गया।

आठवीं योजना में – रोजगार के अवसरों में विस्तार, बेरोजगार तथा अल्प रोजगार, गरीबों की आय बढ़ोत्तरी पर ध्यान दिया जाए।

नौवीं पंचवर्षीय योजना में – उदारीकरण की पृष्ठभूमि में तैयारियाँ की गई थी। आर्थिक संवृद्धि के रिसाव प्रभाव द्वारा यह माना गया था कि गरीबी कम होगी।

दसवीं योजना में – समग्र वृद्धि लक्ष्य के अन्तर्गत विभिन्न राज्यों के लिए अलग-अलग संवद्धि लक्ष्य निश्चित किए गए।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में – गरीबी निवारण के लिए अर्थव्यवस्था की और तीव्र संवृद्धि पर जोर दिया गया। जिसमें बेहतर सन्तुलन प्राप्त करने के लिए औद्योगिक तथा सेवा क्षेत्रों में तेजी से रोजगार के अवसरों का सृजन।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना – इसमें कृषि का तेज आर्थिक विकास, विनियोग क्षेत्र का तेज विकास। पूरी योजना अविधि में गरीबी में 10 प्रतिशत विन्दु कमी करने का लक्ष्य रखा गया है। योजना 50 मिलियन नई रोजगार संभावनाओं का गैर कृषि क्षेत्र में सृजन का लक्ष्य रखा गया है। साथ ही लोगों को उपयुक्त कौशल प्रदान करने की बात की गई है। (पृ. 199, 200एवं पुरी)

संन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. आर्थिक विकास एवं नियो-एम. एल. झिंगन काडार्क प्रकाशन।
2. जनजातीय भारत-नदीम हसनैन (संस्करण आँठवाँ)।
3. डॉ. अनुपम गोयल-पंचम सेमेस्टर, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दौर।
4. भारतीय अर्थव्यवस्था वी.के.पुरी, एस.के.मिश्र, हिमालय पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली।

****

आर्थिक नीति का गरीबी उन्मूलन में योगदान, पन्ना जिले के संदर्भ में

नितेश मिश्रा *

शोध सारांश – शोध पत्र के शोध शीर्षक संदर्भ में पन्ना जिला मध्यप्रदेश राज्य में सबसे सुंदर जिलों में से एक है। यह जिला भी हिन्दू और मुस्लिम स्थापत्य कला का एक बहुत अच्छा मिश्रण है। ये जिला अपने मंदिरों के लिए जाना जाता है। पन्ना पूरी दुनिया में प्रणामी संप्रदाय के अनुयायियों के लिए सबसे पवित्र तीर्थ है। दुर्लभ वन्य जीवों और वनस्पतियों और एक हीरे की खान के लिए एक अभ्यारण के साथ, पन्ना एक सक्रिय और जीवंत वर्तमान में एक शाही अतीत तब्दील हो गया है। कृषि में आपार सम्पदा एवं पर्यटन में सौन्दर्य कलाओं का संग्रह होने के बाबजूद भी पन्ना जिला पिछड़े क्षेत्र में आता है। जिसका कारण आर्थिक अर्थव्यवस्था, आवागमन के साधन का अभाव, औद्योगिक संस्थाऐं, उद्योग, व्यवसाय, बेरोजगारी, आदि होने के कारण पन्ना जिलें का आर्थिक विकास संम्भव नहीं हो पा रहा हैं एवं विकास हेतु किसी भी प्रकार से शासन द्वारा कोई कार्य भी नहीं किये जा रहें है। जिस हेतु आवश्यक है। कि एक नवीन दिशा में आर्थिक नीति का गरीबी उन्मूलन में योगदान हेतु पहल आवश्यक है।

निर्धनता के कारणों को यदि देखा जाए तो इनमें निम्न शामिल है, भूमि का असमान वितरण, उत्तराधिकार के कानून, बेरोजगारी में वृद्धि, जनसंख्या में भारी वृद्धि, कीमतों में अत्याधिक वृद्धि, आदि शामिल है।

शब्द कुंजी – व्यवसाय – व्यवसाय का तात्पर्य यहॉ व्यापार से लिया गया है। जिसका संबंध माल के आयात एवं निर्यात से है।

आर्थिक अर्थव्यवस्था – इसका तात्पर्य संबंधित जिलें के क्षेत्र में किसी भी प्रकार के उद्योग एवं रोजगार के अवसर न होने के कारण एवं अपने जीवन स्तर को बढ़ाने हेतु सुविधाऐं उपलब्ध न होना।

प्रस्तावना – आर्थिक नीति गरीबों की इस प्रकार से सहायता करता है कि उन्हें आवश्यक तथा उत्पादक वस्तुऐं उपलब्ध कराकर रोजगार के अवसर प्रदान करना, जिससे वे अपने ही ग्राम में रहकर स्वयं के प्रयास से अपनी निर्धनता को मिटा सके।

पन्ना जिलें में सरकार द्वारा अनेक योजनाओं का संचालन किया गया है, जो गरीबी उन्मूलन हेतु संचालित है फिर भी योजनाओं का लाभ गरीब परिवारों को प्राप्त नहीं हो पा रहा है। अभी तक गरीबी उन्मूलन हेतु चलायी जा रही योजनाओं के क्रियान्वयन एवं उसकी उपलब्धियों से संबंधित कोई तथ्य परक एवं क्रमबद्ध अध्ययन इस क्षेत्र में नहीं हो सका है। इस कमी को दूर करने का प्रयास ही प्रस्तुत पत्र का अध्ययन है। शोध के अंतर्गत खेती सर्वेक्षण अवलोकन, साक्षात्कार एवं अभिलेख आदि का अध्ययन कर इस कार्यक्रम के संबंध में कार्य किये गये है।

गरीब किसे माना जाये या गरीबी सीमा का मापन किस आधार पर हो इस संबंध में पर्याप्त मतभेद है, योजना आयोग प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपभोग की गयी कैलोरी को आधार मानता है। जिससे ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के लिए क्रमश: 2400 व 2100 कैलोरी प्रतिदिन निर्धारित है। वर्ष 1997 के बाद उन्हीं परिवारों को गरीब माना गया। जिनकी वार्षिक आमदनी 20000 रूपये से कम है।

उद्धेश्य – पन्ना जिला आर्थिक व प्राकृतिक साधनों की सम्पन्नता के बावजूद भी यह क्षेत्र आर्थिक विकास की दृष्टि से काफी पिछड़ा हुआ है। इस क्षेत्र के लोग अपेक्षाकृत अधिक निर्धन है। यद्यपि आर्थिक विकास योजनाओं के माध्यम से इस क्षेत्र का विकास करने का प्रयत्न किया गया है लेकिन आषातीत सफलता नहीं मिली है। अत: इस शोध प्रबंध का मुख्य उद्देश्य निर्धनता उन्मूलन पर आर्थिक विकास योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन से संबंध है।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण अंचलों में चल रहे, नये आर्थिक कार्यक्रमों का अध्ययन करना, सूत्रीय कार्यक्रम का अध्ययन करना, अनुसूचित तथा पिछड़ी जातियों के लिये चलाऐं जा रहे कार्यक्रमों का अध्ययन करना एवं पन्ना जिला समृद्धि की ओर कैसे अग्रसर हो इस संबंध में रचनात्मक सुझाव देना है।

शोध परिकल्पना – शोध परिकल्पना के अंतर्गत इस विकल्प के चुनाव का कारण संबंधित शोध शीर्षक में मुख्य रूप से निर्धनता एवं उनके संबंध में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से शासन द्वारा एवं अन्य योजनाओं द्वारा जो प्रयास किये गये। वह कहॉ तक सफल रहे या नहीं। जिस हेतु इस संबंध में यह आवश्यक है कि शोध पत्र के माध्यम से गरीबी उन्मूलन में आर्थिक नीति के योगदान होने से संबंधित क्षेत्र में विकास की संम्भावाऐं बढ़ेगी।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – अतीत काल में सोने की चिड़िया कहा जाने वाला भारत देश वर्तमान में दरिद्रता के कुचक्र में उलझ चुका है। देश की वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए अब इस तथ्य के प्रमाणन की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती है, अगर हम इस देश की सम्पन्नता से विपन्नता की ओर प्रवृत्ति का कारण खोंजे तो आर्थिक इतिहास में यह साफ–साफ अंकित है कि पश्चिमी प्रभावों का अनुकरण करके हमने अपनी सांस्कृतिक जीवन शैली के प्रत्येक पक्ष चाहे वह आर्थिक हो अथवा सामाजिक या सांस्कृतिक में आमूल परिवर्तन कर लिया है। परिणामत: इस आधुनिक जीवनशैली तथा वास्तविक परिस्थितियों में विसंगतियॉ उत्पन्न हो गयी है। जिसके कारण जहॉ एक ओर हमारे जीवन मूल्यों का अवमूल्यन हुआ है वहीं दूसरी ओर हमारा आर्थिक जीवन–स्तर की आय के कमी के फलस्वरूप गिरता चला गया है। जिसका परिणाम निर्धनता भूखमरी आदि के रूप में हमारे समक्ष विद्यमान है।

नियोजन व विकास की धारा से गांवों को पूरी तरह से न जुड़ पाने के अतिरिक्त आर्थिक कुचक्रों को न तोड़ पाने का एक कारण यह भी था कि

* शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

1980 तक अर्थात् छठी योजना के पूर्व तक ग्रामीण विकास व रोजगार सम्बधी निर्धनता व बेरोजगरी उन्मूलन अनेक कार्यक्रम विभिन्न एजेसिंयों द्वारा पृथक-पृथक रूप में कराया जाता रहा है। जिसके कारण इनका व उनकी परिस्थतियों पर कोई उल्लेखनीय भाव परिलक्षित नहीं हो सका है।

प्रशासनिक दृष्टि से पन्ना जिलें को सात तहसीलों में गुनौर, अमानगंज, अजयगढ़, पवई, शाहनगर, रैफरा, सिमरिया तहसील में विभाजित किया गया है। शोध पत्र के लिये प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही प्रकार के समंकों का सकंलन किया गया है।

शोध उपकरण – शोधकार्य में द्वितीयक समंकों के प्रयोग से मौलिक सकंलन की समस्या उत्पन्न नहीं होती है, इन समंकों को प्रकाशित एवं अप्रकाशित स्त्रोतों से एकत्रित किया जाता हैं, शोध उपकरण के अंतर्गत विभिन्न तकनीकी सुविधाओं का उपयोग कर, जिसमें कम्प्यूटर, मोबाइल, वीडियो ग्राफिक्स, प्रोजेक्टर, आदि उपकरणों की सहायता से इस शोध कार्य को पूर्ण किया गया।

सांख्यिकीय तकनीक – पन्ना जिले में आर्थिक नीति का गरीबी उन्मूलन में योगदान के प्रभाव का अध्ययन करने के लिये सर्वेक्षण विधि का सहारा लिया गया है। आंकड़ों का संकलन नहीं अनुसंधान कर्ता के उपकल्पनाओं की पुष्टि करता है। आंकड़ों का संकलन अनुसंधानकर्ता प्राथमिक एवं मौलिक कार्य होता है। शोध कार्य तैयार करने हेतु निम्न उपकरण की आवश्यकता होती है। जिसमें समंक, प्रश्नावली, प्राथमिक एवं द्वितीयक सारांश, साक्षात्कार, न्यादर्श, निर्दशन, आर्थिक विश्लेषण, तथ्य सांख्यिकीय आंकडे, वैज्ञानिक पद्धति, सम्पादन, वर्गीकरण, सारणीयन, निर्वचन, अनुसूची इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है।

शोध व्याख्या – पन्ना जिलें में आर्थिक नीति का गरीबी उन्मूलन में प्रभाव क्या और कितना हुआ। इस तथ्य को जानने के लिऐ लाभान्वित हितग्राहियों से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर सर्वेक्षण किया गया। क्योंकि पन्ना जिलें में 7 विकासखण्ड है जिसमें आबाद गांव की संख्या 2500 है, जिसमें गरीबी उन्मूलन हेतु चल रहीं योजनाओं के हितग्राहियों का व्यापक क्षेत्र होने के कारण सर्वेक्षण के लिए सीमित क्षेत्र लिया गया है।

शोधार्थी द्वारा शोध पत्र में पन्ना विकासखण्ड का निवासी होने के कारण सर्वेक्षण में सर्वाधिक हितग्राही पन्ना विकासखण्ड से लिये गये है। शेष विकासखण्डों में से अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति , बाहुल्य क्षेत्रों से लाभान्वित हितग्राहियों का चयन किया गया है। विभिन्न योजनातंर्गत लाभान्वित परिवारों में से 300 हितग्राही, परिवारों का चयन सर्वेक्षण के लिए किया गया है। सर्वेक्षण के दौरान निर्धन परिवारों से उनकी आर्थिक दशा जीवन स्तर और विभिन्न पक्षों पर पड़े हुए प्रभाव का अध्ययन किया गया है।

निष्कर्ष – निर्धनों की आर्थिक दशा में सुधार लाने के लिए सरकार ने कई अन्य उपाय भी किये है उनके लिए आवास की योजनाऐं बनायी गयी है। नीची ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध कराया गया है। उनके कल्याण से संम्बंधित अनेक कार्यक्रम चलाये गये है। इसके अतिरिक्त कुटीर एवं उद्योगों के विकास की ओर पर्याप्त ध्यान दिया गया है।

स्पष्ट है कि निर्धनता को दूर करने के लिए सरकार ने अनेक कदम उठाये है, उनकी दिशा तो ठीक है, परंतु वे पर्याप्त नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि इन कार्यक्रमों का तेजी से विस्तार किया जाये तथा उन्हें प्रभावकारी ढंग से कार्यान्वित किया जाए, सरकार ने निर्धनता की बातें तो सभी योजनाओं में की है। जबकि इन्हें प्रमुख लक्ष्य माना जाये तथा इस दिशा में प्रभावकारी कदम उठायें जायें।

सुझाव :

1. विभिन्न योजनाओं के अनुसार विकासखण्ड स्तर पर भौतिक लक्ष्य एवं वित्तीय लक्ष्य दिया जाता है। जिससे कि एक निश्चित अवधि में पूरा करना होता है। अधिकारी इन्हीं दोनों लक्ष्यों को पूरा करने का प्रयास करते है। इस प्रक्रिया के कारण योजना के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो पाती और हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति में वांछित सुधार नहीं हो पाता है।

   इस तथ्यों पर शोधार्थी का सुझाव है कि इस कार्यक्रम को लक्ष्योन्मुख के बजाय प्रभावोंन्मुख बनाया जाय अर्थात् हितग्राही संख्या की लक्ष्य पूर्ति पर अधिक जोर न दिया जाय। बल्कि उनकी आर्थिक स्थिति में वांछित सुधार का लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास किया जाए।
2. हितग्राहियों के चयन में कर्मचारियों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। जैसे व्यक्तियों द्वारा गलत जानकारी देना, सरपंच एवं स्थानीय प्रभावशील व्यक्तियों का जवाब तथा नेताओं की सिफारिश। इसके साथ ही सर्वेक्षण हेतु समय भी कम रहता है। इन सभी कारणों से हितग्राहियों का चुनाव निष्पक्ष एवं सही ढ़ग से नहीं हो पाता है।

   इस संबंध में यह सुझाव है कि प्रत्येक वर्ष एक निश्चित अवधि में प्रत्येक ग्राम के शिक्षक और पटवारी सर्वेक्षण करें तथा उनका अभिलेख तैयार विद्यालय में ही रखा जाए। इस आधार पर सरपंच और ग्राम सेवक वास्तविक हितग्राहियों का चयन करें तथा इस सूची के अतिरिक्त अन्य किसी माध्यम से हितग्राहियों का चयन न किया जाय। समय-समय पर सर्वेक्षण अभिलेख की सत्यता की जॉच अधिकारियों द्वारा की जानी चाहिए।
3. इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन में लगे कार्यकताओं द्वारा यह समस्या भी बतलाई गयी कि हितग्राहियों द्वारा ऋण एवं अनुदान का गलत उपयोग किया जाता है। अर्थात् जिस कार्य के लिए हितग्राही को सहायता प्रदान की जाती है। वह उसका उपयोग उस कार्य के लिए न करके अपनी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति में लगा देते है। इसके लिए आवश्यक है कि निरंतर निरीक्षण किया जाय।
4. इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन में सलंग्न व्यक्तियों से कुछ लोग सकारात्मक दृष्टिकोण नहीं रखते है। जिससे वे योजना के निर्धारित नियमों के विपरीत कार्य करते है साथ ही कुछ ऐसे भी कार्यकर्ता है जो कि अतिरिक्त आय की लालच में इस परियोजना से जुड़ते है। जिससे योजना अपने मूल लाभ को प्राप्त नहीं कर पाती हैं।
5. प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग को अधिक महत्व दिया जाए तथा श्रम शक्ति का विस्तृत बजट तैयार कर विकास कार्यक्रम चलाये जाएँ।तभी बढ़ती हुई बेरोजगारी को कम किया जा सकता है तथा गरीबी हटाने के लक्ष्य की प्राप्ति में आगे बढ़ा जा सकता है।
6. गरीबी सबसे बड़ी चुनौती है, इसे समाप्त करने के लिए हमें हल ढूँढना होगा। गरीबी की समस्या के समाधान के लिए यह आवश्यक है कि क्षेत्र में रोजगार अवसरों में उत्तरोतर वृद्धि की जानी चाहिए ताकि गरीबी को कम किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

मुख्य स्त्रोत :-

1. बी.सी सिन्हा :- भारतीय अर्थशास्त्र विकास सम्बद्ध, लोक भारतीय प्रकाशन इलाहाबाद, 1986

2. सुदर्शन कुमार कपूर:- भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर 1974
3. शर्मा एवं वार्ष्णेय :- विकास का अर्थशास्त्र, साहित्य भवन, आगरा, 1980-81
4. एस.के मिश्रा :- भारतीय अर्थव्यवस्था निष्पत्ति एवं समस्याएँ, प्रगति पब्लिकेशन, दिल्ली 1979
5. आर.एन.दुबे :- आर्थिक विकास एवं नियोजन, नेश4नल पब्लिशिंग कम्पनी दिल्ली 1984
6. जे.के.मेहता:- भारतीय अर्थव्यवस्था समस्याएं एवं प्रतिविधान मेकमिलन, नई दिल्ली 1978

पत्र/पत्रिकाऐं :-
1. मध्यप्रदेश सन्देश :- भोपाल
2. लोक उद्योग :- नई दिल्ली
3. आर्थिक जगत :- कलकत्ता
4. कुरू क्षेत्र :- नई दिल्ली
5. भारतीय अर्थशास्त्र की झलक :- इलाहाबाद

दैनिक समाचार पत्र :-
1. नई दुनिया :- इंदौर
2. दैनिक युगधर्म :- जबलपुर
3. नवभारत :- भोपाल
4. दैनिक भास्कर:- भोपाल

****

पंचायती राज के आर्थिक विकास में कल्याणकारी योजना का योगदान

जगतसिंह बामनिया * डॉ. सारा अत्तारी **

प्रस्तावना –भारत गाँवों का देश है। भारत के गाँवों की 70 प्रतिशत आबादी कृषि और उससे जुड़े व्यवसायों पर निर्भर है। महात्मा गांधी ने कहा है कि भारत की आत्मा गाँवों में बसती है। अत: एक कल्याणकारी राज्य होने के नाते सरकार का यह दायित्व बनता है कि वह इन पिछड़े वंचित किन्तु बहुसंख्य आबादी के हित में कार्य करें।

ग्रामीण भारत की पिछड़ी हुई स्थिति एवं ग्रामीण जनता की समस्या से अवगत कर देश की सरकारों ने ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के विकास में विद्यमान असमानता को कम करने तथा ग्रामीण क्षेत्रों का विकास करने की दृष्टि से योजनाकाल में प्रयास तो अवश्य किया परन्तु उसमें वांछित सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। इस समस्या से अवगत देश के योजनाकारों ने विगत कुछ वर्षों से ग्रामीण विकास के उद्देश्यपूर्ण एवं सघन प्रयास प्रारम्भ किया है। विभिन्न कार्यक्रमों के संचालन के साथ ग्रामीण विकास मंत्रालय सतत् ग्रामीण विकास के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रयासरत है। ग्रामीण विकास ग्रामीण क्षेत्रों के विकास कार्यक्रमों के संचालन हेतु संसाधनों की बढ़ती माँग को पूरा करने हेतु सरकार सचेत हुई है।

स्वतंत्रता–प्राप्ति के उपरान्त सतत् प्रयास के फलस्वरूप भारत विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति करते हुए आर्थिक विकास के पथ पर आगे बढ़ चुका है। परन्तु विडम्बना यह है कि देश की 27 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या अभी भी गरीबी का जीवन व्यतीत कर रही है और जीवन की न्यूनतम आधारभूत आवश्यकताओं से वंचित है। ग्रामीण भारत अभी भी गरीबी की समस्या से ग्रसित है। देश की 70 प्रतिशत आबादी का आवास, पेयजल एवं यातायात के लिए सड़कों की समुचित सुविधा उपलब्ध नहीं है। देश के सतत् एवं सर्वांगीण विकास की कल्पना तब तक बेईमानी होगी जब तक कि ग्रामीण भारत का समुचित विकास न हो जाये। अत: भारत का विकास तभी संभव है जब गाँवों का विकास हो। ग्रामीणों के आर्थिक विकास के लिए सरकार समय–समय पर अनेक योजनाएँ चलाती रहती है। ग्रामीण क्षेत्रों में विकास के लिए 2014–15 में जहाँ 11437 करोड़ रुपये थे और 2015–16 में की राशि ग्रामीण विकास क्षेत्र के लिए जारी की गई थी। सरकार द्वारा चलाई गई योजना का भारत के गाँव पर क्या–क्या प्रभाव पड़ा है। यह आकलन करना जरुरी है।

मनरेगा – मनरेगा ने ग्रामीण समाज की आर्थिक व सामाजिक स्थिति में जबर्दस्त बदलाव किया है। 2006 में जब महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम कार्यक्रम शुरु किया गया तब शायद ही किसी ने सोचा होगा कि इसका भारतीय ग्रामीण समाज पर इतना व्यापक असर पड़ेगा। 2006 से लेकर अब तक 163754.41 करोड़ रूपये की राशि कामगारों परिवार को मजदूरी के रूप में दी गई है।

इतने बडे पैमाने पर अर्थ ग्रामीण के पास गया है अब तक 1657.45 करोड़ श्रम दिवसों के रोजगार का सृजन हुआ है। वर्ष 2008 से हर वर्ष औसतन 5 करोड़ ग्रामीण परिवारों को मजदूरी प्राप्त हुआ है। 31 मार्च 2014 तक अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की भागीदारी 48 प्रतिशत रही है। इसका यह आशय है कि ग्रामीणों के आर्थिक विकास में इजाफा हुआ है। इस योजना के शुरु होने से लेकर अब तक 260 लाख कार्य शुरु किये गए है।

राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन – राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन ग्रामीण विकास मंत्रालय का दूसरा सबसे बड़ा कार्यक्रम है और इसका उद्देश्य वर्ष 2021–22 तक 8–10 करोड़ गरीब ग्रामीण परिवारों को स्वसहायता समूह और ग्रामीण तथा इससे उपर के स्तरों के संघों में संघटित करके लाभान्वित करना है। इस योजना ने विकलांग व्यक्तियों, बुजुर्गों अत्यधिक कमजोर जनजातीय समूहों, बंधुआ मजदूरों, मैला ढोने वालों, अनैतिक मानव व्यापार पीड़ितों जैसे समाज में सर्वाधिक उपेक्षित व कमजोर समुदायों तक के लोगों को लाभ पहुँचाया है तथा गाँवों में आजीविका की सहायता से लगभग 1.58 लाख युवाओं ने अपने उद्योग स्थापित कर लिया है। 24.5 लाख महिलाओं व किसानों को भी सहायता प्राप्त हुई।

इंदिरा गाँधी आवास योजना – इस योजना का मुख्य उद्देश्य था कि गरीबी से जूझ रही ग्रामीण जनता को रहने के लिए आवास की व्यवस्था की जा सके। सभी के लिए आश्रय को उस समय पर बल मिला जब भारत ने जून 1999 में मानव बस्ती संबंधी इस्तांबुल घोषणा पर हस्ताक्षर करके यह स्वीकार किया कि सुरक्षित स्वास्थ्यवर्धक आश्रय तथा आधारभूत सेवाओं की उपलब्धता व्यक्ति के शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और आर्थिक कल्याण के लिए बेहद जरूरी है। इसी को ध्यान में रखकर ग्रामीण आवास उपेक्षितों के लिए किया जाने वाला प्रमुख गरीबी उपशमन उपाय है।

सर्वप्रथम 1985–86 में ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम की एक उपयोजना के रूप में इंदिरा आवास योजना आरम्भ हुई जिसे 1 अप्रैल 1989 से जवाहर रोजगार योजना की उपयोजना के रूप में जारी रखा गया। 1 जनवरी 1996 से इंदिरा आवास योजना को जवाहर रोजगार योजना से अलग कर दिया गया है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति/जनजाति गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन कर रहे ग्रामीण लोगों को नि:शुल्क आवास उपलब्ध कराना है। योजना के अन्तर्गत मैदानी क्षेत्रों में

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
* शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुरा, जिला नीमच (म.प्र.) भारत

निर्माण हेतु सहायता की सीमा 35000 रुपये प्रति इकाई पहाड़ी/दुर्गम क्षेत्रों में 38500 रुपये प्रति इकाई तथा सभी क्षेत्रों में रहने योग्य कच्चे मकान को पक्का/सेमी पक्का बनाने के लिए 15000/– रुपये इकाई रखी गई है। इस योजना के अन्तर्गत कुल निर्मित मकानों का 3 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले निर्धनता रेखा के नीचे रहने वाले विकलांग एवं मानसिक रूप से पीड़ित व्यक्तियों के लिए आरक्षित किया गया है। योजना के अन्तर्गत मकान आवंटन लाभार्थी परिवार की महिला सदस्य के नाम अथवा पति–पत्नि के संयुक्त नाम पर किया जाता है।

ग्रामीण आवास की ऋण सह–सब्सिडी योजना – इस योजना का आरम्भ 1 अप्रैल 1999 से हुआ और इसमें 32000 रुपये तक की वार्षिक आय वाले ग्रामीण परिवारों को लक्षित लाभार्थियों में सम्मिलित करने का प्रावधान है। इस योजना में सब्सिडी राशि में केन्द्र व राज्यों की हिस्सेदारी 75:25 है और ऋण भाग व्यापारिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों एवं आवास वित्त संस्थाओं द्वारा बांटा जाता है।

प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना – ग्रामीण आवास ग्राम स्तर पर लोगों के स्थायी निवास को विकसित करने तथा ग्रामीण गरीबों की बढ़ी हुई आवास आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह योजना चलाई जा रही है।

ऋण सहित अनुदान योजना – इस योजना के अंतर्गत उन ग्रामीण परिवारों को जिनकी वार्षिक आय 32000 रुपये तक है, को 10000 रुपये तक की सब्सिडी तथा 40000 रुपये का अधिकतम ऋण प्रदान किया जाता है, जो इंदिरा आवास योजना के पात्र होते है। यह सभी को प्रदान नहीं की जाती है। यह किसी शर्तों पर दिया जाता है जो उन शर्तों को पूर्ण करता हो उन्हें इंदिरा आवास योजना का लाभ मिलता है।

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (पीएमजीएसवाई) – संविधान में राष्ट्रीय राजमार्ग को छोड़कर अन्य सड़क राज्य सूची में है। फिर भी राज्यों को सहायता देने के लिए भारत सरकार ने गरीबी उपशमन कार्यनीति के अंतर्गत केन्द्रीय प्रायोजित योजना के रूप में 25 दिसम्बर 2000 को प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना की शुरुआत की थी। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य कोर नेटवर्क में शामिल तथा सड़क मार्ग से ना जुड़े 500 तथा उससे अधिक जनसंख्या वाले सभी पात्र गाँवों को बारहमासी सड़कों को जोड़ना था। पर्वतीय राज्यों (पूर्वोत्तर, सिक्किम, हिमाचल प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर तथा उत्तराखण्ड), मरूभूमि क्षेत्रों (मरूभूमि विकास कार्यक्रम में यथा निर्धारित), जनजातीय (अनुसूची–5) क्षेत्रों तथा पिछड़े जिलों (गृह मंत्रालय और योजना द्वारा निर्धारित) में 250 तथा उससे अधिक बसाहटों को सड़क से जोड़ने का उद्देश्य रखा गया। अब देश में ऐसी सड़कों को 399979 कि.मी. का नेटवर्क है। 31 मार्च 2014 97838 बसाहटों की सड़कों से जोड़ा गया है। 248919 कि. मी. की नयी सडकों का निर्माण किया गया। 2015–16 में यह 4983579 कि.मी. की लम्बाई हो गई है। इस प्रकार ग्रामीणों के आर्थिक विकास में प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना से आवागमन, माल डोना, स्वास्थ्य आदि से राहत मिलने लगी है। पहले की तुलना में अब आर्थिक परिवर्तन से आर्थिक विकास में इजाफा हुआ है।

ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम – स्वस्थ जीवन के लिए स्वच्छता आवश्यक है। इसको दृष्टिगत रखते हुए सरकार ने ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम का ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के अंतर्गत पर्याप्त महत्व प्रदान किया है। केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के अंतर्गत व्यक्तिगत स्वच्छता, आवास स्वच्छता, जल स्वच्छता, कुड़ा तथा जल–मल निस्तारण आदि को सम्मिलित किया गया है। ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के एक महत्वपूर्ण अवयव के रूप में सरकार द्वारा गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन करने वाले परिवारों को निजी तौर पर तथा ग्राम स्तर पर स्त्रियों के लिए शौचालयों के निर्माण हेतु अनुदान राशि प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य कार्यक्रमों के प्रति लोगों में जागरूकता उत्पन्न करने की दृष्टि से व्यापक प्रचार एवं प्रसार कार्यक्रम चलाएँ जा रहे है।

केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम – ग्रामीण क्षेत्रों में राज्य सरकारों की पूरक एजेन्सी के रूप में केन्द्र सरकार द्वारा वर्ष 1986 से केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम चलाया जा रहा है। इसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र के लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाना, महिलाओं की गोपनीयता व प्रतिष्ठा कायम रखना तथा दूषित जल एवं गंदगी से होने वाली बीमारियों से ग्रामीणों की रक्षा करना।

केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम को वर्ष 1999 में नए सिरे से तैयार किया गया जिसका उद्देश्य ग्रामीण गरीबों को पर्याप्त स्वच्छता सुविधाएँ उपलब्ध कराना, स्वास्थ्य शिक्षा के बारे में जागरूकता बढ़ाना मौजूदा सभी शुष्क शौचालयों को कम लागत के सुलभ शौचालयों में परिवर्तित कर सिर पर मैला ढ़ोने की समस्या का उन्मूलन करना है।

वर्तमान में केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के अन्तर्गत सम्पूर्ण स्वच्छता कार्यक्रम चलाया जा रहा है। जिलों में केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों, संघ शासित सरकारों की सहायता से सम्पूर्ण स्वच्छता कार्यक्रम चलाया जाता है। जिसे बाद में देश के समस्त जिलों तक विस्तृत किया जाऐगा। सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान के घटकों में आरम्भिक गतिविधियाँ व्यक्तिगत पारिवारिक शौचालय, सामुदायिक स्वच्छता परिसर, विद्यालय स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा, आंगनबाड़ी शौचालय, ग्रामीण स्वच्छता बाजार एवं उत्पादन केन्द्र तथा प्रशासनिक शुक्ल के रूप में वैकल्पिक सुपुर्दगी प्रक्रिया शामिल है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना – 2 फरवरी 2006 से प्रारम्भ इस योजना के अन्तर्गत देश के सभी जिलों के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक परिवार के वयस्क सदस्य को वर्ष में न्यूनतम 100 दिन अकुशल श्रम वाले रोजगार प्राप्त करने का कानूनी अधिकार है। योजना का 33 प्रतिशत लाभ महिलाओं को मिलेगा। काम के बदले अनाज योजना व सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना का विलय इस नई योजना में कर दिया गया है। योजना के अन्तर्गत रोजगार के इच्छुक एवं पात्र व्यक्ति द्वारा पंजीकरण कराने के 15 दिन के भीतर रोजगार नहीं दिए जाने पर निर्धारित दर से बेरोजगारी भत्ता केन्द्र सरकार द्वारा दिए जाने का प्रावधान है।

ग्रामीण रोजगार अवसर कार्यक्रम – अप्रैल 1995 से ग्रामीण क्षेत्रों तथा छोटे कस्बों में 20000 तक की जनसंख्या में परियोजनाएँ लगाने और रोजगार के अधिक अवसर पैदा करने के लिए यह कार्यक्रम खादी और ग्रामोद्योग मंत्रालय द्वारा संचालित है। योजना के लाभ मांस प्रसंस्करण, तम्बाकू उत्पादन, फसलों की खेती, पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न करने वाली परियोजनाओं आदि जैसी नकारात्मक सूची में शामिल क्षेत्रों को छोड़कर अधिकतम 25 लाख रूपये की परियोजनाओं के लिए सभी व्यक्तियों, संस्थानों/संस्थाओं/ न्यासों/ लिमिटेड कम्पनियों को उपलब्ध है। लाभार्थी को परियोजना लागत का 10 प्रतिशत अपने अंशदान के रूप में लगाना होता है।

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) – देश में कृषि एवं ग्रामीण वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए और साथ ही विभिन्न वित्तीय संस्थाओं के क्रियाकलापों में उचित समन्वय स्थापित करने के लिए 12 जुलाई 1982 को राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की

स्थापना की गई। नाबार्ड का भारतीय रिजर्व बैंक से सीधा सम्बन्ध है। नाबार्ड की प्रारम्भिक चुकता पूँजी 100 करोड़ रूपये थी जिसमें भारत सरकार और रिजर्व बैंक का समान योगदान रहता है। वर्ष 1996-97 में इसे बढ़ाकर 1000 करोड़ रूपये कर दिया गया था। जिसमें RBI का योगदान 800 करोड़ रूपए तथा केन्द्र सरकार का योगदान 200 करोड़ रूपये था। 31 मार्च 2016 को नाबार्ड वर्ष 2000 करोड़ रूपये की चुकता पूंजी थी, जिसमें 72.5 प्रतिशत हिस्सेदारी रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की है। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया ने नाबार्ड की केवल एक प्रतिशत हिस्सेदारी अपने पास रखी है। अत: अब नाबार्ड की इक्विटी में केन्द्र सरकार व रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की हिस्सेदारी क्रमश: 99 प्रतिशत व 1 प्रतिशत रह गई है। नए ऋणों को बढ़ावा देने के लिए नाबार्ड की चुकता पूंजी में चरणबद्ध तरीके से 3000 करोड़ रूपये वृद्धि की घोषणा 2010-11 के बजट प्रस्तावों के अन्तर्गत सरकार द्वारा की गई है। इसके फलस्वरूप नाबार्ड की चुकता पूंजी 5000 करोड़ रूपये की जो जायेगी।

नाबार्ड के कार्य – कृषि साख संस्थाओं को एक छाते के नीचे लाकर अल्पकालीन, दीर्घकालीन, मध्यकालीन और दीर्धकालीन ऋणों की व्यवस्था करना। समन्वित ग्रामीण विकास को प्रोद्योत करने तथा सभी प्रकार के उत्पादन और विनियोग के लिए एक पुनर्वित्त संस्थान के रूप में कार्य करना। सहकारी ऋण समितियों की हिस्सा पूंजी में योगदान देने के लिए राज्य सरकारों को 20 वर्ष की लम्बी अवधि तक के लिए दीर्धकालीन ऋण देना। विकेन्द्रित क्षेत्रों के विकास के लिए केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, योजना आयोग एवं अन्य संस्थानों की क्रियाओं का उचित समन्वय करना। प्राथमिक सहकारी बैंकों को छोड़ कर अन्य सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का निरीक्षण करना। अनुसंधान एवं विकास निधि बनाकर कृषि एवं ग्रामीण विकास में शोध को प्रोत्साहित करना।

ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि – 1 अप्रैल 1995 से नाबार्ड में ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि स्थापित की गई। जिसका मुख्य उद्देश्य राज्य सरकारों को सिंचाई, बाढ़ से बचाव, ग्रामीण सड़क और पुल से संबंधित मूलभूत परियोजनाओं को पूरा करने में सक्षम बनाने के लिए निधियों को उपलब्ध कराना है। ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि की कुल राशि में प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के लक्ष्य के अधीन उनके कृषि को उधार में होने वाली कमी की मात्रा तक निवल बैंक ऋण के अधिकतम 1.5 प्रतिशत की शर्त पर अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों द्वारा अंशदान किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतियोगिता साहित्य, यू.जी.सी. नेट अर्थशास्त्र द्वितीय पेपर 2003
2. आशुतोष कुमार सिंह, कुरुक्षेत्र, दिसम्बर 2015
3. उपयोगिता साहित्य सीरिज, अर्थशास्त्र।
4. उपयोगिता साहित्य बजट, अर्थशास्त्र नेट बुक।
5. महेन्द्र जैन, प्रतियोगिता दर्पण (2016) सम साहित्य वार्षिकी, भारतीय अर्थव्यवस्था।
6. म. प्र. पंचायती राज, सितम्बर (2015), पंचायतों की मासिक पत्रिका।

****

भारत में वन सम्पदा समस्याएं एवं समाधान

डॉ. सुनीता बाथरे *

प्रस्तावना – किसी देश का आर्थिक विकास उस देश के प्राकृतिक साधनों व भौगोलिक स्थिति पर निर्भर करता है। वन संसाधन प्राकृतिक संसाधनों का एक भाग है। एक देश की जलवायु, उसकी वनस्पति, खेतों की पैदावार, वहां के निवासियों की आवश्यकताएं, उनका व्यवसाय, रहन–सहन, कार्यक्षमता देश के आर्थिक विकास पर प्रभाव डालती है। एक देश के धरातल एवं जलमार्गों पर परिवहन के साधनों पर भी विकास निर्भर होता है। भूमि और वनों का भी आर्थिक विकास में महत्व है। वनों से–ईधन, इमारती लकड़ी, गोंद, लाख, रबड़, जड़ी बूटिया, आदि अनेक वस्तुएँ मिलती हैं। वनों से जलवायु समशीतोष्ण हो जाती है व भूमि का कटाव रूक जाता है। पशुओं को चारा मिल जाता है। सरकार को राजस्व मिलता है। वन देश की जलवायु को उचित बनाए रखते हैं। रेगिस्तान को रोकते हैं। प्राकृतिक सोंदर्य को बढ़ाते हैं। महान दार्शनिक सुकरात ने ग्रीकवासियों को वनों और पहाड़ों की वनस्पति के विनाश के घातक परिणामें से आगाह किया था, जो इस बात का प्रमाण है कि वन देश के लिए महत्वपूर्ण है। पं. जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में–'उगता हुआ पेड़ प्रगतिशील राष्ट्र का प्रतीक है'।

वनों से हम आक्सीजन, पानी, भोजन, जलवायु, भू–क्षरण को रोकने की क्षमता ओर लकड़ी प्राप्त करते हैं। वृक्ष लगाना न केवल आर्थिक दृष्टि से वरन् पर्यावरण की शुद्धि की दृष्टि से भी आवश्यक हैं। वनों से मानव जीवन की रक्षा होती है। विद्धानों का कहना है कि–'यदि वृक्षों की कटाव का वर्तमान सिलसिला बना रहा तो शीघ्र ही वातावरण में प्राणवायु (ऑक्सीजन) की कमी हो जाऐगी।'

विशेषतायें – भारतीय वन एक सम्पत्ति हैं इसलिए इनको वन संपत्ति का नाम दिया गया है जो–

- भारत में वन सम्पत्ति का क्षेत्रफल कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 24.01 प्रतिशत है जो विश्व के वन क्षेत्रफल का 2 प्रतिशत है।
- प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र 0.11 हेक्टेयर है।
- विभिन्न प्रकार के वन पाए जाते मुख्य वन वस्तुएं–चंदन, सागोन, आम, सेमल सनोवट, धूप, सुन्दरी, हल्दू आदि। सहायक वन वस्तुओं में बाँस, बेंत, लाख, गोंद, रबड़, चमड़ा रंगने के पदार्थ, कत्था, राल, लुग्दी, हाथी दांत, जड़ी–बूटी व दवाईयां व चंदन, महुआ, आदि।
- वनों का वितरण एक समान नहीं है।
- वनों में कड़ी लकड़ी के वृक्ष अधिक पाऐ जाते है।
- यह वन हिमालय पर्वत तथा पश्चिमी ओर पूर्वी घाट पर बहुत पाऐ जाते है।
- मानसूनी या पतझड़ वनों में एक बार पतझड़ अवश्य होता है।

भारत के वनाच्छादन क्षेत्र में वृद्धि–भारतीय वन सर्वेक्षण की ताजा रिपोर्ट के अनुसार भारत के वनाच्छादन में 5,871 वर्ग कि.मी. की वृद्धि हुई है। इसमें सर्वाधिक वृद्धि (64 प्रतिशत) पं. बंगाल में हुई है। रिर्पोट के अनुसार बंगाल के वनाच्छादन में 3,810 वर्ग कि.मी. की हुई। जबकि ओड़िशा और केरल में यह वृद्धि क्रमश: 1,444 कि.मी. और 622 वर्ग कि.मी. दर्ज की गई है। पश्चिम बंगाल का जनसंख्या घनत्व अत्याधिक होने के कारण वहां के कुल क्षेत्रफल का 18.93 प्रतिशत भाग ही वनाच्छादित है।

राज्य जहाँ वनाच्छादन में वृद्धि (वर्ग कि.मी. में) (सारणी देखे अगले पृष्ठ पर)

वनाच्छादन में सर्वाधिक वृद्धि वाले राज्य

पं.बंगाल	ओडिशा	केरल
3,810	1,444	6,22

वनाच्छादन में परिवर्तन के आकलन के लिए इस्तेमाल किए गए उपगृह आधारित रिमोट सेंसिंग डाटा के अनुसार तीन वर्ष पहले (वर्ष 2013 में) किए गए आकलन की तुलना में अत्याधिक घने (Very Dense) वनाच्छादन में 31 वर्ग कि.मी. की वृद्धि दर्ज की गई जबकि सामान्य धना (Moderately Dense) वनाच्छादन में 1,99 वर्ग कि.मी. आगे मुक्त वन (open Forests) में 7,891 वर्ग कि.मी. की वृद्धि दर्ज की गई। जो पूरे देश में 5,871 वर्ग कि.मी. है।

भारतीय वन प्रदेश की विश्व के अन्य देशों से तुलना की जाए तो यह–

विश्व के अन्य देशों में पाऐ जाने वाले वनों का क्षेत्रफल

देश	प्रतिशत
जापान	64.4
स्वीडन	55
रूस	45.2
अमेरिका	25
भारत	24.01

समस्याएं–

- वनों का क्षेत्रफल विश्व के अन्य देशों की तुलना में कम 24.01 है।
- वनों का ऊंचे पहाड़ों पर होना।
- वनों का असमान वितरण–मिजोरम, नागालैण्ड, अरूणाचल प्रदेश, जम्मू व कश्मीर में अधिक व अन्य राज्यों में कम।
- वन क्षेत्रों तक पहुंचने हेतु सड़के/परिवहन की उचित व्यवस्था नहीं।
- वनों से लकड़ी काटने हेतु परंपरागत तकनीक का प्रयोग।
- शहरीकरण के कारण गांव से जनसंख्या का शहरों में पलायन व जनसंख्या बढ़ने से जंगलों की कटाई।
- वनों से लकड़ी प्राप्त करने के लिए वनों को काटा जा रहा।

सुझाव – वनों के क्षेत्रफल विस्तार हेतु कृषि विभाग को न्यूनतम क्षेत्र का निर्धारण करना चाहिए।

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) पं. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

- वन महोत्सव का प्रचार–प्रसार।
- फार्म वृक्षारोपण को प्रोत्साहन।
- सकड़े, नहर व रेलवे लाइनों के दोनों ओर वृक्षारोपण।
- हर बच्चे के लिए पेड़ लगाना अनिवार्य किया जाए।
- परिवहन संबंधी कठिननियों को दूर करना चाहिए।
- लकड़ी काटने की परंपरागत तकनीक के स्थान पर नवीनतम आधुनिक तकनीक का विकास।
- वनों की कटाई पर नियंत्रण हेतु प्रभावकारी कानून सभी–राज्य में है–क्रियान्वयन ठीक से नहीं हो रहा व अपराधी व्यक्ति को सजा दी जाए।
- सरकार को वनों में पशुओं की मुफ्त चराई पर रोक लगानी चाहिए व रोकथाम की उचित व्यवस्था करना चाहिए।

अत: आवश्यकता इस बात कि है कि वनों के संरक्षण के साथ–साथ नागरिकों को जागरूक होना आवश्यक हैं, तभी वनों का विकास संभव है। वन मिट्टी के कटाव को रोकते हैं, वरन् जलवायु सम करते है, बाढ़ नियंत्रण में सहायक व रेगिस्तान के प्रसार पर रोक, वर्षा में सहायक होते, देश की रक्षा करते, प्राकृतिक सौंदर्य में वृद्धि होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था–लाल एवं पुरी।
2. भारतीय अर्थव्यवस्था–पंत एवं मिश्रा।
3. योजना (मासिक पत्रिका)।
4. इंटरनेट।
5. दैनिक भास्कर (समाचार पत्र)।
6. पत्रिका (समाचार पत्र)।

राज्य जहाँ वनाच्छादन में वृद्धि (वर्ग कि.मी. में)

राज्य	भौगोलिक क्षेत्र	वनाच्छादन 2011	वनाच्छादन 2013	वृद्धि
केरल	38,863	17,300	17,922	622
बिहार	94,163	6,845	7,291	446
गुजरात	1,96,022	14,619	14,653	34
झारखंड	79,714	22,927	23,473	496
ओडिशा	15,5707	48,903	50,347	1,444
पं.बंगाल	88,752	12,995	16,805	3,810

****

Indian Constitution and Reservation Policy

Dr. Sulekha Mishra * Nisar Ahmad Nengroo **

Abstract - Reservations in favour of Backward Classes (BCs) were introduced long before independence in a large area, comprising the Presidency areas and the Princely states south of the Vindhyas. In 1882, Hunter Commission was appointed. Jyotirao Phule made a demand of free and compulsory education for all along with proportionate representation in government jobs. In 1891, there was a demand for reservation of government jobs with an agitation (in the princely State of Travancore) against the recruitment of *non-natives* into public service overlooking qualified *native* people.In 1901,reservations were introduced in Maharashtra (in the Princely State of Kolhapur) by Shahu Maharaj. Chatrapati Sahuji Maharaj, Maharaja of Kolhapur in Maharashtra introduced reservation in favour of non-Brahmin and backward classes as early as 1902. He provided free education to everyone and opened several hostels in Kolhapur to make it easier for everyone to receive the education. He also made sure everyone got suitable employment no matter what social class they belonged. He also appealed for a class-free India and the abolition of untouchability. The notification of 1902 created 50% reservation in services for backward classes/communities in the State of Kolhapur. This is the first official instance (Government Order) providing for reservation for depressed classes in India. However, the theme of reservations has figure importantly in open debates constantly since the recommendations of the Mandal Commission Report were sought to be implemented in 1991 nearby has been extremely tiny discussion by the beneficiaries of reservations. This paper looks at some of the more important chronological, constitutional and lawful moments in the development of a reservations procedure in India.

Keywords - Reservation, Discrimination, Constitution, Law, Untouchability.

Introduction - The spirit of equality pervades the provisions of the Constitution of India, as the main aim of the founders of the Constitution was to create an egalitarian society wherein social, economic and political justice prevailed and equality of status and opportunity are made available to all. However, owing to historical and traditional reasons, certain classes of Indian citizens are under severe social and economic disabilities so that they cannot effectively enjoy either equality of status or of opportunity. Therefore the Constitution accords to these weaker sections of society protective discrimination in various articles, including Article 15(4). This clause empowers the state, notwithstanding anything to the contrary in Articles 15(1) and 29(2), to make special reservation for the advancement of any socially and educationally backward classes of citizens or for scheduled castes and scheduled tribes.

Cast based reservation system in India - An ordinary form of long-ago discrimination, inside humankind in India is the carry out of untouchability. Scheduled Castes (SCs) are the main targets of this medieval put into practice a practice which is banned by the Constitution of India (Basu, Durga Das (2008) an untouched human being is measured, contaminated or a lesser human. Though during the Vedic period a person's 'Varna' (not 'caste') was clear by his/ her socio-economic duties these duties were either of your own accord performed or were assigned by the local superintendent , and 'varna' was originally not clear by one's birth into any exacting family. Nevertheless, over the years Caste has been defined by one's birth. The most important stated aim of the Indian reservation system is to boost the opportunities for improved social and instructive position of the underprivileged communities and, thus, allow them to take their equitable place in the conventional of Indian society. The reservation scheme exists to provide opportunities for the members of the SCs and STs to increase their representation in the State Legislatures, the executive appendage of the Union and States, the labor force, schools, colleges, and other 'public' institutions. (Financial Support", 0ct 2011) The Constitution of India states in Article 15(4): "All citizens shall have equal opportunities of receiving education. Nothing herein contained shall preclude the State from providing special facilities for educationally backward sections (not "communities") of the population." [Emphasis and parentheses added. It also states that "The State shall promote with special care the educational and economic interests of the weaker sections of society (in particular, of the scheduled castes and aboriginal tribes), and shall protect them from social ''injustice'' and all forms of exploitation." The Article further states that nothing in Article 15(4) will prevent the nation from helping SCs and STs for their

* Professor & Head, Govt. M.K.B College, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Research Scholar, R.D.V.V, Jabalpur (M.P.) INDIA

betterment ['betterment' up to the level enjoyed by the average member of other communities.(Laskar, Mehbubul Hassan 2011)

In 1982, the Constitution specified 15% and 7.5% of vacancies in public sector and government-aided educational institutes as a quota reserved for the SC and ST candidates respectively for a period of five years, after which the quota system would be reviewed. This period was routinely extended by the succeeding governments. The Supreme Court of India ruled that reservations cannot exceed 50% (which it judged would violate equal access guaranteed by the Constitution) and put a cap on reservations. However, there are state laws that exceed this 50% limit and these are under litigation in the Supreme Court. For example, the caste-based reservation stands at 69% and the same is applicable to about 87% of the population in the State of Tamil Nadu. In 1990, Prime Minister V. P. Singh announced that 27% of government positions would be set aside for OBC's in addition to the 22.5% already set aside for the SCs and STs.(The Struggle for Equality in India 2002)

Constitutional Provisions - The exact necessities for the reservation in services in favour of the members of the SC/ STs have been made in the Constitution of India. They are as follows: Article 15(4) and 16(4) of the Constitution enabled both the state and Central Governments to reserve seats in public services for the members of the SC and ST, thereby, enshrining impartiality of opportunity in matters of civic service. Article 15(4) states that: "Nothing in this Article shall prevent the State from making any provision for the reservation of appointments or posts in favour of any backward class or citizens, which, in the opinion of the State, is not adequately represented in the services under the State." Article 16(4 A) states that: "Nothing in this article shall prevent the State from making any provisions for reservation in the matter of promotion to any class or classes of posts in the services under the State in favour of SCs and STs which in the opinion of the State are not adequately represented under the State" (Constitutional 77th Amendment, - Act, 1995). Article 16 (4 B) states that: "Nothing in this article shall prevent the State from considering any unfilled vacancies of a year which are reserved for being filled up in that year in accordance with any provision for reservation made under clause (4) or clause (4A) as a separate class of vacancies to be filled up in any succeeding year or years and such class of vacancies shall not be considered together with the vacancies of the year in which they are being filled up for determining the ceiling of fifty percent reservation on total number of vacancies of that year" (Constitutional 81st Amendment, - Act, 2000). The Constitution prohibits discrimination (Article 15) of any citizen on grounds of religion, race, caste, etc.; untouchability (Article 17); and forced labour (Article 23). It provides for specific representation through reservation of seats for the SCs and the STs in the Parliament (Article 330) and in the State Legislative Assemblies (Article 332), as well as, in Government and public sector jobs, in both the federal and state Governments (Articles 16(4), 330(4) and 335).

Impact of reservation policy on employment and education - Impact of reservation policy on employment and education. As may be evident from the particulars in the earlier paragraphs, the strategy of reservation had a helpful effect in conditions of induction of scheduled castes, scheduled tribes and other backward classes into public sector employment and in educational institutions. However, their accessible share in employment and educational institutions still falls short of the target in certain categories of jobs and higher education. The target in the case of Groups D and C are close to the population mark of 15 per cent for scheduled castes and 7.5 % for scheduled tribes but fall short in Groups A and B. As against this, the true position regarding the representation of other backward classes in central services is not available. However, as stated in para 6.4, in the All India Services and central services for which employment is made through the Union Public Service Commission, representation of other backward classes is very near to their share. With the growth in the share of scheduled castes and scheduled tribes in public services, it had positive multiple effects on the social and economic situation of these two disadvantaged groups. The data provided by the ministry of personnel indicates that in recent years the vacancies reserved for the scheduled castes, scheduled tribes and other backward classes are being filled fully even in the „elite services at the centre. 8.3. Reservation did not provide equal opportunities within each group/ community to all beneficiaries. Consequently, different castes and tribes within a group/community have not benefited from reservation equally. Almost in all categories of beneficiaries among scheduled castes, scheduled tribes or other backward classes and minorities, there is a growing sense of deprivation amongst different categories, which is leading to internal dissension. For example*, in Punjab, the Valmiki Samaj is asking for a separate quota of reservations on the ground that Ramadasis and Mazbis have cornered the benefits. Likewise, Chamars in Uttar Pradesh and Mahars in Maharashtra are said to have benefited from the reservations more than other castes identified in the schedule from these regions. Similar accusations have been made against the Meena community by other scheduled tribes. Problems of this kind are manifold in the case of other backward classes, as in each state there are dominant groups, usually with economic and political clout, who reap the benefits of reservations. There are Ezhavas in Kerala, Nadars and Thevars in Tamil Nadu, Vokkalligas and Lingayats in Karnataka, Lodhs and Koeris in Central India, Yadavs and Kurmis in Bihar and Uttar Pradesh and Jats in Rajasthan, which, despite their dominant status, have been clubbed as backward classes eligible for benefits under reservations. For these reasons, reservation has become a contentious issue today, more so when it is applied to other backward classes. Report on Workshop, „Assessment of the impact of reservation policy , organized by JNU, New Delhi. Reservation for minorities has been provided by the state

governments of Kerala and Karnataka. [Kerala provides 10 per cent reservation in educational institutions and 12 per cent reservation in employment for Muslims as well as two per cent reservation in educational institutions and four per cent reservation in employment for Christians/LCs/Anglo-Indians. Karnataka provides four per cent reservation in educational institutions and four per cent reservation in employment for Muslims.] The government of Andhra Pradesh also passed an act pro- viding five per cent reservation for Muslims. However, this has been turned down by the apex court for want of specific recommendations by the state Backward Classes Commission. On March 25, 2010 the Supreme Court gave an interim order up- holding the validity of four per cent reservation provided to backward members of the Muslim community in the situation. A bench comprising Chief Justice KG Balakrishnan and Justices JM Panchal and BS Chauhan however referred the issue to a Constitution bench to examine the validity of the impugned act, since it concerned vital issues of the Constitution. (Reservation as a welfare measure, communalism combat 2010)

Statement of Problem - However the occupation reservation policy has three important flaws. First, it has a discriminatory bias alongside Muslims who do not advantage from such policies. Second, it emphasizes caste or tribe rather than income or wealth: The goal of reservation in India has been to bring about an improvement in the welfare who, historically, have been economically and socially depressed. But, in arriving at this judgment about who should be eligible for reservation, the criterion has been a person s caste rather than his income or wealth. Consequently, groups belonging to what Article 115 of the Indian Constitution calls "socially and educationally backward classes" have benefited from reservation even though, in practice, many of these groups could not be regarded as "backward". This has meant that many of the benefits of reservation have been captured by well-off groups from the depressed classes (for example, chamars from the SC) while poorer groups from the depressed (for example, bhangis from the SC) have failed to benefit. (Akash Shah, 2010)

Methodology - The methodology in this research study is not one-dimensional. It is rather host of historical, theoretical and analytical. The data is being collected from primary as well as secondary sources. Book, Journals and Magazines available in various libraries be the main source.

Review of literature - Dalmia, Vasudha; Sadana, Rashmi, eds. (2012). "The Politics of Caste Identity "So for this is concerned the mention may be made that reservation is necessary in the lower caste people because the people which are living in those sections are much more economically weak. Joshi, Barbara R. Untouchable!: voices of the Dalit liberation movement. Minority.As the name mentions the Untouchables where helpless in various matters such as schooling and taking part in various matters in which other people used to they were demanding reservation.

Conclusion - Now day s politicians are playing a major role in reservation policy. The reservation policy was only for 10 years after the independence, for upiftment of SC and ST but till now it is continue and no one has taken any step to amend it or revise it or to change it. The reason behind this is the population of SC and ST in country. Nearly 33% voting is done by SC and ST so now if they make any change in the reservation policy against the SC and ST then they have to suffer a lot for the same. So they are not taking any steps against the reseravation policy.

References :-

1. Bhattacharya, Amit. "Who are the OBCs?". Archived from the original on 27 June 2006. Retrieved 19 April 2006. Times of India, 8 April 2006.
2. Basu, Durga Das (2008). Introduction to the Constitution of India. Nagpur: LexisNexis Butterworths Wadhwa. p. 98. ISBN 978-81-8038- 559-9.
3. Chapter 3- An Assessment of Reservations (Pg 32)". News. Dalit Bahujan Media. Retrieved 17 Nov. 2011.
4. Financial Support". University Grants Commission, India. Retrieved 20 October 2011.
5. Laskar, Mehbubul Hassan. "Rethinking Reservation in Higher Education in India". ILI Law Review.
6. Education Safeguards". Department of Education. Government of India. Retrieved 27 November 2011.
7. Indra Sawhney And Ors. vs Union Of India (UOI) And Ors. on 8 August 1991. New Delhi: Supreme Court of India. 1991.
8. Ramaiah, A (6 June 1992). "Identifying Other Backward Classes" (PDF). Economic and Political Weekly. pp. 1203–1207. Archived from the original on 30 December 2005. Retrieved 27 May 2006.
9. Parliament of India. Retrieved 4 November 2011.
10. The Untouchables of India". Praxis. Retrieved 20 October 2011.

****

Digital India

Dr. Anil Kumar Jain *

Introduction - The Digital India Programme is a flagship programme of the Government of India with a vision to transform India into a digitally empowered society and knowledge economy.

In order to transform the entire ecosystem of public services through the use of information technology, the Government of India has launched the Digital India programme with the vision to transform India into a digitally empowered society and knowledge economy.

Programme Management Structure For Digital India Programme - The Programme management structure for the Digital India programme as endorsed by the Union Cabinet is as follow:

1. For effective management of the Digital India programme, the programme management structure would consists of a Monitoring Committee on Digital India headed by the Prime Minister, a Digital India Advisory Group chaired by the Minister of Communications and IT and an Apex Committee chaired by the Cabinet Secretary.
2. Key components of the Programme Management structure would be as follows:

a. Cabinet Committee on Economic Affairs (CCEA) for programme level policy decisions.

b. A Monitoring Committee on Digital India under the Chairpersonship of Prime Minister which will be constituted with representation drawn from relevant Ministries/ Departments to provide leadership, prescribe deliverables and milestones, and monitor periodically the implementation of the Digital India Programme.

c. A Digital India Advisory Group headed by the Minister of Communications and IT to solicit views of external stakeholders and to provide inputs to the Monitoring Committee on Digital India, advise the Government on policy issues and strategic interventions necessary for accelerating the implementation of the Digital India Programme across Central and State Government Ministries/Departments. The composition of the Advisory Group would include representation from the Planning Commission and 8 to 9 representatives from States/UTs and other Line Ministries/Departments on a rotational basis.

d. An Apex Committee headed by the Cabinet Secretary would be overseeing the programme and providing policy and strategic directions for its implementation and resolving inter-ministerial issues. In addition, it would harmonize and integrate diverse initiatives and aspects related to integration of services, end to end process re-engineering and service levels of MMPs and other initiatives under the Digital India Programme, wherever required.

e. Expenditure Finance Committee (EFC)/Committee on Non Plan Expenditure (CNE) to financially appraise/ approve projects as per existing delegation of financial powers. The EFC/ CNE headed by Secretary Expenditure would also be recommending to the CCEA the manner in which MMPs/ eGovernance initiatives are to be implemented, as well as the financial terms of participation for States. A representative of the Planning Commission would also be included in both the EFC and CNE.

f. A Council of Mission Leaders on Digital India headed by Secretary, DeitY would be established as a platform to share the best practices in various existing and new eGov initiatives under Digital India and also to sensitize various government departments about ICT projects of DeitY. While the inter-departmental, integration and interoperable issues of integrated projects / eGovernance initiatives would be resolved by the Apex Committee on Digital India headed by Cabinet Secretary, the technical issues of integrated projects would be resolved by the Council of Mission Leaders.

g. Institutional mechanism of Digital India at State level would be headed by State Committee on Digital India by the Chief Minister.State/UT Apex Committees on Digital India headed by Chief Secretaries would be constituted at State/UT level to allocate required resources, set priority amongst projects and resolve inter-departmental issues at State level.

3. For effective monitoring of Digital India, usage of Project Management Information System would be mandatory in each new and existing Mission Mode Projects to capture the real or near real time details about the progress of the project. This tool should be proficient enough to capture the parameters for each stage of project namely, conceptualization and development, implementation and post implementation. The parameters could be decided in consultation with various line Ministries / Departments and DeitY.
4. Since the “e-Kranti: National eGovernance Plan 2.0” is already integrated with Digital India Programme, the

*Asst. Professor (Political Science) Govt. Girls’ P.G. College, Ratlam (M.P.) INDIA

existing programme management structure established for National eGovernance Plan at both national and state level has also been decided to be integrated appropriately with the programme management structure being envisaged for Digital India Programme at national and State/UT level.

Vision Of Digital India - The vision of Digital India programme is to transform India into a digitally empowered society and knowledge economy. The Digital India programme is centred on three key vision areas:

Digital Infrastructure As A Utility To Every Citizen

1. Availability of high speed internet as a core utility for delivery of services to citizens
2. Cradle to grave digital identity that is unique, lifelong, online and authenticable to every citizen
3. Mobile phone & bank account enabling citizen participation in digital & financial space
4. Easy access to a Common Service Centre
5. Shareable private space on a public cloud
6. Safe and secure cyber-space

Governance & Services on Demand

1. Seamlessly integrated services across departments or jurisdictions
2. Availability of services in real time from online & mobile platforms
3. All citizen entitlements to be portable and available on the cloud
4. Digitally transformed services for improving ease of doing business
5. Making financial transactions electronic & cashless
6. Leveraging Geospatial Information Systems (GIS) for decision support systems & development

Digital Empowerment of Citizens

1. Universal digital literacy
2. Universally accessible digital resources
3. Availability of digital resources / services in Indian languages
4. Collaborative digital platforms for participative governance
5. Citizens not required to physically submit Govt. documents / certificates

Approach And Methodology For Digital India Programme

1. Ministries / Departments / States would fully leverage the Common and Support ICT Infrastructure established by GoI. DeitY would also evolve/ lay down standards and policy guidelines, provide technical and handholding support, undertake capacity building, R&D, etc.
2. The existing/ ongoing e-Governance initiatives would be suitably revamped to align them with the principles of Digital India. Scope enhancement, Process Reengineering, use of integrated & interoperable systems and deployment of emerging technologies like cloud & mobile would be undertaken to enhance the delivery of Government services to citizens.
3. States would be given flexibility to identify for inclusion additional state-specific projects, which are relevant for their socio-economic needs.
4. e-Governance would be promoted through a centralised initiative to the extent necessary, to ensure citizen centric service orientation, interoperability of various e-Governance applications and optimal utilisation of ICT infrastructure/ resources, while adopting a decentralised implementation model.
5. Successes would be identified and their replication promoted proactively with the required productization and customisation wherever needed.
6. Public Private Partnerships would be preferred wherever feasible to implement e-Governance projects with adequate management and strategic control.
7. Adoption of Unique ID would be promoted to facilitate identification, authentication and delivery of benefits.
8. Restructuring of NIC would be undertaken to strengthen the IT support to all government departments at Centre and State levels.
9. The positions of Chief Information Officers (CIO) would be created in at least 10 key Ministries so that various e-Governance projects could be designed, developed and implemented faster. CIO positions will be at Additional Secretary/Joint Secretary level with over-riding powers on IT in the respective Ministry.

Programme Pillars - Digital India is an umbrella programme that covers multiple Government Ministries and Departments. It weaves together a large number of ideas and thoughts into a single, comprehensive vision so that each of them can be implemented as part of a larger goal.

Digital India is to be implemented by the entire Government with overall coordination being done by the Department of Electronics and Information Technology (DeitY). Digital India aims to provide the much needed thrust to the nine pillars of growth areas, namely

Broadband Highways - This covers three sub components

1. Broadband for All - Rural
2. Broadband for All - Urban
3. National Information Infrastructure (NII)

Universal Access to Mobile Connectivity - As part of the comprehensive development plan for North East, providing mobile coverage to uncovered villages has been initiated. Mobile coverage to remaining uncovered villages would be provided in a phased manner.

The Department of Telecommunications will be the nodal department and project cost will be around '16,000 Cr during 2014-18.

Public Internet Access Programme - The two sub components of Public Internet Access Programme are Common Services Centres (CSCs) and Post Offices as multi-service centres.

Common Services Centres (CSCs) - CSCs would be strengthened and its number would be increased to 250,000 i.e. one CSC in each Gram Panchayat. CSCs would be made viable and multi-functional end-points for delivery of government and business services. DeitY would be the nodal department to implement the scheme.

Post Offices as multi-service centres - A total of 150,000

Post Offices are proposed to be converted into multi service centres. Department of Posts would be the nodal department to implement this scheme.

e-Governance: Reforming Government through Technology - Government Process Re-engineering using IT to simplify and make the government processes more efficient is critical for transformation to make the delivery of government services more effective across various government domains and therefore needs to be implemented by all Ministries/ Departments.

All databases and information should be in electronic form and not manual. The workflow inside government departments and agencies should be automated to enable efficient government processes and also to allow visibility of these processes to citizens. IT should be used to automate, respond and analyze data to identify and resolve persistent problems. These would be largely process improvements.

e-Kranti - Electronic Delivery of Services The National e-Governance Plan (NeGP) - The National e-Governance Plan (NeGP), takes a holistic view of e-Governance initiatives across the country, integrating them into a collective vision, a shared cause. Around this idea, a massive countrywide infrastructure reaching down to the remotest of villages is evolving, and large-scale digitization of records is taking place to enable easy, reliable access over the internet. The ultimate objective is to bring public services closer home to citizens, as articulated in the Vision Statement of NeGP.

All new and on-going eGovernance projects as well as the existing projects, which are being revamped, should now follow the key principles of e-Kranti namely 'Transformation and not Translation', 'Integrated Services and not Individual Services', 'Government Process Reengineering (GPR) to be mandatory in every MMP', 'ICT Infrastructure on Demand', 'Cloud by Default', 'Mobile First', 'Fast Tracking Approvals', 'Mandating Standards and Protocols', 'Language Localization', 'National GIS (Geo-Spatial Information System)', 'Security and Electronic Data Preservation'.

There are 44 Mission Mode Projects under e-Kranti, which are at various stages of implementation.

Information for All

Open Data platform facilitates proactive release of datasets in an open format by the ministries/departments for use, reuse and redistribution. Online hosting of information & documents would facilitate open and easy access to information for citizens.

Government shall pro-actively engage through social media and web based platforms to inform and interact with citizens. MyGov.in, a platform for citizen engagement in governance, has been launched by the Hon'ble Prime Minister on 26th July, 2014, as a medium to exchange ideas/ suggestions with Government. It will facilitate 2-way communication between citizens and Government to bring in good governance.

Online messaging to citizens on special occasions/ programs would be facilitated through emails and SMS.

Open Data platform, Social Media Engagement and Online Messaging would largely utilise existing infrastructure and would need limited additional resources.

Electronics Manufacturing - This pillar focuses on promoting electronics manufacturing in the country with the **target of NET ZERO Imports** by 2020 as a striking demonstration of intent. This ambitious goal requires coordinated action on many fronts, such as:

Taxation, incentives, Economies of scale, eliminating cost disadvantages, Focus areas – Big Ticket Items, FABS, Fab-less design, Set top boxes, VSATs, Mobiles, Consumer & Medical Electronics, Smart Energy meters, Smart cards, micro-ATMs, Incubators, clusters, Skill development, Enhancing PhDs, Government procurement, Safety Standards – Compulsory registration, Support for Labs and MSMEs, National Award, Marketing, Brand Building, National Centres – Flexible Electronics, Security Forces and R & D in electronics.

IT for Jobs - This pillar focuses on providing training to the youth in the skills required for availing employment opportunities in the IT/ITES sector. There are eight components with specific scope of activities under this pillar:

1. IT Trainings to people in smaller towns and villages
2. The target of this component is to train one crore students from smaller towns & villages for IT sector jobs over 5 years. DeitY is the nodal department for this scheme.
3. IT/ITES in Northeastern States
4. This component focuses on setting up BPOs in every north-eastern state to facilitate ICT enabled growth in these states. DeitY is the nodal department for this scheme.
5. Training Service Delivery Agents
6. The focus is on training three lakh service delivery agents as part of skill development to run viable businesses delivering IT services. DeitY is the nodal department for this scheme.
7. Training Rural Workforce on Telecom and Telecom related services
8. This component focuses on training of five lakh rural workforce the Telecom Service Providers (TSPs) to cater to their own needs. Department of Telecommunications (DoT) is the nodal department for this scheme.

Early Harvest Programmes - Early Harvest Programme basically consists of those projects which are to be implemented within short timeline. The projects under the Early Harvest Programme are as follows:

IT Platform for Messages, Government Greetings to be e-Greetings, Biometric attendance, Wi-Fi in All Universities, Secure Email within Government, Standardize Government Email Design, Public Wi-fi hotspots, School Books to be eBooks, SMS based weather information, disaster alerts, National Portal for Lost & Found children

References :-

1. DNA Webdesk (28 September 2015), Here's what you need to know about the Digital India initiative
2. https://en.wikipedia.org/wiki/Digital_India
3. http://www.digitalindia.gov.in/

Agricultural Schemes Initiated By Government : Evolution

Dr. Anil Kumar Jain *

Introduction - The Central Government has launched quite a number of social welfare schemes throughout the country. Some of those schemes are :

Kisan Vikas Patra - This is a saving certificate scheme which was launched in 1988 by Indian Post. It was successful in early months but afterwards a committee was set up under the supervision of Shayamla Gopinath (presently chairman of HDFC Bank) by the Government of India. It was closed in 2011 after the recommendation that it can be misused due to its flexibility and know-your-customer (KYC) requirement. However, the new Government re-launched it in 2014. It favours and meets the requirement of some farmers and it should be available to each and every farmer and they should be benefitted.

Kisan Vikas Patra can be purchased by :

1. An adult in his own name, or on behalf of a minor
2. A Trust
3. Two adults jointly

In 2014, new government relaunched this scheme :

1. The denomination available in Rs. 1000,5000,10000 & 50000.
2. The amount invested will be doubled in 100 months.
3. KVP would be giving a return of 7.8 % annually.
4. The maturity period is 2 years and 6 months.
5. The certificate is issued in single or joint names.

Krishi Ambani Bima Yojna - This scheme was launched with objective to give impetus dying to agricultural practice. If farmers bear any financial burden due to unexpected weather then this scheme will help them. Now this scheme is covered by **PM Fasal Beema Yojana**.

New Scheme removes the previous capping on premium so that farmers get full sum insured.

Farmers' contribution to premium reduced significantly. Multiple localized risks and post harvest losses taken into account to ensure that no farmer is alone in times of distress. Use of simple and smart technology through phones and remote sensing for quick estimation and early settlement of claims.

Gram Sinchai Yojna - Also known as **Pradhan Mantri Krishi Sinchai Yojana (PMKSY)** is a national mission to ensure better utilization and to improve farm productivity in the country. A budget of ₹ 500 billion in a time span of five years has been allocated to this scheme. The decision was taken on 1st July 2015 at the meeting of Cabinet Committee on Economic Affairs (CCEA), which in turn was headed by the Prime Minister, Shri Narendra Modi.

The primary aim is to attract investments in irrigation system at field level, development and expand cultivable land in the country, enhance ranch water use in order to minimize wastage of water, enhance crop per drop by implementing water saving technologies and precision irrigation. The plan additionally calls for bringing ministries, offices, organizations, research and financial institutions occupied with creation and recycling of water under one platform so that an exhaustive and holistic outlook of the whole water cycle is considered. The goal is to open the doors for optimal water budgeting in all sectors.

The motive of this scheme will be to take irrigation water to each and every agricultural field in the country. The scheme has amalgamated three on-going programmes of three different ministries-

(1) Accelerated irrigation benefit programme of the ministry of water resources.
(2) Integrated watershed management programme of the ministry of rural development.
(3) Farm water management component of the National Mission on Sustainable Agriculture.

The scheme has an allocation of Rs. 50,000 Crore for next five years.

Objectives :

1. Converge investments in irrigation at the farm level and provide end-to-end solution.
2. Har Khat Ko Pani, Enhance the physical access of water on the farm and expand cultivable area under assured irrigation.
3. Promotion of micro irrigation in the form of drips, sprinklers, pivots, rain –guns in the farm.
4. Per Drop more Crop.
5. Fund would be given to state as 75 % grant by central govt. But, for north –eastern state region funding pattern would be 90:10.

Saansad Adarsh Gram Yojna - It is a rural development programme which broadly focuses on the development in the villages for the poor and farmers which includes social

* **Asst. Professor (Political Science) Govt. Girls' P.G. College, Ratlam (M.P.) INDIA**

development, cultural development and spread motivation among the people on the social mobilization of the village community. This programme was launched on 11 October 2014 by The Prime Minister of India, Shri Narendra Modi on the birth anniversary of Jayaprakash Narayan.

Objective :

- The development of model village, called ADARSH GRAMS, through the implementation of existing schemes and certain new initiative to be designed for the local context, which may vary from village to village.
- Creating models of locals development which can be replicated in other village.
- Under this scheme each MP needs to choose one village from the constituently that they represent, expect their own village or their wife/husband village and fix parameters and make it model village by 2016.
- Under the scheme, PM Modi has adopted Nagpur village his constituency Varanasi in UP.
- No new funds are allocated to this Yojana and funds may be raised throudh-Indra Awas Yojana ,PM Gram Sadak Yojana ,MNREGA, MP Local Area Development scheme, Corporate Social Responsibility funds etc.

The feature that distinct in from other is that this programme is

(a) demand driven
(b) inspired by society
(c) based on people's participation.

The best strategy of this programme is that it empowers the Gram Panchayat's and people's institution with them. This scheme would be successful if implemented whole across the country with proper maintenance.

Soil Health Card Scheme - This scheme/program was launched by the Govt. of India in February 2015. Under this scheme, the Govt. plans to issue soil cards to the farmers according to their needs and crop wise and nutrients and fertilisers would be given in accordance of their crop. This will help them to increase their crop production and use manure, fertilisers judiciously. There will be special measures for the soil to increase the soil production.

1. The scheme aims balanced uses of fertilisers to enable farmers realize higher yields at low cost.
2. An amount of Rs. 568 crores was allocated by the govt. for the scheme.
3. The target for 2015-16 is to collect 100 lakh soil samples and test these for issue of soil health card.
4. The govt. plans to distribute 14 crore soil health cards by 2017.

Deen Dayal Upadhyaya Garmin Kaushlya Yojna - It is a Government of India youth employment scheme. It was launched by Union Minister Nitin Gadkari and Venkaiah Naidu on the occasion of 98th birth anniversary of Pandit Deendayal Upadhyaya on 25th September 2014. It aims to target youth, under the age group of 15-35 years. A corpus of Rs 1,500 crore and is aimed at enhancing the employability of rural youth. Under this programme, disbursements would be made through a digital voucher directly into the student's bank account as part of the government's skill development initiative. In my opinion these schemes/yojanas are a good for the farmers and they will reduce the deaths of farmers and these will support them at their best. There on will be more people engaged in agriculture and production will be increased as they would be provided with many more facilities.

References :-

1. https://en.wikipedia.org/wiki/Kisan_Vikas_Patra
2. http://www.narendramodi.in/pradhan-mantri-fasal-bima-yojana-a-boost-for-farmers-pm-399165
3. http://www.mapsofindia.com/my-india/government/pradhan-mantri-fasal-bima-yojana-highlights
4. http://www.saanjhi.gov.in/
5. https://en.wikipedia.org/wiki/Sansad_Adarsh_Gram_Yojana
6. https://en.wikipedia.org/wiki/Soil_Health_Card_Scheme
7. https://en.wikipedia.org/wiki/Deen_Dayal_Upadhyaya_Grameen_Kaushalya_Yojana

****

बंदी उत्पीड़न बनाम राष्ट्रीय सुरक्षा

डॉ. संजय कुमार मिश्रा *

प्रस्तावना 'अब विचारणीय प्रश्न यह है कि बंदीग्रह के उत्पीड़न को वास्तविक उत्पीड़न से अधिक न्यायसंगत माना जा रहा हैं, तथा इसे कानूनी जामा पहनाने की कोशिश की जा रही है, जो ठीक नही है। बंदीग्रह की यातना राज्य से नियंत्रित होती है जो सतत जारी रहती हैं।'

एक अध्ययन के अनुसार 1970-71 में उच्च शक्ति के संस्थान के एक विशेषज्ञ के द्वारा पुलिस कर्मचारी को उत्पीड़न के आधुनिक तरीके सिखाने का प्रशिक्षण देने को कहा गया। पुलिस अधिकारी, नौकरशाह एवं राजनीतिज्ञों ने बढ़ते हुए अपराधो पर नियंत्रण पाने के लिये उत्पीड़न को आवश्यक समझा। यद्यपि विजयकरण जैसे (दिल्ली के पूर्व पुलिस आयुक्त) काबिल अधिकारी ने उत्पीड़न को खुले आम एक सामाजिक बुराई बताई एवं ईमानदार अधिकारियों ने कोशिश की कि बंदीग्रह के उत्पीड़न को पूर्ण रूप से समाप्त कर लिया जाए, किन्तु अन्य पुलिस अधिकारियों ने तीसरे दर्जे के उत्पीड़न के तरीके को समाप्त करने के विचार को एक मजाक के रूप में लिया, इन लोगो ने निम्नलिखित आधार पर उत्पीड़न को आवश्यक समझा-

1. बढ़ते हुए अपराधों की तुलना में पुलिस फोर्स कम होती है, अपराधों को नियंत्रित करने के लिये तथा कानून को लागू करने के लिये फोर्स का कम होना एक समस्या होती है। अपराधों को रोकने के लिये तथा पूरी छानबीन करने के लिये समय का आभाव भी रहता है, फलस्वरूप उत्पीड़न के तीसरे दर्जे की विधि को ये लोग आवश्यक मानते हैं।
2. कठोर एवं नियमित अपराधी शक्ति की ही भाषा को समझते है, अत: तीसरे दर्जे की उत्पीड़न विधि ही एक संभावित तरीका होता है। जिसके द्वारा उनसे सत्यता उगलाई जा सके। बिना यातना दिये यह संभव नहीं होता है।
3. आतंकवादी, डकैत जैसे जघन्य अपराधियों को उत्पीड़न पहुँचाने में कोई हानि नहीं हैं क्योंकि ये लोग स्वयं समाज के साथ ऐसा ही व्यवहार करते है।
4. क्या इन अपराधियों को कोई अधिकार होते हैं, यदि ऐसा है, तो पुलिस उनके अधिकारों का क्यों आदर करें, जबकि ये अपराधीगण भोले-भाले लोगों के अधिकारो का कोई आदर नहीं करते हैं।
5. कानूनी प्रक्रियाऐं काफी कठिन होती है और अधिकतर ये अपराधियों के पक्ष में जाती है। पुलिस को भारी कानूनी अड़चनों का सामना करना पड़ता है, उन्हें न्यायालय में अपराध को बिना शंका सिद्ध करना पड़ता हैं।
6. अधिकतर थानों में अपराध को रोकने के लिये या अपराधों की तह में जाने के लिये वैज्ञानिक खोजबीन की विधियों का अभाव रहता है, इसलिये पुलिस को मजबूर होकर तीसरे दर्जे की उत्पीड़न विधियों का सहारा लेना पड़ता हैं।
7. अपराधों को पूरी तरह रोकने व कोर्ट के द्वारा सजा करा देने को ही पुलिस आफिसर की योग्यता का प्रमाणपत्र माना जाता हैं।
8. जनता तो यह चाहती है कि पुलिस अपराधों को रोके व नियंत्रित करे किन्तु इस कार्य में पुलिस को कोई सहयोग नहीं देती, अपराधियों के विरूद्ध गवाही तक नहीं देती फलस्वरूप अपराधों की सत्यता जानने के लिये सम्बन्धित अपराधी को उत्पीड़न देना पड़ता हैं, क्योंकि अपराधी स्वेच्छा से अपना अपराध कभी स्वीकार नही करता।

बहुदा समाज भी यह आशा रखता है कि पुलिस गुंडो और असामाजिक तत्वों को कठोर यातना दे व उनकी पिटाई करें। जेबकतरो एवं सम्पत्ति चोरों के द्वारा पुलिस को विवश किया जाता है कि वो उनके साथ तीसरे दर्जे की उत्पीड़न विधियों का व्यवहार करे। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो पुलिस के ऊपर रिश्वत लेने, भ्रष्ट आचरण करने व अयोग्यता के दोष लगाऐ जाते हैं, उत्पीड़न का सबसे ज्वलंत उदाहरण सन् 1980 का भागलपुर बिहार की आंख फोड़ घटना है, जिसमें जनता के सहयोग से पुलिस ने इन अपराधियों की आंख को तेज धार वाले औजार से फोड़ दिया व एसिड डाल कर उन्हें पूर्ण अंधा बन दिया।

इसके अलावा बंदीग्रह में यातना देने का दबाव समाज के विभिन्न तत्वों के द्वारा पुलिस पर डाला जाता हैं, जब कोई भयानक अपराध घटता है, तो वरिष्ट पुलिस अधिकारियों के द्वारा पुलिस पर दबाव पड़ता है कि वह अपराधियों को शीघ्र पकड़े। अधिक से अधिक अपराधी को खोज निकालने के लिये तथा उन्हें सिद्ध करने के लिये पुलिस को तरक्की और गुप्त अच्छी चरित्रावली का प्रलोभन भी दिया जाता है, इसके अलावा जनता, सरकार व अखबारों के द्वारा भी एक साथ दबाव पड़ता है, इस प्रकार के दबाव में शीघ्र प्रतिफल करने के लिये पुलिस उत्पीड़न की विधि का सहारा लेती है, भले ही पुलिस को इसमें स्थानान्तरण पद से बर्खास्तगी व सजा तक का भय क्यों न हो।

बंदीग्रह की इन यातानाओं के द्वारा एक प्रकार की ऐसी प्रक्रिया बन जाती है कि वह एक संस्था का रूप ले लेती हैं, इस प्रकार के उत्पीड़न को समाज की भलाई के लिए न केवल आवश्यक समझा जाता है बल्कि यह प्रवृत्ति विश्वव्यापी हो चुकी है। एक अध्ययन के अनुसार निम्न निष्कर्ष सामने आते हैं।

'बंदी उत्पीड़न या यातना एक घरेलू क्रियाकलाप नही हैं, बल्कि यह विश्वव्यापी हो चुकी हैं, इस कार्य के लिये विदेशी विशेषज्ञ भी बुलाए जाते हैं, उत्पीड़न की नई विधियों को इनके सामने प्रदर्शित किया जाता हैं, एक देश से दूसरे देश को यातना देने की नई नई मशीनें आयात व निर्यात की जाती हैं।' यदि उत्पीड़न की इन विधियों को समाप्त करना हैं, तो बंदीग्रह की यातनाओं को पूर्ण रूप से समाप्त कर देना चाहिऐ।इन यातनाओं को आवश्यक

* अतिथि विद्वान, शासकीय जे.एन.एस.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शुजालपुर (म.प्र.) भारत

नहीं समझना चाहिए, क्योंकि इन विधियों को लगातार प्रयोग करने से अपराधों में तो कोई रोक लगती नहीं हैं, बल्कि पुलिस को कठोर व निर्दयी बना देती है तथा लाखों करोड़ों भोले–भोले लोगों में आतंक फैला देती हैं।

राष्ट्रीय सुरक्षा विरूद्ध मानवाधिकार – राष्ट्र की सुरक्षा के दृष्टिकोण से भी उत्पीड़न की विधि को चालू रखना व कठोर से कठोर अपराधियों को भी यातना देना उचित समझा गया है। ऐसे आतंकवादी व देशद्रोही जो आम जनता को भयभीत करने से नहीं चूकते, उनके प्रति सरकार को कठोर व्यवहार करना आवश्यक है। इस प्रकार की असाधारण परिस्थितियों से मुकाबला करने के लिए सरकार को व्यापक अधिकार देना आवश्यक है। ऐसी स्थितियों में यदि किसी के अधिकारों व स्वतंत्रता का हनन भी होता है, तो वह न्यायसंगत हैं।

इसके अतिरिक्त स्वतंत्रता व अधिकार एक तरफा नहीं होते, तथा पूरी तरह नियंत्रण के बाहर भी नहीं होते क्योंकि इससे समाज में क्षोभ पैदा हो जायेगा। मनुष्य अपने अधिकारो का प्रयोग तब ही कर सकता हैं, जब समाज में शांति और व्यवस्था हो यह अशांति में अपने अधिकारों का प्रयोग करने में सक्षम नहीं होता। इस प्रकार सभी प्रकार के अधिकारों का उपयोग शांति, व्यवस्था, चारित्रिक मापदण्ड तथा देश की सुरक्षा को ध्यान में रखकर ही किया जा सकता हैं।

व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों में इस प्रकार के नियंत्रण विश्व के सभी देशों के संविधानों में मौजूद है व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों में इस प्रकार के नियंत्रण विश्व के सभी देशो के संविधानों में मौजूद हैं, भारत में संविधान में भी ऐसा ही हैं, मनुष्य के अधिकारों ने इस प्रकार के नियंत्रण का कोई विरोध नही किया है। लेकिन राष्ट्रीय सुरक्षा के नाम पर कई देशो की सरकारें आदमी के अधिकार व स्वतंत्रता में अंकुश लगाती रहती हैं, जैसे व्यक्तिगत सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण करना, तार व टेलीफोन की बातें सुनना, पत्रो को खोल देना, तलाशी लेना, कैद करना, लम्बे समय तक पुलिस हिरासत में रखना, बंदी प्रत्यक्षीकरण को मोअत्तिल करना, एक तरफा केस चलना, न्यायालय में अपील को रोकना, यातना पहुँचाना आदि।

इस प्रकार मनुष्य के अधिकारों और राष्ट्रीय सुरक्षा के बीच खींचातानी दिखाई देती है किन्तु सत्यता यह है कि ये दोनों एक दूसरे से गुथे हुऐ है, इन दोनो में करीब का रिश्ता भी हैं, ऐसे मनुष्यों के लिये जो लगातार अव्यवस्था के वातावरण में जीते हैं, उन्हें अपने अधिकार अधिक दिन नहीं चलते हैं, संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय सुरक्षा के बिना मानव अधिकारों का कोई अस्तित्व नहीं होता हैं, दूसरी और अधिकारियों व तानाशाही सरकारों द्वारा लम्बे समय तक जनता के मूल अधिकारों का हनन समाज में आक्रोश और हतोत्साह पैदा करता है जो अंत में विद्रोह का रूप ले लेता है। देश की आंतरिक शांति नष्ट होने लगती है व इस प्रकार राष्ट्रीय सुरक्षा की जड़े हिलने लगती हैं, अब मूलभूत प्रश्न यह पैदा होता है कि राष्ट्र की सुरक्षा के लिए जनता के अधिकारों का तक बलिदान किया जा सकता है, अत: जब तक राष्ट्र की सुरक्षा को ठीक से न समझा जाए तब तक इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया जा सकता हैं।

व्यक्ति के समान प्रत्येक देश की सरकार आत्मसुरक्षा का अधिकार रखती है, यदि किसी देश का जीवन असुरक्षित हो तो उस देश को उसे बचाने का पूरा अधिकार होता है, आपातकाल में देश की सरकारे अत्याधिक शक्ति का प्रयोग कर सकती हैं, तथा इस प्रक्रिया में नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा का ध्यान नहीं रखती है। सरकारों के इस प्रकार के व्यवहार के द्वारा जिन मानव अधिकारों का उल्लघंन होती है उसे कई राष्ट्रो ने मान्यता भी प्रदान की हैं, किन्तु जैसे मानव अधिकार व मूलभूत स्वतंत्रता निरपेक्ष नहीं होता है, उसी प्रकार देश की सरकार भी अपने अधिकारों के दुरूपयोग के लिए निरपेक्ष नहीं होती है। आपातकाल के समय भी कुछ मूलभूत अधिकारों पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ना चाहिये, आपातकाल हो अथवा न हो, व्यक्ति के इन अधिकारो का हनन नही किया जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकारो के कानून में भी उत्पीड़न को रोकना और व्यक्ति की स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति आवश्यक है। राष्ट्रीय सुरक्षा को यदि खतरा हो तो सरकार को यह अधिकार होता है कि वे देश के कानूनो को नजरअदांज कर दें, किन्तु प्राय: राष्ट्रीय सुरक्षा व्यक्तिगत सुरक्षा व सरकार की सुरक्षा के साथ जुड़ी रहती है और सरकार की सुरक्षा के लिए कभी कभी मानव अधिकारों का हनन भी करती है। न्यायधीशों की अंतर्राष्ट्रीय संस्था ने निम्न लिखित विचार व्यक्त किए हैं–

'कुछ सरकारों में यह प्रवृत्ति बन गई है कि उनके अधिकारों को चुनौती देना उस देश को अथवा राष्ट्र को खतरा उत्पन्न करना है और यह प्रवृति ऐसे देशो में सत्य होती है, जो राजनैतिक शक्ति का हस्तान्तरण कानूनी तरीके से करना नहीं चाहते है, फलस्वरूप अपने शासन की आलोचना को ये लोग देश की गद्दारी की संज्ञा देते हैं।'

उक्त अध्ययन में पुन: कहा जाता है कि जनता की सुरक्षा के लिए विधि सम्मत सरकार को उखाड़ फेंकने के लिए अपनी सुरक्षा शक्तियों के द्वारा नागरिक के अधिकारों का उल्लघंन तथा उत्पीड़न के द्वारा लोगो की स्वतंत्रता समाप्त करना, लोगों के जीवन को बेतहाशा करना तथा अमानवीय यातना देना, जनता को कठोर सजाऐ देना आदि जायज बाते है। ऐसे देशो में बिना अपराध के जनता को कैद करना, उन्हें जेल में डाल देना, उन्हें गायब कर देना, न्याय के विरूद्ध कत्ल कर देना और उत्पीड़न को व्यापक रूप देना एक सामान्य बात होती है। इस प्रकार राष्ट्रीय सुरक्षा व तानाशाहों के राज्य की सुरक्षा कि बीच के अंतर को समझना जरूरी है। राष्ट्र की सुरक्षा के लिए जनता के अधिकारों का हनन कुछ सीमा तक अन्तर्राष्ट्रीय कानून स्वीकार करता है। लेकिन सैनिक और तानाशाही शासकों की सुरक्षा के लिये लोगों के अधिकारों का हनन स्वीकार नहीं करता, इसलिये व्यक्ति के अधिकारों और राष्ट्र की सुरक्षा की आवश्यकता के बीच संतुलन आवश्यक है।

उत्पीड़न से मुक्ति एवं व्यक्तिगत जीवन की सुरक्षा के अधिकार को नकारने के लिये राष्ट्रीय सुरक्षा का बहाना नहीं लेना चाहिए, किन्ही भी परिस्थितियों में चाहे वे कितनी भी गम्भीर क्यों न हो, जनता के मौलिक अधिकारो का हनन ठीक नहीं है, जनता के इन अधिकारों का हनन सतत रूप से जारी रहने की प्रवृत्ति बन जाती है। और देश की सुरक्षा व राष्ट्र के हित के बहाने से किया जाता है। इस प्रकार के अधिकारों के हनन के गंभीर परिणाम होते है तथा इतिहास में इसके तमाम उदाहरण मिलते हैं।

पुलिस कानून की संरक्षक या विध्वंसक– सभी देशों के कानून पुलिस को यह अधिकार देते है कि कुछ परिस्थितियाँ में ये अपने अधिकारों का प्रयोग करें। ये अधिकार वास्तव में उनके कार्य पद्धति के मूल में है और उसमें प्रश्नचिन्ह लगाया जा सकता। ये पुलिस कर्मचारियों के लिये कानून सम्मत माना गया है पुलिस को हथियारबंद डाकु, आदतन अपराधियों, आतंकवादी एवं हत्याए करने वाले लोगो से समाज को बचाना होता है, जिससे कि व्यक्ति सुरक्षित रह सकें। इसलिये डाकुओं के गिरोह में दबिश डालना, अपराधी को कैद करना, ऐसी परिस्थितियाँ है जो पुलिस को करना पड़ती है।

लेकिन पुलिस को यह अधिकार बिल्कुल नहीं है,कि बंदीग्रह में कैद एक निरीह व्यक्ति पर अत्याचार करें, और देश के कानून की परवाह भी नकरें।

भारत जैसे प्रजातांत्रिक देश में सार्वभौम अधिकार जनता को होते हैं, कि पुलिस को होते है। पुलिस तो सरकार की एक एजेन्ट (प्रतिनिधि) होती है, जो अन्ततः जनता के प्रति जवाबदेह हैं, इसलिये पुलिस के सारे कार्य जनता के प्रति जवाबदेह होते हैं। देश के कुछ निश्चित कारणो के द्वारा सभी परिस्थितियों में पुलिस के द्वारा बल प्रयोग पर अंकुश लगाते हैं, अन्य नागरिकों के समान शासन व पुलिस पर भी कानून का शासन होता हैं, कानून के शासन का तात्पर्य है कि जनता और पुलिस पर वह अंकुश लगावें। अतः पुलिस अपने कार्यो के लिये कानून के उल्लघंन के लिये स्वयं जिम्मेदार होती हैं, चाहे वे अपने वरिष्ठ अधिकारियों के आदेश से करे या स्वयं करें।

इसलिये बंदीग्रह में यदि किसी पुलिस कर्मचारी के द्वारा उत्पीड़न पहुँचाया जाता है जो कानून से उपर नही हैं, क्योंकि जो कानून क्रियान्वयन करवाता है उसे स्वयं भी कानून का पालन करना चाहिये, पुलिस जो कानून का क्रियान्यन करवाती है, उसे भी कानून तोड़ने की इजाजत नहीं दी जा सकती है। सजा दिलाने, अपराधियों को पकड़ने आदि कार्यों में भी पुलिस कानून का उल्लघंन नहीं कर सकती है। अपराधियों को सजा दिलाने में पुलिस कानून तोड़ती है, तो कानून का ढाँचा ढह जायेगा, कानून तोड़ने वाले के साथ पुलिस को स्वयं कानून तोड़ने की इजाजत नहीं दी जा सकती है। अनैतिक व गैरकानूनी तरीकों से अपराधियों को सजा दिलाना उतना महत्वपूर्ण नहीं हैं, जितना जनता के मानवाधिकार की सुरक्षा आवश्यक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अपराध शास्त्र – श्रीमती कुमुदसिंह।
2. अपराध शास्त्र – श्रीमती किरण बघेल।
3. मानवाधिकार एवं प्राकृतिक न्याय – परिपूर्णनंद वर्मा।
4. द यंग डेलीक्वेट – श्री आर.के.तिवारी।
5. पंजाब जेल मैन्युअल –शासकीय प्रकाशन।
6. भारत का संविधान – डॉ.वी.एन.सिंह।

****

भारतीय नवजागरण के अग्रदूत राजाराम मोहनराय – व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – राजाराम राम मोहनराय का जन्म सन् 1774 में बंगाल के हुगली जिले में एक जमींदार परिवार में हुआ था। पिता रमाकान्त राय वैष्णव तथा माता तारिणी देवी शाक्य थी। अत: परिवार से उन पर वैष्णव तथा शाक्य प्रभाव था। बाल्यकाल से ही 'पूत के पैर पालने में' ही दृष्टिगत हो गए थे। प्रतिभा के धनी राँय ने छह से नौ वर्ष की आयु में बंगला तथा फारसी भाषा सीख ली। दस से तेरह वर्ष की आयु में अरबी और हिन्दी सीखी। तेरह से पन्द्रह वर्ष की उम्र में संस्कृत का ज्ञान प्राप्त किया। 37 से 42 वर्ष की युवा अवस्थाओं में अंग्रेजी तथा 47 से 49 की उम्र में ग्रीक एवं हेबू तथा 59 से 60 की उम्र में फ्रेंच तथा लेटिन में दक्षता प्राप्त की। 17 विविध भाषाओं के ज्ञाता वे ज्ञान के भण्डार तथा जीवित शब्द कोष थे।

राजाराम मोहनराय ने 1809 से 1814 तक ईस्ट इंडिया कंपनी में नौकरी भी की। सन् 1815 में उन्होंने 'आत्मीय सभा' नामक एक आध्यात्मिक सोसाईटी बनाई जो उनके धार्मिक चिन्तन की पृष्ठभूमि है। उन्होंने तभी 'ब्रह्म सूत्र' का बंगला में अनुवाद प्रकाशित किया। सन् 1918 में उन्होंने अपने जीवन की सर्वोत्तम उपलब्धि सती प्रथा उन्मूलन आंदोलन आरंभ किया। सन् 1829 में लार्ड विलियम बैरिक ने सती प्रथा को अवैध घोषित कर दिया। राँय की यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

सन् 1828 की 20 अगस्त को उन्होंने भारत में नव आध्यात्मिक क्रांति का सूत्रपात करते हुए 'ब्रह्म समाज' की स्थापना की। सती प्रथा उन्मूलन के पश्चात् ब्रह्म समाज की स्थापना राँय के जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना है। इसके माध्यम से उनके सार्वभौमिकता, एकेश्वरवाद तथा राजनीतिक उदारवाद तर्कवाद और शिक्षा में आधुनिकता ने देश के चिन्तन में क्रांति उत्पन्न की है।

अपने आलोचनात्मक बुद्धिवाद, सामाजिक युक्तिवाद तथा अद्वितीय अन्तर्दृष्टि के कारण युवा अवस्था में ही राँय बंगाल तथा भारत के पुनर्जागरण आंदोलन के सामाजिक राजनीतिक तथा धार्मिक क्षेत्र में नेता बन गये थे। राजा राम मोहन राँय की तत्कालीन सामयिक गतिविधियों से पूर्व भारत में राजनीतिक जीवन का मन्द प्रकाश भी नहीं था। जनता नागरिक अधिकारों तथा विशेषाधिकारों के बारे में अनभिज्ञ थी। कोई सोच भी नहीं सकता था कि सरकार के पास जाकर अपने दु:खों को दूर करवाने की प्रार्थना भी की जा सकती है। राजा राम मोहन राँय पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने अपने पाँच मित्रों के नाम पर 31 मार्च 1823 को कलकत्ता के सर्वोच्च न्यायालय में, कार्यवाहक गवर्नर जनरल के विरूद्ध एक स्मरण पत्र दिया। यद्यपि उनके मन में कोई राजनैतिक उद्देश्य नहीं था तदापि उनका यह कार्य आधुनिक भारत में राजनीतिक आंदोलन का उन्हें पितामह सिद्ध करता है। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी के शब्दों में 'राजा राममोहन राँय केवल ब्रह्मसमाज तथा बंगाल में सभी समाज सुधारों के अग्रदूत ही थे, अपितु वे भारत में संवैधानिक आंदोलन के भी पिता थे।' विपिनचन्द्र पाल ने यह भी कहा कि 'राजा के व्यक्तिगत तथा सामाजिक स्वतंत्रता के लिये काम किया।' न्यायालय में प्रस्तुत ज्ञापन संभवत: भारत में पहली जनहित याचिका थी।

यह निर्विवाद तथ्य है कि वे तत्कालीन परिस्थिति में भारत में ब्रिटिश शासन के समर्थक रहे है। साथ ही वैचारिक रूप में वे राष्ट्रीय स्वतंत्रता के भी समर्थक थे। उनका मत था कि स्वतंत्रता मानव मात्र के लि बहुमूल्य वस्तु ही नहीं वरन् एक राष्ट्र के लिए भी यह अति आवश्यक वस्तु है। रॉय का स्वतंत्रता के प्रति प्रेम कुछ घटनाओं से प्रभावित भी होता है। राजा राम मोहन राँय को जब स्पेन में संवैधानिक शासन की स्थापना की सूचना मिली तो इसकी प्रसन्नता में उन्होंने एक भोज का आयोजन किया था तथा नेपल्स (इटली) में आस्ट्रिया द्वारा जनतंत्र के स्थान पर पुन: निरंकुश शासन लाद दिया गया तो दु:खी होकर उन्होंने कलकत्ता जर्नल के सम्पादक बंकिम के साथ अपना पूर्व निर्धारित कार्यक्रम रद्द कर दिया था। नेपल्स के साथ सहानुभूति व्यक्त करते हुए, खिन्न होकर उन्होंने लिखा उनके शत्रु मेरे शत्रु है। उनका इस संदर्भ में कथन अति महत्वपूर्ण आलेख है 'स्वतंत्रता के शत्रु और निरकुंशता के मित्र अंति रूप से न तो कभी सफल हुए है और न कभी सफल होगें।'

राजा राम मोहन रॉय ने यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से भारतीयों के लिए ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता की मांग नहीं की। तदापि उनके द्वारा की गई शासन, प्रशासन, न्यायपालिका तथा प्रेस स्वतंत्रता आदि से संबंधित विविध मांगे अप्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रता आंदोलन के लिये जमीन तैयार करने की भूमिका रूप में अति महत्वपूर्ण रही है। सन् 1831 में इंग्लैण्ड प्रवास के दौरान ईस्ट इंडिया कंपनी के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर सू के सम्मुख उनके द्वारा प्रस्तुत मत पत्र इसका सशक्त उदाहरण है। इस प्रकार उन्होंने ऐसे ऐसे प्रशासनिक सुधारों की कामना की जिससे ब्रिटिश शासन का भारतीकरण हो तथा जिसमें भारतीयों की भूमिका सुनिश्चित हो। इस प्रसंग को भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में उदारवादी राजनीति का श्रीगणेश माना गया है।

अत: एक राजनीतिक विचारक के रूप में यही स्पष्ट होता है कि स्वराज की चेतना जागृत करने में उनका योगदान प्रत्यक्ष तो नहीं था, परोक्ष रूप में ही था। भारत में प्रेस की स्वतंत्रता का समर्थन करने वाले व्यक्तियों में राजाराम मोहन रॉय का नाम सर्वप्रथम है। एक पत्रकार के रूप में उन्होंने बंगला भाषा में 'संवाद कौमुदी' तथा फारसी में 'मिरात–अल–अखबार' का प्रकाशन किया। उन्होंने पराधीन भारत में अंग्रेजों के अपने कानून का राज्य के आदर्श पर भारत में न्यायिक व्यवस्था में सुधार हेतु सुझाव दिये थे जो उनकी पुस्तक 'भारत की राजस्व एवं न्यायिक व्यवस्था की एक व्याख्या' में संकलित है।

राजा राम मोहन राय का व्यक्तित्व पूर्णत: मानवतावादी एवं

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

अन्तर्राष्ट्रीयता पर आधारित था। वे स्वयं इसके जीते जाते स्वरूप थे। इस निष्ठा के कारण ही उनके मित्र एवं उपयोगितावाद के प्रवर्तक जर्मी बेंथम ने उन्हें मानव जाति की सेवा में समर्पित अपना घनिष्ठ सहयोगी घोषित किया था। विश्व समाज की रचना के उनके अपूर्व विचारों के कारण महाकवि रविन्द्रनाथ ठाकुर ने उन्हें 19 वीं शताब्दी का अंतर्राष्ट्रीय ख्याति का प्रथम भारतीय संबोधित किया था। अपने मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण ही वे एक ईश्वर की उपासना के आदर्श पर अपने 'ब्रह्म समाज' को वैश्विक चिन्तन की दिशा में, पूर्व तथा पश्चिम की संस्कृति का सेतू बना सके। मुगल सम्राट अकबर द्वितीय ने उन्हें राजा की उपाधि प्रदान की थी।

यह सच है कि विश्व के किसी भी विचारक या सुधारक को आलोचकों को वक्र दृष्टि से मुक्ति नहीं मिली है। राजा राम मोहन रॉय को भी व्यापक आलोचनाओं का सामना करना पड़ा था। परम्परागत हिन्दू समाज में प्रचलित मान्यताओं को अबौद्धिक घोषित करने का साहस तो उन्होंने अवश्य किया, किन्तु उन्हें यह अनुभव हो गया कि वे अधिकांश व्यक्तियों द्वारा त्याग दिए गए है। अकेले छोड़ दिए गए है। स्कॉटलैण्ड के दो चार मित्रों को छोड कोई उनके साथ नहीं था। सतीप्रथा नरबली, कर्मकाण्डों, बहुदेववाद, बहुविवाह, बाल विवाह, विधवा विवाह, महिला अधिकार तथा अंग्रेजी शिक्षा व संस्कृति का समर्थन आदि पर उनके विचारों को अभारतीय, अपारम्परिक तथा पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित मानकर घर, परिवार व समाज द्वारा उनका विरोध किया गया। जबकि सच्चाई यह भी है कि हिन्दू समाज की अनेक मान्यताऐं तर्कहीन, असंगत, अमानवीय एवं अन्यायपूर्ण थी। इसका एक ज्वलन्त उदाहरण सतीप्रथा है, जिसके उन्मूलन के लिये उन्हें इंग्लैण्ड तक जाना पड़ा था। इसके साथ यह स्वीकार करना होगा कि तत्कालीन भारतीय सामाजिक, धार्मिक व राजनीतिक स्थिति की तुलना में, पश्चिमी सभ्यता व संस्कृति की तार्किक जीवन दृष्टि का समर्थन करना गलत भी नहीं था। यूरोपीय लोगों की श्रेष्ठता के प्रति, उनका तर्कपूर्ण समर्थन रॉय की आलोचना का एक मुख्य कारण रहा है।

इस तथ्य पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि उनका युग संक्रमणकाल का प्रतीक है, तब दो प्राचीन व्यवस्थाऐं हिन्दू तथा मुसलमान ध्वस्त हो रही थी तथा नवीन पाश्चात्य सभ्यता ईसाई मत के माध्यम से देश में अपनी स्थापना के प्रारंभिक चरण में थी। पश्चिमी सभ्यता जीवन के हर क्षेत्र धर्म, समाज, राजनीति, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा शिक्षा सभ्यता में मध्युगीन भारतीय आदर्शो को चुनौती दे रही थी। ऐसी स्थिति में उन्होंने धर्म, समाज तथा राजनीति को, पश्चिमी चिन्तन व शिक्षा की महत्ता को स्वीकार करते हुए पूर्व-पश्चिम के समन्वय का नया रास्ता दिखाया। उन्होंने पश्चिम का समर्थन करते हुए पूर्व की केवल उन्हीं मान्यताओं का प्रबल विरोध किया जो अबौद्धिक और अमानवीय थी। उनका एकेश्वरवाद ईसाई धर्म के प्रभाव से नहीं था। वे कुरान और सूफी सम्प्रदाय तथा बौद्ध जैन मत को भी पढ़ चुके थे। उपनिषदों व गीता के अध्ययन के पश्चात् ही उन्होंने ब्रह्म को वेदान्त के सार के रूप में सर्वधर्म समन्वय का आधार बनाया।

धर्म के क्षेत्र में रॉय सार्व भौमवाद के अगुआ थे। आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि पूर्व देशीय 'वसुदेव कुटम्बकम्' से लेकर पश्चिम के विचारों का समन्वय करते हुए उनका संसार की सभी जातियों व राष्ट्रों का एक विश्व संगठन उनका चिर घोषित आदर्श स्वप्न था। इसे वे ब्रह्म समाज के माध्यम से मूर्त करना चाहते थे। यह कतिपय संगठनात्मक दुर्बलता के कारण कुछ बुद्धिजीवियों के विचार विमर्श तथा प्रार्थनाओं तक सीमित रह गया।

अत: राजा राम मोहन राय को आधुनिक भारत का पहला प्राच्यवादी तथा पाश्चात्य व्यक्तिवादी कहना अत्युक्ति नहीं होगा। उन्हें तीन संस्कृतियों को मिलाने का भी श्रेय है। उन्होंने भारतीय व पाश्चात्य संस्कृति और शिक्षा के सर्वोत्तम को मिला देने का प्रयत्न किया। अपने अपूर्व मौलिक चिन्तन के कारण पहले भारतीय के रूप में उन्हें पश्चिम के मेक्समूलर, बेंथम, राबर्ट ओंवन, राकबोन तथा विलियम एडम आदि विद्वानों की सराहना प्राप्त हुई। अंग्रेज उन्हें एक निष्पक्ष भारतीय के रूप में देखते थे।

अपने बौद्धिक व्यक्तित्व के कारण भारतीय परिवेश में उन पर पाश्चात्य चिन्तन का रंग चढ़ा होने पर भी प्रतिक्रिया एवं प्रगति के मध्य बिन्दु थे। वे भारतीय पुनर्जागरण के प्रभात तारा थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. त्यागी पी.के : भारतीय राजनीतिक चिंतन : विश्व भारती पब्लिकेशन नईदिल्ली (2006) पृष्ठ 321-325
2. उपेन्द्रसिंह : भारतीय राजनीतिक विचारक : ग्रंथ विकास जयपुर (2009) पृष्ठ 103-105
3. चक्रवर्ती एस.सी. : दी फॉदर ऑफ मार्डन इण्डिया राजा राम मोहन राय शताब्दि समारोह स्मारिका कलकत्ता पृष्ठ 55-56
4. बिहारी विपिन : भारतीय सामाजिक और राजनीतिक विचारों का इतिहास : बुक लैण्ड कलकत्ता (1967) पृष्ठ 24
5. मेहता जीवन : भारतीय राजनीतिक चिंतन : एस.बी.पी.डी. पब्लिशिंग हाउस आगरा (2014-15) पृष्ठ 74-18
6. खत्री हरीशकुमार : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन : कैलाश पुस्तक सदन भोपाल (2015) पृष्ठ 58-60
7. शर्मा हरीशचन्द्र : प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचार एवं संस्थाऐं : कैलाश बुक डिपो जयपुर (1972-73)।

****

युवाओं में बढ़ती नशा प्रवृत्ति का अध्ययन (निम्न वर्गीय परिवारों के विशेष संदर्भ में)

डॉ. भावना ठाकुर *

शोध सारांश – आधुनिक काल में बढ़ती हुई नशा प्रवृत्ति से समाज विचलित हो रहा है। समाज के किशोर वर्ग में नशे के विभिन्न साधन चिंता का विषय है। आधुनिक आपाधापी के युग में व्यक्ति अपने जीवन में व्यक्त होती ही जा रहा है। जिससे उसके जीवन में अवसाद, तनाव एवं द्वन्द्व जैसी समस्याएं निरंतर बढ़ती जा रही है। इन समस्याओं से मुक्ति के लिए धैर्य, संयम, साहस आदि सकारात्मक प्रयासों को न अपनाकर ऐसी नकारात्मक गतिविधियों में लिप्त होता जा रहा है, जहाँ उसका जीवन अंधकारमय होता जा रहा है। वह नकारात्मक धारणाओं का पोषण करने लगता है और ऐसे मार्ग का चयन करता है, जो जीवन को पतन की ओर ले जाता है। पतन के इन्हीं मार्गों में से एक नशा प्रवृत्ति है, जो गंभीर और व्यापक समस्या के रूप में राष्ट्र के समक्ष एक बड़ी चिंता प्रतीत हो रही है।

प्रस्तावना – परिवार हमारे समाज का सबसे महत्वपूर्ण सोपान है। परिवार की समृद्धि पर ही समाज और राष्ट्र की प्रगति निर्भर करती है। यह तभी संभव है, जब परिवार के कर्ता-धर्ता अपनी नैतिकता के माध्यम से बच्चों को यथोचित मार्गदर्शन प्रदान कर उन्हें कर्म क्षेत्र के सशक्त योद्धा बनाने का प्रयास करें क्योंकि नैतिकता जीवन का नियमन है। इसी परिधि में संस्कार पोषित और पल्लिवित होते हैं तथा जीवन के प्रत्येक सोपान पर परिवर्द्धित व परिमार्जित होते रहते हैं।

देश का युवा वर्ग तेजी से नशीले पदार्थों की गिरफ्त में प्रवेश करता जा रहा है। नशे का शिकार अनेक तर्कों-कुतर्कों के साथ बहस के लिए सदैव तैयार रहता है। दुख-परेशानी में नशा एक सहारा तो खुशी मानने का एक बहाना भी है। नशा करने वाले को समझाइश दी जाये तो वह आदिदेव शिव से लेकर सोमरस तक प्रमाण सहित आपकी बात आपको लौटा देगा। युवा वर्ग के नशे में लिप्त होने के कारण परिवार गरीबी की सीमा को पार करते जा रहे हैं। नशे की बढ़ती समस्या शारीरिक बीमारियों के साथ परिवार को मानसिक पीड़ा और आर्थिक तंगी के मुहाने पर ढकेल देती है। जिस युवा पीढ़ी पर देश के भावी भविष्य का दायित्व है, उसका एक बड़ा अंश आज नशे की व्यापकता में डूबता परिलक्षित हो रहा है।

नशा की बढ़ती हुई प्रवृत्ति पर दुनिया भर में रोकथाम के प्रयासों की नितांत आवश्यकता है। वैज्ञानिकों ने एक अध्ययन में पाया कि मात्र अप्रत्यक्ष धूम्रपान भी बच्चों को मंद बुद्धि बनाता है। माता-पिता या घर के किसी अन्य व्यक्तियों द्वारा किए जाने वाले धूम्रपान का दुष्परिणाम आसपास होने वाले बच्चों को भुगतना पड़ता है। धूम्रपान करने वाले व्यक्तियों द्वारा छोड़ा गया धुंआ साँसों के माध्यम से बच्चों के शरीर में पहुंचता है और यह अप्रत्यक्ष धूम्रपान बच्चों को मंदबुद्धि बनाता है। इस अध्ययन के लिए वैज्ञानिकों ने 6 से 16 वर्ष आयु समूह के चार हजार चार सौ बच्चों का परीक्षण किया। कौन बच्चा कितनी ज्यादा देर तक धूम्रपान युक्त वातावरण में रहा, यह ज्ञात करने के लिए उनके रक्त का परीक्षण किया गया, इस परीक्षण में उनके शरीर में मौजूद निकोटिन का स्तर मापा गया। सांस के द्वारा यह अन्य किसी तरीके से शरीर में पहुँचे हुए निकोटीन को हमारा शरीर निकोटिन में परिवर्तित कर देता है। इसके बाद सभी बच्चों की मानसिक योग्यता का परीक्षण किया गया। वैज्ञानिकों ने पाया कि जो बच्चे धूम्रपान वाले वातावरण में अधिक समय तक रहे उनके शरीर में निकोटिन का स्तर ऊँचा था तथा टेस्ट में उनका प्रदर्शन संतोषप्रद नहीं था। ये बच्चे तार्किक योग्यता और रीजनिंग के परीक्षणों में अच्छा प्रदर्शन नहीं कर सके। अनुसंधान में पाया गया कि कम समय तक धूम्रपान वाले माहौल में रहने से भी मानसिक क्षमता पर असर होता है लेकिन अधिक समय तक इस माहौल में रहने पर अधिक नुकसान होता है। प्रोफेसर लारेंस व्हेले और उनके सहयोगियों ने एक अन्य अध्ययन में पाया कि लंबे समय तक धूम्रपान करने से आई क्यू कमजोर होता है। इस अध्ययन के लिए वैज्ञानिकों ने 11 वर्ष आयु समूह के 465 छात्रों में आई क्यू का परीक्षण किया। प्रोफेसर व्हेले और उनकी टीम ने इस सर्वे के 53 वर्ष बाद फिर इन व्यक्तियों के आई क्यू का परीक्षण किया जिसमें पाया गया कि धूम्रपान न करने वाले व्यक्तियों के प्रदर्शन और धूम्रपान करने वाले के प्रदर्शन में उल्लेखनीय अंतर था। इन सभी परीक्षणों में धूम्रपान करने वाले व्यक्तियों का प्रदर्शन तुलनात्मक रूप से काफी कमजोर था। वैज्ञानिकों ने स्पष्ट किया है कि धूम्रपान से क्षतिग्रस्त हुए फेंफड़े, मस्तिष्क को ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस का शिकार बना देते है, इसका असर मस्तिष्क की क्षमताओं पर पड़ता है।

किशोरों में बढ़ती हुई नशा प्रवृत्ति के अनेक कारण दृष्टिगोचर होते हैं। किशोरावस्था तनाव व तूफान की अवस्था निरूपित किया गया है। ये संवेगात्मक रूप से बड़ी अस्थिर एवं संवेदनशील अवस्था होती है, जिसमें किशोर के मन एवं मस्तिष्क पर आंतरिक दबाव और कुंठा के कारण निराशा, हताशा और हीनता की भावना विकसित हो जाती है। इस मानसिक व्यग्रता से मुक्त होने के लिए किशोर नशा करने लगते हैं। परिवार में अपेक्षित प्रेम, सहयोग और संरक्षण प्राप्त न होने की स्थिति में भी किशोर के मन में अशांति उत्पन्न होती है, ऐसी स्थिति में नशीले पदार्थ के सेवन से शांति का अनुभव होता है और यही अनुभव नशे की दुनिया की पहली पाठशाला का पहला पाठ-पहला अभ्यास होता है।

नशीले पदार्थों का क्षणिक आनंद जब आदत बन जाती है तब इस आदत और उसकी पीड़ा से मक्ति के लिए भी नशे का सहारा लेना विवशता हो जाती है। भोगवादी संस्कृति के चलते पार्टियों एवं अन्य कार्यक्रमों में नशीले पदार्थों के उपभोग की अनिवार्यता को स्वीकार कर अन्य वर्ग के परिवारों में

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, रेहटी, जिला-सीहोर (म.प्र.) भारत

भी यह प्रचलन आरंभ हो जाता है। परिणामत: किशोरों को भी नशा प्रवृत्ति का मार्ग सुलभ हो जाता है और अनजाने में ही उनका जीवन विनाश की ओर मुड़ जाता है। आरंभ में यह शौक से शुरू होता है और शीघ्र ही नशे के आदि बन जाते हैं।

वस्तुत: नैतिकता और मर्यादाओं के लिए परिवार की शिक्षा और आर्थिक स्थिति अधिक उत्तरदायी होती है। किशोरों में बढ़ती हुई नशा प्रवृत्ति के अध्ययन हेतु एक सामाजिक सर्वेक्षण के माध्यम से प्राथमिक तथ्यों को प्राप्त कर उनके विश्लेषण उपंरात निष्कर्षों की समीक्षा की गई। निम्न आर्थिक स्थिति के परिवारों पर केन्द्रित इस अध्ययन से प्राप्त तथ्य अत्यंत भयावह प्रतीत होते है। सीहोर जिले के बाजार वार्ड नाले के पास निम्न आय वर्ग के परिवरों को उद्देश्यपूर्ण निदर्श चयन द्वारा अध्ययन में सम्मिलित किया गया। इन सभी परिवरों में किशोरवय के सदस्य मौजूद थे। साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से परिवार की आर्थिक-शैक्षणिक स्थिति के साथ परिवार के किशोर एवं युवा सदस्यों की दिनचर्या एवं गतिविधियों संबंधी जानकारियों को संकलित किया गया। साक्षात्कार अनुसूची में निर्धारित एवं सुनिश्चित विकल्पों सहित विभिन्न प्रश्नों को समाहित किया गया ताकि प्राप्त उत्तरों में एकरूपता रहे और सुनिश्चित विकल्पों सहित विभिन्न प्रश्नों को समाहित किया गया ताकि प्राप्त उत्तरों में एकरूपता रहे और तथ्यों का यथोचित विश्लेषण किया जा सके। अध्ययन के सम्मिलित 96 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया कि उनके परिवार की आय पर्याप्त है लेकिन अधिकतम आय घर के सदस्य शराब आदि के नशे में व्यय कर देते हैं।

परिवार के प्रत्येक सदस्य की आय है लेकिन सभी कोई न कोई नशे के आदी है। शत-प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार परिवार में माता-पिता मात्र साक्षर है लेकिन उनके सारे बच्चे कम से कम कक्षा छह से कक्षा आठ तक शिक्षा प्राप्त है। प्रस्तुत अध्ययन से प्रतीत होता है कि लगभग 94 प्रतिशत परिवारों में माता-पिता और किशोर युवा मजदूरी कर आय अर्जित करते हैं। अध्ययन में सम्मिलित 89 प्रतिशत परिवरों के किशोर अपनी माध्यमिक शिक्षा के साथ-साथ मजदूरी पर जाने लगे हैं। 91 प्रतिशत परिवारों के मुखिया अपनी क्षमता से अधिक मद्यपान नियमित रूप से करते हैं और नशे की हालत में अकारण मारपीट भी करते है। 79 प्रतिशत परिवारों के किशोर युवा भी किसी न किसी प्रकार का नशा करने लगे हैं। लगभग 82 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया कि उन्हें अपने घर से ही नशे की आदत हुई, पहले बीड़ी चोरी की बाद में पिता की शराब भी चोरी से पीने लगे और अब नियमित रूप से नशे के आदी है। शत-प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार उन्हें बीड़ी-सिगरेट अथवा शराब की आदत है और यह नशीले पदार्थो के साथ सामान्यत: तंबाकू-जर्दा वाले गुटखा का भी सेवन कर रहे हैं। अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदाताओं में से किसी ने भी गांजा-अफीम अथवा अन्य ड्रग्स का सेवन करना स्वीकार नहीं किया। शत-प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार नशे के कारण कलह-क्लेश और अशांति से पीड़ित है तथा 68 प्रतिशत परिवारों में 40 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति किसी न किसी बीमारी से ग्रसित है। अध्ययन में सम्मिलित 68 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया कि वे नशे की आदत छोड़ना चाहते हैं पर कोशिश करने पर भी छोड़ नहीं पाए है।

निष्कर्ष – अध्ययन में प्राप्त निष्कर्षों से प्रतीत होता है कि अशिक्षा के कारण ही अधिकांश परिवार अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति लापरवाह रहकर उन्हें परिवार की आय बढ़ाने का संसाधन बना लेते हैं और धीरे-धीरे उन्हें भी नशे की ओर प्रवृत्त कर देते हैं।

देश के भावी कर्णधार युवा पीढ़ी को नशा मुक्त पीढ़ी बनाने के लिए अत्यंत सघन एवं संवेदी प्रयासों की आवश्यकता प्रतीत हो रही है। इन प्रयासों में सामाजिक संगठनों को अग्रणी भूमिका का निर्वाह करना लाभकारी सिद्ध हो सकता है। अनौपचारिक कार्यक्रमों के माध्यम से किशोरों से आत्मीयता स्थापित का उन्हें नशे के शारीरिक, मानसिक, आर्थिक तथा सामाजिक दुष्प्रभावों से अवगत कराकर उन्हें इस आदत से मुक्त किया जाना चाहिए। किसी भी प्रकार के नशे से मुक्ति के लिए सबसे पहले किशोरों को भावनात्मक संबल की आवश्यकता होती है, जो उन्हें औपचारिक प्रयासों से प्राप्त नहीं हो सकेंगी। इसी प्रकार स्कूली शिक्षा की औपचारिक अनिवार्यता की स्थानीय स्तर पर निरंतर सार्थक समीक्षा की जावे और प्रत्येक किशोर की स्कूल में उपस्थिति सुनिश्चित की जानी चाहिए। नशे के आदी किशोरों के लिए योग कक्षाएं आयोजित की जावें तो वे नशे की आदत से मुक्त होकर एक नई शारीरिक, मानसिक ऊर्जा प्राप्त कर सकेंगे जो उन्हें स्वयं की उन्नति के साथ-साथ समाज और राष्ट्र को मजबूती प्रदान करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Dybona, Joseph : Indiscipline and student leadership in Indian Universities, Student Politics, 1961.
2. Mehara, L.S. : Youth in Modern Society, Chugh Publication, 1977
3. डेविड, अलका : नशा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, रिसर्च g.V-II मार्च-अप्रैल 2007, पृ. 208-212
4. द्विवेदी, जी.पी. : युवा वर्ग में नशे का प्रभाव, सामाजिक विकल्प 7-8, 2005-06 पृ. 34-37

****

एक राज्य दो सरकारे-नागालैण्ड

डॉ. राजेन्द्र सिंह चंदेल *

प्रस्तावना – भारत में आजादी के बाद आतंकवादी की शुरूआत नागालैण्ड राज्य से हुई थी,जब आतंकवादी संगठन नेशनल काउंसिल ऑफ नागालैण्ड के नेता जापू फिजो अंगामी के नेतृत्व में सशस्त्र नागा विद्रोह कर स्वाधीन नागालिम राज्य का नारा दिया गया और 1953 से नाग विद्रोहियों ने न केवल असम पुलिस पर आक्रमण कर सिपाहियों को मारना आरम्भ किया बल्कि नागा हिल्स और दीमापुर के असमियाओं बंगालियों, बिहारियों का कत्लेआम किया। परिणाम स्वरूप असम सरकार ने भारत सरकार से सहायता की गुहार की तो 1958 में भारत सरकार को सशस्त्र सेना विशेष अधिकार घोषित कर सुरक्षा बलों को आतंकवादियों पर काबू करने के अधिकार दे दिए।

नागा जनजातियों में 14 प्रमुख जनजातियाँ हैं, जिसमें जेलियांरागं, कोन्याक, लोथा, आओ, अगांमी, काछारी, कारबी जनजातियों ने व इनकी नेता रानी गाइदिन्ल्यू के समर्थकों नेविद्रोही नेता फिजो का साथ न देकर सुरक्षा बलों की सहायता की। फिजो ने भागकर हांगकांग व जिनेवा में शरण ली, उस समय फिजो के सहयोग में थाइलैण्ड म्यांमार भी थे।

भारतीय संविधान के अनुसार 1961 में नागाहिल्स को नागालैण्ड नाम दे दिया गया, जो 1 दिसम्बर 1963 को असम से पृथक होकर भारत का 16 वाँ राज्य बना। इसके लिए अलग से राज्यपाल और विधानसभा बनाई गई, साथ-साथ नागालैण्ड राज्य को भारतीय संविधान की धारा 371 क के सम्बन्ध में विशेष उपबन्ध दिये गये। 1963-64में नागालैण्ड में चुनाव हुए और जनता के प्रतिनिधियों ने शासन संभाला और जनजाति का मुख्यमन्त्री बना। नागालैण्ड सरकार के अनुरोध पर NSCN (IM) के कार्यकर्ताओं को आत्मसमर्पण के लिए तैयार करने को तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने बातचीत की। 1967 में इन्दिरा गांधी ने नागा युद्ध विराम समझौते को समाप्त कर दिया।

1975 में भारत सरकार और नागा विद्रोहियों के बीच शिलांग समझौता हुआ था। जिसमें फिजो के भाई और नागा विद्रोहियों के प्रमुख नेताओं ने असम के तत्कालीन राज्यपाल एल पी सिंह के साथ शिलांग समझौते पर हस्ताक्षर किए और लिखित में कहा कि हम भारतीय संविधान को स्वीकारते हैं, इस समझौते के समय इसाक चिस स्वू ,टी मुइवा और खापलांग तीनों चीन में सैन्य प्रशिक्षण ले रहे थे। इन तीनों ने शिलांग समझौते का अस्वीकार करते हुए कहा था कि यह अन्य नागाओं द्वारा भारत के सामने घुटने टेकने जैसा है। इन तीनों ने 1980 में नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड NSCN (IM) के नाम से सशस्त्र संघर्ष करने की घोषणा की । नागा इतिहास व नागालैण्ड फॉर क्राइस्ट का नक्शा बांटा गया। इसके पीछे चर्च व विदेशी शक्तियां काम कर रही थी।

हांलाकि वर्तमान परिस्थितियों में ये आतंकवादी संगठन दो गुटों में नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (इसाक-मुइवा) व खापलांग गुटों में बंट गया है। ये दोनों ही संगठन केवल नागालैण्ड में नहीं बल्कि पूरे उत्तर पूर्व राज्य के आतंकवादी संगठनों के मुखिया है। इस संगठन के द्वारा ही उत्तर पूर्व में अन्य राज्यों के आतंकवादी संगठनों को हथियार, डकैती, ड्रग्स, तस्करी व सैन्य प्रशिक्षण पर भेजना इसी के द्वारा होता है। यह अन्य आतंकवादी संगठनों से प्रशिक्षण के रूपये लेता है। इसके बाद बगंलादेश, म्यांमार,भुटान के जंगलो में सैन्य प्रशिक्षण दिया जाता है।

नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (आई एम) की गतिविधियां बढ़ती जा रही हैं। इस गुट की नागालैण्ड में न केवल समान्तर सरकार चलती है, बल्कि यह टैक्स के रूप में नागरिकों से भारी मात्रा में पैसा भी वसूल कर रही है। वहाँ के नागरिकों को डबल टैक्स देना होता है एक नागालैण्ड सरकार को दूसरा नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (आई एम) को देना होता है। मार्च 2009 के नागालैण्ड पोस्ट में समाचार छपा था, कि नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (आई एम) की संसद 'तातार हो हो' का बजट सत्र बुधवार शाम को समाप्त हो गया । जी पी आर एन /एम आई पी के अधिकारियों ने फोन पर नागालैण्ड पोस्ट को सूचित किया है कि 'तातार हो हो' के अध्यक्ष पी एस बाइसन ने सदन को अनिश्चित काल तक के लिए स्थगित करते हुए अगले बजट सत्र तक शुभ कामनाएं दी और सहयोग के लिए धन्यवाद दिया ।

22 मार्च 2009 के नागालैण्ड पोस्ट में पृष्ठ के सबसे ऊपर चार कालम के सचित्र समाचार का शीर्षक है कि नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (आई एम) आब्जर्व्स रिपब्लिक डे (नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (आई एम) ने गणतन्त्र दिवस मनाया)। 21 मार्च 2009 को हीबेन स्थित काउंसिल मुख्यालय में 29 वां गणतन्त्र दिवस मनाते हुए नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (आई एम) ने एक बार फिर 'एकीकरण और सम्प्रभुता की अपनी मांगो के प्रति प्रतिबद्धता' दर्शायी। सम्प्रभुता के मुद्दे पर नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (आई एम) का मत स्पष्ट करते हुए कार्यक्रम के मुख्य अतिथी वी एस एतम ने स्पष्ट शब्दों में घोषणा की, नागाओं की सम्प्रभुता लोगों में निहित है और नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (आई एम) नागा सम्प्रभुता से कभी छल नहीं करेगा। एतम इस विद्रोही किया। साथ मिलकर रहने का अधिकार और सभी नागा क्षेत्रों का एकीकरण हमारे साझे प्रयासों में से एक हैं। इससे पहले रेवेरेण्ड डॉ वती ने प्रारंभिक प्रार्थना की। मुख्य अतिथि ने झंडा फहराया और नागा सेना की टुकड़ियों की सलामी ली।

नागालैण्ड में किस तरह NSCN (IM) की समान्तर सरकार चल रही है और किस तरह इसके प्रवेश पत्र और पहचान पत्र आदि बाकायदा खुले आम बांटे जा रहे हैं सरकारी मोहरें लगाई जा रही है, यह अब कोई छुपा रहस्य नहीं

* भारतीय जनता पार्टी, नार्थ ईस्ट इण्डिया सम्पर्क सेल राष्ट्रीय कार्यकारिणी सदस्य (म.प्र.) भारत

रहा हैं। नागालैण्ड सरकार की जानकारी व संघर्ष विराम के बावजूद एन एस सी एन (आई एम) राज्य में जबरदस्त वसूली अभियान चला रहा है। नागालैण्ड सरकार कथित रूप से कानूनी व गैर कानूनी तौर पर एक मुश्त राशि इस गुट को देती है। गैर नागा व्यापारियों, ठेकेदारों और सरकारी कर्मचारियों से चिट्ठी भेजकर उगाही की जाती है। नागा व्यापारी भी इससे बचे नहीं है। स्थानीय मीडिया में इसकी खूब शिकायत छपती हैं पर नागालैण्ड सरकार इस पर से आंख,नाक,कान बन्द किए हुए है। लोगों पर अत्याचार और उनकी हत्याओं से मन नहीं भरा तो एन एस सी एन (आई एम) ने गैर नागा लोगों के लिए प्रवेश पत्र जारी करना शुरू कर दिया है। मजदूर, व्यापारी, ठेकेदार, राज्य व केन्द्र सरकार के कर्मचारी जो गैर नागा है, उसके लिए प्रवेश पत्र लेना शुरू कर दिया है। धमकी दी गई है कि अगर कोई भी एन एस सी एन (आई एम) के प्रवेश पत्र के बिना पाया गया तो कड़ी सजा भुगतनी पडेगी। प्रवेश पत्र की कीमत अगर फोटो साथ दी जाती है, तो 160 रूपये और फोटो नहीं तो 190 रूपये रखी गई है। इस प्रवेश पत्र में लिखे नियमों के अनुसार सरकार एन एस सी एन (आई एम) को अधिकार है कि कोई भी व्यक्ति अगर देशहित के विरूद्ध कोई कार्य करते पकड़ा जाता है, तो उसका प्रवेश पत्र निरस्त कर सकती है। यह प्रवेश पत्र हर समय अपने पास रखना होगा। यह अगर खो जाता है, तो सात दिन के अन्दर सूचित किया जाए। जरूरत के अनुसार प्रवेश पत्र के कायदे कानूनों में समय-समय पर सुधार किया जाएगा।

नागा विद्रोही गुट का कहना है कि ऐसा 'अवैध घुसपैठ रोकने के लिए किया जा रहा है।' लेकिन यह कोई छुपा रहस्य नहीं है कि एन एस सी एन (आई एम) और इस्लामी जेहादी संगठनों के बीच सांठ गांठ है। इसी कारण इस विद्रोही गुट का कोई बड़ा नेता मुस्लिम घुसपैठ के खिलाफ कभी नहीं बोलता। वे हमेशा भारतीयों को ही परेशान करते हैं।प्रवेश पत्र दो बातें साफ करता हैं। पहला नागालैण्ड में एन एस सी एन (आई एम) की समान्तर सरकार चल रही है और दूसरा इसके जरिए वह बड़ी मात्रा में धन वसूल रहा है।

कोहिमा में जनरल स्टोर चलाने वाले एक असम के व्यापारी दीपक दास कहते हैं, यह सही नहीं है NSCN (IM) के छात्रों को पहचान पत्र जारी करने का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि हमारे पास सरकार द्धारा जारी किया गया 'इनर लाइन परमिट' है, जो हमें यहाँ के कानून के तहत रहने की छूट देता है। इस बार-बार के अपमान को सहने की बजाए मैं कोहिमा छोड़कर अपने राज्य असम लौट जाना बेहतर समझता हूँ। दीपक दास की पीड़ा अकेले व्यक्ति की पीड़ा नहीं है, बल्कि हजारों लाखों लोगों की पीड़ा है। नागालैण्ड देश से कट जाए, ऐसा कोई सच्चा देशवासी नहीं चाहता।

NSCN (IM) एक आतंवादी संगठन है, जिस पर मणिपुर की तांग्खुल जनजाति का नियन्त्रण है। यह गुट लम्बे समय से नागालैण्ड और अन्य उत्तर पूर्वी राज्यों के नागा बहुल इलाकों को मिलाकर भारत में अलग एक स्वतन्त्र ईसाई देश बनाने की मांग करता आ रहा है। इस गुट द्धारा की गई हिंसात्मक कार्यवाहियों में अब तक सैकड़ों सैनिक और नागा व गैर नागा मारे जा चुके हैं। इस गुट को कई अन्तर्राष्ट्रिय एजेन्सियों से सहयोग मिल रहा है, देश के कई गैर सरकारी संगठनों का इस गुट के साथ गठजोड़ है।

यह सवाल पैदा होता है कि नागा विद्रोही गुट इतने वर्षो से इस तरह की देश द्रोही गतिविधियां खुलेआम कैसे करते आ रहा है। जबकि इसके साथ भारत सरकार का 1 अगस्त 1997 से संघर्ष विराम चल रहा है। वे कौन लोग हैं, जो देश को बांटने वाली कार्यवाइयों को शह दे रहे हैं। इसका मतलब है कि संघर्ष विराम के जो आधारभूत नियम तय हुए हैं, उनको लेकर अस्पष्टता की स्थिति है। नियमों की इसी स्थिति का फायदा उठाकर NSCN (IM) के विद्रोही भारतीय अर्द्धसैनिक बलों की वर्दिया पहनकर राज्य के कुछ इलाकों में हथियार सहित बेरोक टोक आते जाते हैं।

संघर्ष विराम के नियमों ने जहाँ राज्य में उग्रवाद विरोधी अभियान चलाने के लिए तैनात असम राइफल्स और सी आर पी एफ की गतिविधियों पर कई तरह के नियन्त्रण लगा दिए गए हैं वहीं उग्रवादी किसी भी नियम का पालन करते हुए दिखाई नहीं देते। पहले की तरह ही NSCN (IM) के दोनों गुट धडल्लें से हत्या, अपहरण और धन उगाही की घटनाओं को अन्जाम दे रहे है। संघर्ष विराम के बाद भी नागालैण्ड में हिंसा का दौर जारी रहने पर केन्द्र सरकार सफाई देती है कि यह कानून व्यवस्था की समस्या है जिससे नागालैण्ड पुलिस को निपटना चाहिए। दूसरी तरफ नागालैण्ड पुलिस अपने आपको उग्रवादियों की ताकत के सामने कमजोर महसूस करती रही है और चाह कर भी उग्रवादियों को नियंत्रित कर पाने में सफल नहीं हुई है। केन्द्रीय गृह मंन्त्रालय के आकड़ो के अनुसार वर्ष 2007 में उग्रवादी हिंसा की 272 घटनाएं हुई। जिसमें 154 व्यक्तियों की मौत हो गयी। वर्ष 2008 में उग्रवादी हिंसा की 244 घटनाएं हुई जिसमें 175 व्यक्ति मारे गए। इन बातों से ऐसा लग रहा है , मानों केन्द्र सरकार ने एकतरफा संघर्ष विराम लागू कर रखा है और सारे नियम केवल सुरक्षा बलों के लिए ही हैं। संघर्ष विराम लागू होने के बाद सुरक्षा बलों ने अपने उग्रवाद विरोधी अभियान को रोक दिया है। इस तरह उग्रवादी मौके का फायदा उठाते हुए धड़ल्लें से हिंसक गतिविधियां संचालित कर रहे है। सुरक्षा बलों की तरफ से अभियान को रोक देने से कोई सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ा है। उग्रवादी प्रत्येक नागरिक से धन उगाही कर रहे हैं जिसमें राजनेता से लेकर गांव के सामान्य किसान तक शामिल हैं। धन देने से इंकार करने वालों की हत्या कर दी जाती है। नवम्बर 2007से मई 2008 के बीच 60 गैर नागा व्यापारियों का अपहरण फिरौती के लिए किया गया है।स्थानीय मीडिया पर भी इस विद्रोही गुट ऐसा आतंक है कि उससे जुड़ी खबरें ही छापी जाती है। ऐसा क्या कारण है कि केन्द्र व राज्य सरकारें इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर न केवल चुप्पी साधे बैठीं है बल्कि एक प्रकार से इसे शह भी दे रही है। अगर ऐसी परिस्थितियां बनी रही तो नागालैण्ड भारत से अलग हो जायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की पहली अमेरिका यात्रा

डॉ. संजय मिश्र *

प्रस्तावना –कहना न होगा कि द्वितीय महायुद्ध के बाद वस्तुत: दुनिया के इन दो लोकतान्त्रिक देशों के बीच एक–दूसरे की भूमिका को स्वीकार करने की मनोवृति का अभाव रहा। स्वतंत्र भारत की गुटनिरपेक्ष नीति प्रारम्भिक काल में अमेरिकी शासकों की समझ से परे ही रही तो दूसरी ओर तीसरी दुनिया में अमेरिका की महत्वाकांक्षी भूमिका भारत के लिए स्वीकार करना कठिन साबित हुआ। नरेन्द्र मोदी जी से पूर्व कई भारतीय प्रधानमंत्री अमेरिका की यात्रा पर गए सभी की यात्राओं का अपना अलग अलग महत्व रहा है परन्तु मोदी जी की प्रधान मंत्री बनने के बाद पहली अमरीकी यात्रा का अपना अलग ही महत्व है, जिसकी चर्चा शोध पात्र में की गई है।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी 26 सितंबर से अमेरिका की पांच दिवसीय यात्रा पर थे। प्रधानमंत्री बनने के बाद उनकी यह पहली अमेरिका यात्रा थी[1] इससे पहले मोदी जी सितंबर, 1993 में अमेरिका पहुंचे थे। आरएसएस प्रचारक के रूप में मोदी जी और मुरली मनोहर जोशी स्वामी विवेकानंद की 100वीं जयंती के अवसर पर आयोजित कार्यक्रम में शामिल होने शिकागो पहुंचे थे। प्रधानमंत्री बनने के बाद नरेन्द्र मोदी ने पॉच दिन की ऐतिहासिक अमेरिका यात्रा 26–30 सितम्बर,2014 को हुई उनकी इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा के 69 वें सत्र को सम्बोधित करना था। महासभा में उनका यह सम्बोधन 27 सितम्बर को होना निर्धारित था, इसके साथ ही अमेरिकी राष्ट्रपति के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों पर उनकी बहुप्रतीक्षित वार्ता का कार्यक्रम भी 30 सितम्बर के लिए निर्धारित था। लगभग 100 घण्टे के अमेरिका प्रवास के दौरान 36 महत्वपूर्ण कार्यक्रमों में भागीदारी के प्रधानमंत्री मोदी के कार्यक्रम थे।[2]

27 सितम्बर को न्यूयॉर्क में संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने सम्बोधन में प्रधानमंत्री मोदी ने संयुक्त राष्ट्र संघ की विगत वर्षो की उपलब्धियों पर संतोष व्यक्त किया तथा साथ ही आगे आने वाली चुनौतियों के सन्दर्भ में इस संगठन में सुधारों की भारत की मॉग दोहराई इस बात पर उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया कि यूएनओ जैसा अच्छा प्लेटफॉर्म उपलब्ध होने के बावजूद अनेक जी समूह विगत वर्षो में बनते चले गए। कभी जी–4 तो कभी जी–7 या फिर जी–20 उन्होंने कहा कि आवश्यकता इस बात की है कि हम जी–1 से आगे बढ़कर जी–ऑल की दिशा में कदम उठाए उन्होंने कहा कि कोई एक देश या देशों का समूह विश्व की धारा को तय नहीं कर सकता है। वास्तविक अन्तर्राज्यीय होना समय की मॉग है तथा यह अनिवार्य भी हैं। प्रधानमंत्री ने कहा कि हमारे प्रयासों का प्रारम्भ यहीं संयुक्त राष्ट्र संघ से होना चाहिए संयुक्त राष्ट्र संघ में सुधारों की मॉग को दोहराते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने इस बात पर भी बल दिया कि संयुक्त राष्ट्र संघ पीस कीपिंग मिशनों में सैन्य टुकड़ियों का योगदान देने वाले देशों को निर्णय प्रक्रिया में भी शामिल करना चाहिए। आतंकवाद के फैलाव के प्रति चिन्ता व्यक्त करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने कहा की 20 वर्ष पूर्व जब वह इसके बारे में चर्चा करते थे, तो किसी के गले यह बात नहीं उतरती थी तथा **लॉ एण्ड ऑर्डर प्रॉब्लम** कहकर ही लोग इससे किनारा कर लेते थे। उन्होंने बताया कि आज पूरा विश्व देख रहा है कि किस प्रकार फैलाव को यह पाता जा रहा है इस सन्दर्भ में लम्बे समय से लम्बित Comprehensive Convention on International Terrorism पारित करने की आवश्यकता अपने इस सम्बोधन में बताई विश्व में विभिन्न अभावों का उल्लेख करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि आज बेसिक सेनीटेशन 2.5 अरब लोगों की पहुँच के बाहर है, 1.3 अरब लोगों को बिजली और 1.1 अरब लोगों को पीने का पानी उपलब्ध नहीं है।[3]

इस सन्दर्भ में अधिक व्यापक व संगठित अन्तर्राष्ट्रीय कार्यवाही की आवश्यकता उन्होंने बताई तथा साथ ही उन्होंने बताया कि भारत में उनके विकास एजेंडे के सबसे महत्वपूर्ण पहलू इन्हीं मुद्दों पर केन्द्रित हैं। 2015 के बाद के लिए विकास एजेंडे (Post 2015 Development Agenda) में इन्हीं बातों को ध्यान में रखने की आवश्यकता उन्होंने बताई। जीवन शैली के बदलाव लाने की आवश्यकता बताते हुए योग के महत्व का उल्लेख भी उन्होंने अपने इस सम्बोधन में किया तथा अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस की दिशा में कार्य करने का आह्वान उन्होंने किया। पड़ोसी देशों के साथ अच्छे सम्बन्धों की कामना करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने अपने सम्बोधन में कहा कि भारत अपनी प्रगति के लिए शंतिपूर्ण एवं स्थिर अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण की अपेक्षा करता है। उन्होंने कहा कि भारत का भविष्य उनके पड़ोस से जुड़ा हुआ है। जिसके कारण ही उनकी सरकार ने पहले ही दिन से पड़ोसी देशों से मित्रता व सहयोग बढ़ाते को पूरी प्राथमिकता दी है। पाकिस्तान, जिसके प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने एक दिन पूर्व ही महासभा में अपने सम्बोधन में कश्मीर में जनमत संग्रह की मॉग उठाई थी, कि साथ भी मित्रता व सहयोग बढ़ाने की इच्छा व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि इसके लिए गम्भीरता से शांतिपूर्ण वातावरण में बिना आतंक के साये के साथ वह द्विपक्षीय बात करना चाहते हैं, लेकिन इसके लिए उपयुक्त वातावरण बनाने की अपेक्षा उन्होंने पाकिस्तान से भी की संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपना यह सम्बोधन श्री मोदी ने हिन्दी में किया तथा महासभा में हिन्दी में सम्बोधन करने वाले वह अटल बिहारी वाजपेयी के बाद दूसरे भारतीय प्रधानमंत्री हैं।

प्रधानमंत्री के रूप में नरेन्द्र मोदी की इस पहली ही अमेरिका यात्रा के दौरान ओबामा प्रशासन को भी एक बड़ा झटका उस समय लगा जब 2002 के गुजरात दंगों के मामले में उनकी भूमिका को लेकर न्यूयॉर्क की एक संघीय अदालत ने एक समन श्री मोदी के विरूद्ध जारी किया जिसमें 21 दिन में उनसे जवाब माँगा गया था, इस मामले में अमेरिकी प्रशासन ने भी श्री मोदी का बचाव किया और कहा कि राष्ट्राध्यक्ष होने के नाते अमेरिकी अदालतों के मामलों में पूर्ण राजनयिक छूट उन्हें प्राप्त है जिसके चलते कोई भी अदालती समन उन्हें तामील नहीं कराया जा सकता। 2002 के गुजरात दंगों के

* अथिति विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मऊगंज, जिला - रीवा (म.प्र.) भारत

सिलसिले में भी, मोदी के विरूद्ध मामला दर्ज कराने वालों में शामिल अमेरिकन जस्टिम सेंटर ने यह समन मोदी तक पहुॅचाने वाले को 10 हजार डॉलर का पुरस्कार देने की घोषण भी की किन्तु इसके लिए सुरक्षा घेरा उपलब्ध रहने के कारण उन्हें यह समन तामील नहीं किया जा सका. भारतीय विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता सैयद अकबरूद्धीन ने समन के मामलें में उचित कदम उठाने की बात कही है, इसके पूर्व सन् 2005 में अमेरिकी प्रशासन ने मोदी की वीजा निरस्त कर दिया था।[4]

अमेरिका प्रवास के दौरान श्री मोदी ने अनेक वैश्विक नेताओं के साथ अनौपचारिक द्विपक्षीय बैठकें कीं इजराइल के प्रधानमंत्री बेन्जजमिन नेतान्याहू, श्रीलंका के राष्ट्रपति महिन्द्रा राजपक्षे, बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना व नेपाल के प्रधानमंत्री सुशील कोइराला इनमें शामिल थे संयुक्त राष्ट्र वार्ता 27 सितम्बर को हुई। अगले दिन 28 सितम्बर को न्यूयॉर्क में ही काउंसिल ऑफ फॉरेन रिलेशंस के कार्यक्रम में भागीदारी तथा मेडिसन स्क्वायर गार्डेन (MSG) सम्बोधन के उनके कार्यक्रम थे।

मेडिसन स्क्वायर गार्डेन में भारतीय मूल के समूदाय की एक सभा को उन्होंने सम्बोधित किया। 20 हजार लोगों की क्षमता वाला यह स्थान श्री मोदी को सुनने के लिए खचाखच भरा हुआ था। सीटिंग कैपेसिटी की सीमितता के चलते बड़ी संख्या में लोग इसके लिए टिकट प्राप्त नहीं कर सके थे। लगभग 50 अमेरिकी सांसद भी इस ऐतिहासिक कार्यक्रम में शामिल थे। भारतीय अमेरिकी समुदाय के लोगों को सम्बोधित करते हुए भारत के विकास कार्यक्रम में शामिल होने का आव्हान उन्होंने किया । इस सन्दर्भ में भारत के पास उपलब्ध तीन महान शक्तियों-लोकतंत्र, जनसांख्यिकी व मॉग (democracy, demography and demand) का उल्लेख यहॉ भी उन्होंने किया। भारत व अमेरिका के बीच यात्रा को आसान बनाने के लिए कुछ घोषणाएं भी उन्होंने कीं पीआईओ (person of indian origin) व ओसीआई (overseas citizen of india) योजनाओं के बीच कुछ विशिष्ट अंतरों का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि पीआईओ कार्डधारकों को आजीवन वीजा दिया जाएगा। दोनों योजनाओं को मिलाकर एक नई योजना शीघ्र ही लाने की घोषणा भी उन्होंने की इसके साथ ही उन्होंने कहा कि भारत में लम्बे समय तक ठहरने वाले लोगों को अब पुलिस स्टेशन जाने की आवश्यकता नहीं होगी । अमेरिकी नागरिकों के लिए लम्बी अवधि का पर्यटक वीजा प्रदान करने की घोषणा करते हुए उन्होंने कहा कि अमेरिकी पर्यटकों को आगमन पर वीजा प्रदान करने की योजना की घोषणा भी शीघ्र ही की जाएगी।

प्रधानमंत्री मोदी की अमेरिका यात्रा का सबसे प्रमुख कार्यक्रम मेजबान राष्ट्रपति बराक ओबामा के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों पर वार्ता का था। 29 सितम्बर 2014 को राष्ट्रपति ओबामा ने श्री मोदी के सम्मान में रात्रि-भोज का आयोजन किया। व्हाइट हाउस में आयोजित इस डिनर में केवल गुनगुना पानी ही मोदी ने व्रत मे चलते लिया। इस अवसर पर दोनों नेताओं की बातचीत के पश्चात् 30 सितम्बर 2014 को व्हाइट हाउस में ही दोनों के बीच पुन: वार्ता सम्पन्न हुई। प्रतिनिधि मण्डल स्तर की इस वार्ता में विदेश मंत्री सुषमा स्वराज, राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोवाल व अमरीका में भारतीय राजदूत एस. जयशंकर के अतिरिक्त प्रधानमंत्री कार्यालय व विदेश मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारी शामिल थे। अमेरिकी राष्ट्रपति ओबामा के साथ वार्ताकार दल में उपराष्ट्रपति जो बिडेन, विदेश मंत्री जॉन कैरी, राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार सुसन राइट तथा दक्षिण व मध्य एशिया मामलों की सहायक विदेश सचिव निशा देसाई बिस्वाल शामिल थीं । द्विपक्षिय सम्बन्धों को और अधिक विस्तृत एवं गहन बनाने पर सहमति इन वार्ताओं में दोनों पक्षों में हुई। आर्थिक मामलों, परमाणु ऊर्जा, पर्यावरण व अफगानिस्तान आदि मुद्दा पर आपसी तालमेल बढ़ाने पर सहमति दोनों पक्षों में हुई तथा द्विपक्षीय रक्षा सहयोग को 10 वर्ष के लिए और आगे बढ़ाने का फैसला इस वार्ता में किया गया। एक अन्य सहमति के तहत् इलाहाबाद, अजमेर व विशाखापट्टनम् को स्मार्ट सिटी बनाने में सहयोग अमेरिका देगा। विश्व व्यापार संगठन (WTO) के प्रस्तावित व्यापार सम्मेलन के मामले में भारत की खाद्य सुरक्षा सम्बन्धी चिन्ताओं को दूर करने का आश्वासन अमेरिकी राष्ट्रपति ने दिया। आंतकवाद के क्षेत्र में पारस्परिक सहयोग बढ़ाने के लिए सहमति भी वार्ता में हुई। अफगानिस्तान, सीरिया व इराक में हो रहे घटनाक्रम सहित विश्व संकट के विभिन्न विषयों पर आपस में अधिक विचार विमर्श के लिए भी सहमति दोनों पक्षों में हुई। दोनों पक्षों के बीच 2005 में हुए असैन्य परमाणु समझौते को तेजी से लागू करने से जुड़े मुद्दों को सुलझाने के लिए अन्तर एजेंसी सम्पर्क समूह गठित करने का निर्णय वार्ता में किया गया वार्ता के पश्चात् जारी संयुक्त घोषणा पत्र में उपर्युक्त सहमति के उल्लेख करते हुए भारत अमेरिकी सम्बन्धों को नई ऊॅचाइयों तक ले जाने का वायदा किया गया है।[5]

निष्कर्ष – मोदी जी की पहली अमेरिका यात्रा काफी सकारात्मक रही है। जिस भव्यता के साथ मोदी जी का अमेरिका में स्वागत किया गया उसको देखते हुए यही कहा जा सकता है की अमेरिका भारत के साथ बहुत अच्छे और मजबूत सम्बन्धा बनाना चाहता है। मोदी जी की इस यात्रा से भारत को कई फायदे हुए योग को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मानाने की सहमति भी इसी यात्रा के दौरान ही मिली। पाकिस्तान को भी भारत की ताकत का अहसास भी मोदी जी की यात्रा से हुआ। सम्मेलन में जो महत्व भारत को मिला वो पाकिस्तान हासिल नहीं कर पाया। न सिर्फ सम्मेलन में बल्कि अमेरिका वासियों के बीच भी मोदी जी इस यात्रा के दौरान काफी लोकप्रिय हुए मेडिसन स्क्वायर गार्डेन में मोदी जी को सुनने के लिये एक जन सैलाब उमड़ पड़ा जिससे उनकी लोकप्रियता का अनुमान लगाया जा सकता है । अमेरिका ने जिन मोदी जी का वीजा कैंसिल कर दिया था। उन्हीं मोदी जी के प्रधाानमंत्री बनते ही अमेरिका की यात्रा का निमंत्रण अमेरिका देने लगा। अमेरिका भारत की ताकत को पहचान गया है। ओबामा जी से मोदी जी की हुई वार्ता से यह स्पष्ट हो गया की अमेरिका भारत को अपना एक बराबरी का मित्र बनाना चाहता है।मोदी जी की पहली सफल अमेरिकी यात्रा भारत की मजबूत विदेश नीति को प्रमाणित करती है। आशा की जा सकती है की आने वाले समय में भारत अंतरराष्ट्रीय जगत में महाशक्ति बनकर उभरेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर 23 सितंबर 2014
2. किरण समसामयिकी 2014-2015, पृ.- 109
3. नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली, 27 अक्टूबर, 2014
4. सम सामायिक घटना चक्र 15 दिसंबर 2014
5. प्रतियोगिता दर्पण नवम्बर 2014 पृ 35 प्रति ।

****

दहेज प्रतिषेध एवं प्रक्रिया अधिनियमों की विवेचना

डॉ. इन्द्रेश्वर कुमार दोहरे *

प्रस्तावना – दहेज मानव मात्र पर एक कलंक एवं कुप्रथा मानते हुए 1961 में तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने 'दहेज प्रतिशोध अधिनियम 1961' के नाम से एक अधिनियम पारित करवाया जिसका एक मात्र उद्देश्य दहेज प्रथा को समाप्त करना था। इस अधिनियम के महत्व को ध्यान में रखते हुए कई कमियाँ एवं खामियाँ पायी जाने पर इस कानून में समय-समय पर संशोधन किए गए एवं सन 1984 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी एवं सन् 1986 में प्रधानमंत्री श्री राजीव गाधी की सरकार द्वारा इसमें काफी संशोधन कर इसे यथासंभव शीघ्र तैयार की जायेगी। (यह सूची लिखित में हो) इसे व्यावहारिक रूप से प्रदान की कोशिश की गई। इतना ही नहीं सन् 1985 में दहेज प्रतिषेध (वर-वधु भेंट सूची) नियम 1985 भी पारित किया गया है। जिसके तहत वर पक्ष द्वारा वधू पक्ष से जो धन या राशि विवाह की शर्त के आधार पर मांगी जाती है, या दी जाती है। वह गैर कानूनी है। इसके तहत दहेज लेने अथवा देने वालों को पांच साल की सजा एवं 150 रू. तक का जुर्माना अथवा जितना दहेज दिया गया है, वह भी वसूल करने तक की बात कही गई है। धारा-4 के तहत दहेज मांगने वाले को 6 माह की सजा जो दो साल भी बढ़ाई जा सकती है। अधिनियम 1971 के तहत दहेज में दी गई वस्तु केवल पत्नी और उसके उत्तराधिकारी के फायदे के लिए ही होगी। इस प्रावधान का उल्लंघन करने वाले को 6 माह की सजा एवं 500 रू. एवं अधिक से अधिक 10000 रूपयों तक का अर्थदण्ड दिया जा सकता है।

इसी प्रकार 1986 के संशोधन द्वारा यह भी व्यवस्था की गई है कि अगर किसी महिला की मृत्यु सात वर्षों के भीतर हो जाती है एवं उस महिला के कोई बच्चे अथवा उत्तराधिकारी नहीं हैं, उस स्थिति में सारा दहेज जो लड़की को दिया गया था, लड़की के माता-पिता प्राप्त करने के अधिकारी हैं।

दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 में निहित उन प्रावधानों की विस्तार से चर्चा करेंगे जो कि महिलाओं के लिए विशेष रूप से बनाए गए हैं एवं जो अत्यन्त आवश्यक, उपयोगी एवं प्रयोगात्मक होकर महिलाओं के लिए हितकारी हैं। संहिता की धारा 47 (2) जो कि व्यक्ति को गिरफ्तार करने हेतु तलाशी लिए जाने से सम्बन्धित है। यदि कमरे में कोई स्त्री है जो पर्दानशीन स्त्री है एवं आम व्यक्ति के सामने नहीं आती तो पुलिस अधिकारी पहले उस स्त्री को उस स्थान से हट जाने के लिए सूचित करेगा व उस स्त्री को ऐसी सभी सुविधा प्रदान करने की कोशिश करेगा ताकि स्त्री उस कमरे से आराम से बाहर निकल जाए यानि की स्त्री की शिष्टता का पूरा ध्यान रखते हुए उसे पूर्व सूचना देने के बाद ही तलाशी हेतु कमरे में दाखिल हो सकेगा, अन्यथा नहीं। इसी तरह धारा 51 (2) के तहत अगर किसी महिला की तलाशी लेनी हो तो उस महिला की शिष्टता का पूरा-पूरा ध्यान रखते हुए तलाशी ली जा सकेगी। धारा 53 (2) के तहत अगर किसी महिला अपराधी की चिकित्सा व्यवसायी द्वारा शारीरिक परीक्षा की जानी हो तो वह परीक्षा केवल स्त्री चिकित्सक द्वारा ही ली जायेगी अथवा उसके पर्यवेक्षण में भी ली जायेगी। धारा 98 के तहत अगर मजिस्ट्रेट के पास इस आशय का परिवाद आता है कि किसी महिला अथवा 18 वर्ष से कम उम्र की लड़की को किसी विधि विरूद्ध प्रयोजन के लिये अपहृत या निरूद्ध किया गया है, तो मजिस्ट्रेट ऐसी स्त्री अथवा बालिका तुरन्त स्वतंत्र (रिहा) किए जाने हेतु आदेश दे सकता है तथा अगर बालिका जो कि नाबालिग है, तो उसके पति, माता-पिता अथवा अन्य संरक्षक के पास वापस कर देने हेतु आदेश पारित कर सकता है और वह ऐसा करने के लिए आवश्यकतानुसार बल प्रयोग भी कर सकेगा। धारा-100 (3) के तहत 51 (2) की तरह ही स्त्री की तलाशी अथवा उसके शरीर से किसी वस्तु की बरामदगी के मामले में उस स्त्री की शिष्टता का ध्यान रखते हुए किसी स्त्री द्वारा ही तलाशी ली जायेगी। धारा 160 (1) के तहत कोई भी पुलिस अधिकारी अन्वेषण के दौरान किसी भी महिला को थाने पर नहीं बुला सकेगा, अगर उसे महिला के बयान लेने हैं, तो वह अधिकारी बयान लेने उसके निवास स्थान पर जायेगा, किन्तु वह उसे थाने पर नहीं बुला सकता। सूर्योदय से पूर्व एवं सूर्यास्त के बाद महिला को थाने पर नहीं बुलाया जा सकेगा और अगर किसी महिला को गिरफ्तार किया जाता है, तो उस थाने पर महिला पुलिस का होना अनिवार्य है। इसके अलावा महिला के परिवार का कोई अन्य महिला व पुरूष सदस्य भी थाने पर रहेगा।

धारा 304 के तहत अगर कोई अभियुक्त अपने स्वयं के खर्चे पर पैरवी करने में असमर्थ है, तो राज्य के व्यय पर उसकी पैरवी हेतु न्यायालय द्वारा वकील उपलब्ध कराया जा सकेगा। ताकि केवल आर्थिक आधार पर कोई भी व्यक्ति न्याय से वंचित न हो। यह प्रावधान दोनों ही प्रकार यानि स्त्री एवं पुरूष अपराधी के लिये हैं यानि दोनों ही अपराधी इस प्रावधान का लाभ प्राप्त कर सकते हैं और अब तो संविधान के अनुच्छेद 39 (अ) जो मुफ्त कानूनी सहायता के बारे में है, के द्वारा भी कानूनी सहायता प्रदान करने की बात की गई है। धारा 360 के तहत अगर कोई स्त्री ऐसे (अपराधी) अपराध के लिए जो मृत्यु के आजीवन कारावास से दण्डनीय नहीं है, दोषी सिद्ध की जाती है और अगर यह उसका प्रथम अपराध है, तो न्यायालय उसे दण्डादेश के बजाय दोषी मानते हुए भी सदाचरण परिवीक्षा पर छोड़ सकता है और अब तो इस बाबत् अधिनियम भी पारित हो चुका है यानि कि अगर किसी महिला द्वारा गलती से कोई अपराध हो जाता है तो कम से कम एक बार तो इस प्रावधान के माध्यम से उसे सुधरने का मौका मिल जाता है। धारा 416 के तहत अगर कोई स्त्री जिसे मृत्यु दण्ड की सजा दी गयी है या पाया जाता है

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान)शासकीय गोविंद महाविद्यालय, सेंवढ़ा, जिला दतिया (म.प्र.) भारत

कि वह गर्भवती है, तो ऐसी स्थिति में उच्च न्यायालय मृत्युदण्ड के आदेश के निष्पादन को तब तक के लिए स्थगित कर देगा ,जब तक वह बच्चे को जन्म नहीं दे देती और न्यायालय अगर ठीक समझे तो मृत्यु दण्ड के आदेश को आजीवन कारावास के आदेश में परिवर्तित कर सकेगा। दण्ड प्रक्रिया संहिता का सबसे महत्वपूर्ण अध्याय महिलाओं के भरण-पोषण से संबंधित है। धारा 125 से 128 भरण पोषण के बारे में है। धारा 125 के तहत यह दर्शाया गया है कि अगर कोई पति अपनी पत्नी जो कि अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है अथवा उसकी संतान जो कि धर्मज अथवा अधर्मज है अथवा उसके माता-पिता जो कि अपना भरण पोषण करने में असमर्थ हैं, उनका भरण-पोषण करने से इन्कार करता है, जो पत्नी को सक्षम न्यायालय द्वारा 500 रूपया मासिक तक भरण पोषण भत्ता दिलाया जा सकता है। सबसे दिलचस्प पहलू यह है कि उक्त भरण पोषण की रकम पत्नी तलाक के बाद भी जब तक कि वह किसी अन्य व्यक्ति से विवाह नहीं कर लेती है, तब तक प्राप्त कर सकती है।

जहाँ तक मुस्लिम महिला का सवाल है, तो मुस्लिम विधि के अनुसार एक मुस्लिम महिला तलाक के पश्चात केवल इद्दत तक की अवधि तक ही भरण-पोषण प्राप्त कर सकती है। हमारे संविधान के अनुच्छेद 44 में भी समान दीवानी अधिकारों की कल्पना की गई है। अनुच्छेद 44 अपेक्षा करता है कि 'राज्य भारत के समस्त राज्य क्षेत्र में नागरिकों के लिए समान दीवानी संहिता प्राप्त करने का प्रयास करेगा।' संविधान को लागू हुए आज करीब 65 वर्ष हो गये हैं किन्तु दुर्भाग्य का विषय है कि भरण-पोषण के मामले में हिन्दू व मुस्लिम महिला का समान अधिकार प्राप्त नहीं है, जबकि दोनों ही इस देश की समान नागरिक हैं एवं दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान दोनों पर ही समान रूप से लागू है। संसद ने हिन्दू महिला की तरह ही मुस्लिम महिला को भी उसका स्त्रीधन दिलाया है और उसे आर्थिक परेशानी से काफी हद तक मुक्त कराने की कोशिश की है ताकि वह तलाक के बाद भी समाज में एक अच्छा एवं प्रतिष्ठित जीवन बिता सके एवं अपने आपको शोषण से मुक्त रख सके। हिन्दू महिला 'हिन्दू दत्त एवं भरण-पोषण अधिनियम 1956' की धारा-18 के तहत भी भरण-पोषण पाने की अधिकारिणी है एवं इस अधिनियम की धारा 3 के तहत भरण-पोषण से मतलब न केवल भोजन, कपड़ा, निवास बल्कि शिक्षा, चिकित्सा, बीमार का इलाज, उसकी सेवा तथा अविवाहित पुत्री के विवाह का खर्च भी भरण पोषण का ही भाग माना गया है, जबकि मुसलमान कानून में भरण पोषण से मतलब रोटी, कपड़ा और मकान से ही है। यानि यह कहना गलत नहीं होगा कि हिन्दू महिला के पास भरण-पोषण के मामले में ज्यादा उपचार उपलब्ध हैं जो कि मुस्लिम महिला के पास नहीं है, क्योंकि हिन्दू महिला न केवल दण्ड प्रक्रिया संहिता बल्कि 'हिन्दू एवं भरण पोषण अधिनियम' दोनों ही के तरह भरण-पोषण प्राप्त कर सकती है। दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान 125 से 128 आदेशात्मक हैं जिनकी पालना करने के लिए पति बाध्य है और अगर न्यायालय के आदेश के बाबजूद अगर पति भरण -पोषण भत्ता पत्नी को नहीं देता है तो आदेश की पालना नहीं करने के जुर्म में एक माह तक के कारावास तक की सजा दी जा सकती है। इस प्रावधान के होने से महिलाओं को भरण पोषण समय पर मिलने में काफी सुविधा मिली है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. युग निर्माण योजना (नशे से सावधान से लिया)
2. साहित्य पब्लिकेशन/सामान्य ज्ञान/प्रतियोगिता
3. मध्यप्रदेश जनसंपर्क विभाग द्वारा
4. सांख्किीय विभाग द्वारा
5. शोधार्थी द्वारा सर्वेक्षण के आधार पर
6. विभिन्न समाचार पत्रों के माध्यम से

****

आतंकवाद (एक अध्ययन)

प्रो. अंजना सेठिया *

प्रस्तावना – भारत और समूचे विश्व में आतंकवाद एक गंभीर समस्या बनकर उभरा है। विश्व राजनीति आतंकवाद के मुद्दे से प्रभावित है। भारत लगभग 20 वर्षो से लगातार आतंकवाद के विरूद्ध संघर्ष कर रहा है। पड़ोसी देश पाकिस्तान ने इसे शह और पनाह देकर पूरी तरह से बढ़ावा दे रखा है। अत: इस समस्या पर गंभीरता से विचार कर, समाधान निकालना आवश्यक है। मुख्य शब्द – आतंकवाद, हिंसा की कोई घटना, डराने धमकाने का कोई तरीका जिसके माध्यम से कोई व्यक्ति या समूह, किसी सरकार या समूदाय को आंतकित कर अपना राजनीतिक हित साधता है, वह समूह या व्यक्ति आतंकवाद के दायरे में आता है।

आज पूरी दुनिया आतंक के साये में जीने को मजबूर है। समाचार पत्र आतंकवादी घटनाओं से भरे रहते है। अपनी बात मनवाने का यह कैसा तरीका है, जिसमें आदमी जान लेने और देने पर तुला है। उन्माद का यह कैसा रूप है, जहॉ मानव स्वेच्छा से आत्मघाती बम के रूप में परिवर्तित होकर अपने ही साथियों की जान केवल इसलिए लेना चाहता है कि वे उनके अनुसार कार्य नहीं करते है। प्रस्तुत शोध पत्र में उन सभी कारणों की खोजने और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है, जो मनुष्य को आतंक के रास्तेत पर ढकेलने के लिए जिम्मेदार है।

इस्लामिक आतंकवाद पिछले कुछ दशकों से भारत तथा पूरे संसार में होने वाली आतंकवादी घटनाओं का मुख्य कारण रहा है। कहा जाता है कि भारत में आतंकवाद को शह देने का काम स्वयं पाकिस्तान की ओर से किया जा रहा है। भारत में सीमा पार से आतंकवादी घुस रहे है। उनका मकसद भारत को दशहत में करना है। कश्मीर के मुद्दे को लेकर दशहत फैलाने का काम में कई भारत विरोधी ताकतें लगी है।

आतंकवाद से पूरी दुनिया दहल चुकी है, अमेरिका में 9/11 की वारदात हुई थी तो समूचा विश्व कांप गया था। उस हादसे के बाद मानवता रोई थी। वह हमला पूरी मानव जाति पर हमला था। जिसके कारण अमेरिका की तस्वीर बदल गयी और उससे संपूर्ण विश्व प्रभावित हुआ था।

आतंकवाद के लिए जिम्मेदार कारण –

1. **क्रोध –** आतंकवाद के मूल में क्रोध की अतिशयता ही रहती है। क्रोध की अग्नि इतनी तीव्र हो हाती है कि वे हर बात का समाधान हिंसा और बल प्रयोग से ही कर लेना चाहते है। अनेक असामाजिक तत्व एवं उनकी कमजोरी का लाभ उठाकर उन्हें आतंकवाद के दल-दल में घसीट लेते है।

2. **महत्वाकांक्षा –**महत्वाकांक्षा व्यक्ति को यह सोचने को मजबूर करती है कि पैसों और संसाधनों का असामान वितरण हो रहा है ऐसे लोग अपनी महत्वाकांक्षा पूरी करने के लिए गैर कानूनी धंधों का सहारा लेते है। धीरे-धीरे ऐसे लोग आतंकवादी संगठन में सम्मिलित हो जाते है। महत्वाकांक्षा का नशा बहुत शक्तिशाली होता है।

3. **महत्वाकांक्षा का राजसी रूप –** जो असीमित महत्वाकांक्षा मनुष्यों में होती है, उन्हें आतंकवाद के रास्ते पर ले जाती है। अपने राज्य की उन्नति और पड़ोसी राज की अवनति के लिए भी आतंकवाद को एक माध्यम के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। पाकिस्तान की ओर से भारत में आतंकवाद का प्रसार इसी बात का उदाहरण है।

4. **धार्मिक कट्टरपंथ –** यद्यपि धर्म मानव के नैतिक विकास का माध्यम है तथापि कभी-कभी निहित स्वार्थ इसे आतंकवादी तैयार करने के लिए भी प्रयुक्त करते है।

आतंकवादी गतिविधियां निम्न है – आतंकवादी आतंक फैलाने के लिए जिन घटनाओं को अंजाम देते है, उनमें निरंतर वृद्धि होती जा रही है। आतंकवादी आंतक के लिए निम्न कार्य करते है :-

1. **हत्या करना –** आतंकवादी जिन घटनाओं को करते है उनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण है हत्या करना राजीव गांधी, इन्दिरा गांधी की हत्या आदि अनेक उदाहरण इस प्रकार दिए जा सकते है। इसके अतिरिक्त भय फैलाने के लिए निर्दोष व्यक्तियों एवं सेना के व्यक्तियों को निशाना बनाया जाता है।
2. **अपहरण –** आतंकवादी अपने साथी को छुड़ाने के लिए अक्सर पर्यटक सरकार से जुड़े व्यक्तियों एवं हवाई जहाज का अपहरण करने की भी घटनाएं हुई है, जो कि ब्लेकमेलिंग का ज्वलंत उदाहरण है।
3. **बम विस्फोट –** आतंकवादी दशहत फैलाने के लिए बमों का विस्फोट करते है। भारत में भी कई बार भयंकर बमों का विस्फोट हुआ जिसमें अनेक लोग मारे गए।
4. **आगजनी –**आतंकवादी सरकारी सम्पत्ति एवं सेना की युद्ध सामग्री को नुकसान पहुंचाने के लिए आगजनी की घटनाओं को अंजाम देते है।

समाधान –

- विश्व में धर्म के प्रति बन चुकी कट्टर मान्यताओं के चंगुल से निकालना होगा। जिसका सबसे बड़ा समाधान श्रेष्ठ शिक्षा से ही हो सकता है।
- आतंकवाद के सफाए के लिए सबसे पहले शिक्षा के क्षेत्र में हमें ऐसे परिवर्तन करने होंगे, जिससे संपूर्ण मानसिकता एवं नैतिक उत्थान हो सके।
- संसाधनों का न्यायपूर्ण एवं समान वितरण
- जाति, धर्म, वर्ग के आधार पर किसी भी प्रकार का अन्याय और अपमान नहीं।
- स्वतंत्रता समानता एवं बंधुत्व की भावना का विकास।
- कश्मीर में अशांति का मुख्य कारण सीमापार से प्रायोजित आतंकवाद है। परंतु अब भारत ने आतंकवाद के साथ-साथ मानवाधिकार हनन के मुद्दो पर भी पाकिस्तान को बेनकाब करने की रणनीति अपनाई।

आतंकवाद सांप की तरह डसता है। यह अपने आप टलने वाला खतरा नहीं हैं। आतंकवाद सभ्य समाज और मानता के लिए एक कर्तव्य है, खाड़ी देशों में फैले इस्लामी आतंकवाद का जुनुन धीरे-धीरे भारत में भी पैर पसार रहा है। भारत सरकार को सतर्क होकर ऐसे कदम उठाने चाहिए जिससे ऐसे संगठन भारत में अपना प्रचार न कर पाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय सरकार एवं राजनीति – डॉ. आर.एन. त्रिवेदी, डॉ. एम.पी. राय।
2. नई दुनिया समचार पत्र।
3. दैनिक भास्कर।
4. इन्टरनेट से प्राप्त जानकारी।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

पर्यावरण सरंक्षण और महात्मा गांधी

डॉ. किशन यादव *

प्रस्तावना – मेरा जीवन ही मेरा संदेश, इस बीज वाक्य के प्रणेता महात्मा गांधी का जीवन व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की सभी समस्याओं के परिदर्शन में मार्गदर्शक बन जाता है। गांधी जी के समय में देश में तथा विश्व में आज जैसी पर्यावरण प्रदूषण की समस्या मौजूद नहीं थी। परंतु गांधीजी की दृष्टि से उनके वर्तमान और भविष्य की समस्याओं से बच पाना तो असंभव था। इस दृष्टि से उन्होंने अपने जीवन में उन सभी सिद्धांतों को अपनाया जो नैसर्गिक थे। उन्होंने कभी भी प्रकृति के प्रतिकूल किसी भी अवधारणा को उचित नहीं ठहराया। यहां तक कि उन्होंने कुदरती उपचार को ही शारीरिक व्याधि से छुटकारा पाने का सर्वोत्तम उपाय माना। लोगों के सामने गांधी जी ने कुदरती उपचार के सिद्धांतों के बारे में जो पहला प्रवचन दिया था उसका सार इस प्रकार है:

मनुष्य का भौतिक शरीर पृथ्वी, पानी, आकाश, तेज और वायु नाम के पांच तत्वों से बना है। ये तत्व 'पंच महाभूत' कहलाते हैं। इनमें से तेज तत्व शरीर को शक्ति पहुंचाता है। इनमें सबसे जरूरी चीज हवा है। आदमी बिना खाए कई हफ्ते तक जी सकता है। पानी के बिना भी कुछ घंटे बिता सकता है, लेकिन हवा के बिना तो कुछ ही मिनटों में उसकी देह का अंत हो सकता है। इसलिए ईश्वर ने हवा को सबके लिए सुलभ बनाया है। अन्न और पानी की तंगी कभी कभी पैदा हो सकती है, हवा की कभी नहीं। ऐसा होते हुए भी हम बेवकूफों की तरह अपने घरों के अंदर खिड़की और दरवाजे बंद करके सोते हैं ओर ईश्वर को प्रत्यक्ष प्रसादी जैसी ताजी और साफ हवा से फायदा नहीं उठाते.....। प्रकृति सत्य है और सत्य से बड़ा कुछ नहीं। ऐसा उनका दृढ़ विश्वास था। इसी सत्य का अनुपालन उन्होंने जीवनपर्यन्त किया तथा अपनी आत्मकथा को भी 'सत्य के प्रयोग' कहा। 'सत्य एक विशाल वृक्ष है। ज्यों ज्यों उसकी सेवा की जाती है, त्यों त्यों उसमें से अनेक फल पैदा होते दिखाई पड़ते हैं। उनका अंत ही नहीं होता।' जैसे जैसे हम समुद्र की गहराई में उतरते जाते हैं, वैसे वैसे उसमें से हमें अधिक रत्न मिलते जाते हैं।

आज हम सत्य के पुजारी महात्मा गांधी के जीवन से सबक लेने के स्थान पर भोगवाद के अनुकरण में फंस गए हैं। सहज ही कहा जा सकता है कि आज हमारी पृथ्वी और उसके निवासी प्राणी विनाश के कगार पर खड़े हैं। मुद्दा चाहे जनसंख्या का हो, चाहे बात हमारे रहन सहन एवं खान पान की हो अथवा जल, जंगल, जमीन और वायु की, सारा का सारा पर्यावरण प्रदूषण की चपेट में है। गांधी जी की स्पष्ट चेतावनी कि प्रकृति के पास हमारी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बहुत कुछ है परन्तु हमारे लालच अथवा भोगवाद को पूरा करने के लिए बहुत कम नेताओं की समझ में नहीं आई। प्रकृति में पर्यावरण के दोनों घटक सजीव और निर्जीव समाहित है। सजीव घटक में मनुष्य, जीव जन्तु एवं समस्त प्राणी जगत आता है, जबकि निर्जीव घटक में मिट्टी, पानी, पवन, गगन और अग्नि ही हैं। भारतीय दर्शन एवं संस्कृति में प्रकृति को शक्तिरूपा, मानव सहचरी एवं मां माना गया है। धरती माता इसी पृथ्वी को कहा जाता है। भारत माता आखिर इसी भारत देश का नाम है, जिसकी हम जयकार करते हैं। हमारी संस्कृति में इसीलिए दो माताएं मानी गई हैं। एक जन्म देने वाली माता और दूसरी जन्मभूमि। दोनों को ही स्वर्ग से बढ़कर माना गया है– 'जन–जन जन्मभूमिश्य स्वर्गदपि गरीयसी।' गांधी जी ने जन्मभूमि तथा प्रकृति को अपने से अलग करके कभी नहीं देखा। गांधी जी ने स्पष्ट कहा, – 'अपनी जन्मभूमि का और इस पृथ्वी पर माता को जो हमारा पोषण करती है, हम कोई हित कर रहे हैं या उस पर बोझ रूप हैं, यह तो भविष्य ही बताएगा।'

गांधी जी जीवन में स्वच्छता और सफाई को सबसे ऊंचा स्थान देते थे– 'जो आदमी जहां चाहे वहां और जिस तरह चाहे उस तरह थूक कर, कूड़ा कर्कट डाल कर गंदगी फैलाकर या दूसरे तरीकों से हवा को गंदी करता है, वह कुदरत और मनुष्य के प्रति अपराध करता है। मनुष्य का शरीर ईश्वर का मंदिर है। उस मंदिर में जाने वाही हवा को गंदी करता है वह मंदिर को भी बिगाड़ता है। मानवीय जीवन के सहज रूप से जुड़े पर्यावरण संबंधी विचार भला कैसे भुलाए जा सकते हैं। पर्यावरण के सजीव घटक को सर्वोत्कृष्ट प्राणी जब पर्यावरण बिगाड़ता है, तो उसे नरक से कौन बचा सकता है।

आज पृथ्वी माता का संकट किसी से छिपा नहीं है। विश्व के लगभग सभी देशों में पर्यावरण और वन मंत्रालय हैं। परंतु पर्यावरण पर मानव के कुप्रयासों का दबाव निरंतर बढ़ता जा रहा है। जब व्यक्ति वृक्ष विनाश, जल सतह की समाप्ति अथवा जीव मंडल को प्रदूषित करता है, तो वह जलवायु संबंधी परिवर्तनों के विनाशक रूप को आमंत्रित करता है। स्पष्टत: यह सब गलत आर्थिक नीतियों का दुष्प्रभाव है। गांधी जी ने हमें जो मार्ग दिखाया वह अर्थशास्त्र की दृष्टि से, समाज की दृष्टि से और व्यवस्था की दृष्टि से मानव पर आधारित था। उसमें आर्थिक, सामाजिक तथा पर्यावरणीय किसी भी प्रकार के प्रदूषण का कोई स्थान नहीं था। सभी के संरक्षण की बात थी। वे किसी को भी बेरोजगार तथा विपन्न देखना नहीं चाहते थे। उन्होंने कहा था कि हमें यह समझना चाहिए कि अर्थशास्त्र में भी हमारा केन्द्र बिन्दु मानव है, मनुष्य है। मनुष्य मेरी दृष्टि में सबसे उच्च स्थान पर विराजमान है। उसका मूल्य सबसे अधिक है। मेरे लिए मनुष्य ही सबसे कीमती चीज है। आज मशीन का उपयोग उसकी सेवा में करें। उसे बेकार बनाकर अगर मशीन लाएंगे तो वह मशीन की बजाए कल्याण के विनाश करेगी.....। अगर मशीन मनुष्य की सेवा करे तो मैं उसको सिर माथे पर रखूंगा, लेकिन अगर मशीन लोगों को आकर्षित किया है वरन पर्यावरणीय गिरावट को भी चरम सीमा तक पहुँचाया है। अब न्यायालय के आदेश से अधिक प्रदूषणकारी कारखाने बंद हुए हैं तथा

* एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत

पुरानी बसों एवं लारियों के बंद होने की आशा की जा रही है। सच्चाई यह है कि यदि गांधीजी की शिक्षा को माना जाता तो यह नौबत ही नहीं आती।

गांधीजी के लिए स्वराज का अर्थ केवल राजनीतिक सत्ता परिवर्तन ही नहीं था। गांधी जी के लिए स्वराज का अर्थ था विदेशी सत्ता को हटाकर ऐसी व्यवस्था स्थापित करना जिसमें छोटे-बड़े, ऊंच-नीच, तथा अमीर-गरीब का भेद न रहे। उनके लिए स्वराज का व्यापक अर्थ प्रत्येक व्यक्ति को जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ विकास की पूर्ण सुविधाओं का प्राप्त होना था। मशीनों द्वारा मानवीय शोषण तथा बड़े शहरों का अमानवीय जीवन उन्हें पसंद नहीं था।

पर्यावरण प्रदूषित न हो तथा व्यक्ति से व्यक्ति की निकटता बनी रहे उनका यह चिंतन उनकी ग्राम स्वराज्य की अवधारणा से स्पष्ट होता है। ग्राम स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर सहयोग से काम लेगा। इस तरह हर एक गांव का पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरूरत का तमाम अनाज और कपड़े के लिए कपास खुद पैदा कर ले। उसके पास इतनी सुरक्षित जमीन होनी चाहिए, जिसमें ढोर चर सकें और गांवों के बड़ों तथा बच्चों के लिए मन बहलाव के साधन और खेलकूद के मैदान बगैरह का बंदोबस्त हो सके .... हर एक गांव में गांव की अपनी एक नाट्यशाला, पाठशाला और सभा भवन होगा। पानी के लिए उसका अपना इंतजाम होगा- वाटर वर्क्स होगें जिनसे गांव के लोगों को शुद्ध पानी मिला करेगा....। जहां तक हो सकेगा गांव के सारे काम सहयोग के आधार पर किए जाएंगे। जात पात और अस्पृश्यता जैसे भेद जो आज हमारे समाज में पाए जाते हैं, वैसे इस ग्राम समाज में बिल्कुल नहीं रहेंगे।

पर्यावरणीय गिरावट और प्रदूषण का बहुत बड़ा कारण गरीबी है। गांधी जी का विश्वास था कि गरीबी हटाने का मार्ग अहिंसक अर्थव्यवस्था ही है- मैं कहना चाहता हूँ कि हम सब एक तरह से चोर हैं। अगर मैं कोई ऐसी चीज लेता हूं और रखता हूं जिसकी मुझे अपने किसी तात्कालिक उपयोग के लिए जरूरत नहीं है, तो मैं उसकी किसी दूसरे से चोरी करता हूं। यह प्रकृति का किए निरपवाद बुनियादी नियम है कि वह हर रोज केवल उतना ही पैदा करती है, जितना हमें चाहिए और यदि हर एक आदमी जितना उसे चाहिए उतना ही लें, ज्यादा न ले तो दुनिया में गरीबी न रहे और कोई आदमी भूखा न मरें..... । हममें और आपमें ज्यादा समझ होने की आशा की जाती है। अत: हमें अपनी जरूरतों का नियमन करना चाहिए और स्वेच्छापूर्वक अमुख अभाव भी सहना चाहिए । जिससे कि उन गरीबों का पालन पोषण हो सके, उन्हें कपड़ा एवं अन्न मिल सके।

अहिंसक अर्थव्यवस्था की विश्वव्यापी आवश्यकता पर बल देते हुए महात्मागांधी ने 15.11.28 के यंग इण्डिया में लिखा, - मेरी राय में न सिर्फ भारत की, बल्कि सारी दुनिया की अर्थरचना ऐसी होनी चाहिए कि किसी को भी अन्न और वस्त्र के अभाव की तकलीफ न सहनी पड़े। दूसरे शब्दों में हर एक को इतना काम अवश्य मिल जाना चाहिए कि वह अपने खाने पीने की जरूरतें पूरी कर सके, और यह आदर्श निरपवाद रूप से तभी कार्यान्वित किया जा सकता है जब जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं के उत्पादन के साधन जनता के नियंत्रण में रहें। वेहर एक को बिना किसी बाधा के उसी तरह उपलब्ध होने चाहिए, जिस तरह कि भगवान के दिए हुए हवा और पानी हमें उपलब्ध हैं। किसी भी देश, राष्ट्र या समुदाय का उन पर एकाधिकार अन्यायपूर्ण होगा। हम आज न केवल अपने इस दुखी देश में, बल्कि दुनिया के दूसरे हिस्सों में भी जो गरीबी देखते हैं उसका कारण इस सरल सिद्धांत की उपेक्षा ही है।

गांधी जी द्वारा बताए गए मार्ग पर चलना कठिन तो है परंतु असंभव नहीं। दुनिया के वैज्ञानिक और समाजशास्त्री गांधी जी की प्रासंगिकता की झलक प्रत्येक समस्या के निराकरण में देखते हैं परन्तु शोषण पर आधारित प्रचलित व्यवस्था में सारे सिद्धांत धरे के धरे रह जाते हैं। ग्राम विकास ही शहरी प्रदूषण को घटाने और हटाने का सरल उपाय हैं, ग्राम विकास को अनेक योजनायें प्रचलित हैं परन्तु उनके परिणाम लक्ष्य से कहीं पीछे रहे हैं। आज आवश्यकता है गांधी के सपनों के भारत के निर्माण की जो उनके द्वारा दिखाए मार्गदर्शन से ही संभव है। उसके बिना न सामाजिक विकास हो सकता है और न ही पर्यावरण संरक्षण।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नगेन्द्रनाथ : गांधी एण्ड गांधीज्य, हिन्द किताब मुम्बई, 1946
2. चन्द्रराज : गांधी दर्शन, गांधी हिन्दी मंदिर, इन्दौर 1959
3. भारत सरकार द्वारा : राष्ट्र निर्माता गांधी, दिल्ली पब्लिक डिवीजन, 1950
4. महात्मा गांधी : मंगल प्रभात, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, 1952
5. महात्मा गांधी : सर्वोदय, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, 1952
6. कार्लहील : जार्ज एलन एण्ड एलबिन लंदन, 1948

****

Tribes of Madhya Pradesh: Historical Background

Dr. Aditi Pitaniya *

Abstract - **Abstract:** Tribes have always been known to be organized and peaceful. It is due to their hard work and efforts that they are able to survive in the adverse forest conditions. They possess the spirit to overcome all natural challenges or calamities ranging from torrential rainfall, flood, and landslides to earthquake. Each tribe is unique in some way. Madhya Pradesh is home to the largest tribe in India i.e. Bhils and Gond. A lot has been written about the Gond tribe but there are also other tribes which co-existed with the Gonds like Kols, Panika, Baiga, Bharia, Saharia etc. and has enriched past like them. One of the remarkable features of these Tribes was that these were found in peaceful existence with the other tribes in Madhya Pradesh.
Keywords - History, Tribes, Madhya Pradesh.

Introduction - It is to be noted that the spotlight doesn't hit this particular section of society in India with quite the same brilliance as it does on its more celebrated ones, which is why it rewards research scholars with unparalleled opportunities to delve into the untouched aspects of tribal land of Central India, popularly known as Madhya Pradesh.

The 10.43 crore people belonging to "Scheduled Tribes" in India are generally considered to be 'Adivasis', literally meaning 'indigenous people' or 'original inhabitants', though the term 'Scheduled Tribes' (STs) is not coterminous with the term 'Adivasis'. Scheduled Tribes is an administrative term used for purposes of 'administering' certain specific constitutional privileges, protection and benefits for specific sections of peoples considered historically disadvantaged and 'backward'.

However, this administrative term does not exactly match all the peoples called 'Adivasis'. Out of the 5653 distinct communities in India, 635 are considered to be 'tribes' or 'Adivasis'. Such communities often suffers from extreme social, educational and economic backwardness on account of primitive agricultural practices, lack of infrastructure facilities and geographical isolation, and who need special consideration for safeguarding their interests. The list of notified Scheduled Tribes in Madhya Pradesh for the purpose of conducting Census 2011 has 46 tribes and three of them have been identified as "Special Primitive Tribal Groups" in the State.

Definition - The term 'Scheduled Tribes' first appeared in the Constitution of India. Article 366 (25) defined scheduled tribes as "such tribes or tribal communities or parts of or groups within such tribes or tribal communities as are deemed under Article 342 to be Scheduled Tribes for the purposes of this constitution". Article 342, which is reproduced below, prescribes procedure to be followed in the matter of specification of scheduled tribes.

Historical Background - Historically the Adivasis, as explained earlier, are at best perceived as sub-humans to be kept in isolation, or as 'primitives' living in remote and backward regions who should be "civilized". None of them have a rational basis. Consequently, the official and popular perception of Adivasis is merely that of isolation in forest, tribal dialect, animism, primitive occupation, carnivorous diet, naked or semi-naked, nomadic habits, love, drink and dance. Contrast this with the self-perception of Adivasis as casteless, classless and egalitarian in nature, community-based economic systems, symbiotic with nature, democratic according to the demands of the times, accommodative history and people-oriented art and literature.

The term tribe is derived from the Latin word 'tribes' meaning the poor or the masses. In English language, however, the word 'tribe' appeared in the sixteenth century and denoted a community of persons claiming descent from a common ancestor. The Indian tribal society is a unique society with diversity of nature and people. Known for extreme poverty, tribal populations in India constitute the core of the poor. Poverty, poor health and sanitation, illiteracy and other social problems among the tribes are having a worn out effect on the Indian economy. The Five Year Plans were formulated for implementing a series of investment-backed schemes and projects for the betterment of the conditions of the tribes living in the rural and urban areas. But they do not typically draw into their fold many of the tribes with their forest-dwelling culture who have neither the motivation or the skill of settled cultivation. As a result, their land has been alienated to their better endowed tribal neighbours and non-tribals. For most people, identifying a tribal from a non-tribal is easy. Weiner (1978) claimed that being a distinctive racial type, they are somewhat darker than other Indians and have features that are sometimes Mongoloid in appearance.

* **Translator, Center For Excellence, IGN Tribal University, Amarkantak (M.P.) INDIA**

They live in their own villages, many of which are wholly homogenous. Perhaps the most distinctive feature of tribal life is the very attitude toward life itself. In contrast with their Hindu neighbours, the tribals are a carefree people, self-indulgent in their simple pleasures.

During the British period, the famous Anthropologist; Verrier Elwin (1943) propounded a theory, according to which the tribals should be kept isolated in their hills and forests. Elwin's theory is known in social anthropology as **'public park theory'**. He suggested that ordinarily the non-tribal people should not be allowed to enter into tribal pockets without permission of the state government. This system would guarantee the isolation of the tribals.

However, D.N. Majumdar (1944) took a slightly different position. His suggestion was that the cultural identity of the tribals as far as possible should be retained. He feared that if the isolation was broken the tribals would lose their ethnic identity. To maintain it, he hypothesized that there should be 'selected integration' of the tribals. While spelling out, he argued that not all the elements of civilization should be allowed to enter the tribal area. Only those which have relevance with tribal life should be permitted into such area. Such a policy would keep the tribals away from the vices of urban life.

The tribal population of the country, as per 2011 census, is 10.43 crore, constituting 8.6% of the total population. 89.97% of them live in rural areas and 10.03% in urban areas. The decadal population growth of the tribal's from Census 2001 to 2011 has been 23.66% against the 17.69% of the entire population. The sex ratio for the overall population is 940 females per 1000 males and that of Scheduled Tribes 990 females per thousand males. This fact only is sufficient enough to show prevalence of Gender Parity among the Tribals which is otherwise getting less and less in Metropolitan areas.

Broadly the STs inhabit two distinct geographical areas – the Central India and the North- Eastern Area. More than half of the Scheduled Tribe population is concentrated in Central India, i.e., Madhya Pradesh (14.69%), Chhattisgarh (7.5%), Jharkhand (8.29%), Andhra Pradesh (5.7%), Maharashtra (10.08%), Orissa (9.2%), Gujarat (8.55%) and Rajasthan (8.86%). The other distinct area is the North East (Assam, Nagaland, Mizoram, Manipur, Meghalaya, Tripura, Sikkim and Arunachal Pradesh). More than two-third of the ST population is concentrated only in the seven States of the country, viz. Madhya Pradesh, Maharashtra, Orissa, Gujarat, Rajasthan, Jharkhand and Chhattisgarh. There is no ST population in 3 States (Delhi NCR, Punjab and Haryana) and 2 UTs (Puducherry and Chandigarh), as no Scheduled Tribe is notified.

Location in India - Madhya Pradesh literally means "Central Province", and is located in the geographic heart of India, between latitude 21.2°N-26.87°N and longitude 74°02'-82°49' E. The state straddles the Narmada River, which runs east and west between the Vindhya and Satpura ranges; these ranges and the Narmada are the traditional boundary between the north and south of India. The highest point in Madhya Pradesh is Dhupgarh, with an elevation of 1,350 m (4,429 ft). The state is bordered on the west by Gujarat, on the northwest by Rajasthan, on the northeast by Uttar Pradesh, on the east by Chhattisgarh, and on the south by Maharashtra.

As per details from Census 2011, Madhya Pradesh has population of 7.26 Crores, an increase from figure of 6.03 Crore in 2001 census. Total population of Madhya Pradesh as per 2011 census is 72,626,809 of which male and female are 37,612,306 and 35,014,503 respectively. In 2001, total population was 60,348,023 in which males were 31,443,652 while females were 28,904,371.

The total population growth in this decade was 20.35 percent while in previous decade it was 24.34 percent. The population of Madhya Pradesh forms 6.00 percent of India in 2011. In 2001, the figure was 5.87 percent. No. of district where the Tribal population is more than 50% or between 25 to 50 percent as per Census 2011 is as follows:

Table (See in next page)

Divisions of Madhya Pradesh - The percentage of total Scheduled Tribes population to total population of all divisions of Madhya Pradesh shows positive growth during 2001-11 except Bhopal division. Percentage of Scheduled Tribes population in rural areas of all divisions has observed increasing trends. Out of ten divisions, Chambal, Rewa and Bhopal divisions have registered decrease in percentage of Scheduled Tribes population in urban areas during 2001-11. Shahdol division has the highest percentage of Scheduled Tribes population in urban areas (2001 & 2011) while Chambal division has the lowest.

Districts of Madhya Pradesh - The districtwise percentage of total Scheduled Tribes population of Madhya Pradesh shows that ranking of districts have not changed much over the period of last three decades. The districts of Alirajpur, Jhabua, Dindori, Barwani and Mandla keep the top five ranks in 1991, 2001 and 2011. In the similar way Datia, Morena and Bhind occupy the last three places throughout the three decades.

The population of Madhya Pradesh consists of a number of ethnic groups and tribes, castes and communities, including the indigenous tribals and relatively more recent migrants from other states. The scheduled castes and the scheduled tribes constitute a significant portion of the population of the State. The main tribal groups in Madhya Pradesh are Gond, Bhil, Baiga, Korku, Bhadia (or Bhariya), Halba, Kaul, Mariya and Sahariya.

Conclusion - Due to the different linguistic, cultural and geographical environment, and its peculiar complications, the diverse tribal world of Madhya Pradesh has been largely cut off from the mainstream of development. Madhya Pradesh ranks very low on the Human Development Index value of 0.375 (2011), which is below the national average. According to the India State Hunger Index (2008) compiled by the International Food Policy Research Institute, the malnutrition situation among some tribes like Bharia,

Sahariya in Madhya Pradesh was “extremely alarming”, receiving a severity rating between Ethiopia and Chad. The state rank is also the worst performer in India, when it comes to female foeticide. In order to elevate the economic condition of these Tribes one must not always rely upon government initiatives or schemes but an individual should try to do something at his or her personal level.

References :-

1. Bijoy C.R. The Adivasis of India -A History of Discrimination, Conflict, & Resistance, Core Committee of the All India Coordinating Forum of Adivasis/ Indigenous Peoples.
2. ANALYTICAL REPORT ON PRIMARY CENSUS ABSTRACT 2011, New Delhi
3. Demographic Status of Scheduled Tribe Population of India (Census 2011)
4. Singh, K.S. PEOPLE OF INDIA, National List of Communities, Anthropological Survey of India, Delhi, 1992
5. Madhya Pradesh: Economic and Human Development Indicators, UNDP (2011)

Madhya Pradesh	Total Population	ST Population	Percentage of ST-	More than 50% ST Popln.	Between 25% to 50% ST Popln.
	72626809	15316784	21.1	6	13

Source: Demographic Status of Scheduled Tribe Population of India

****

ब्रिटिश कालीन बुंदेलखण्ड की आधुनिक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि 1761 से 1842 तक

डॉ. शिवप्रसाद बामने *

शोध सारांश – वर्तमान की सांस्कृतिक उपलब्धिओं का प्रसार किसी भी अंचल अथवा भू–भाग के अर्जन की कहानी कहता हुआ इतिहास बन जाता है। इस विस्तृत भू–भाग की भौगोलिक सरंचना विविधताओं से परिपूर्ण है। इसी कड़ी के अंतर्गत बुंदेलखण्ड का इतिहास उसके सांस्कृतिक एवं राजनैतिक विकास और अतीत के अर्जन की जीती–जागृति मिसाल है। इस गौरवमयी क्षेत्र बुंदेलखण्ड को भारत का हृदय प्रदेश होने का दर्जा प्राप्त है। यह भू–भाग उत्तरी एवं दक्षिणी भारत के मध्य अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति चहुँओर से घिरे पर्वत प्राकृतिक जल संसाधन आदि के कारण विभिन्न कालों के शासकों, ऋषियों एवं व्यापारियों को अपने विशिष्ट अधिवास के लिए सदैव ही आकर्षित करता रहा है। बुंदेलखण्ड के विस्तृत भू–भाग पर विभिन्न कालों में अनेक राजवंशों ने शासन किया। भारत के जिस भू–भाग को आज बुंदेलखण्ड नाम से संबोधित किया जाता है, वह प्राचीनकाल से ही भ्रमणशील मानवों की क्रीडा स्थली रहा है। बाहर से आने वाली विदेशी जातियाँ इस क्षेत्रीय समाज से मिली और इसी में घुलनशील हो गई। इस समन्वय ने सभ्यता एवं संस्कृति के इतिहासक्रम को गति दी। यहाँ के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक ज्ञान के क्षेत्र में प्रचुर ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध है। प्रस्तुत शोध पत्र ब्रिटिश काल में 1761 से 1842 के मध्य हुए विद्रोह एवं उनका दमन हेतु ब्रिटिशों द्वारा किए गए प्रयास तथा 1857 के विद्रोह हेतु निर्मित पृष्ठभूमि का वर्णन किया है।

प्रस्तावना – 18वीं शताब्दी के मध्य से 19वीं शताब्दी के प्रारंभ तक मराठे ही भारतीय राजनीतिक मंच पर छाये रहे। अंग्रेजों के अधिग्रहण से पूर्व बुंदेलखण्ड मुख्य रूप से मराठे और द्वितीय रूप से बुंदेलो द्वारा संचालित होता था। मराठों के लिए मालवा और बुंदेलखण्ड क्षेत्र में अपनी स्थिति सुदृढ़ करना आवश्यक हो गया था, क्योंकि ऐसा करने से उनके लिए मालवा से राजपूताना और बुंदेलखण्ड से आगरा दिल्ली तक का रास्ता, खुल जाता था। दूसरा मार्ग इलाहाबाद और आगरा के सूबे उनके लिए खोलकर दिल्ली और दोआब तक का मार्ग प्रशस्त करता था, वह बुंदेलखण्ड से होकर ही था।

इसीलिए बुंदेलखण्ड इस दशक में मराठों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण हो उठा था।[1] इस समय बुंदेलखण्ड की स्थिति अस्थिर थी, क्योंकि यहाँ पर स्थानीय बुंदेला राजाओं के कलह व आपसी झगडें चलते रहते थे। शुरूआती दौर में तो छत्रसाल के वंशजों के मराठों के साथ अच्छे सबंध रहे, परंतु कालांतर में मुगल मराठा युद्ध में उन्हें घसीटा जाना अखरने लगा। इधर सन् 1761 में पानीपत का तृतीय युद्ध जो मराठों और अफगान अहमद शाह अब्दाली के मध्य हुआ। उसमें सेनापति विश्वासराव एवं भाउ साहब सहित अनेक सुयोग्य मराठा सरदार रणक्षेत्र में वीरगति को प्राप्त हो गए। इस युद्ध में मराठा दल का हाल पेशवा के एक पत्र के रूप में इस तरह स्पष्ट हुआ। **'दो मोती गल गए है, 25 सोने की मोहरें खो गयी है, तथा चाँदी और ताँबे की तो कोई गिनती नही हो सकती।'**[2] अपने पुत्र की मृत्यु एवं अपनी विशाल सेना के सर्वनाश से पेशवा बालाजी बाजीराव की सदमें से मृत्यु हो गई। इस युद्ध में गोविंदपंत बुंदेला और मस्तानी बाजीराव के पुत्र भी रणक्षेत्र में वीरगति को प्राप्त हुए थे। इसी दौरान भारत में फ्रांसीसियों को अंग्रेजो ने तृतीय कर्नाटक युद्ध में परास्त करके अपनी दावेदारी भारत में बना ली थी। भारत में अपनी दावेदारी को बढ़ाते हुए अंग्रेजो ने प्लासी युद्ध 1757 और बक्सर युद्ध 1764 में जीत कर बंगाल, बिहार और उड़ीसा को सीधे अपने प्रभाव में ले लिया।

मराठों के इस कठिन दौर में पूना दरबार में नाना फड़नवीस की मृत्यु ने अंग्रेजों हो हस्तक्षेप करने का अवसर प्रदान किया। इस समय दौलतराव सिंधिया और बाजीराव की नीतियों ने मराठा संघ की फूट को उजागर कर दिया। इस स्थिति का लाभ उठाते हुए अंग्रेजों ने बाजीराव द्वितीय का पेशवा बनाने का लालच देकर 1802 में उससे बेसीन की संधि पर हस्ताक्षर करवा लिए।[3] इस संधि के कारण मराठा संघ औपचारिक रूप से अंग्रेजों के नियंत्रण में आ गया। इस संधि के कारण द्वितीय आंग्ल मराठा युद्ध 1803 ई. में अवश्यंभावी हो गया। इस युद्ध में वेलेजली को कई भारतीय शासकों जैसे अवध, मैसूर, निजाम और बडौदा से सहयोग प्राप्त हुआ, वही मराठों को किसी भारतीय शासक ने सहयोग नहीं दिया। दूसरा मराठा संघ की फूट जिसमें सिंधिया और होल्कर प्रमुख थे वह मराठों को ग्रह युद्ध की कगार पर ले गये। बेसिन की संधि से त्रस्त होकर पेशवा बाजीराव भी मुक्त होने का रास्ता ढुँढ रहा था। इन परिस्थितियों के चलते युद्ध प्रारंभ हो गया। वेलेजली ने 1803 में अहमदाबाद पर अधिकार कर लिया। इसके बाद बुरहानपुर, असीरगढ़ और ग्वालियर के किले भी प्राप्त कर लिए। अंग्रेजों ने भोंसले के कटक तथा सिंधिया से बुंदेलखंड तथा गुजरात के प्रदेश भी प्राप्त कर लिए। युद्ध के परिणामस्वरूप भोंसले से अंग्रेजो ने 1803 में देवगाँव की संधि की। इसके बाद 1803 में ही सिंधिया ने सुरजी अर्जुनगाँव की संधि कर ली। द्वितीय आंग्ल युद्ध दुरगामी परिणामों वाला हुआ। अब मराठा संघ अंग्रेजों की कूटनीति के कारण नष्ट हो गया। अंग्रेजी नियंत्रण होने से पेशवा और मुगल सम्राट आश्रित बन कर रह गए। मराठा शक्ति की आश्रित स्थिति को दूर करने के लिए एक बार फिर से पेशवा ने मराठा संघ को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। अप्पा साहब ने भोंसले राज्य के शासन की बागडोर संभालते समय से ही अंग्रेजों के बढते प्रभाव को खत्म करने तथा मराठा साम्राज्य की मान प्रतिष्ठा को वापस लाने के लियें मराठा शासकों के साथ गुप्त संपर्क बनाए रखा। उन्होंने इस हेतु खासकर पेशवा से पत्र व्यवहार किया। पेशवा और अप्पा साहब ने अंग्रेजों पर गुप्त रूप

* अतिथि व्याख्याता (इतिहास) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

से धावा बोलने की योजना बनाई।[4] परंतु फरवरी 1818 की अष्ठी की लड़ाई में बाजीराव द्वितीय की निर्णायक पराजय हुई, लेकिन उसने सर्मपण जुन 1818 में ही किया। उनके भू-भाग को अंग्रेजी नियंत्रण में लिया गया।

अप्पा साहब को भी 1817 ई को अंग्रेजों ने सीताबर्डी की लड़ाई में पराजय कर दिया।[5] इस तरह तृतीय आंग्ल-मराठा युद्ध सन् 1818 ई. में समाप्त हो गया। सागर के विनायक राव चांदोकर ने भौंसले और पिण्डारियों को सहायता दी थी, इसलिए अंग्रेजों ने उनका राज छिन लिया। सागर का धामोनी परगना भी भौंसले से अधिग्रहित कर लिया गया। युद्धोपरांत अंग्रेजों ने सिंधिया के अधिकार क्षेत्र में रहे गढ़ाकोटा, मालथौन, देवरी, गौरझामर, नाहरमउ आदि प्रदेश 1821 ई. तक पूर्णतया प्राप्त कर लिए कंपनी सरकार ने मराठा आतंक से परेशान बुंदेलखण्ड के अन्य राज्यों को भी सुरक्षा की गारंटी देकर उनसे संधि या समझौता कराके सनद के माध्यम से अधीन वफादार राज्य बनाया। बुंदेलखण्ड के तीन प्रमुख राज्यों में ओरछा, दतिया तथा समथर को समानता तथा मैत्री का दर्जा देकर संधि राज्य बनाया। इसके अतिरिक्त 27 अन्य छोटी रिसासतों को सनद राज्य बनाया गया। इन सनद राज्यों में थे - पन्ना, चरखारी, अजयगढ़, बिजाबर, छतरपुर, बावनी, बरौधा, अलीपुर, बंका पहाड़ी, बेरी, भैसुण्डा, बीहट, बिजना, धुरवई, गरोली, जसौ, जिगनी, कामता-रजौली, खनियाधाना, लुगासी, नेगवां, रिबई, पहरा, पालदेव, सरीला, तरौन, तोडीफतेहपुरा[6] इन राज्यों से समन्वय के लियें 1843 ई. में कंपनी ने नौगाँव में सैन्य छावनी का ऐजेंट पॉलीटिकल ऐजेन्ट कहलाता था। अंग्रेजों के इस प्रशासन को प्रारंभिक दौर में स्थानीय शासकों व आम जनता द्वारा सराहा भी गया, क्योंकि पतनशील मराठा शासकों के कुशासन तथा इसके कारण पिण्डारियों द्वारा की जा रही लूटपाट के चलते असुरक्षा के दौर में उन्हें अंग्रेजो द्वारा जानमाल की सुरक्षा की गारंटी दी गई थी।[7] लेकिन कालांतर में भारतीय शासकों व जनमानस को अंग्रेजों का यह भ्रमजाल थोडे समय में ही उनके द्वारा की जा रही ज्यादतियों, अनिश्चित कराधान व मनमानी के रूप में प्रकट हो गया। प्रशासनिक दृष्टि से 1818 और 1842 के मध्य ईस्ट इंडिया कंपनी ने अनेक प्रशासनिक परिवर्तन किये।

बुंदेला विद्रोह के पीछे अनेक सशक्त राजनीतिक, प्रशासनिक, आर्थिक, भौगोलिक, कारण विद्यमान थे। इनमें पहले कारण के अंतर्गत भू-स्वामियों व मालगुजारों से राजनीतिक सत्ता का अधिग्रहण कर लेना था। अपने अधिकारों का इस तरह से छिन जाना इन उच्चवर्गीय लोगों के लिए असहनीय हो गया। इसके अलावा अंग्रेजी शासन ने सत्ता संभालनें के उपरांत से ही अधिक से अधिक राजस्व किस तरह वसूला जाए इस पर भी अपना ध्यान केन्द्रित किया था। जबकि उस परिस्थिति में सरकार का दायित्व राजस्व आंकलन के साथ किसान कल्याण की तरफ ध्यान देना भी था। पर सरकार ने इन बातों की सदैव अनदेखी की। ब्रिटिश भू-राजस्व नीति के विषय में स्लीमेन में कहा कि आकलन दो कारणों से बहुत अधिक रहे। प्रथम ब्रिटिश प्रशासन ने कृषि उत्पादों की माँग में अत्यधिक कमी पर विचार नहीं किया। दूसरा कारण यह था कि सरकार ने यह मान लिया कि किसी संपत्ति की कुछ लगानों की राशि जोखिम और प्रबंधन की लागत की पूर्ति पर्याप्त होगी और सरकार को जमींदारों के पास इससे ज्यादा राशि छोड़ने की जरूरत नही है।[8] 1836 में सदर बोर्ड ऑफ रेवन्यु ने निर्देष दिया कि जहाँ खेत दो या इससे अधिक व्यक्तियों को संयुक्त रूप से पट्टे पर दिया गया हो, ऐसी स्थिति में एक की मृत्यु हो जाने पर उसके उत्तराधिकारियों को जीवित भागीदारी की सहमति के बिना उस खेत में भागीदारी होने का अधिकार नहीं माना जाए। बोर्ड निर्देश का अधिकारियों ने गलत अर्थ लगा लिया और प्रत्येक जिले में वंशानुगत स्वामियों के उत्तराधिकारी अपनी संपत्ति से वंचित हो गए इससे भी हर जगह सरकार के विरूध्द बहुत गहरी कड़वाहट पैदा हो गई।[9] सदर बोर्ड ऑफ रेवेन्यू ने यह भी निर्देश दिया कि खेत पट्टे पर दिये जाने वाले सभी मामलों में यह शर्ते जोड दी जाए कि पट्टेदार अपनी जमीन शिकमी न दे वरना पट्टा रद्द कर दिया जाएगा। प्रत्येक जिलें में अनेक भू-धारको को उनकी जमीन से वंचित किया गया। जिन्होंने जमीन को उस व्यक्ति को हस्तांतरित कर दिया था। जिसने सिर्फ स्वामी बनने के उद्देश्य से जमीन में ली थी इन सब निर्देशनों का किसान और भूपतियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और यह असंतोष का कारण बना।
आरंभ में इस अंचल का प्रशासन सफल न हुआ। ब्रिटिश प्रशासको ने यहॉ भी वही गलती दोहराई जो उन्होंने मद्रास तथा अन्य स्थानों पर की थी। उन्होंने जमीन का मूल्यांकन बहुत बढ़ा-चढ़ा कर किया। असंभव राजस्व की मांग की, लोगों को गरीब बना दिया और इस अंचल की उन्नति रोक दी बाद में जब यह गलती पकड़ी गई तो इसकी निंदा कड़े शब्दों में की गई। इन सभी के अतिरिक्त एक और सबसे बडा कारण था कि उस समय ब्रिटिश सेना अफगानिस्तान युद्ध में व्यस्त थी तथा उसे हार का सामना करना पड़ रहा था। अत: सागर नर्मदा क्षेत्र के लोगों को अंग्रेजों के पास सेना की कमी का अहसास हो चला था और उनमें निडरता आने लगी थी। इसी सदंर्भ में मेजर डबल्यु एच स्लीमेन ने स्पष्ट रूप से टिप्पणी दी कि सैनिकों की कमी से असंतुष्ट और आक्रोशित लोगो में एक आम धारणा बन गई कि हमारे पास उन्हें दबाने के साधन नहीं है और हमें मजबुरन कमजोर सरकार की तरह उन्हें उनकी संपत्ति तथा गलत तरीके से अर्जित धन वापस देना होगा।[10] इस भावना ने भी विद्रोह को भड़काने में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन किया। इस विद्रोह का आरंभ 1842 में हुआ। अंग्रेजों द्वारा जारी इस व्यवस्था का विरोध सागर के उत्तर में स्थित चंद्रपुरा के ठाकुर जवाहर सिंह तथा नरहट के ठाकुर मधुकर शाह व गणेशजू ने किया।[11] रावविजय बहादुर के पुत्र मधुकरशाह व गणेशजू सरकार से नाराज थे। क्योंकि सरकार ने उनकी संपत्ति दो बार कुर्क कर ली थी और सरकार के चपरासी ने उनसे अपमानजनक व असभ्य व्यवहार किया था। सरकार के इस रवैये का उन ठाकुरों पर विपरीत प्रभाव पडा और वे बागी हो गए।

इस विद्रोह की शुरूआत चंद्रपुरा के ठाकुर जवाहरसिंह और नरहट के मधुकरशाह ने करते हुए दोनों ठाकुरों ने सरकार के आदेश की अवहेलना की और पुलिस पर हमला कर कुछ पुलिस वालों को मार डाला। इसके बाद इन्होंने पुलिस चौकियों पर धावा बोला और खिमलासा, खुरई, नरियावली, अमोनी और सागर शहर में लुटपाट की।[12] व्रिदोह गति पकड़ता गया। यह विद्रोह नरसिंहपुर में काफी सफल रहा। नरसिंहपुर के गौंड सरदार डिल्लन शाह ने विद्रोह कर देवरी और उसके आस-पास के अंचल तथा नरसिंहपुर के चावर-पाठा अंचल को लुट लिया।[13] सागर और नरसिंहपुर के उपरांत इस विद्रोह की ज्वाला जबलपुर में भी भड़क उठी। जबलपुर में इस समय विद्रोह के प्रमुख नेता हिरदेशाह थे। हिरदेशाह तथा उसके समर्थको के साथ गजराज सिंह ने गंजपुरा की चौकी पर हमला कर दिया। इस तरह रास्ते में आने वाले सभी सरकारी महकमों, चौकियों का सफाया करते हुए विद्रोही तेजगढ़ तक पहुँच गए।[14] इन विद्रोहियों को पकड़ने में लगातार ब्रिटिश कोशिशे नाकामयाब हो रही थी, क्योंकि विद्रोहियों का साथ आम जनता भी दे रही थी। ब्रिटिश कोशिशों को नाकामयाब करते हुए विद्रोही हिरदेशाह बचते-बचाते बुंदेलखण्ड के जैतपुर आ गए जहाँ आने का आमंत्रण उन्हें पूर्व राजा परिक्षित ने दिया था।[15]

रास्तें में शाहगढ़ के गद्दार राजा की मदद से कर्नल ऐली ने राजा हिरदेशाह

को सपरिवार 22 दिसंबर 1842 को गिरफ्तार कर लिया।[16]

हिरदेशाह का इस तरह पकड़ा जाना अन्य विद्रोही नेताओं के लिए बड़ा आघात साबित हुआ जिससे आंदोलनकारियों का मनोबल गिरने लगा। 1843 में मदनपुरा के ठाकुर डिल्लनशाह और घलवाडा के ठाकुर नरवरसिंह ने भी आत्म समर्पण कर दिया। इससे प्रेरित होकर 1843 में ही चंद्रपुरा के दिवान जवाहरसिंह ने भी आत्म समर्पण कर दिया। आगे जाकर 1844 में आगे जाकर 1844 में आंदोलन के प्रमुख नेता मधुकरशाह को बानपुर के ठाकुर मर्दनसिंह ने पकड़वा दिया।[17] सरकार ने मधुकरशाह को फांसी दे दी। फाँसी के बाद उसका शव सागर जेल के पीछे जलाया गया।[18] उनकी स्मृति में वहाँ एक चबुतरा बनाया गया, यहाँ पर उनके नाम से एक वार्ड मधुकरशाह वार्ड बनाया गया है। यहाँ उसकी पुजा अब भी होती है और गोपाल गंज मोहल्ले के निवासी उसकी सुरक्षा करते है। मधुकरशाह के उपरांत उनके भाई गणेशजू ने भी समर्पण कर दिया। इस तरह सरकार ने कुटनीतिज्ञता व दमन चक्र के द्वारा कुछ नेताओं को या तो पकड़ लिया या कुछ ने स्वयं ने ही समर्पण कर लिया। 1845 के आते-आते अन्य विद्रोही नेताओं को सजा दी गई या उन्हें माफ कर दिया गया। सरकार ने स्थिति को नियंत्रण में तो ले लिया, परंतु इस व्रिदोह का परिणाम क्या रहा ?यह ध्यान देने योग्य है।

इस प्रकार सरकारी दमन व चतुराई से 1842 के विद्रोह चिंगारी ही बन कर रह गया, लेकिन यह चिंगारी बहुत दिनों तक दबी नहीं रही, और भारतीय असंतोष और स्वाभिमान 15 वर्षो के अल्प विराम के बाद 1857 की ज्वाला के रूप में भड़क उठा जो आने वाली क्रांति का आगाज बना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुप्त भगवानदास, झाँसी राज्य का इतिहास और संस्कृति, पृ. संख्या 21
2. सर देसाई गोर्विंद, मराठों का नवीन इतिहास, द्वितीय खण्ड पृ. संख्या 425
3. पटरैया शिवअनुराग, बुंदेलखण्ड, पृ. संख्या 80
4. मिश्र द्वारका प्रसाद, मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान, संचालनालय, 2002 पृ. संख्या 6-7
5. मुखारया पी.एस, 1857 के क्रांति सागर और नर्मदा क्षेत्र, स्वराज संस्थान संचालनालय, 2008, पृ. संख्या 04
6. गुप्त अयोध्याप्रसाद, बुंदेलखण्ड की ऐतिहासिक सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद् भोपाल, 2001 पृ. संख्या 12
7. त्रिपाठी काशीप्रसाद, बुंदेलखण्ड का बृहद इतिहास (राजतंत्र से जनतंत्र), समय प्रकाशन नईदिल्ली, पृ. संख्या 27
8. मिश्रा जप्रकाश, बुंदेला विद्रोह, स्वराज संस्थान संचालनालय, 2008, पृ. संख्या 78
9. वही
10. मध्यप्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, जबलपुर, पृ. संख्या 66
11. मिश्र द्वारका प्रसाद, मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान, संचालनालय, 2002 पृ. संख्या 6-7
12. मध्यप्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, सागर, 1970 पृ. संख्या 66
13. मिश्र द्वारका प्रसाद, मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान, संचालनालय, 2002 पृ. संख्या 37
14. मिश्रा जयप्रकाश, बुंदेला विद्रोह, स्वराज संस्थान संचालनालय, 2008, पृ. संख्या 130
15. वही
16. मिश्र द्वारका प्रसाद, मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान, संचालनालय, 2002 पृ. संख्या 43
17. मुखारया पी.एस, 1857 की क्रांति सागर और नर्मदा क्षेत्र, स्वराज संस्थान संचालनालय, 2008 पृ. संख्या 43-44
18. मध्यप्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, सागर, 1970 पृ. संख्या 66

****

प्राचीन उत्तर भारत की मुद्रण कला

बनवारी लाल यादव *

प्रस्तावना – भारत विश्व के उन प्रथम सभ्यताओं में से एक है, जहां मुद्रा का प्रचलन शुरू हुआ था। भारतीय उप महाद्वीप में सिक्कों के चलन का निश्चित साहित्यिक एवं पुरातात्विक साक्ष्य 600–500 ई. पू. में मिलता है। यह वह समय था जब यहां राज्यों का उदय हो रहा था, शहरीकरण की प्रक्रिया चल रही थी और व्यापार का विस्तार हो रहा था। यद्यपि सिंधु–घाटी सभ्यता में अनेक मुहरें प्राप्त हुई हैं, परंतु इसकी लिपि नहीं पढ़े जाने के कारण यह इतिहासकारों में विवादित विषय है कि ये वास्तव में मुद्रा थी या नहीं। ऐतिहासिक स्त्रोत इस बात के साक्षी हैं कि शुरूआती दौर में भारत में वस्तुओं को मुद्रा के रूप में इस्तेमाल किया गया।[1] गाय को मुद्रा का सबसे बड़ी इकाई माना जाता था तथा छोटी इकाई के रूप में कौड़ी, मोती और कुछ धातुओं का प्रयोग किया जाता था। ऋग्वेद के कई उल्लेखों से पता चलता है कि प्रारंभिक अवस्था में गाय ही विनिमय का प्रमुख माध्यम थी। वेदों में सिक्के के लिए 'निष्क' शब्द का प्रयोग मिलता है....पाणिनि ने (लगभग 500 ई.पू.) अपने व्याकरण में इस बात की पुष्टि की है कि सिक्कों के लिए वेदों में प्रयुक्त इस शब्दों में कुछ शब्द बाद तक इस्तेमाल किए जाते रहे। पाणिनि ने निष्क, शतमान तथा सुवर्ण नामक सिक्कों का उल्लेख किया है। पर इतिहासकारों मे मतभेद है कि 'निष्क' उस समय आभूषण के साथ–साथ मुद्रा का भी धोतक था। पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' से यह भी ज्ञात होता है कि विनिमय माध्यम में किन–किन चीजों के इस्तेमाल होता था। एक सूत्र में वस्त्र के बदले बर्तन प्राप्त करने की सूचना मिलती है। साथ ही एक गाय के बदले खरीदी गई वस्तु को गोपुछ कहा गया है। उस समय गायों का लेन–देन उनकी पूंछ पकड़ कर किया जाता था। पूंछ पकड़ कर गोदान करने की प्रथा हमारे समाज में हाल तक मौजूद रही है। धीरे–धीरे वस्तुओं के विनिमय से अनेक कठिनाइयां सामने आने लगी। इन कठिनाईयों का समाधान सोने, चांदी और तांबे के धातुओं के प्रयोग से हुआ। जब धातुओं का प्रचलन प्रारंभ हुआ तो धातु विनिमय का उपयुक्त माध्यम बन गई।[2] मगर धातु खंडो के व्यवहार में भी कई कठिनाईयां थी। इनकी तौल और शुद्धता निर्धारित होने पर ही इनका व्यापक इस्तेमाल संभव था। धातु खंडो की प्रामाणिकता की पुष्टि के लिए उन पर विशिष्ट चिह्न अंकित होना आवश्यक था। शैशवास्था में ऐसी ही कठिनाईयां का सामना कर सिक्कों ने अपनी यात्रा आरंभ की। इस तरह विश्व के अनेक भागों की तरह भारत में भी मुद्रा व्यवस्था जन्म ले रही थी।

मुद्रा के प्रारंभ की निश्चित तिथि के बारे में कहना तो मुश्किल है, परंतु आहत सिक्के को प्रथम भारतीय सिक्के के रूप में मान्यता प्राप्त है। पुरातात्विक अन्वेषणों में रजत एवं ताम्र के विभिन्न आकारों की ऐसी प्राचीन मुद्राएं प्राप्त हुई हैं, जिन पर छोटे–छोटे चिह्न ठोंक आहत कर अंकित किए गए हैं। निर्माण की इस पद्धति के कारण इस मुद्रा का नाम आहत मुद्रा पड़ा हैं। अंग्रेजी में इस विधि को पंचिंग की संज्ञा दी जाती है, इसलिए इन मुद्राओं को आधुनिक मुद्राशास्त्री ने 'पंच मार्क्ड' नाम से भी अभिहीत किया है। मुद्राशास्त्रियों ने आहत सिक्के का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला इस पर अंकित प्रतीक चिह्न पर्वत (विविध प्रकार के),सूर्य, पेड़, पशु, पक्षी, वनस्पतियां, ज्यामितिक आकृतियां और मानव के चित्र थे, जो एक विशेष स्वरूप में छिद्रित थे। आज से सिक्के भारत की अमूल्य निधि है।[3] मौर्य साम्राज्य का काल लगभग 322 ई.पू. से लेकर 185 ई.पूर्व तक माना जाता है। चंद्रगुप्त मौर्य ने कौटिल्य की सहायता से नंद वंश के शासक धनानंद को पराजित कर इस साम्राज्य की नींव रखी। मौर्यों ने भारत में एक विशाल साम्राज्य की स्थापना कर राजनीतिक एकता स्थापित करने का प्रयास किया। इस साम्राज्य के प्रमुख शासकों में चंद्रगुप्त मौर्य, बिंदुसार और अशोक के नाम प्रमुख है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मुद्राध्यक्ष अध्याय के अतंर्गत वर्णित है– 'मुद्राध्यक्षों मुद्रां माशकेण दधात' जिसमें मुद्रा विभाग के अध्यक्ष के बारे में वर्णन किया गया है। चांदी के सिक्के को 'पण' या 'कर्षापण', 'अष्टाभाग', 'अर्धपण' और 'पाद' कहा जाता था और तांबे के सिक्के 'काकाणी', 'अर्धकाकणी', 'माशक' और 'अर्धमाषक' कहे जाते थे। मौर्यकालीन सिक्कों से हमें यह पता चलता है कि इस समय तक भारत में मुद्रा प्रणाली व्यापक रूप से स्थापित हो चुकी थी।[4]

मौर्यकाल के पतन के बाद भारत के उत्तरी–पश्चिमी सीमा पर अव्यवस्था उत्पन्न हो गई जिसका फायदा विदेशी आक्रमणकारियों ने उठाया। मौर्योत्तर युग में इन विदेशी आक्रमणकारियों में प्रथम हिंद–यवन थे, जिन्होंने लगभग 180 ई.पू. से लेकर 10 ई. तक उत्तर–पश्चिमी और उत्तर भारतीय महाद्वीप पर शासन किया। इस साम्राज्य की स्थापना ग्रीक–बैक्टेरियन शासक देमेत्रिअस ने की थी। यद्यपि राजनीतिक दृष्टिकोण से इंडो–ग्रीक काल का कोई स्थायी परिणाम नहीं निकला, परंतु इसने भारतीय संस्कृति पर अपनी अमिट छाप छोड़ी। अपने दो शताब्दियों के शासनकाल के दौरान इंडो–ग्रीक शासकों ने भारतीय धर्म, भाषा, संस्कृति और प्रतीक को अपने में समाहित कर लिया, जो उनके द्वारा जारी मुद्राओं पर परिलक्षित होती है। सबसे पहले सोने के सिक्के ढालने का श्रेय भी इंडो–ग्रीक को जाता है, जिनकी संख्या में आगे चलकर कुषाण शासन में वृद्धि हुई। इंडो–ग्रीक साम्राज्य के इतिहास की अधिकांश जानकारी का स्त्रोत इस काल की मुद्राएं ही हैं। 'येक्रेटीडस' (प्रथम) को संभवत: पहला इंडो–ग्रीक शासक माना जाता है, जिसने अपने सिक्कों पर 'महाराजा' और 'राजाधिराज' जैसी उपाधियों का प्रयोग किया था। सेल्युकस ने अपना नाम खुदा सिक्का ढलवाया था। चित्र अंकित सिक्के का बेहतरीन उदाहरण हमें डेमेत्रियस द्वारा ढाले सिक्के में दृष्टिगोचर होता है। मेनान्डर जिसे मिलिंद के नाम से भी जाना जाता है, ने इंडो–ग्रीक शासकों की तुलना में सबसे ज्यादा भू–भाग में सिक्के चलाए। उसने विविधताओं से परिपूर्ण

* शोधार्थी, (इतिहास व संस्कृति विभाग) राज. विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

कई सिक्कें जारी किए। उसके द्वारा तक्षशीला में ढाला गया यह सिक्का महत्वपूर्ण है, जिसमें राजा को भाला फेंकते दर्शाया गया है। चांदी के सिक्के पहले की अपेक्षा अब अधिक अच्छे बनने लगे थे। सिक्कों के लिए ग्रीक शब्द 'द्रख्म' कालांतर में 'द्रम्म' और 'दाम' में परिणत हो गए।

आज भी हम किसी वस्तु के मूल्य के लिए दाम शब्द का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार इंडो-ग्रीक काल में भारतीय सिक्के में क्रांतिकारी परिवर्तन आया और यवनों ने भारतीय सिक्कों पर अपनी अमिट छाप छोड़ी। अभी तक के प्राप्त ऐतिहासिक स्त्रोत के अनुसार सौभुती पहला भारतीय शासक था, जिसने अपनी तस्वीर को सिक्कों पर अंकित कराया था। सिक्कों के अग्रभाग पर उसकी तस्वीर बनी थी और पृष्ठभाग पर एक खड़ा मुर्गा अंकित था। उसने अपने सिक्के यूनानी शैली में ढाले थे।[5] कुषाणों का काल लगभग पहली शताब्दी से लेकर तीसरी शताब्दी तक माना जाता था। कुषाण साम्राज्य की स्थापना का श्रेय कुजुल कडफिसस को दिया जाता है, जिसने मध्य एशिया के बाद भारत की ओर कुषाण साम्राज्य का विस्तार किया। कुषाणों ने अपने शासन के दौरान भारतीय सभ्यता-संस्कृति को अत्यंत प्रभावित किया। अत: कुषाणों की स्वर्ण मुद्राओं पर रोमन स्वर्ण मुद्राओं की छाप स्पष्ट देखी जा सकती है। इतना ही नहीं, रोमन देनेरियास के आधार पर भारत में दीनार शब्द प्रचलित हो गया, जो बाद में गुप्त सम्राटों की स्वर्ण मुद्राओं के लिए भी प्रयुक्त हुआ। सोने के सिक्के पहले-पहल कुषाण राजाओं ने बड़े पैमाने पर इस देश में चलाए। सिक्कों को देखकर ऐसा लगता है कि इस समय देश का वाणिज्य-व्यापार उत्कर्ष पर था। कुषाण शासकों ने अपने सिक्के पर अपने आपको अत्यंत ही खूबसूरत ढंग से चित्रित किया है। कुषाण शासकों के सिक्के के ओवर्स में राजा चित्रित है तथा रिवर्स में देवताओं के चित्र अंकित है। लंबी दाढ़ी, बड़ी नाक, बड़े हेलमेट, जूते, लंबे ओवरकोट, शिव नंदी आदि कुषाण सिक्के की प्रमुख विशेषताएं हैं। कुषाण शासक विम कडफिसस ने सोने के सिक्के जारी किए, जिनसे बाद की कुशाण मुद्रा-नीति प्रभावित हुई क्योंकि उसके बाद कुषाणों ने मुख्य रूप से सोने और तांबे के सिक्के ही ढलवाए।

हुविश्क को छोड़कर विम कडफिसस द्वारा जारी किए गए तांबे के सिक्के का अनुसरण बाद के सभी कुषाण शासकों ने किया। उसके द्वारा जारी किया गया सोने का सिक्का सिक्काशास्त्र के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। सोने के सिक्के में शिव की छवि अंकित थी। उसने अपने सिक्कों पर राजनीतिक महत्ता दर्शाने के लिए 'महाराज', 'महिश्वर', 'राजाधिराज', 'सर्वलोकेश्वर' आदि उपाधियां भी अंकित कराई। नंदी के साथ शिव का स्पष्ट चित्रण पहली बार विम कडफिसस के सिक्कों पर देखने को मिलता है। विम कडफिसस के उत्तराधिकारी कनिष्क भारत के पहले शासक थे, जिनके सिक्के पर बुद्ध की अत्यन्त दुर्लभ छवि अंकित की गई है। बुद्ध चित्रित सिक्के कनिष्क की बौद्ध धर्म में दिलचस्पी को बखूबी दिखाते हैं। कुषाण शासक हुविष्क के सिक्के सिक्का शास्त्र की दृष्टि से कई मायनों में महत्वपूर्ण है। उसने विम कडफिसस और कनिष्क के विपरीत अपने सिक्कों पर प्राचीन तीन धर्मों हिंदू, ग्रीक और पारसी के देवताओं को चित्रित किया। वासुदेव कुषाण काल का अंतिम शासक था। उसके द्वारा चलाये गया सोने का सिक्का मुद्राशास्त्र के लिए महत्वपूर्ण है, जिसमें उसने शिव के तीन सिर, चार हाथ, डमरू और नंदी को प्रदर्षित किया है। इस सिक्के पर बारीकी से काम किया गया है, जिससे यह प्रतीत होता है कि उस समय की कला काफी उन्नत रही होगी। पूर्व शासकों के विपरीत कनिष्क द्वितीय ने ब्राह्मी अक्षरों में सिक्के ढलवाए, जिसे बाद के शासकों ने भी अपनाया। उसने शिव (शिव के तीन सिर), नंदी और लक्ष्मी अंकित सिक्के जारी किए।[6] कुषाण वंश के पश्चात शक्तिशाली केंद्रीय सत्ता के अभाव में कई शक्तियों का उदय हुआ। चंद्रगुप्त द्वितीय ने इन बिखरी शक्तियों को एक कर गुप्त साम्राज्य की स्थापना की। यह काल राजनीतिक, आर्थिक, साहित्यिक, कला, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, तकनीकी क्षेत्रों की समृद्धि का दौर था। इसी कारण भारतीय इतिहास में गुप्तकाल को 'स्वर्ण युग' का काल भी कहा जाता है। चंद्रगुप्त द्वितीय के सिक्के को विशुद्ध रूप से भारतीय कहा जा सकता है। यद्यपि गुप्त सम्राटों ने स्वर्ण-रजत एवं ताम्र इन तीन धातुओं की मुद्राओं को चलाया, किंतु उनकी स्वर्ण मुद्राएं विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। वे अपनी मौलिकता, कलात्मता तथा विविधता की दृष्टि से प्राचीन भारतीय मुद्राओं में अप्रितम हैं। गुप्तकाल में सर्वाधिक स्वर्ण और चांदी की मुद्राएं ढाली गई थी। ज्यादातर सिक्के सोने के थे, जिससे यह स्पष्ट होता है कि गुप्तकाल आर्थिक दृष्टि से उन्नति का काल था। कल्पनाशीलता तथा कलात्मक विविधता यवनों, शकों अथवा कुषाणों की मुद्राओं में देखने को नहीं मिलती। समुद्रगुप्त ने लगभग 8 विभिन्न प्रकार के सिक्के जारी किए। वे दंडधारी प्रकार, धनुर्धारी प्रकार, सिंहनिहता, छत्र प्रकार, अश्वमेध प्रकार, कृतांतपरशु प्रकार, कुठार युद्ध प्रकार, गीतिकाव्यकार प्रकार आदि के नाम से जाने जाते हैं। इन सिक्कों से समुद्रगुप्त की शासकीय, सैन्य, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं व्यक्तिगत रूचि के बारे में पता चलता है।

चंद्रगुप्त द्वितीय ने अपने काल में सोने के सिक्के बड़ी मात्रा में ढलवाए। उसने चक्रविक्रम प्रकार, छत्र प्रकार, सिंहनिहंता प्रकार, घुड़सवार प्रकार, धनुर्धारी प्रकार के सिक्के चलाए। कुमारगुप्त ने 14 विशिष्ट प्रकार के सोने के सिक्के चलाए जो सभी शासकों से ज्यादा थे। उसने धनुर्धारी प्रकार, तलवारधारी प्रकार, घुड़सवार प्रकार, सिंहनिहंता प्रकार, व्याघ्रनिहंता प्रकार, मयूरसवार, हाथीसवार, गीतिकाव्यकार प्रकार के सिक्के जारी किए। इनमें से व्याघ्रनिहंता और गीतिकाव्यकार प्रकार के सिक्के, जिसे समुद्रगुप्त ने चलवाया था फिर से जारी किए गए। स्कंदगुप्त ने तीन प्रकार के सोने के सिक्के जारी किए-धनुर्धारी, राजा और लक्ष्मी एवं घुड़सवारी प्रकार के सिक्के। स्कंदगुप्त ने पहली बार 114 ग्रेन के सोने के सिक्के जारी किए। इन सिक्कों में राजा और रानी विशुद्ध भारतीय पोशाक में चित्रित हैं।[7]

मौर्य साम्राज्य के पतन ने दक्षिणी भारत में सातवाहन राजवंश की स्थापना का मार्ग प्रशस्त कर दिया। सातवाहन को 'आंध्र' भी कहा जाता था। सातवाहन पहले देशी शासक थे, जिन्होंने अपनी तस्वीर सिक्कों पर जारी किए। गौतमीपुत्र सतकर्णी ने पहली बार सिक्कों पर अपने चित्र को अंकित कराया और बाद के शासकों ने भी खुद के चित्रों के अंकन की परंपरा को जारी रखते हुए सिक्के चलाए। सातवाहन वंश ने मुद्रा निर्माण में एक नया प्रयोग किया। उन्होंने सीसे की मुद्राओं को जारी किया। भारतीय इतिहास में सीसे के प्रयोग के प्रमाण इससे पहले और इसके बाद में कहीं नहीं मिलते हैं। इस साम्राज्य के अंतर्गत सोने, चांदी और तांबे तीनों धातुओं के सिक्के प्रचलन में थे।8 चोल शासकों ने चौकोर एवं अन्य आकार वाले सिक्के चलाए, जिस पर प्रतीकात्मक निरूपण अधिक देखने को मिलता है। प्रमुख चोल शासक राजा चोल ने भारत तथा श्रीलंका दोनों स्थान पर सिक्के जारी किए। उत्तम चोल ने अपने सिक्के पर शाही प्रतीक 'बाघ और दो मछली' के साथ 'उत्तम चोल' लिखवाया। राजेंद्र चोल ने भी अपने सिक्के पर 'श्री राजेंद्र' अंकित करवाया। वर्तमान शोध से यह पता चलता है कि गोवा व कोंकण पर शासन करने वाले कदम्ब वंश ने दो प्रकार के सोने के सिक्के जारी किए-पंच मार्क सोने के सिक्के तथा डाई स्ट्रक सोने के सिक्के। इन सिक्कों पर हनुमान, शेर आदि के चित्र

अंकित किए गए थे। तोयिमादेव इस राजवंश का पहला शासक था जिसने डाई स्ट्रक वाले सोने के सिक्के चलाए।[9] चालुक्य राजवंश 5 वीं शताब्दी से लेकर 8वीं शताब्दी के दौरान दक्षिण भारत में शासन किया तथा सिक्कों पर धार्मिक प्रतीक शंख, कमल, दीप अंकित देखे जा सकते हैं।[10]

अजमेर के चौहान शासकों में अजयदेव द्वितीय से पहले के सिक्के अभी तक नहीं मिले। आमतौर पर पुराने सिक्कों को गलाकर नये सिक्के ढाल लिये जाते थे। रेप्सन महोदय को वासुदेव नामांकित एक सिक्का प्राप्त हुआ है। जो समकालीन गुर्जर शासक से मिलता जुलता नाम है।[11] डॉ. भण्डारकर ने इसे चौहान शासक का सिक्का बताया है।[12] चोहानों में सबसे पहला सिक्का अजयदेव (ई. 1110-1135) के समय के मिले हैं। ये चांदी मिश्रित धातु तथा तांबे के बने हैं। ये दो प्रकार के हैं। पहले पर सीधी तरफ लक्ष्मी की मूर्ति बनी हैं जो बड़ी भद्दी हैं। पृष्ठ भाग में 'श्री अजय देव' लेख है।[13] राजा सोमेश्वर (वि. 1228) ईसवी 1171 मे धौडगांव के लेख से पता चलता है कि अजयदेव के चांदी के सिक्के उस समय तक चलते थे। अजयदेव के दूसरे सिक्के पर सीधी तरफ भद्दी आकृति है तथा दूसरी तरफ रानी का नाम 'श्री सोमल देवी' अंकित है। इस रानी को अपने नाम के सिक्के निकालने का बड़ा शौक था। इसके बाद चौहानों के सिक्कों में सोमेश्वर के मिलते हैं, जो मिश्रित धातु के हैं। इनका वजन 53 ग्राम हैं। इनमें सीधी तरफ दायें हाथ में भाला लिए हुए घुड़सवार की आकृति है तथा ऊपर 'श्री सोमेश्वर देव' लिखा है। पृष्ठ भाग में बैठा सांड है, जिसके पुट्ठे पर त्रिशूल का निशान है और लेख में 'आशावरी' ' श्री सामन्तदेव' अंकित है। आशावरी का तात्पर्य चौहानों की इष्टदेवी आशापुरी के रूपान्तर से ही हैं।[14]

इसी प्रकार पृथ्वीराज ने भी अपने सिक्के जारी किये। इनकी आकृति सोमेश्वर के सिक्कों से अच्छी है। इसके सीधी तरफ भी भाला लिये हुए धुड़सवार तथा लेख में श्री पृथ्वीराज देव है और पृष्ठ भाग सोमेश्वर के सिक्के के समान ही है। पृथ्वीराज के सिक्के का वजन सोमेश्वर के सिक्के से कुछ कम है। इसी प्रकार पृथ्वीराज ने भी अपने सिक्के जारी किये। इनकी आकृति सोमेश्वर के सिक्कों से अच्छी है। इसके सीधी तरफ भी भाला लिये हुए धुड़सवार तथा लेख में श्री पृथ्वीराज देव है और पृष्ठ भाग सोमेश्वर के सिक्के के समान ही है। पृथ्वीराज के सिक्के का वजन सोमेश्वर के सिक्के से कुछ कम है।

पृथ्वीराज के पराजित करने के बाद गौरी ने उसे अपने अधीन ही राजा बना दिया। तब जो सिक्के निकाले गये, उन पर सीधी तरफ अश्वरोही हैं व लेख में पृथ्वीराज है। पृष्ठ भाग में सांड के ऊपर 'श्री मोहम्मद विनसाम' लेखा है।[15]

इस चौहान सिक्के शैली पर दूसरे राजपूत राजवंशों तथा दिल्ली के गुलाम सुलतानों ने भी सिक्के निकाले।

उस युग में लेन-देन का आदान-प्रदान (वाटरर-सिस्टम) से काफी होता था किन्तु मुद्रा भी प्रचलित थी। कौड़ियों भी मुद्रा के रूप में चलती थी। नीचे हम श्रीधर द्वारा दी गई तालिका दे रहे हैं-

5 कोड़ी- 1 पावीसा, 4 पावीसा- 1 बीसा, 5 बीसा- 1 लोहटेक, 4 लोहटेक- 1 रूपक (चांदीका), 5 रूपक- 12 द्रम्य या निष्क (सोने के)। अभी तक पृथ्वीराज का कोई सोने का सिक्का नहीं मिला है।[16]

इस प्रकार हम देखते है कि प्राचीन भारत की मुद्राओं का इतिहास काफी गौरवशाली रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. द्विजेन्द्र नारायण झा, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यालय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पेज 239, 2002
2. वहीं, पेज 392
3. के.सी. श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति,यूनाहटेड बुक डिपो इलाहाबाद वि.स. 2047 पेज 83
4. वही, पेज 290
5. वी.डी.महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पेज 257-264, 2013 एस चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली
6. के.सी. श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति,यूनाहटैड बुक डिपो इलाहाबाद वि.स. 2047 पेज 380-384
7. वी.डी.महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पेज 325, 2013 एस चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली
8. सांस्कृतिक पर्यटन, डॉ. राजेश कुमार व्यास, राजस्थानी हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2011, पृ. 116
9. वही, पृ. 117
10. वही, पृ. 118-119
11. इण्डिया आर्थोलॉजी, ए रिव्यू 1958-59, गर्वमेन्ट ऑफ इण्डिया
12. राजस्थान इतिहास रत्नाकर, जहूर खाँ, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 64
13. इण्डियन एन्टिक्वेरी, XLI पेज 25-29 जर्नल ऑफ न्यूमिस्मेटिक ऑफ इण्डिया अंक 16, पेज 122
14. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, अंक XLV, पेज 357, इण्डियन एन्टिक्वेरी, LXI पेज 209-211
15. खरतरगच्छ पट्टावली, पेज 29 पृथ्वीराज विजय, सर्ग 87-88
16. वरदा अंक 7, पेज 1-10
17. आर. वी. सोमानी, पृथ्वीराज चौहान एण्ड हिज टाइम्स, पेज 2, 1981
18. इण्डिया आर्थोलॉजी, ए रिव्यू 1958-59, गर्वमेन्ट ऑफ इण्डिया
19 राजस्थान इतिहास रत्नाकर, जहूर खाँ, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 64

****

बुंदेलखण्ड में अंग्रेजों का आगमन व नीतियाँ

डॉ. चेतना ठाकुर *

शोध सारांश – पेशवा तथा अप्पा साहब को संधि के तहत् घेरने के उपरांत मराठों से अंग्रेजों ने बुंदेलखण्ड हस्तगत कर लिया। इन बदली हुई परिस्थितियों और विदेशी शासकों का बुंदेलखण्ड वासियों ने प्रतिरोध नहीं किया क्योंकि वे शासकों के परिवर्तन को लेकर अभ्यस्त हो चुके थे पर यहाँ उन्होंने मराठा शासकों के कुशासन तथा इसके कारण पिण्डारियों द्वारा की जा रही लूटपाट से राहत को महसुस किया। बुंदेलखण्ड वासियों ने यहाँ इन विदेशी शासन से यह उम्मीद जरूर की कि अब ये नये प्रशासक उनकी जानमाल की रक्षा करेंगे और एक न्यायप्रिय शासन प्राणाली का आरंभ होगा, पर कालांतर में अंग्रेजी रवैये को लेकर रोष उत्पन्न होने लगा क्योंकि जनता द्वारा प्रशासनिक खामियों को बडी शिद्दत से महसूस किया गया।

प्रस्तावना – बुंदेलखण्ड का मराठा क्षेत्र अंग्रेजी सरकार को प्राप्त हो जाने के उपरांत वर्ष 1803 में अंग्रेजी सरकार द्वारा कैप्टन जॉन बैली को बुंदेलखण्ड का राजनीतिक एजेंट नियुक्त किया गया। इसने बुंदेलखण्ड में आते ही गैर मराठा राज्यों को अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास किया। इस समय बुंदेलखण्ड के सभी छोटे बड़े राजाओं ने पतनोन्मुख मराठा सत्ता का त्याग कर नवेदित अंग्रेजी राजसत्ता से समझौता कर लिया।[1] अंग्रेजी सत्ता का खुले दिल से साथ देने के लिए सर्वप्रथम मराठों से रूष्ट बुंदेलखण्ड का भेदिया हिम्मत बहादुर आगे आया और अंग्रेजों को बुंदेलखण्ड में आगे बढ़ने में मार्गदर्शन देने के प्रस्ताव के साथ-साथ 1803 में अंग्रेज प्रतिनिधि ग्रेम मेर्सर से समझौता कर लिया। इसके अलावा बुंदेला राज्य में से चरखारी का राजा विजय बहादुर वह पहला शासक बना। जिसने अंग्रेजों के समक्ष आत्मसर्मपण करते हुए 1804 में संधि करके सनद प्राप्त की।

कालांतर में अंग्रेजी शासन द्वारा विजय बहादुर के प्राधिकृत क्षेत्रों की पुष्टि भी कर दी गई।[2] कंपनी सरकार द्वारा बुंदेलखण्ड में वर्ष 1803 से 1823 तक बुंदेलखड के सभी मराठा, शासकों, गैर मराठा राजाओं व जागीरदारों से अधीनता सूचक एवं वफादारी का इकरार कर लेने पर यहाँ अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर लिया गया। दूसरी ओर आंतरिक व बाहरी मामलों में उलझे यहाँ के राजाओं व जागीरदारों ने अपनी स्थिति को बनाए रखने व रक्षा की गारंटी के लिए बिना भूत भविष्य सोचे जो शर्ते अंग्रेजी सरकार ने उनके सामने रखी उन्हें स्वीकार कर लिया तथा कालांतर में अपनी यथास्थिति बनायें रखने के लालच में अपनी स्वतंत्रता और सार्वभौमिकता को अर्पण कर दिया।

अंग्रेजी गर्वनर लार्ड हेस्टिंग्ज ने अपने कार्यकाल में देशी राजाओं को लेकर अंग्रेजी नीति में परिवर्तन किया। उसके द्वारा अपनाई गई नीति को अधीनस्थ पृथककरण नीति कहा जाता है। इस नई नीति के द्वारा कंपनी सरकार जो पूर्व में राजाओं को सहयोग देती थी अब आदेश देने की स्थिति में आ गई। इन बदली हुई परिस्थिति में अब कंपनी सरकार द्वारा अपने सर्वोच्चता को प्रदर्शित करते हुए देशी राजाओं से इकरार किए गए।[3] इस नई नीति के तहत् जो इकरार किए गए उसमें मुख्य रूप से निम्न बिंदुओं को रखा गया जिसके अनुसार राजा अपने व्यय पर राज्य में एक सेना रखेगा जो आवश्यकता पड़ने पर कंपनी सरकार को सहायता देगी। राजा द्वारा किसी अन्य राजा से अनुबंध करना प्रतिबंधित कर दिया गया एवं इकरार करने के उपरांत राजा कंपनी सरकार के प्रति निष्ठावान रहेगा।

लार्ड एमहर्स्ट, लार्ड विलियम बैंटिक, सर चार्ल्स मेटकाफ, लार्ड आकालैण्ड आदि ने अपने कार्यकाल में अपनी सुविधानुसार देशी राज्यों के मामले में कभी हस्तक्षेप किया कभी अहस्तक्षेप की नीति का अनुसरण किया। उपरोक्त गर्वनरों में से वर्ष 1828 में आए गर्वनर जनरल लार्ड विलियम बैंटिक का कार्यकाल भारत के इतिहास में स्वतंत्रता व पाश्चात्यकरण की ओर मोड़ देने वाला साबित हुआ। अपने इन्हीं विचारों के साथ बैंटिक ने जनता के समक्ष तुलनात्मक सूत्र प्रारंभ किया जिसमें जनता अंग्रेजी व देशी शासन के मध्य अंतर को आंक सके। इस तरह की विभेदकारी नीति के माध्यम से अंग्रेजी सरकार ने देशी शासकों की आंतरिक व्यवस्थाओं पर अंगुली उठाकर साबित करने में सहायता देकर लाभ पहुँचाया परंतु कालांतर में इस नीति के परिणाम उनके लिए घातक साबित हुए। विलियम बैंटिक ने इसके अतिरिक्त अंग्रेजी प्रशासन को अधिक कुशल व जनहितकारी साबित करने की होढ में प्राचीन समय से चली आ रही भारतीय अर्थव्यवस्था पध्दति को भी तत्काल परिवर्तन कर दिया। भारत ग्राम प्रधान देश था और अभी तक यहाँ स्वशासन की पध्दति द्वारा ग्राम पंचायत के माध्यम से राज्य को अपना लगान मिलता रहता था और वह संतुष्ट हो जाता था, लेकिन लार्ड विलियम बैंटिक ने इस व्यवस्था में परिवर्तन कर अधिकार में लिए गए नयें जिलों में पहला काम आज्ञा पालन करवाने पर केन्द्रित करते हुयें भूमि का लगान नकदी में दिए जाने पर बल दिया। किसानों को इस परिवर्तित व्यवस्था से बहुत आघात लगा क्योंकि नकदी के रूप में उनके उत्पादनों का मूल्य तत्काल गिर गया। इस प्रकार एक निश्चित क्रम में उन पर बकाया लगान चढ़ता गया जिसका यह परिणाम हुआ कि वे लंबे समय तक चलने वाले दीवानी मामलों में उलझ गएं। इसके अतिरिक्त पट्टेदारी तथा भूमि सबंधी अधिकार भी हस्तांतरणीय बना दिए गए।[4] लार्ड बैंटिक ने इस नीति के तहत् कर विमुक्त भूमि का अपहरण किया। इसी दौरान इंग्लैण्ड में हुई औद्योगिक क्रांति ने भारत की दशा को और अधिक दिशा विहीन कर दिया। इस क्रांति के कारण अब अंग्रेजों को भारत में बनी सामग्री की इतनी आवष्यकता ना रही जितने की अपने माल को बाहर खपाने तथा कच्चे माल के आयात की।[5]

बुंदेलखण्ड के सागर नर्मदा क्षेत्र का इसी परिप्रेक्ष्य में 1834 में आर एम बर्ड ने दौरा किया और उनकी इस क्षेत्र पर की गई टिप्पणी से स्पष्ट हो जाता है कि भूमि के स्वामी विवशतापूर्वक संकट में डाले जाते थे और यदि कानूनी

* अतिथि विद्वान (इतिहास) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

कार्यवाही कठोरता से लागू की जाती थी तो भूमिहीन हो जाते थे। अंग्रेजी शासनकाल के पहले दशक में और उसके बाद में इस क्षेत्र के बहुसंख्यक ताल्लुकेदार, ठाकुर और जमीनदार इसी का शिकार हुए थे।[6]

भारत में वर्ष 1837 में आए गर्वनर जनरल लार्ड आकालैण्ड ने अपनी विदेश नीति में हस्तक्षेप को हथियार बनाया, जिसका उसे फायदा होने के बजाए नुकसान अधिक हुआ। बहरहाल आकालैण्ड में भी साम्राज्यवादी पुट भरा हुआ था, उसने अपने विस्तार क्रम को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से देशी राजाओं द्वारा दत्तक लेने के अधिकार को अवैध घोषित कर दिया। बुंदेलखण्ड में इसका उदाहरण जालौन राज्य का प्राप्त होता है। जालौन में स्वर्गीय राजा बालाराव की विधवा लक्ष्मीबाई ने अल्पवयस्क राजा गोविंदराव की असामयिक मृत्यु हो जाने पर जालौन की गद्दी पर आसीन करने हेतु एक दत्तक पुत्र लेना चाहा परंतु गर्वनर जनरल आकालैण्ड ने उसकी एक न सुनी और जालौन राज्य का विलय अंग्रेजी राज्य में कर लिया।[7]

बुंदेलखण्ड में इसी परिप्रेक्ष्य में दूसरा उदाहरण मौधा राज्य का है। मौधा राज्य के शासक हिम्मत बहादुर का 1804 में स्वर्गवास हो गया उसके उपरांत उसकी विधवा पत्नि भी चल बसी ओर वर्ष 1840 में उसके पुत्र नरेन्द्र गिरी का भी निधन हो जाने पर कंपनी सरकार द्वारा उत्तराधिकारी का आभाव बतलाकर मौधा राज्य का विलय भी कंपनी राज्य में कर लिया गया।[8]

भारत में डलहौली का कार्यकाल साम्राज्य पिपास को पूरा करने में चरम पर पहुँच गया। उसके राज्यों की समाप्ति और जब्ती के सिध्दांत का अनाधिकृत उपयोग करते हुए डाक्ट्रिन ऑफ लैप्स के कुचक्र से संतारा, जैतपुर, संभलपुर, नागपुर तथा झाँसी राज्य अंग्रेजी अधिकार में कर लिए।[9]

यहाँ अंग्रेजों की नीति का उल्लेख करते समय यह बताना आवश्यक हो जाता है कि अंग्रेजों ने बुंदेलखण्ड में अपना राज्य स्थापित करने के उपरांत ओरछा, दतिया और समथर राज्यों से समानता के स्तर पर मित्रता संधियां की थीं इसके अतिरिक्त बुंदेलखण्ड के शेष राज्य और जागीरें सनदी रखी गई। प्राय: वह राज्य जो मराठों के अधीन से हो चुके थे। उनको सनद देकर अंग्रेजी सरकार ने बहाल किया था। वे ही सनदी कहलाएं। बुंदेलखण्ड में सरकार द्वारा छोटी जागीरों को भी उनके स्वतत्वों के विचार अथवा शांति स्थापना करने हेतु सनद देकर बहाल रखा था, परंतु सनद व संधि राज्यों में अंतर था। संधि वाले राज्य का सनदी वाले राज्यों की तुलना में अधिक मान व अधिकार था।[10] प्रत्येक स्वतंत्र राज्य अपने प्रबंधन के लिए आवश्यकतानुसार सेना रखता था, किसी-किसी राज्य में इंपीरियल सेना भी थी। जिसका प्रबंध अंग्रेजी नियमानुसार करना होता था। अंग्रेजी सरकार द्वारा जिलों पर नियंत्रण रखने के लियें छावनियों का गठन नौगाँव, सागर, झाँसी एवं जबलपुर में किया था, जिसमें तैनात सेनाएं अपने क्षेत्रों में सहायता देने के लिए सदैव तत्पर रहती थी।[11] इसके अतिरिक्त देशी राजाओं पर निगरानी रखने के लिए स्थानीय पोलिटिकन अथवा नैतिक अफसरों को नियुक्त किया गया था। इस तरह बुंदेलखण्ड का प्रषासनिक पुर्नगठन करने के उपरांत अंग्रेजी शासन का यहाँ आरंभ हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वार्नर ली, प्रोटेक्टिड प्रिंसिस ऑफ इंडिया, लंदन, पृष्ठ क्रमांक - 99
2. एचीसन सी.यू, क्लेक्शन ऑफ ट्रीटीज एंगेजमेन्टस एण्ड सनदूस, जिल्द पाँच, पृष्ठ क्रमांक - 132
3. वार्नर ली, प्रोटेक्टिड प्रिंसिस ऑफ इंडिया, लंदन, पृष्ठ क्रमांक - 94-95
4. मिश्र द्वारका प्रसाद, मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान भोपाल, पृष्ठ क्रमांक - 35
5. मजूमदार एण्ड राय चौधरी, एन एडवांस हिस्ट्री ऑफ इंडिया, लंदन, 1950, पृष्ठ क्रमांक - 141
6. मिश्र द्वारका प्रसाद, मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान भोपाल, पृष्ठ क्रमांक - 35
7. एचीसन सी.यू, क्लेक्शन ऑफ ट्रीटीज एंगेजमेन्टस एण्ड सनदूस, जिल्द पाँच, पृष्ठ क्रमांक - 141
8. त्रिपाठी डॉ काशीप्रसाद, बुंदेलखण्ड का वृहद इतिहास, (राजतंत्र से जनतंत्र), 2006, समय प्रकाशन, नईदिल्ली, पृष्ठ क्रमांक - 227
9. रिजवी सैद अतहर अब्बास, स्वतंत्र, दिल्ली, 1857, सूचना विभाग लखनउ, उत्तरप्रदेश, पृष्ठ क्रमांक - 17
10. सिंह दिवान प्रतिपाल, बुंदेलखण्ड का इतिहास, भाग-1, छतरपुर, 1929, पृष्ठ क्रमांक - 240
11. सिंह दिवान प्रतिपाल, बुंदेलखण्ड का इतिहास, भाग-1, छतरपुर, 1929, पृष्ठ क्रमांक - 242

****

झण्डा सत्याग्रह में बालाघाट जिले का अवदान

डॉ. संकेत कुमार चौकसे *

शोध सारांश – बालाघाट जबलपुर संभाग के अंतर्गत मध्यप्रदेश के दक्षिण पूर्वी छोर पर स्थित है। इस जिले में सतपुड़ा का दक्षिण पूर्वी क्षेत्र तथा ऊपरी बैनगंगा घाटी सम्मिलित है। ब्रिटिशकाल में यहाँ का अधिकांश क्षेत्र वनाच्छादित तथा उबड़-खाबड़ भू-भाग वाला होने के कारण शिक्षा एवं संचार की दृष्टि से अधिक विकसित नहीं हो सका था लेकिन इसके बावजूद भी इसकी स्वाधीनता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका रही तथा यहाँ के निवासियों ने झंडा सत्याग्रह में अविस्मरणीय भूमिका का निर्वाह किया। प्रस्तुत शोध पत्र में बालाघाट जिले में राष्ट्रीय चेतना का उद्भव एवं विकास तथा मध्यप्रांत में झंडा सत्याग्रह की पृष्ठभूमि एवं घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही इस सत्याग्रह में बालाघाट जिले के अवदान को बतलाया गया है।

शब्द कुंजी – झण्डा सत्याग्रह ।

प्रस्तावना – बालाघाट जबलपुर संभाग के अंतर्गत मध्यप्रदेश के दक्षिण पूर्वी छोर पर स्थित है। इसका आकार 'उड़ान भरते पक्षी' के समान दृष्टिगोचर होता है। इस जिले में सतपुड़ा का दक्षिण पूर्वी क्षेत्र तथा ऊपरी बैनगंगा घाटी सम्मिलित है। यह जिला $21^0 19'$ से $22^0 24'$ उत्तरी अक्षांश एवं $79^0 31'$ से $81^0 3'$ पूर्वी देशांतर रेखाओं के मध्य एक ऊबड़-खाबड़ चतुष्कोण में विस्तृत है। बालाघाट जिला उत्तर में मण्डला, दक्षिण में महाराष्ट्र राज्य के भण्डारा जिले की सीमा को स्पर्श करता है। पूर्व में जिले की सीमा छत्तीसगढ़ राज्य के राजनांदगाँव जिले और पश्चिम में सिवनी जिले से लगी हुई है। उत्तर पश्चिम में बैनगंगा नदी इस जिले को सिवनी से अलग करती है। जबकि पुन: बैनगंगा एवं इसकी सहायक नदियाँ बावनथड़ी तथा बाघ दक्षिण में सीमा निर्धारण करती है।[1]

बालाघाट में राष्ट्रीय आंदोलन का प्रभाव वर्ष 1915 में परिलक्षित हुआ, जब मध्यप्रांत एवं बरार संघ नामक संस्था का निर्माण किया गया। इसकी कार्यकारिणी समिति के सदस्यों में बालाघाट का प्रतिनिधित्व रायबहादुर नारायणराव केलकर ने किया। इसके अतिरिक्त बालाघाट के देवीचरण निर्गुण इसकी स्थायी समिति के सदस्य के रूप में निर्वाचित हुए। जब ऐनीबेसेंट द्वारा होमरूल लीग की स्थापना की गई तो 1917 में बालाघाट जिले में भी इसकी एक शाखा स्थापित की गई।[2] बालाघाट में जनता में राष्ट्रीय चेतना जागृत करने के उद्देश्य से 1920 ई. में कांग्रेस संगठन की विधिवत स्थापना की गई। उस समय बालाघाट कांग्रेस में मुख्य रूप से निर्गुण वकील, इंदापवार वकील, मोहरीरकर वकील, मुंशी त्रिवेणी प्रसाद, राय दुर्गाप्रसाद, वंशीलाल, करामात हुसैन, अब्दुल सत्तार, चिंतामनराव केलकर, गौतम गोपाल पटेल इत्यादि शामिल थे।[3]

महात्मा गांधी द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर असहयोग आंदोलन प्रारंभ किए जाने पर उसका प्रभाव बालाघाट जिले पर भी पड़ा। जिले में तिलक स्वराज्य कोश भी स्थापित किया गया तथा स्वयंसेवकों द्वारा ग्रामों एवं नगरों की यात्राएँ कर इस कोश हेतु धन एकत्र किया गया तथा असहयोग आंदोलन में शामिल होने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया गया।[4] इसी आंदोलन के अंतर्गत कांग्रेस की ओर से देश के वकीलों एवं सरकारी नौकरों के नाम असहयोग का आव्हान किया गया तो अनेक वकीलों एवं शासकीय कर्मचारियों ने अपनी-अपनी नौकरियों का परित्याग कर दिया। बालाघाट जिले में इस कार्य का शुभारंभ रामचंद्र विठ्ठल इंदापवार द्वारा किया गया।[5] इसी दौरान अलीबंधुओं के नगर आगमन से जिले की मुस्लिम जनता पर विशेष प्रभाव पड़ा। करामात हुसैन, अब्दुलसत्तार तथा इसानअली आदि अग्रिम मुस्लिम नेताओं ने जिले में राष्ट्रीय आंदोलन को एक नई दिशा एवं गति प्रदान की।[6]

असहयोग आंदोलन की समाप्ति के कुछ ही समय पश्चात् मध्यप्रांत में 'झण्डा सत्याग्रह' प्रारंभ किया गया। मध्यप्रदेश के स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में इस सत्याग्रह का एक विशिष्ट स्थान है। राष्ट्रीय झण्डे के प्रति सम्मान की भावना जागृत करने के उद्देश्य से तथा ब्रिटिश शासन को चुनौती प्रस्तुत करने से झण्डा सत्याग्रह आरंभ किया गया। जबलपुर से आरंभ यह सत्याग्रह पं. सुंदरलाल की गिरफ्तारी के बाद नागपुर कांग्रेस कमेटी के हाथों में आ गया जिसका संचालन सेठ जमनालाल बजाज ने किया।[7] सत्याग्रह के संचालन हेतु सेठ जमनालाल बजाज ने नागपुर में एक संस्था की स्थापना की और जलियांवालाबाग हत्याकाण्ड का दिन 13 अप्रैल को सत्याग्रह के लिए निर्धारित किया परंतु शासन की ओर से झण्डा सत्याग्रह को नागपुर में अवैधानिक घोषित कर दमन नीति का प्रयोग किया गया। इसके बाबजूद सरकार सत्याग्रह की प्रगति को रोकने में सफल न हो सकी। महाकौशल, नागपुर और विदर्भ के कोने-कोने से विशेषकर **बालाघाट**, बैतूल, नरसिंहपुर, जबलपुर तथा सागर से स्वयंसेवकों के जत्थे सत्याग्रह में भाग लेने के लिए जाने लगे।

झण्डा सत्याग्रह में बालाघाट जिला मध्यप्रांत के सभी जिलों में शिखर पर था जहाँ से सर्वाधिक संख्या में स्वयंसेवकों ने करामात हुसैन तथा अब्दुल सत्तार के नेतृत्व में भाग लिया था। इन दो नेताओं ने झण्डा सत्याग्रह में भाग लेने के लिए लगभग 400 स्वयंसेवकों को भेजा था।[8] जब ये सत्याग्रही बालाघाट नगर से नागपुर के लिए रवाना होते थे, तब उनका समुचित सम्मान बालाघाट जिला कांग्रेस समिति करती थी। प्रारंभ में स्वयंसेवक रेल से नागपुर जाते थे किन्तु कुछ समय बाद जब रेल्वे ने टिकिट बिक्री बंद कर दी तब स्वयंसेवक बालाघाट से दस-दस की टुकड़ियों में पैदल ही पहुँचने लगे। नागपुर में जिला कांग्रेस बालाघाट की ओर से दो सेनानायक वहाँ मौजूद होते थे। वे इन सत्याग्रहियों के रहने एवं खान-पान की समुचित व्यवस्था करते थे।

* अतिथि विद्वान (इतिहास) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

ये सत्याग्रही निश्चित तिथि व समय पर कौमी तिरंगा झण्डा लेकर सिविल लाइन में झण्डे का जयनाद करते हुए परेड करते थे।[9] इन सत्याग्रहियों को गिरफ्तार कर नागपुर के केन्द्रीय जेल या अकोला जेल में रखा जाता था। इन्हें एक सप्ताह से 3 माह तक की सजाएं दी गई। उल्लेखनीय है कि झण्डा सत्याग्रही जब जेल की सजा पूरी कर बालाघाट लौटते थे, तो उनका पूरा नागरिक सम्मान किया जाता था। इन सत्याग्रहियों को जिला कांग्रेस बालाघाट द्वारा मानपत्र दिया जाता था जिसका नमूना इस प्रकार है-[10]

मान-पत्र

वन्देमातरम् । **अल्लाहो अकबर ।।**

ज़िला कांग्रेस कमेटी बालाघाट

मान्यवर महोदय,

आपने नागपुर सत्याग्रह में कौमी झण्डा उठाकर देश की बलिवेदी पर अपना बलिदान दिया। एक भारतीय नवयुवक की भांति कांग्रेस के मन्तव्य को पालन करते हुये अनोखा त्याग करके जो कष्ट सहजता देश की स्वतंत्रता के निमित जो अनेक अपमान तकलीफ और उदण्ड व्यवहारों को शांति से सहन किया उसे ज़िला कांग्रेस कमेटी अपने हृदय में स्थान देती हुई दिली-हमदर्दी प्रकट करती है और हार्दिक उत्साह से बधाई देती है। ईश्वर करें आप सदैव देश पर कुर्बानी देने के लिये तैयार रहें और संसार को यह जता दें कि बालाघाट के नवयुवक भी अपने देश की आज़ादी के लिये जीते हैं और देश की ही आज़ादी के लिये मरने को सदैव प्रस्तुत रहते हैं।

।। कौमी झण्डे की जय ।।

बालाघाट **बद्रीनारायण अग्रवाल**
दिनाँक 30.07.1923 **सभापति, ज़िला कांग्रेस कमेटी**

यह श्वेत कागज पर साइक्लो स्टाइल किया हुआ मानपत्र 30 जुलाई 1923 को झण्डा सत्याग्रहियों का नागरिक स्वागत करके उन्हें सौंपा गया। झण्डा सत्याग्रह से लौटकर आये सत्याग्रही ग्राम-ग्राम जाकर तिलक स्वराजकोष के लिए चंदा एकत्रित करने, चरखा प्रचार, विदेशी बहिष्कार तथा नशाबंदी के कार्यों में जुट गये।[11] स्मरणीय है कि झण्डा सत्याग्रह से ही बालाघाट जिले में स्वतंत्रता आंदोलन की शुरूआत हुई। इस आंदोलन में जिले के हर तबके का प्रतिनिधित्व था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिन्हा, ए.एम.; मध्यप्रदेश जिला गजेटियर बालाघाट 1998, पृ. 1
2. वही ;पृ. 65
3. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सैनिक जबलपुर संभाग,सूचना प्रकाशन विभाग,1978, पृ. 164
4. तिवारी, बृजबिहारी ; बालाघाट जिले के 50 वर्ष, द्वितीय सोपान पृ. 3
5. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सैनिक,वही, पृ. 164-165
6. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सैनिक,वही, पृ. 165
7. गुरू, एस.डी. ;मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन (1857-1950),मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2008 पृ. 175
8. मध्यप्रदेश और गांधीजी, सूचना प्रसारण संचालनालय भोपाल,1969, पृ. 69
9. तिवारी बृजबिहारी, ,वही, पृ. 9
10. वही, पृ. 10
11. वही, पृ. 11

****

मध्यप्रांत में सविनय अवज्ञा आंदोलन का अध्ययन (मण्डला जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रूक्मणी परते *

शोध सारांश – सविनय अवज्ञा आंदोलन राष्ट्रीय आंदोलन का एक महत्वपूर्ण चरण था। ग्रामीण जनता का जंगल से सीधा संपर्क था। जलाने की लकड़ी, पशुओं के लिये घास, जंगल की वस्तुयें थी, जिन पर सरकार ने शक्ति से रोक लगा रखी थी, अत: ग्रामीण लोगों ने कुशल व विवेकशील नेताओं के नेतृत्व में इस आंदोलन में बडे उत्साह, उमंग और सामूहिक सहयोग के साथ भाग लिया। जिसमें आदिवासियों की गोंड, बैगा, भील, कोरकू, मुड़िया, माड़िया, कौल, घुरवा, पनका पनगढ़ आदि जनजातियाँ पाई जाती हैं।

शब्द कुंजी – जंगल सत्याग्रह ।

प्रस्तावना – मध्यप्रांत एवं बरार में अवज्ञा आंदोलन के अंतर्गत जंगल सत्याग्रह अधिक महत्व रखता है। यह आंदोलन जुलाई 1930 से आरंभ होकर दिसम्बर के बीच सर्वाधिक अवधि तक चलने वाला आंदोलन था। इस आंदोलन में शहरी लोगों की अपेक्षा ग्रामीणों एवं जन-जातियों ने विशेष पराक्रम प्रदर्शित किया। इनमें गोंड तथा केरिबेल प्रमुख थे। वस्तुत: आंदोलन का प्रमुख मुद्दा वनोपज और जंगल के उपयोग पर प्रतिबंध से संबंधित था। आदिवासी जनजातियों मूल निवासियों को अब लाइन्सेस प्राप्त करने पर ही जंगल में प्रवेश एवं उपयोग संभव था। मूल निवासी इस व्यवस्था को स्वीकार नही करना चाहते थे। फलस्वरूप जंगल कानून का उल्लंघन अनिवार्य हो गया और जगह-जगह सत्याग्रह करके जंगल कानून तोड़ा गया। [1]

इसी क्रम में जंगल सत्याग्रह का उद्देश्य जंगल कानून को सरल बनाना था जिससे अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछडे वर्ग के लोग वन उपज का लाभ उठा सके। उस समय जंगल कानून अन्यायपूर्ण अमानवीय था क्योंकि पहले किसान अपनी भूमि से लगे हुये क्षेत्र में पशुओं के लिये कर-युक्त चारा (घास) उगा सके थे। परंतु अंग्रेजी राज्य के प्रारंभ होते ही उनकी यह सुविधा समाप्त कर दी गई थी। जिसमें करीब कृषकों को अपने पशुओं के लिये चारा प्राप्त करना कठिन हो गया। यहाँ तक इन गरीब किसानों को अपने झोपड़ों की छतों के लिये सूखे घास-फूँस भी बिना दाम के उपलब्ध नहीं हो सकते थे। सरकार कृषकों को चारागाह के लिये कर-मुक्त भूमि, सूखे पत्तो तथा लकड़ी आदि नहीं देना चाहती थी।[2]

जंगल सत्याग्रह की प्रारंभिक कठिनाई – जंगल सत्याग्रह को चलाने का विचार सर्वप्रथम श्री द्वारकाप्रसाद मिश्र के मस्तिष्क में हुआ। परंतु आंदोलन को आरंभ करने में अनेक कठिनाईयाँ थी, सबसे बड़ी कठिनाई यह भी थी कि केन्द्रीय कांग्रेस कार्यकारिणी समिति द्वारा बनाये गये सत्याग्रह के कार्यक्रमों में इसे शामिल नहीं किया गया था। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की अहमदाबाद में हुई मीटिंग के बाद 9 मार्च को सेठ गोविंद दास, श्री रविंशंकर शुक्ल, श्री द्वारकाप्रसाद मिश्र, महात्मा गाँधी से जम्मूसार मार्ग में मिले और जंगल सत्याग्रह के विषय में उनकी सलाह मांगी। गांधीजी बहुत अधिक उत्सुक नहीं थे और उन्होंने अपनी आखिरी राय देने से मना कर दिया क्योंकि उन्होंने प्रांत का जंगल सत्याग्रह कैसे करना चाहिए, नहीं पढ़ा था, लेकिन उन्होंने पं.जवाहरलाल नेहरू से सलाह करने को कहा। किन्तु पं.जवाहरलाल नेहरू की गिरफ्तारी हो जाने के कारण पं.मोतीलाल नेहरू को कांग्रेस के कार्यकारी अध्यक्ष बन गये थे, उनसे अनुमति प्राप्त करना आवश्यक था। श्री द्वारकाप्रसाद मिश्र उनसे अनुमति प्राप्त करने के लिए इलाहाबाद गए। पं.मोतीलाल नेहरू गांधीजी की आज्ञा के बिना सत्याग्रह के कार्यक्रम को संशोधित नहीं करना चाहते थे। उन्हें भय था कि हजारों ग्रामीणों और आदिवासियों को लेकर किए जाने वाले इस आंदोलन के परिणाम हिंसात्मक हो सकते हैं। हजारों आदिवासी और ग्रामीण कुल्हाड़ियों से वृक्ष काटेंगे जो हिंसा की ओर ले जावेंगे। लेकिन एक लंबी बातचीत और द्वारकाप्रसाद मिश्र द्वारा दिए गए। इस आश्वासन पर कि जंगल सत्याग्रह कांग्रेस कार्यसमिति और गांधीजी के सिद्धांतों के आधार पर पूर्ण अहिंसा का मार्ग अपनाते हुये, हर उद्देश्य पर शक्ति से अमल करते हुये चलाया जायेगा। श्री द्वारकाप्रसाद मिश्र की दृढ़ इच्छा शक्ति को देखकर पं.मोतीलाल नेहरू ने सर्तकतापूर्वक जंगल सत्याग्रह शुरू करने की अनुमति दे दी। [3] कांग्रेस कार्यकारिणी ने यह प्रस्ताव भी पारित किया कि महाकौशल में जंगल कानून तोड़ने के समान ही दूसरे प्रांतों में भी दमनकारी कानूनों के विरोध में आंदोलन चलाए जा सकते हैं।[4]

सविनय अवज्ञा आंदोलन की तैयारी जोर-शोर से नये रूप में होने लगी। ग्रामीण जनता का जंगल से सीधा संपर्क था। जलाने की लकड़ी, पशुओं के लिये घास, जंगल की वस्तुएं थी, जिन पर सरकार ने शक्ति से रोक लगा रखी थी, अत: ग्रामीण लोगों ने कुशल व विवेकशील नेताओं के नेतृत्व में इस आंदोलन में बडे उत्साह, उमंग और सामूहिक सहयोग के साथ भाग लिया। जनता को उत्प्रेरित करने के लिये, पं.सुन्दरलाल की प्रतिबंधित पुस्तक **'भारत में अंग्रेजी राज'** के लोग भी इसमें कई क्षेत्रों में शामिल हुये और इस बात पर निगरानी रखी गई कि कहीं कुछ अशिक्षित ग्रामीण इसे उग्र रूप न दे दें। यह देखकर प्रशासन भी सतर्क हो सका। आंदोलन को आरंभ में ही कुचल देने के उद्देश्य से 21 अप्रैल को ही श्री द्वारकाप्रसाद मिश्र, सेठ गोविंददास, श्री विष्णु दयाल भार्गव, श्री माखनलाल चतुर्वेदी और श्री रविशंकर शुक्ल गिरफ्तार कर लिए गए। [5]

मण्डला जिले में जंगल सत्याग्रह– मध्यप्रदेश के ऐतिहासिक जंगल सत्याग्रह में वनाच्छादित एवं आदिवासी बहुल मण्डला जिले का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा। यह आंदोलन जिले के अग्रणी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी एवं जिला कांग्रेस के अध्यक्ष श्री गिरिजाशंकर अग्निहोत्री के नेतृत्व में चलाया

* वरिष्ठ अध्यापक शासकीय उत्कृष्ट विद्यालय ,पांढुर्णा, जिला- छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

गया। जनता चूंकि नमक सत्याग्रह का गर्मजोशी से पालन कर रही थी अत: जंगल सत्याग्रह के लिये उन्हें कोई विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ा। मण्डला के इस गांधी (अग्निहोत्री) के आव्हान पर जनता पुन: घरों से निकल आई तथा जंगल कानून की धज्जियाँ उड़ाई जाने लगी। चूंकि जंगल से मानव का जीवन जुड़ा हुआ होता है और अनेक आवश्यक वस्तुए जो मनुष्य के जीवन में अति आवश्यक होती हैं, उन्हें वनों से ही प्राप्त किया जा सकता है। शासन ने चूंकि वनों में प्रवेश के विरूद्ध नियम बना दिया था। अत: मण्डला जिले के अपढ़ व निम्न जाति के गरीब परिवारों ने भी इस आंदोलन में भरपूर सहायता दी। अत: 1930-31 में जंगल सत्याग्रह ने विकराल रूप धारण कर लिया। मण्डला जैसे वनाच्छादित जिले के लिये यह अत्यंत महत्वपूर्ण आंदोलन था अत: इस सत्याग्रह में पूरे मण्डला जिले ने बडे उत्साह से भाग लेकर जंगल कानून का उल्लंघन किया। अभी तक शासन मौन था तथा नमक कानून तोड़ने तक प्रशासन ने मण्डला जिले में कोई सख्ती नहीं दिखाई थी किन्तु जब नमक सत्याग्रह के साथ ही जंगल सत्याग्रह आरंभ हुआ तो शासन ने मण्डला के इतिहास को नया रूप देना प्रारंभ किया तथा गिरफ्तारियों एवं विभिन्न कार्यवाहियों का दौर प्रारंभ हो गया।

जिले में जंगल सत्याग्रह का प्रारंभ मण्डला से हुआ किन्तु प्रथम गिरफ्तारी मण्डला जिले की एक वर्तमान तहसील '**निवास**' क्षेत्र से हुई। श्री सूरजधर बड़गैया, सर्वप्रथम जंगल सत्याग्रह के अंतर्गत गिरफ्तार किए गए। जंगल सत्याग्रह के पूर्व 20वीं सदी के किसी भी आंदोलन में उसने कोई भूमिका अदा नहीं की, किन्तु निवास से हुई प्रथम गिरफ्तारी ने अवश्य ही मण्डला के इतिहास में उसका नाम अमर कर दिया। श्री सूरजधर बड़गैया निवास क्षेत्र के ही निवासी थे। चूंकि जंगल सत्याग्रह के समय वे जबलपुर में निवास करते थे, किन्तु मण्डला की वन सीमा के अंतर्गत उन्हें इस कानून के अंतर्गत गिरफ्तार किया गया। श्री बड़गैया जी ने अपने 12 साथियों के साथ मण्डला-जबलपुर सड़क पर 'नर्रई' नाले के समीप, जहाँ आज रानी दुर्गावती की शहादत की समाधि है, जंगल में प्रवेश कर कानून का उल्लंघन किया तथा गिरफ्तार हुए। वह स्थान मण्डला वन परिक्षेत्र में आता था अत: गिरफ्तार कर उन्हें मण्डला जेल लाया गया। उनका निवास स्थान **'निवास तहसील'** में ही एक ग्राम डुंगरिया में होने के कारण निवास तहसील का नाम उनके साथ जुड़ गया। इस प्रकार मण्डला जिले से प्रथमत: गिरफ्तार होकर श्री बड़गैया जी ने जेल जाने का श्री गणेश किया। उनके इस कार्य से अन्य नेताओं के हृदय से जेल जाने का भय भी जाता रहा और बड़गैया जी की जेल यात्रा मण्डलावासियों के लिए प्रेरणाश्रोत बन गई। [6]

इधर मण्डला शहर में भी 1930-31 में जंगल सत्याग्रह ने उग्ररूप धारण किया। सर्वप्रथम कांग्रेस द्वारा इस आंदोलन के प्रचार हेतु गांधी चौंक में एक सभा का आयोजन किया गया। पं. अग्निहोत्री ने सभा को संबोधित कर जंगल सत्याग्रह का निर्देशन किया। अग्निहोत्री जी के आव्हान पर सभी व्यक्ति कतार से जंगल कानून भंग करने के उद्देश्य से मण्डला नगर के समीप ही एक ग्राम **'खैरी'** की ओर बढे। यह अभियान 15 सितम्बर 1930 को प्रारंभ किया गया। [7] जन-समूह खैरी ग्राम के निकट, वर्तमान में जहाँ शासकीय महाविद्यालय स्थापित है, पहुँचा। यह स्थान मण्डला-डिण्डौरी मार्ग पर मण्डला से लगभग 4 किमी. की दूरी पर है। सर्वप्रथम श्री अग्निहोत्री एवं ग्राम हिरदेनगर (मण्डला) के श्री शम्भूप्रसाद मिश्र के हाथों में कुल्हाड़ियाँ चमकीं। ये दोनों सेनानी जंगल कानून के उल्लंघन के उद्देश्य से जंगलों में प्रवेष कर गये। वृक्षों पर वार प्रारंभ हुये और उसके पश्चात् तो मानों जनता पागल हो गई। एक के बाद एक कई नेता कुल्हाड़ी व अन्य अस्त्रों को लेकर जंगल काटने में जुट गए। किसी भी तरह प्रशासन इस सिलसिले को रोकना चाहता था जबकि सिलसिला बढ़ता ही जाता था। श्री अग्निहोत्री जी एवं श्री शम्भूप्रसाद मिश्रा सर्वप्रथम गिरफ्तार किए गए। [8] उसके पश्चात् जेल जाने वालों का तांता लग गया। मण्डला के श्री शत्रुधन दत्त पाठक, श्री गबडू कोल, बम्हनी बंजर के श्री आशाराम शुक्ल, श्री भरत दत्त पाठक आदि गिरफ्तार कर मण्डला जेल भेज दिए गए।**9** इनके अलावा जनता ने बहुत बड़ी संख्या में गिरफ्तारियाँ दी किन्तु बाद में उन्हें छोड़ दिया गया। केवल उपर्युक्त मुख्य नेताओं को इस कानून के उल्लंघन के संबंध में कड़ी सजाए दी गई। [10]

जंगल कानून का उल्लंघन करने का उद्देश्य उन निर्धन लोगों का समर्थन प्राप्त करना था जो इस कानून को अत्याचारपूर्ण समझते थे। अपनी जीविका के लिए वनों के समीप रहने वाले वन उपजों पर निर्भर थे। उस समय जंगल में कानून अत्यंत कठोर थे। अतएव जंगल सत्याग्रह का उद्देश्य जंगल कानून को सरल बनाना था, जिसे आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग वन उपजों का लाभ उठा सके। अंग्रेजों ने ऐसे कानून बना दिए जिनसे किसानों को अपने मवेशियों के लिये चारा प्राप्त करना तक कठिन हो गया। यही नहीं कृषकों को अपने झोपड़ों व घरों की छतों के लिए सूखे घास, फूस भी बिना उसकी कीमत चुकाए प्राप्त नहीं हो सकता था। इन सब कारणों से उनके लिए जंगल कानून भंग करना ही एकमात्र उपाय रह गया।

निष्कर्ष – इस प्रकार अधिकांश आदिवासी गाँवों में दूर जंगलों में बसे होते हैं, तथा प्रकृति प्रेमी होते हैं। महाकौशल में आदिवासियों की गोंड, बैगा, भील, कोरकू, मुड़िया, माड़िया, कौल, धुरवा, पनका पनगढ़ आदि जनजातियाँ पाई जाती हैं। जंगल सत्याग्रह के अंतर्गत वन कानून का उल्लंघन कई तरह से किया गया। जैसे- पशुओं को संरक्षित वनों में चरने के लिए छोड़ देना, सरकार की आज्ञा के बिना जंगल से ईंधन और पत्तियाँ एकत्र करना और वन तथा राजस्व कर्मचारियों का सामाजिक बहिष्कार करना, इसका प्रतीकात्मक रूप था। जंगल सत्याग्रह का उद्देश्य जंगल कानून को सरल बनाना भी था। उस समय जंगल कानून अन्यायपूर्ण तथा अमानवीय था। पुराने समय में किसानों को उनकी भूमि से लगी बंजर भूमि पशुओं को चारे के लिये घास उगा सकते थे, परंतु अंग्रेजी राज्य के प्रारंभ होते समय सुविधा समाप्त कर दी गई। किसानों के जानवरों के लिए घास प्राप्त करना कठिन हो गया। किसानों को अपनी झोपड़ी की छतों को बिछाने के लिए सूखी घास भी बिना वन के प्राप्त नहीं होती थी। अत: इन आदिवासियों के लिए जंगल कानून को भंग करना ही उनके लिए एकमात्र उपाय रह गया था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, जे.पी.; मध्यप्रदेश में स्वतंत्रता आंदोलन पृ.59-60
2. ए.आई.सी.पेपर्स फाइल न. 20-23/1930, पृ. 151-153
3. ऑल इंडिण्या कांग्रेस कमेटी फाइल न. 28/1930, पृ. 3(एम.पी.सी.सी., जबलपुर सी.पी.) एवं मिश्र, द्वारकाप्रसाद (संपा.) मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, पृ. 364
4. मिश्र, द्वारकाप्रसाद (संपा.) वही, पृ. 365
5. हितवाद (नागपुर) 24 जुलाई 1930, पृ.क्र. 2
6. अग्रवाल, गिरजाशंकर; स्वाधीनता संग्राम मण्डला-डिण्डौरी, पृ. 113
7. -वही- पृ. 113
8. जेल रिकार्ड एवं मण्डला जिला अध्यक्ष कार्यालय की विज्ञाप्ति क्र./एससी/2/73/61 दिनाँक 6.6.1963 एवं क्र./एससी/2/74/9086 से उद्धृत
9. -वही-
10. वही, पृ. 114

वर्तमान राजनैतिक परिदृष्य और सामाजिक समरसता में गांधीजी की प्रासंगिकता

डॉ. संदीप श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – मोहन दास करम चन्द गांधी एक धर्मनिष्ठ राजपुरूष थे जिन्होंने अपनी जीवन दृष्टि को गहन अध्ययन एवं कर्म द्धारा क्रमश: विकसित किया। अपनी इसी जीवन दृष्टि के अनुरूप उन्होंने भारतीय समाज को एक सम्यक् और संतुलित रूप देने का संकल्प बनाया। मानव जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है, जिसकी ओर गांधी जी का ध्यान न गया हो। गांधी जी कोई उपदेशक या मत पन्थ के प्रवर्तक भी नहीं थे, उन्होंने तो अपनी दैनोंदिन जीवनचर्या को इस प्रकार ढाला कि वह व्यावहारिकता के चरम पर पहुँचकर लोगों को आज भी प्रेरित और अनुप्राणित कर रही है। मनुष्य मात्र के बीच सह–अस्तित्व का प्रचार–प्रसार तथा परिविस्तार भारतीय समाज में सर्व प्रथम गांधी जी ने किया।

मानवीय चिन्तन के इतिहास में महात्मा गाँधी एक ऐसे विचारक रहे हैं। जिन्होंने दार्शनिक एवं कर्मण्यता के स्तर पर धर्म एवं राजनीति के आध्यात्मिक समन्वयक का अनूठा प्रयास किया था। राजनीति में बढ़ती मूल्यहीनता एवं अमानवीयता का प्रमुख कारण आध्यात्म का राजनीति से अलगाव है। गाँधी जी के लिये राजनीति का आध्यात्म से अलग एवं विमुख होना न तो संभव है न ही अपेक्षित।गांधी जी ने मानव के लिए मानव के द्धारा मानव के सहयोग से विकसित होने वाली तकनीकी पर जोर दिया। विश्व आर्थिक व्यवस्था के पटल पर आज पूँजीवादी और समाजवादी दोनों ही व्यवस्थाएं अपने लोक कल्याणकारी उद्देश्यों की पूर्ति में असफल हो रही हैं। ऐसी परिस्थिति में गांधी जी का आर्थिक चिंतन और उनका रचनात्मक कार्य ही मानव समाज को सही दिशा दिखा सकता है।

भारत की नई पीढ़ी में आज महात्मा गांधी के विचारों के प्रति अविश्वास की भावना देखी जाती है, और यह सुनने को मिलता है कि बदलती हुई दुनिया में उनके विचार प्रासंगिक नहीं रहे। उनके विचार अव्यावहारिक और निस्तेज हो गए हैं, वस्तुत: देश की युवा पीढ़ी को ही इसके लिए पूर्णत: दोषी नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि गांधी जी के विचारों का उतना प्रचार–प्रसार नहीं किया गया, जितना वह अपरिहार्य अपेक्षित और प्रासंगिक है। प्रस्तुत लेख इसी दिशा में एक प्रयास है। गाँधीजी का आग्रह था कि राजनीति का आधार धर्म होना चाहिये। उन्होंने उपयोगिता के इस सिद्धांत को कभी स्वीकार नहीं किया कि धर्म व्यक्ति का निजी मामला है और इसलिए उनकी राजनीति से उसका कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए।[1] गाँधी जी ने धर्म के रूढ़िवादी एवं कर्मकाण्डी स्वरूप को कभी भी स्वीकार नहीं किया। हमें दूसरों के जीवन की श्रेष्ठ बातों का अधिकाधिक लाभ लेते हुए अपने आदर्शो के अनुसार जीवन यापन करने का प्रयास करना चाहिये। इस प्रकार हम ईश्वर प्राप्ति की आध्यात्मिक साधना को भी अधिक समृद्ध करेंगे।[2]

गांधी जी के लिए अहिंसा केवल नीति नहीं थी, बल्कि यह तो उनका धर्म भी था, अहिंसा उनकी जीवन शैली भी थी, उन्होंने विचारों और कर्म में इसका अनुसरण किया। गांधी जी समस्त मानव जीवन को अलग–अलग खांचों में बँटा न मानकर एक मानते थे। उनका मानना था कि अनैतिक नियमों का त्याग करके मनुष्य जीवन के समस्त पक्षों में तालमेल कायम किया जा सकता है। आज बदलते हुए समय के साथ इन विचारों की अत्यंत प्रासंगिकता है। महात्मा गांधी की विश्व को सबसे मौलिक और अनोखी देन, सामाजिक और राजनीतिक संघर्षो को सुलझाने के लिए उनके द्धारा अविशकृत 'सविनय अवज्ञा' है। सन् 1915 में गाँधी जी का राष्ट्रीय राजनीति में पदार्पण हुआ। उन्होंने धर्म और राजनीति के विकृत अर्थो से उत्पन्न रूग्ण मानसिकता तथा राष्ट्रीय परिवेश में फैले वैमनस्य को दूर करने का प्रयास किया। उन्होंने सर्वधर्म सम्भाव को सत्याग्रह एवं अहिंसात्मक आंदोलन की पूर्व शर्त के रूप में स्वीकार किया।[3] गांधी जी ने आदर्श राज्य व्यवस्था के बारे में भी अपने विचार प्रकट किये हैं। उन्होंने अहिंसात्मक राज्य पर बल दिया वस्तुत: उन्होंने 'राज्यविहीन समाज' की परिकल्पना की थी जिसे उन्होंने 'रामराज्य' एवं 'प्रबुद्ध अराजकता' की संज्ञा भी दी।[4]

गांधी जी का विचार था कि स्थायी शांति के लिए समाज में व्याप्त आर्थिक, सामाजिक एवं आर्थिक विषमता को समाप्त किया जाना चाहिए। अमीरों एवं गरीबों के बीच की खाई को पाटा जाना चाहिए इसके लिए गांधी ने ट्रस्टीशिप (संरक्षता) का सिद्धांत प्रतिपादित किया जिसके अनुसार सम्पन्न लोगों को अपने अतिरिक्त धन तथा आर्थिक सत्ता का स्वेच्छापूर्वक त्याग करके उसे सामाजिक हित में लगाना चाहिए। जिससे समाज में आपसी सहयोग की जड़े मजबूत हों और परस्पर संघर्ष की स्थिति न उत्पन्न हो जैसा कि पूँजीवादी एवं राज्यवादी व्यवस्थाओं में रहता है, यद्यपि गांधी जी का ट्रस्टीशिप सिद्धांत आधुनिक अर्थशास्त्रियों के गले के नीचे नहीं उतरता, किन्तु यदि इस सिद्धांत को अमल में लाया जाए, तो न केवल भारत अपितु पूरे विश्व में आर्थिक समानता स्थापित की जा सकती है, क्योंकि संसार में जितने संसाधन है, उससे सभी को रोटी, कपड़ा और मकान सुलभ हो सकता है।

गांधी जी के सामाजिक दृष्टिकोण के संबंध में नि:संदेह गांधी जी को आदर्शवादी कहा जा सकता है, लेकिन एक ऐसा आदर्शवादी जो समाज को किसी आदर्श विशेष के स्तर तक लाने के लिए पूर्ण समर्पित हो अत: गांधी जी को कोरा आदर्शवादी समझना महान् ऐतिहासिक भूल होगी। गांधी जी समाज का आमूल–चूल परिवर्तन करना चाहते थे, वे ऐसी सामाजिक व्यवस्था के पक्षधर थे। जिसमें शोषण और विषमता न हो, मनुष्य खाली बेकार होकर भूखा न रहे और जिसमें मनुष्य राजनीतिक दृष्टि से स्वाधीन हो और सामाजिक दृष्टि से भी उन्नत हो प्रत्येक व्यक्ति की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति हो यही गांधीजी के सर्वोदयी समाज की कल्पना थी। उपयोग की अपेक्षा

* अतिथि विद्वान (इतिहास) नवीन शासकीय महाविद्यालय, तेंदूखेड़ा, जिला– नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

उपभोग के कुसंस्कारों से उत्प्रेरित नई संवर्ग संस्कृति के खिलाफ लड़ाई गांधी जीवन दर्शन के व्यावहारिक पक्ष को अपनाकर ही लड़ी जा सकती है।

गांधीजी आधुनिक सभ्यता को चार दिन की चाँदनी मानते थे और उनका विचार था कि यह अपने को स्वयं खत्म कर लेगी। गांधीजी की दृष्टि में समूची मानवता एक कुटुम्ब के समान थी जिसमें आदमी-आदमी में कोई भेद नहीं था। वास्तव में गांधी जी का दर्शन मानव समाज की बुनियादी समस्याओं से निजात पाने की दवा है, आज की अनेक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक समस्याओं का निदान बापू के दर्शन एवं उनके द्वारा बताए गए मार्ग पर चलकर ही दिया जा सकता है, क्योंकि अधिकाधिक चीजें आवरण में छिपाने की व्यक्ति की आकांक्षा से ही आधुनिक सभ्यता में आज निराशा, दमन और शोषण का भाव है।

भारतीय समाज के लिए गांधीजी कुछ अधिक ही प्रासंगिक है, क्योंकि उनके दर्शन में हमारी सभ्यता, संस्कृति के तत्व रचे-बचे है। उसका पोषण यहाँ की मिट्टी, जल और वायु ने किया है, गांधीजी की आस्था मानवीय गुणों को उभारने में रही है और उसी आधार पर उन्होंने समूल व्यवस्था परिवर्तन के लिए संरक्षता के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। उनका दर्शन इस तथ्य में निहित है कि सृष्टि का सारा सृजन ईश्वर का ही है, उस पर किसी व्यक्ति का एकाधिकार नहीं है। अत: दूसरे के हक को छीने बिना ही अपनी जरूरत के अनुसार उपभोग करें।

उन्होंने भारतीय उपनिषदों के मूलमंत्र, 'ब्रह्म सत्यम् जगत् मिथ्या' को स्वीकार किया। उन्होंने संसार के सभी पक्षों, चाहे वह राजनीति हो या व्यवसाय को आध्यात्मिकता के साथ संयुक्त कर एक नवीन राजनीतिक दर्शन का प्रतिपादन किया। उनका मत था कि 'प्रत्येक मनुष्य' 'ब्रह्म' की आध्यात्मिक सत्ता का ही लौकिक स्वरूप है। मनुष्य स्वयं में पूर्ण न होते हुए भी ब्रह्म के अंश को समाविष्ट करता है।[5] उन्होंने कहा कि 'यदि आज मैं राजनीति में हिस्सा लेता हुआ दिखाई पड़ता हूँ तो उसका एकमात्र कारण यही है कि राजनीति वर्तमान समय में हमें सर्प की तरह चारों ओर लपेटे हुए है जिसके चुंगल से हम, कितनी ही कोशिश क्यों न करें, नहीं निकल सकते है।'[6]

गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम का मूल उद्देश्य था 'पूर्ण स्वराज्य' जिसे सरल शब्दों में एक मानवीय समाज की रचना कह सकते हैं। गांधीजी का रचनात्मक कार्यक्रम सेवा, सुधार, परिवर्तन के प्रत्येक पक्ष को अपने में समाहित किए हुए है। उनकी मान्यता थी कि हिंसा और द्वेष के माध्यम से व्यवस्था परिवर्तन और सम्पत्ति वितरण आत्मघाती होगा, क्योंकि शक्ति और हिंसा के बल पर प्राप्त की गई वस्तु स्थायी नहीं हो सकती उदाहरणार्थ रूस और चीन में जो भी आर्थिक समानता के परिवर्तन हिंसा के माध्यम से हुए उससे मानवीय मनोवृत्ति तो बदली नहीं जा सकी, लालच और ईर्ष्या बनी रही। परिणामत: रूसी गणराज्य बिखर गया और चीन आज बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगे नतमस्तक हो गया। वास्तव में गांधीजी के अनुसार आर्थिक समानता के लिए व्यक्ति को सामाजिक आवश्यकता के अनुसार चलना होगा न कि वैयक्तिक इच्छा और लालच के अनुसार।

गाँधीजी का कथन है कि - मैं देश की आंखों में धूल नहीं झोंकूंगा। मेरे नजदीक धर्मविहीन राजनीति कोई चीज नहीं है। धर्म के मानी बहमों और गतानुगतित्व का धर्म नहीं, द्वेष करने वाला और लड़ाने वाला धर्म नहीं, बल्कि विश्वव्यापी सहिष्णुता का धर्म है, नीतिशून्य राजनीति सर्वथा त्याज्य है। मेरे लिए सत्य और ईश्वर एक ही हैं, अत: मेरी यह आकांक्षा रहेगी कि राजनीति के प्रत्येक क्षेत्र में सत्य के नियम की प्रतिष्ठा हो।[7]

गाँधीजी ने मानवतावादी दृष्टिकोण के आधार पर धर्म को 'कर्मण्यता' से जोड़ा, जिसमें कर्तव्य, प्रेम अहिंसा, सेवा, सहिष्णुता एवं न्याय आदि तत्वों का समावेश है। गाँधी जी ने धर्म को इतनी व्यापकता से परिपूरित माना है कि सत्य, धर्म, अहिंसा एवं ईश्वर लगभग पर्यायवाची बन गये है।[8] धर्म कोई संकीर्ण विश्वास नहीं है, और न ही वैयक्तिक ईश्वर की स्वीकारोक्ति है। गाँधी का धर्म सत्य का अनवरत - अन्वेषण, मानव सेवा एवं नीति परकता है।[9] नैतिकता से विहीन धर्म मृतप्राय: दशा में होता है, जो केवल अव्यवस्था को ही जन्म दे सकता है। नैतिक आधार के आभाव में कोई व्यक्ति धर्म-प्रेरित नहीं हो सकता है।[10] राजनीतिक आचरण में नैतिक नियमों का पालन से तात्पर्य है, राजनीतिक क्रिया-कलापों को शुद्ध एवं स्वच्छ बनाना। महात्मा गांधी ने लिखा हैं - 'मेरे लिए मोक्ष का एकमात्र रास्ता है, देश एवं मानवता की सेवा। इस तरह मेरे लिए शत्रु भी मित्रवत् रहे, मैं उनके साथ समान-व्यवहार रखूं, इसलिए मेरे लिए धर्म से पृथक राजनीति का कोई अस्तित्व नहीं है।'[11] गाँधी धार्मिक सम्प्रदायवाद के विरूद्ध थे। उनका कहना था कि 'जो ईश्वर से, सत्य से साक्षात्कार करना चाहा, उसमें छोटे से छोटे प्राणी से प्यार करने की योग्यता होनी चाहिए। जो व्यक्ति ऐसा करने में सक्षम है, वह जीवन के किसी भी क्षेत्र से विरत नहीं हो सकता'।[12] उनका कथन है कि 'मैं आज तक जितने भी धार्मिक पुरूषों से मिला वे अंदर से राजनीतिज्ञ रहे हैं, मैं जो राजनीति का बाना पहनकर घूमता हूँ अंदर से पूर्णत: धार्मिक हूँ।'[13]

महात्मा गांधी निर्विवाद रूप से इस सदी के महानतम शिखर पुरूष हैं केवल भारत के ही नहीं, बल्कि विश्व के, यद्यपि विद्यार्थी के रूप में गांधीजी बहुत प्रतिभाशाली नहीं थे, परंतु उनका नैतिक बोध आरंभ से ही बहुत गहरा था। वे जीवनभर भारतीयता के पक्षधर रहे। उन्होंने मशीन के स्थान पर मनुष्य और सूट के स्थान पर सूत को महत्व दिया। गांधीजी मानवीय समस्याओं के बारे में एक ऐसा समग्र दृष्टिकोण अपनाते थे जिसमें व्यक्तिगत, स्थानीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर समेत मानव अस्तित्व के लगभग सभी प्रमुख स्तरों पर सुधार और परिवर्तन हो सके। गांधीजी ने सामाजिक सेवा को दैवीय स्तर पर रखा। वे लिखते हैं कि 'मानवीय सेवा से अग्रेतर कोई धर्म सम्बद्ध विकल्प असंभव है'।[14] विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में आश्चर्यजनक विकास की वजह से सामाजिक ढ़ाँचें में जिस तेजी के साथ बदलाव आ रहा है, उससे समूची मानवता के लिए एक संकट आ पड़ा है। गांधीजी के विचारों और उनकी प्रासंगिकता को इस नए उभरते परिदृश्य में देखना होगा अन्यथा आने वाली शताब्दी विस्फोटक होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रोमां रोलां, महात्मा गाँधी, पृ. 98
2. हरिजन, 28 दिसम्बर, 1936
3. अजय कुमार वर्मा, धर्म एवं राजनीति, पृ. 11
4. महात्मा गाँधी, यंग इंडिया, 27 मार्च, 1930
5. महात्मा गाँधी, हरिजन, 17 अप्रैल 1937
6. महात्मा गाँधी, हिन्दी नवजीवन, हिन्दी साप्ताहिक, 30 नवम्बर 1940
7. महात्मा गाँधी, हिन्दी नवजीवन, हिन्दी साप्ताहिक, 30 नवम्बर 1940
8. अजय कुमार वर्मा, धर्म एवं राजनीति, पृ. 2 एवं 33
9. अजय कुमार वर्मा, धर्म एवं राजनीति, पृ. 2 एवं 33
10. एम.के. गाँधी, टु हिन्दूज एण्ड मुस्लिम्स, अध्याय 1-2
11. यंग इंडिया, 12 मई, 1920, पृ. 2 नाईदर ए सेन्ट नार ए पॉलिटिशियन
12. यंग इंडिया, 12 मई, 1920, पृ. 2 नाईदर ए सेन्ट नार ए पॉलिटिशियन
13. महात्मा गाँधी, सत्य के प्रयोग आत्मकथा
14. हरिजन, 15 अप्रैल, 1939

****

भारतीय संस्कृति और जैन वास्तुकला

निधि जैन (तार-बाबू)*

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति अति प्राचीन संस्कृति है। इसके मूल में अध्यात्मिकता का वास है। अध्यात्मिकता अर्थात् धर्म का अरिवल स्त्रोत। भिन्न-भिन्न रूपों में व्याप्त आस्था। एक ऐसा भेद-विज्ञान जो जड़ और चेतन में भिन्नता बताता है। अत: धर्म का रूप स्वरूप सूक्ष्मता धारण किये हुए हैं। ठीक उसी प्रकार हमारी भारतीय संस्कृति भी अपने आप में कई भिन्नताओं को समेटे हुए हैं। भारतीय संस्कृति अपने इन्द्रधनुषी रूप में कई विधायें, कलायें, सामाजिक बदलाव, बाहरी संक्रमण, आक्रमण गतिशीलता, स्थिरता, उन्नति, अवनति कई आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, बौद्धिक, पवित्तनों को झेलते हुए अपने विकास मार्ग पर क्रमबद्ध बढ़ते हुए 21वीं सदी के द्वार पर पहुंच गई है।

आज का युग है 'तर्क संगत युग' कोई भी विषय अगर विज्ञान की कसौटी पर खरा नहीं उतरता तो वो गलत सिद्ध होता है, संस्कृति के विकास में महत्वपूर्ण है 'अविष्कार' परन्तु अब आवश्यकता अविष्कार की जननी नहीं अविष्कार ही आवश्यकता का जनक बन बैठा है।

मानव अपने प्रागैतिहासिक काल में पेड़ों से उतर कर गुफाओं में रहने लगा। अपनी बौद्धिक क्षमता के अनुसार गुफाओं में मानव ने प्रकाश के लिए कुछ सुराख कर लिए। प्राकृति के कष्ट की असहनीयता से बचने के लिए मानव ने अपना शरीर ढ़कना, जल संग्रहण, भोजन संग्रहण, औजार बनाना, बर्तन बनाना प्रांरभ किया। प्रकृति के गुप्त रूप ने मानव जीवन को जन्म दिया और मानव ने प्रकृति के नियमों को समझते हुए उसी से घनिष्ठ सामंजस्य बना लिया यही से प्रारंभ हुई मानव संस्कृति की विकास यात्रा।

रोटी और कपड़े की आवश्यकता के बाद मानव मन में अपने सुरक्षित निवास के लिए मकान बनाये। अपनी कुशाग्र व चिन्तन शील बुद्धि का उपयोग करते हुए मानव ने ऐसे मकान बनाये जिसमें ज्यादा से ज्यादा अकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी का सही अनुपातिक उपयोग कर सकें। निवास योग्य उचित भूमि का चयन व दिशाओं का नियमानुसार पालन ने मानव संस्कृति में 'वास्तु' को जन्म दिया।

मानव के इसी भवन निर्माण की कला ने आगे भारतीय संस्कृति के विकास में महान योगदान प्रदान किया। सिन्धु सभ्यता इसका सबसे प्रमाणित उदाहरण है। इस विषय में गोपाल जी गुप्त का कहना है – 'बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में पंजाब के सिंधु क्षेत्र में हुए उत्खनन से सिंधुघाटी सभ्यता के ध्वंसावशेष मिले, जिसमें लगभग 5000 वर्ष पूर्वकालीन सर्वप्रचानी सभ्यता 'सिन्धुघाटी सभ्यता' का ज्ञान हुआ, जो अति विकसित और सर्वोत्तम थी।

इससे यह सिद्ध होता है कि भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही वास्तुकला का पर्याप्त ज्ञान रहा है।

'वास्तु शास्त्र मूल रूप से सही घर बनाने की कला है, जिससे व्यक्ति अपने को ऐसी रीति से रख सके, ताकि वह पंचभूतों और पृथ्वी को चारों ओर से आवृत किये हुए चुंबकीय क्षेत्रों का अधिकतम लाभ उठा सके'।

भारतीय संस्कृति के प्राचीनतम ग्रंथ 'रामायण' व 'महाभारत' में भी हमें वास्तु शास्त्र का बड़ा ही सुन्दर व सटीक वर्णन मिलता है।

व्यक्ति के जन्म से लेकर मरण पर्यन्त तक कौन सा कार्य कब कैसे किस रीति से, किस दिशा में किस भूमि पर करना है। इन सब कार्यो का विधान सुनिश्चित है, आवश्यकता है, सिर्फ हमारे प्राचीन ग्रन्थों के अध्ययन मनन की।

संसारिक समस्त विधाओं या कलाओं का मूल उद्देश्य है मानव के धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष इन चारों पुरूषार्थो की पूर्ति करना। वास्तु कला भी मानव के अनुकूल, सुखमय जीवन, निराकृत धर्माराधना करते हुए स्वास्थ्य व दीर्घ आयु के साथ ऐसा निवास कनाना है। तो प्रकृति के अनुरूप हो व मानव के अनुकूल हो।

जैन आगम के अनुसार वास्तु विज्ञान का प्रांरभ मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही माना जाता है। प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव जी ने अपनी गृहस्थ अवस्था में भी नागरिकों को सभ्यता की व अजीविका अर्जन करने की शिक्षा दी उन शिक्षाओं में शिल्प कला का ज्ञान भी था।

शिल्प कर्म में ऐसी विधाओं एवं कर्मो का समावेश था, जिनका उद्देश्य चैत्य, मन्दिर, भवन, प्रसाद, महल, मकान, उद्योग आदि संरचनाओं का विधिवत् निर्माण करना है। इनमें कला तथा विज्ञान दोनों पक्षों का ध्यान रखा गया है। संरचना न केवल सुन्दर, कलापूर्ण, आकर्षक एवं मनोहारी हो, वरण उपयोगी तथा उपयोगकर्ता के लिए अनुकूल शुभफल प्रदाता भी हो। यही वह बिन्दु है, जहां से आधुनिक वास्तु विज्ञान का प्रारंभ हुआ।

भारतीय संस्कृति में सदैव से जैन वास्तु कला का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। जैन धर्म अहिंसक धर्म है। जैन मन्दिरों का स्थापत्य अद्भुत है जैसे-

'खजुराहों के जैन मंदिर जिसका निर्माण कला 950 से 1050ई. पूर्व है। इन मंदिरों का वास्तु ज्ञान अद्वितीय है। यह भू-विन्यास में विशिष्ट है।'

'दिलवाड़ा का जैन मंदिर यह वस्तुत: पांच मंदिरों का समूह है, यह 11वीं से 13वीं शताब्दी के बीच में निर्मित मंदिर है। भारतीय संस्कृति में अपना अमूल्य स्थान रखने वाले ये जैन धर्म के प्रतीक व स्थापत्य कला के उत्कृष्ट नमूने है।'

'इसी प्रकार दिल्ली-अहमदनगर बड़ी लाइन पर अबू रेल्वे स्टेशन से लगभग 20 मील दूर स्थित तेलवाड़ा के मंदिर की भव्यता और वास्तुकारों के

*शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

भवन निर्माण निपुर्णता, उनकी सूक्ष्म पैठ और छेनी पर उनके असाधारण अधिकार का परिचय देती है। यहां की कला में जैन संस्कृति का वैभव और भारतीय संस्कृति के दर्शन होते है।'

'बाईसवें तीर्थकर नेमीनाथ को समर्पित लुन वासाही मंदिर भी काफी लोकप्रिय है। 1231ई. में बनवाया गया ये मंदिर अद्धितीय है।'

हमें शोध से ज्ञात होता है कि भारतीय संस्कृतिक धरोहर में जैन स्थापत्य कला चित्रकला, मूर्तिकला का अविस्मरणीय व अतुलनीय योगदान रहा है। भारत वर्ष के हर प्रान्त में जैन मंदिरों की वास्तुकारी देश-विदेश के भक्तों के साथ पर्यटकों को भी आर्कषित करती रही है।

'मध्यप्रदेश के सोनागिरि या द्रौणगिर, नैनागिरि, कुण्डलपुर, मुक्तागिरि, चन्देरी, खजुराहों व अन्य मंदिरों की चित्रकारी, मूर्तिकारी व वास्तुविद ज्ञान अनुपम है।'

'राजस्थान के महावीर जी, चांदखेड़ी, पदमपुरी, केशरियानाथ के मंदिरों में राजस्थानी सूक्ष्म नक्काशी के दर्शन होते है।'

बिहार प्रान्त में विशाल पर्वत सम्मेद शिखिर विश्वविख्यात है। चम्पापुर, पावापुरी, गुणावा, राजगुही आदि भारत वर्ष के जैन प्रमुख कलात्मक कलाकारी है।

इसी प्रकार उड़ीसा, उत्तरप्रदेश, गुजरात, दक्षिण प्रान्त व श्रवण बेलगोला की बाहुबली जी की प्रतिमा भारतीय संस्कृति की अखण्डता व गरिमामय गौरव की गाथा है।

जैन वास्तु कला की प्रमुख विशेषतायें - जैन धर्म अपने अति प्राचीनता के साथ अपनी गारिमा, संयमभाव, तप, त्याग, ब्रह्मचर्य-अपरिगृहवाद को धारण करते हुए आज भी 'जीयों और जीने दो' कि युक्ति को अपनाते हुए 'वासुदेव कटुम्बकम की भावना को साथ लेकर शान्ति पूर्व पथ पर अग्रसर है। जैन धर्म का मूल है आत्मउद्धार। सूक्ष्म जीवों की रक्षा करना। अपने द्वारा कभी किसी को जाने - अनजाने में कृष्ट नही पहुंचाना। कर्मवाद को मानने वाला ये धर्म अपने जीवन के किसी भी प्रसंग को अपने पूर्व अर्जित कर्मो का फल मानता है।'

अत: मनुष्य को अनुकूल या प्रतिकूल वास्तु या आवास गृह आदि संरचनाओं का मिलना भी पूर्व अर्जित कर्म फल के अनुरूप होता है।

वर्तमान में प्राप्त सामग्री को मनुष्य अपने सत पुरूषार्थ के द्वारा प्रतिकूल से अनुकूल करता है, जबकि विपरीत पुरूषार्थ से अनुकूलता भी प्रतिकूलता में परिवर्तित हो जाती है। अत: जैन वास्तु विज्ञान अतिआवश्यक न हो तो तोड़-फोड़ की अनुमति नहीं देता क्योंकि इससे कृत-कारित अनुमोदन का पाप लगता है।

जैन वास्तु के अनुसार निर्माण कार्य में लगने वाले पानी के जीवों की भी रक्षा निर्माणकर्ता को करना चाहिए। जितनी मानव की जरूरत हो उतना ही निर्माण कार्य करें अति पाप बन्ध का कारण है। गृह आदि या मन्दिर आदि के बनाने में लगने वाली लकड़ी भी ऐसे पेड़ से ली जाये जो स्वयं सूख गया हो जिसमें प्राण न बचे हो, हरे-भरे वृक्षों को काट कर बिना विचारें उपयोग में लाने को जैन वास्तु कभी अनुमति नहीं देता।

वास्तु के नाम पर -

बिना-विचार के अगर तोड़-फोड़ करोगें तो पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि के जीवों की हिंसा का पाप लगेगा।

निर्माण कार्य जब करें तो भूमि, दिशा आदि का ज्ञान करके आगम निर्देष के अनुसार करें। वास्तु संरचना को अजीव, निष्क्रिय न समझे ये जैन वास्तु का सिद्धांत है कि कर्मफलानुसार प्राप्त वास्तु संरचनाओं को विज्ञान सम्मत शास्त्र ज्ञन से उद्यम करके अपने अनुकूल बनाने का सुकर्म करें व अपना जीवन धर्ममय बनाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'हिन्दू धर्म के मूलभूत आधार-स्तम्भ' लेखक गोपाल जी गुप्त पृ.नं. 26
2. 'वास्तु शास्त्रानुसार भवन निर्माण' लेखक - डी. मुरलीधर राव पृ. नं. 16
3. 'वास्तु चिन्तामणि' लेखक - प्रज्ञाश्रमण मुनि श्री 108 देवनन्दि जी महाराज पृ.नं. 12
4. 'भारतीय स्थापत्य कला' लेखक - सुमेर सिंह चौधरी पृ. नं. 101
5. 'भारतीय स्थापत्य कला' लेखक - सुमेर सिंह चौधरी पृ. नं. 139
6. 'भारतीय स्थापत्य कला' लेखक - सुमेर सिंह चौधरी पृ. नं. 139
7. 'जिन भारतीय संग्रह— संकलनकर्ता - ब्र. प्रदीप शास्त्री 'पीयूष' पृ.नं. 559,560
8. 'भारतीय स्थापत्य कला' लेखक - सुमेर सिंह चौधरी पृ. नं. 139
9. जिन भारतीस संग्रह— संकलनकर्ता - ब्र. प्रदीप शास्त्री 'पीयूष' पृ.नं. 561
10. तिससिद्धमहापुरिस - गुणालंकार (प्राकृत)आचार्य हेमचन्द्र सूरी 12वीं सदी
11. तिशाष्टि श्लाकापुरूष चरित - आचार्य कल्प पंडित आशाधर,13वीं सदी
12. प्रतिष्ठा सारोद्धार, पं. आशाधर जी 1228ई.
13. वास्तु सार पायरण, ठक्कुर फेरू जी
14. वास्तु चिन्तामणि,प्रज्ञाश्रमण मुनीश्री 108 देव नन्दि जी महाराज,11 नवम्बर 1996
15. जैन वास्तु विद्या,डॉ. गोपीलाल 'अमर',अगस्त 1996

****

Sales And Discounts : Grabbing Person's Wallet

Girish Makwana * Dr. Shraddha Malviya **

Abstract - Shopping gives a high to the mood and personality initially but when it is analyzed in depth then some serious facts are revealed which eventually the hollows person's mind and pocket. Sales and discounts provide nourishment to shopaholics, clutching the mind and extracting the thinking ability of the buyer and leading them to the bottom of compulsive buying disorder and depriving them of their health and wealth.

Introduction - Confessions of a shopaholic, a movie portraying "Rebecca Bloomwood" as a shopping addict. She gets under debt due to her habit and faces a lot of problems and looses many of her loving persons and things. In the end, she has to sell up everything to payback her debt.

This movie pictures the story of a lot of people who shops unnecessarily just under the label of 'Sales and Discount'.

Shopping- an inseparable part of daily life. Everyone buys or trade something or anything each day. Every stuff and commodity has to be bought. Now-a-days, the two modes of shopping viz., offline and online, are at their peak having one thing in common i.e. Sales and Discount. Discount means 'deduction from the usual cost of something' and Sales refer to a 'period during which a shop sells goods at reduced prices' or 'any offer or arrangement in which goods are sold at discount'. A consumer is one who buys or purchases items or goods.

Discount can be given in various forms such as coupons, cash-backs, membership cards, percentage based discount on actual price, buy 1 get 1, etc. which bound the person to use and redeem the points and coupons on next purchase. The consumer will again go shopping and use the services provided just to redeem discount which availed to him/her even if he/she do not necessarily need it. The psychology of buyer behind the discount is that they are saving money and because of this they take certain products which they don't want at all and also spend extra money.

The companies provide sale to sell their which are at the extremes of the range basically used by population. Their strategy is to gain less profit rather than no profit at all. According to a survey report, companies earn more money during sale's season in comparison to normal days.

A subject gave details about his experience. He once checked a price of a shirt at a famous brand store. He was not economically able to buy that shirt at that particular time. After few days end of season sale arrived at that store, he visited to there to buy that shirt but he was shocked to see that the price of shirt was more than the basic price even after discount.

In most of the sales the first copies of the product are sold in place of the original products, used defective and substandard quality material are displayed, extra tax is charged on the coupons in the name of free services and return policies and trial of the product are abandoned. The sale and discount uses the advertising section of both print and electronic media pretty effectively. It creates an ambience around the consumer for that the person finds him/her almost unable to neglect it and will give it a try whether it is crucial or not.

Objective - The objective of this research is to reveal and uncurtain the situation created by sales and discounts which in a overview has just layered advantages and profits. Behind this scene, there is a reality of hidden loss which is not evident usually and basically is in the form of over expense, things which are not of use, chain shopping and finally resulting in a shopaholic. There are various disadvantages of sales and discounts such as unnecessary shopping just to redeem coupons, waste of money, substandard and low quality products, etc. but the most serious threat is **compulsive buying disorder or oniomania,** which is characterized by obsession with shopping and buying behavior that causes adverse consequences. According to Kellett and Bolton, compulsive buying is experienced as an "irresistible-uncontrollable urge, resulting in excessive, expansive and time consuming retail activity that is typically prompted by negative affectivity" and results in "gross social, personal and /or financial difficulties.

Consequences :

1. Extra expense
2. Over budgeting
3. Planning failure

***Research Scholar (Sociology) Shree Atal Bihari Vajpeyee Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**
**** Asst. Professor (Sociology) Shree Atal Bihari Vajpeyee Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**

4. Substandard quality.
5. Irregular pattern of shopping.
6. Buying unnecessary commodities.
7. Over eating and unhealthy eating as people get tired due to shopping so they eat in the nearby food court.
8. Exertion and staleness.
9. Psychology symptoms such as anxiety, irritation, etc.
10. Lack of home and self management.
11. Ruined credit history, theft or defalcation of money, defaulted loans and general socio-economic troubles.
12. Compulsive buying disorder.

Conclusion - From the above study, it is concluded that people shop haphazardly, unnecessarily and in irregular pattern during sales and discounts. Most of the times, they buy things which they do not need at all. This just creates a pile of waste products and lack of space in the house. They face problems regarding maintaining the household due to extra stuffs and also have trouble with their health and wealth. One should shop according to their need, should decide a budget and should shop by making a list of required items. Shopping should be done at regular intervals with proper spacing and every product should be checked properly before buying. It's good to shop but its better when done with senses.

References :-

1. www.merriam-webster.com
2. www.thefreedictionary.com
3. https://en.m.wikipedia.org>wiki>sales
4. https://yoast.com/psychology_discounts
5. www.powerhomebiz.com/marketing-tips/pros-cons-discount-pricing-holiday-season.html
6. Movie- Confessions of a Shopaholic(2009) by P.J. Hogan based on Shopaholic-novel series by Sophie Kinsella
7. https://en.m.wikipedia.org/wiki/Confessions_of_a_Shopaholic_(film)
8. https://en.m.wikipedia.org/wiki/Compulsive_buying_disorder

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शासकीय व निजी बैंकों की ई-बैंकिंग प्रक्रम का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सादिक मोहम्मद खॉन *

प्रस्तावना – भारतीय आर्थिक परिदृश्य में बैंकों की महत्ती भूमिका है। आर्थिक गतिविधियों के केन्द्र बैंक है, जो समस्त आर्थिक उपागमों के साधन है। आजकल के इस व्यस्तता के दौर में प्रत्येक व्यक्ति समय को महत्वपूर्ण मानता है, समय की बचत करता है तथा हर काम को कम समय में करना चाहता है। इसी संदर्भ में यदि बैंकिंग की बात करें तो ग्राहक का तथा स्वयं (बैंक का) कीमती समय बचाने के लिये ही बैंकिंग इन्डस्ट्री ने तकनीकी की मदद ली है, जिसके द्वारा आज के समय में लगभग सभी बैंक अपने अपने ग्राहकों को उत्कृष्ट सेवा देने का प्रयत्न कर रहे हैं। अत: ग्राहक भी प्रसन्न है कि अब उन्हें छोटे-छोटे कार्यो हेतु बैंक की पंक्ति में नहीं खड़ा होना पड़ रहा है तथा कुछ ही घण्टों का कार्य कुछ ही क्षणों में निष्पादित हो जाता है, किंतु तकनीकी पर विश्वास धीरे-धीरे ही संभव हुआ है।

प्रारंभ में जब मोबाइल व इन्टरनेट की दुनिया में कदम रखा गया तब इन पर भरोसा कम था परंतु धीरे-धीरे विष्वास बढ़ता जा रहा है, और ग्राहकों के इस बढ़ते हुए विश्वास को देखकर प्राइवेट बैंक तो आगे आए ही हैं, साथ ही साथ सरकारी बैंकों ने भी अपने स्वरूप तथा समय के साथ हुए परिवर्तन और प्रतिस्पर्धा को देखते हुए अपना स्वरूप बदला है तथा तकनीकि की शरण में आ गए हैं और अब सभी बैंक तकनीकि के माध्यम से ग्राहकों को सेवा प्रदान करने में अग्रसर हो रहे हैं। आज न केवल बैंक उत्कृष्ट सुविधा दे रहे हैं अपितु उनमें एक विशेष प्रकार की प्रतिस्पर्धा भी है, कि कौन सा बैंक अपनी सुविधाओं के द्वारा ग्राहकों को आकर्षित तथा संतुष्ट करता है। ज्ञातव्य है कि आजकल सभी बैंक (सरकारी एवं प्रायवेट) ई-बैंकिंग, ए.टी.एम. सेवायें, इन.ई.एफ.टी., आर.टी.जी.एस. आदि सुविधा प्रदान करने का प्रयास कर रहे हैं। हिमानी शर्मा ने अपने अध्ययन में पाया कि ई-बैंकिंग ग्राहक और बैंक के रिश्तों को और बेहतर बनाने में मदद करती है, जिससे बैंक व ग्राहक के बीच का विश्वास बढ़ता है तथा बैंक की परफारमेन्स और बेहतर होती है। नमिता राजपूत के अनुसार नवाचार और आई.टी. के कारण इंडियन बैंक के परफारमेन्स में वृद्धि होती जा रही है। अब बैंक के पास कोई विकल्प नहीं रहा है। अब बैंक को अपना एटीट्यूड, स्ट्रेटजीज और पॉलिसी बदलनी होगी। इनके अनुसार सरकारी बैंक और प्रायवेट सेक्टर बैंक की सेवाओं में कोई अंतर नहीं है।

Nyangosi et al. (2009) ने ग्राहक का मत अलग-अलग ई-बैंकिंग तकनीकी को अपनाने के बारे में डाटा एकत्र किया जिसमें लोगों ने ई-बैंकिंग का महलत्व तथा अपनाने के स्तर के बारे में बताया। इस अध्ययन ने ई-बैंकिंग की अवधारणा को मुख्यरूप से चिन्हीत किया। इस अध्ययन के परिणामस्वरूप यह ज्ञात हुआ कि भारत एवं केन्या दोनों ही देषों के लोगों में ई-बैंकिंग को लेकर सकारात्मक दृष्टिकोण है और ग्राहक ई-बैंकिंग को महत्व दे रहे हैं।

उद्देश्य – विभिन्न बैंकों की ई-बैंकिंग सेवाओं का तुलनात्मक अध्ययन।

अध्ययन का क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन का आधार एक सर्वेक्षण है, जो कि मध्यप्रदेश की व्यावसायिक राजधानी इंदौर में रहने वाले लोगों पर किया गया है। इन सभी लोगों का खाता किसी न किसी सरकारी या निजी बैंक में है। इंदौर नगर में सर्वेक्षण करने का उद्देश्य यह है कि यहाँ लगभग सभी शासकीय तथा निजी बैंक की शाखाए हैं। अध्ययन हेतु 25 शासकीय बैंक तथा 25 निजी बैंक के खाता धारकों का चयन किया गया। सूचनादाताओं से प्राथमिक आँकड़ों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची की सहायता ली गई। द्वितीयक आँकड़ों हेतु शासकीय एवं निजी बैंकों से भी संपर्क किया गया।

शोधार्थी द्वारा किया गया अध्ययन –

तालिका 1 : ग्राहकों की सामाजिक/आर्थिक स्थिति

ग्राहक वर्ग	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
शासकीय बैंक	**25**	**50**
निजी बैंक	**25**	**50**
योग	**50**	**100**
ग्राहकों की आयु		
25 वर्ष तक	**9**	**18**
26-35 वर्ष	**12**	**24**
36 से 45 वर्ष	**10**	**20**
46 से 55 वर्ष	**14**	**28**
56 से अधिक	**5**	**10**
योग	**50**	**100**
ग्राहकों का व्यवसाय		
सेवा	**13**	**26**
व्यापार	**16**	**32**
उद्योग	**09**	**18**
कृषि	**02**	**04**
व्यवसायिक	**10**	**20**
योग	**50**	**100**
ग्राहकों की शिक्षा		
हाईस्कूल	**02**	**04**
इन्टरमीडिएट	**12**	**24**
स्नातक	**17**	**34**
स्नातकोत्तर	**11**	**22**
व्यवसायिक शिक्षा	**08**	**16**
योग	**50**	**100**

* शोधार्थी (समाज शास्त्र) देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि समस्त आयु समूहों, व्यवसायों तथा शैक्षिक वर्गों के लोग अध्ययन का प्रतिनिधित्व करते हैं।

तालिका 2 : ई-बैंकिंग का समयान्तराल

उपयोग वर्ष	शासकीय बैंक		निजी बैंक	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1 वर्ष से कम	1	4	2	8
1 – 2 वर्ष	5	20	3	12
2 – 3 वर्ष	14	56	11	44
3 – 5 वर्ष	2	8	–	–
5 से अधिक वर्ष	3	12	9	36
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि शासकीय बैंक व निजी बैंक दोनों के ही ज्यादातर कस्टमर पिछले 2-3 वर्षो से या उससे अधिक वर्षो से ई-बैंकिंग का उपयोग कर रहे हैं।

तालिका 3 : विभिन्न जगहों पर ए.टी.एम. सुविधाऐं

ए.टी.एम. सेवाऐं	शासकीय बैंक		निजी बैंक	
प्रदान करता है	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
पूर्णत: सहमत	13	52	16	64
स्हमत	7	28	8	32
निश्पक्ष	2	8	–	–
असहमत	2	8	1	4
पूर्णत: असहमत	1	4	–	–
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका के आधार पर हमें यह ज्ञात होता है कि ए.टी.एम. सेवाओं के विभिन्न जगहों पर होने के संदर्भ में शासकीय बैंक के 52 प्रतिशत लोग पूर्णत: सहमत हैं तथा 28 प्रतिशत लोग सहमत हैं। वहीं पर निजी क्षेत्र के बैंक के 64 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: सहमत तथा 32 प्रतिशत ग्राहक सहमत है तथा शासकीय बैंक में 8 प्रतिशत लोग असहमत तथा 4 प्रतिशत लोग पूर्णत: असहमत हैं, वहीं पर निजी क्षेत्र बैंक के केवल 4 प्रतिशत लोग असहमत है।

तालिका 4 : बैंक द्वारा प्राप्त फण्ड की सुरक्षा की स्थिति

फंड की सुरक्षा	शासकीय बैंक		निजी बैंक	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
पूर्णत: सहमत	8	32	13	52
सहमत	12	48	4	16
निष्पक्ष	3	12	4	16
असहमत	2	8	3	12
पूर्णत: असहमत	–	–	1	4
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

इस तुलनात्मक अध्ययन के अनुसार 32 प्रतिशत लोग शासकीय बैंक में अपने फण्ड की सुरक्षा को लेकर पूर्णत: सहमत हैं तथा 48 प्रतिशत लोग सहमत है। वहीं पर निजी क्षेत्र के बैंक में यह प्रतिशत क्रमश: 52 प्रतिशत व 16 प्रतिशत है। शासकीय बैंक में फण्ड की सुरक्षा को लेकर सिर्फ 8 प्रतिशत लोग सहमत हैं। वहीं पर निजी क्षेत्र के बैंक में 12 प्रतिशत लोग असहमत हैं तथा 4 प्रतिशत लोग पूर्णत: असहमत है।

तालिका 5 : ई-बैंकिंग सेवाओं का उपयोग करने के लिए शुल्क की अधिकता

अधिक शुल्क	शासकीय बैंक		निजी बैंक	
लेता है	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
पूर्णत: सहमत	8	32	13	52
सहमत	12	48	4	16
निष्पक्ष	3	12	4	16
असहमत	2	8	3	12
पूर्णत: असहमत	–	–	1	4
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका के अनुसार ई-बैंकिंग सेवा शुल्क की अधिकता को लेकर शासकीय बैंक में सिर्फ 4 प्रतिशत लोग पूर्णत: सहमत हैं, 56 प्रतिशत लोग सहमत हैं, वहीं पर निजी क्षेत्र बैंक में 48 प्रतिशत लोग पूर्णत: सहमत हैं और 24 प्रतिशत लोग सहमत है। शासकीय बैंक में 12 प्रतिशत लोग असहमत हैं तथा 8 प्रतिशत लोग पूर्णत: असहमत हैं। वहीं पर निजी क्षेत्र बैंक में 16 प्रतिशत लोग असहमत हैं तथा 4 प्रतिशत लोग पूर्णत: असहमत है।

तालिका 6 : तेज और कुशल ई-बैंकिंग सेवाऐं प्रदान करने की स्थिति

तेज एवं कुशलता	शासकीय बैंक		निजी बैंक	
ई बैंकिंग सेवाऐं	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
पूर्णत: सहमत	14	56	13	52
सहमत	2	8	9	36
निष्पक्ष	5	20	2	8
असहमत	4	16	–	–
पूर्णत: असहमत	–	–	1	4
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका के अनुसार बैंक द्वारा ई-बैंकिंग सर्विसेज के तेज और कुशल होने के मानक पर शासकीय बैंक के 56 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: सहमत है व 8 प्रतिशत ग्राहक सहमत हैं, वहीं पर निजी क्षेत्र बैंक में 52 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: सहमत तथा 36 प्रतिशत ग्राहक सहमत है। शासकीय बैंक के उपरोक्त मानक पर 16 प्रतिशत ग्राहक असहमत है, वहीं पर निजी क्षेत्र बैंक के 4 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: असहमत है।

तालिका 7 : बैंक ग्राहक सूचना की गोपनीयता

गोपनीयता	शासकीय बैंक		निजी बैंक	
बनाए रखना	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
पूर्णत: सहमत	5	20	3	12
सहमत	1	4	8	32
निष्पक्ष	4	16	1	4
असहमत	4	16	12	48
पूर्णत: असहमत	11	44	1	4
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका के अनुसार बैंक द्वारा ग्राहक सूचना की गोपनीयता प्रदान कराने में शासकीय बैंक के 20 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: सहमत हैं तथा 4 प्रतिशत ग्राहक सिर्फ सहमत है। वहीं पर निजी क्षेत्र बैंक के 12 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: सहमत है तथा 32 प्रतिशत ग्राहक सहमत है। शासकीय बैंक में ग्राहक की गोपनीयता को लेकर 16 प्रतिशत ग्राहक असहमत है तथा 44

प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: असहमत है, जबकि निजी क्षेत्र बैंक में 48 प्रतिशत ग्राहक असहमत है तथा 4 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: असहमत है।

तालिका 8 : बैंक में आधुनिक उपकरण की उपलब्धता

आधुनिक उपकरणों की उपलब्धता	शासकीय बैंक		निजी बैंक	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
पूर्णत: सहमत	9	36	17	68
सहमत	10	40	3	12
निष्पक्ष	8	2	8	4
असहमत	1	4	–	–
पूर्णत: असहमत	3	12	3	12
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका के अनुसार बैंक द्वारा आधुनिक उपकरणों की उपलब्धता के संदर्भ में शासकीय बैंक के 36 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: सहमत है जबकि 40 प्रतिशत ग्राहक सहमत हैं, वहीं पर निजी क्षेत्र बैंक के 68 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: सहमत है व 12 प्रतिशत ग्राहक सहमत हैं। वहीं शासकीय बैंक के 4 प्रतिशत ग्राहक असहमत तथा 12 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: असहमत है तथा निजी क्षेत्र के 12 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: असहमत है।

तालिका 9 : बैंक की ई-बैंकिंग सेवाओं से संतुष्टि

बैंकिंग सेवाओं संतुष्टि	सरकारी बैंक		प्रायवेट बैंक	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
पूर्णत: सहमत	9	36	16	64
सहमत	9	36	5	20
निष्पक्ष	5	20	2	8
असहमत	1	4	2	8
पूर्णत: असहमत	1	4	–	–
योग	**50**	**100**	**50**	**100**

उपरोक्त अध्ययन के आधार पर अपने बैंक की ई-बैंकिंग सेवाओं को लेकर शासकीय बैंक के 36 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: संतुष्ट व 36 प्रतिशत ग्राहक ही संतुष्ट हैं जबकि निजी क्षेत्र बैंक के 64 प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: संतुष्ट तथा 20 प्रतिशत लोग संतुष्ट दिखायी देते हैं। इसी तरह शासकीय बैंक के 4 प्रतिशत ग्राहक असंतुष्ट तथा 4 ही प्रतिशत ग्राहक पूर्णत: असंतुष्ट हैं, जबकि निजी क्षेत्र बैंक के 8 प्रतिशत ग्राहक असंतुष्ट है।

निष्कर्ष :

1. निजी क्षेत्र के बैंक के ग्राहक अपने बैंक की सुविधायें इसलिए प्राप्त कर रहे हैं क्योंकि निजी क्षेत्र बैंक के ए.टी.एम. तुलनात्मक रूप से शासकीय बैंक से ज्यादा जगहों पर उपलब्ध हैं।
2. शासकीय बैंक के ज्यादातर ग्राहक निजी क्षेत्र बैंक के ग्राहक से ज्यादा अपने फण्ड को लेकर सुरक्षित महसूस करते हैं।
3. शासकीय एवं निजी बैंक के तुलनात्मक अध्ययन में शासकीय बैंक की तुलना में निजी क्षेत्र के बैंक के ज्यादातर ग्राहक का यह मानना है कि उनका बैंक उनसे ई-बैंकिंग सर्विसेज के लिए अधिक शुल्क लेता है।
4. तुलनात्मक अध्ययन में निजी क्षेत्र बैंक के ग्राहक ई-बैंकिंग सेवाओं को शासकीय बैंक से ज्यादा तेज व कुशन मानते हैं।
5. शासकीय तथा निजी क्षेत्र बैंक के ग्राहक अपनी सूचना की गोपनीयता को लेकर तुलनात्मक अध्ययन में यह साफ-साफ दिखता है कि ज्यादातर ग्राहक स्वयं से संबंधित सूचना की गोपनीयता को लेकर असंतुष्ट दिखायी देते हैं।
6. बैंक द्धारा आधुनिक उपकरणों की उपलब्धता के विषय में शासकीय तथा निजी क्षेत्र बैंक के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट है कि दोनों ही बैंकिंग सेक्टर सफलतापूर्वक यह कार्य कर रहे हैं परंतु निजी क्षेत्र में ग्राहक ज्यादा संतुष्ट दिखाई देता है।

सुझाव :

1. शासकीय बैंक को अपने ग्राहक को आकर्षित करने के लिए ए.टी.एम. की संख्या की वृद्धि करनी चाहिए।
2. निजी क्षेत्र के बैंक को विभिन्न माध्यमों से अपने ग्राहक में उनके निवेशित फण्ड को लेकर विश्वास बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।
3. निजी क्षेत्र बैंक को अपनी ई-बैंकिंग सुविधाओं को अपने ग्राहकों के लिए सस्ता बनाने का प्रयास करना चाहिए।
4. शासकीय बैंक को अपनी ई-बैंकिंग सेवाओं की गुणवत्ता बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।
5. शासकीय व निजी क्षेत्र बैंक को अपने ग्राहक से संबंधित सूचना के लिए ज्यादा कटिबद्ध होने की आवश्यकता है।
6. शासकीय बैंक को अपने ग्राहक को संतुष्ट करने हेतु आधुनिक उपकरणों की उपलब्धता को बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।
7. शासकीय तथा निजी क्षेत्र की ई-बैंकिंग सेवाओं को लेकर संतुष्टि के आधार पर यह स्पष्ट है कि दोनों ही प्रकार के बैंक के ग्राहक लगभग अपने-अपने बैंक से संतुष्ट हैं परंतु निजी क्षेत्र में ग्राहक अपनी बैंक की सेवाओं को लेकर ज्यादा संतुष्ट दिखाई देता है। इसका तात्पर्य यह है कि शासकीय बैंक की ई-बैंकिंग सर्विसेज की गुणवत्ता में सुधारों की आवष्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. न्यानगोसी, इट. एल., 'द इवोल्यूषन ऑफ ई-बैंकिंग : 'ए स्टडी ऑफ इंडियन एण्ड केन्यान टेक्नॉलॉजी अवेयरनेस', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इलेक्ट्रॉनिक फायनेन्सए 2009, पेज. 1
2. राजपूत नमिता, 'इम्पेक्ट ऑफ आई.टी. ऑन इंडियन कमर्शियल बैंकिंग इंडस्ट्री', फर्स्ट स्कॉलर, वॉल्यूम 3, न. 1 (2011)
3. शर्मा हिमानी, 'बैंकिंग परस्पेक्टीव्स ऑन ई-बैंकींग' एनजेआरआईएम वॉल्यूम 1, जून 2011.
4. www.icicibank.com
5. www.hdfcbank.com
6. www.axisbank.co.in
7. www.canarabank.com
8. www.sbi.co.in
9. www.bankingfedrationofindia.com
10. www.boi.co.in
11. www.banknetindia.com
12. www.allbankingsolutions.com

****

अनुसूचित जनजातीय में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना से संबंधित प्रावधानों एवं आने वाली बाधाओं का अध्ययन : बड़वानी जिले के संदर्भ में

डॉ. निशा जैन * रितेश मॉगरोलिया **

प्रस्तावना – अनुसूचित जनजाति प्रारम्भ से ही निर्जन वनों में निवास करती हैं। निर्जन वनों में निवास करने के कारण इन लोगों में अशिक्षा, बेरोजगारी, स्वास्थ्य, गरीबी, नशाखोरी, काम की तलाश मे पलायन इत्यादि समस्याऍ आज भी विद्यमान हैं। अनुसूचित जनजाति सदस्य मजदुरी, कृषि मजदुरी कर अपनी जीविका चलाते हैं। इनके पास अपनी जीविका चलाने के कोई ठोस साधन उपलब्ध न होने की वजह से और भी समस्याऍ इनके सम्मुख आती हैं।

शासन द्वारा समय-समय पर ग्रामीणों को रोजगार उपलब्ध करवाने के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाएँ चलाई गई पर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (nrega) एक ऐसी योजना है, जिसमें प्रत्येक ग्रामीण परिवार को 100 दिन के रोजगार का अधिकार दिया गया है। प्रत्येक ग्रामीण परिवार चाहें किसी भी जाति वर्ग का हो उसे 100 दिन कार्य करने का अधिकार इस योजना से प्राप्त होता हैं। इस योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण लोगों को अपने निवास स्थान पर ही रोजगार उपलब्ध हो रहा है।

शासन द्वारा प्रत्येक योजनाओं के संचालन के साथ ही अनेक तरह के प्रत्येक योजना से संबंधित कई तरीके के प्रावधान भी किये जाते हैं जिससे की योजनाओं का संचालन अच्छे से हो सकें। परन्तु इन प्रावधानों के बावजुद भी कई तरह की बाधाए योजनाओं के संचालन में आ जाती हैं। जो कि कई तरीके की होती हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :-

1. अनुसूचित जनजातियों में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (nrega) से संबंधित उद्देश्यों एवं प्रावधानों की जानकारी का अध्ययन करना।
2. योजना क्रियान्वयन में आने वाली बाधाओं एवं समस्याओं का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि :

अध्ययन का समग्र – बड़वानी जिले के समस्त अनुसूचित जनजाति राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगां) से लाभवान्तित परिवार अध्ययन का समग्र हैं।

अध्ययन की इकाई – राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगां) में कार्य करने वाले अनुसूचित जनजाति परिवार के महिला एवं पुरूष अध्ययन की इकाई हैं।

निर्देशन विधि – दैव निर्देशन प्रणाली के आधार पर बड़वानी जिले के 30 ग्राम के (प्रत्येक ग्राम से 10 अनुसूचित जनजाति परिवार) का चयन किया गया हैं। इस प्रकार कुल 300 अनुसूचित जनजाति परिवारों का चयन इस विधि के माध्यम से किया गया हैं।

तथ्यों का संकलन – यह शोध पेपर शोधार्थी द्वारा प्राप्त प्राथमिक तथ्यों पर आधारित हैं।

तथ्यों का विश्लेषण :

मनरेगा योजना की पूर्ण जानकारी सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	87	29
2	नहीं	56	18.6
3	कुछ-कुछ	157	52.4
	कुल	300	100

स्त्रोत : शोधार्थी द्वारा संग्रहित तथ्य

मनरेगा योजना की पूर्ण जानकारी सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्य में मनरेगा योजना की पूर्ण जानकारी हैं कहने वाले 29 प्रतिशत सदस्य हैं, मनरेगा योजना की पूर्ण जानकारी नहीं हैं कहने वाले 18.6 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगाा योजना की कुछ-कुछ जानकारी हैं कहने वाले 52.4 प्रतिशत सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्य मनरेगा योजना के सम्बन्ध थोड़ी या कुछ-कुछ जानकारी रखने वालों की संख्या अधिक पाई गई हैं।

मनरेगा योजना के उपयोग सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	272	90.6
2	नहीं	28	9.4
	कुल	300	100

मनरेगा योजना के उपयोग संबंधी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों मे मनरेगा योजना का उपयोग करने वाले 90.6 सदस्य हैं तथा मनरेगा योजना का उपयोग नही करने वाले 9.4 प्रतिशत सदस्य पाये गये हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा योजना का उपयोग करने वालों की संख्या अत्यधिक व मनरेगाा योजना का उपयोग नही करने वालों की संख्या कम पाई गई हैं।

* विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या महाविघालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (समाज शास्त्र) देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

मनरेगा के उद्देश्यों के प्रति जागरूकता सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	77	25.6
2	नहीं	82	27.4
3	थोड़ी बहुत	141	47
	कुल	300	100

मनरेगा योजना के उद्देश्यों के प्रति जागरूकता सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा योजना के उद्देश्यों के प्रति जागरूकता रखने वाले 25.6 प्रतिशत सदस्य हैं, मनरेगा योजना के उद्देश्य के प्रति जागरूकता नहीं रखने वाले 27.4 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगा योजना के उद्देश्यों के प्रति थोड़ी बहुत जागरूकता रखने वाले 47 प्रतिशत सदस्य पाऐ गये हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा योजना के उद्देश्यों के प्रति थोड़ी बहुत जागरूकता रखने वालों का प्रतिशत बहुत अधिक पाया गया हैं।

मनरेगा योजना के प्रावधानों के प्रति जागरूकता सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	84	28
2	नहीं	92	30.6
3	थोड़ी बहुत	124	41.4
	कुल	300	100

मनरेगा योजना के प्रावधानों के प्रति जागरूकता सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तारदाता सदस्यों में मनरेगा योजना के प्रावधानों के प्रति जागरूकता रखने वाले 28 प्रतिशत सदस्य, मनरेगा योजना के प्रावधानों के प्रति जागरूकता नहीं रखने वाले 30.6 प्रतिशत तथा मनरेगा योजना के प्रावधानों के प्रति थोड़ी बहुत जागरूकता रखने वाले 41.4 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्य पाऐ गए हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तारदाता सदस्यों में मनरेगा योजना के प्रावधानों के प्रति थोड़ी बहुत जागरूकता रखने वालो का प्रतिशत अधिक पाया गया हैं।

मनरेगा योजना के क्रियान्वयन के प्रति जागरूकता सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	78	26
2	नहीं	148	49.4
3	थोड़ी बहुत	74	24.6
	कुल	300	100

मनरेगा योजना के क्रियान्वयन के प्रति जागरूकता सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा योजना के क्रियान्वयन के प्रति जागरूकता रखने वाले 26 प्रतिशत सदस्य हैं, मनरेगा योजना के क्रियान्वयन के प्रति जागरूकता नहीं रखने वाले 49.4 प्रतिशत सदस्य तथा मनरेगा योजना के क्रियान्वयन की थोड़ी बहुत जागरूकता रखने वाले 24.6 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्य पाये गये हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तारदाता सदस्यों में मनरेगा के क्रियान्वयन के प्रति जागरूकता नहीं रखने वालों का प्रतिशत अत्यधिक पाया गया हैं।

मनरेगा योजना की जानकारी के स्त्रोत सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	ग्राम पंचायत से	141	47
2	गांव के अन्य लोगो से	71	23.6
3	समाचार पत्र व टी.वी से	43	14.4
4	अन्य	45	15
	कुल	300	100

मनरेगा योजना की जानकारी के स्त्रोत सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि कुल 100 प्रतिशत उत्तारदाता सदस्यों में ग्राम पंचायत से जानकारी प्राप्त करने वाले 47 प्रतिशत गांव के अन्य लोगों से जानकारी प्राप्त करने वाले 23.6 प्रतिशत सदस्य, समाचार पत्र एवं टी.वी से जानकारी प्राप्त करने वाले 1.4 प्रतिशत तथा अन्य स्त्रोतो से जानकारी प्राप्त करने वाले 15 प्रतिशत सदस्य पाये गये हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यो में ग्राम पंचायत से जानकारी प्राप्त करने वालो का प्रतिशत अधिक पाया गया हैं तथा समाचार पत्र एवं टीवी से जानकारी प्राप्त करने वालों का प्रतिशत कम पाया गया हैं।

मनरेगा योजना के उद्देश्यों एवं प्रावधानो को जानने के प्रति उत्सुकता संबंधी

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	210	70
2	नहीं	90	30
	कुल	300	100

मनरेगा योजना के उद्देश्यों को जानने के प्रति उत्सुकता सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत उत्तारदाता सदस्यों में मनरेगा के उद्देश्यों के प्रति उत्सुकता रखने वाले 70 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगा के उद्देश्यों के प्रति उत्सुकता नहीं रखने वाले 30 प्रतिशत सदस्य पाऐ गए हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा योजना के उद्देश्यों के प्रति उत्सुकता रखने वालो का प्रतिशत अधिक पाया गया हैं। जिसका कारण प्रमुख यह हैं इस योजना के उद्देश्यों की पूर्ण जानकारी किसी को भी नहीं हैं जिससे सभी इस योजना के उद्देश्यों को जानने के प्रति उत्सुक हैं।

मनरेगा योजना से लाभ प्राप्ति में कठिनाई सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	समय पर कार्य नही	136	60.1
2	समय पर पैसा नही	37	16.4
3	कार्य के अनुसार पैसा नहीं	53	23.5
	कुल	226	100

मनरेगा योजना से लाभ प्राप्ति में कठिनाई सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत सदस्यों में समय पर कार्य नहीं मिलने सम्बन्धी कठिनाई का सामना करने वाले 60.1 प्रतिशत सदस्य हैं, समय पर पैसा नहीं मिलने संबंधी कठिनाई का सामना करने वाले 16.4 प्रतिशत सदस्य हैं तथा कार्य के अनुसार पैसा नहीं मिलने संबंधी कठिनाई का सामना करने वाले 23.5 उत्तरदाता सदस्य पाये गये हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तारदाता सदस्यों में समय पर कार्य नही मिलने सम्बन्धी कठिनाई का सामना करने वालो का प्रतिशत अत्यधिक पाया गया हैं। क्योंकि इस योजना के क्रियान्वयन में आ रही समस्याओं के कारण इसके कार्यो को रोक दिया गया जिससे लाभ प्राप्त में कठिनाई हो रही हैं।

मनरेगा योजना के उपयोग करने में आने वाली समस्या सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	170	56.6
2	नहीं	130	43.4
	कुल	300	100

मनरेगा योजना के उपयोग करने में आने वाली समस्या सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा के उपयोग में आने वाली समस्याओं का सामना करने वाले 56.6 प्रतिशत सदस्य हैं तथा मनरेगा के उपयोग मे समस्याओं का सामना नहीं करने वाले 43.4 प्रतिशत सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा के उपयोग करने में समस्याओं का सामना करने वालों का प्रतिशत अधिक पाया गया हैं। क्योंकि इस योजना के कार्य मांग के आधार एवं आगे से आने पर प्रारम्भ होते हैं साथ ही कार्य आने पर मजदुरों की अधिकता भी हो जाती हैं जिससे सभी को मजदुरी प्राप्त नही हो पाती हैं।

मनरेगा के क्रियान्वयन में बाधा सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	खाली समय पर कार्य नहीं	76	44.5
2	समय पर पैसा नहीं	56	32.7
3	कार्य के अनुसार पैसा नहीं	39	22.8
	कुल	171	100

मनरेगा के क्रियान्वयन में बाधा सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि कुल 100 प्रतिशत सदस्यों में खाली समय पर कार्य नहीं मिलता हैं, कहने वाले 44.5 प्रतिशत सदस्य हैं, समय पर पैसा नहीं मिलता हैं कहने वाले 32.7 प्रतिशत सदस्य हैं तथा कार्य के अनुसार पैसा नहीं मिलता हैं कहने वाले 22.8 प्रतिशत सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा के क्रियान्वयन में बाधा सम्बन्ध में खाली समय पर कार्य नहीं मिलता हैं, कहने वालों का प्रतिशत अत्यधिक पाया गया हैं।

योजना क्रियान्वयन में शासन के सदस्यों के सहयोग सम्बन्धी विवरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	132	44
2	नहीं	168	56
	कुल	300	100

मनरेगा के क्रियान्वयन में शासन के सदस्यों के सहयोग सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट होता हैं कि 100 प्रतिशत सदस्यों में मनरेगा के क्रियान्वयन में शासन के सदस्यों का सहयोग प्राप्त होता हैं कहने वाले 44 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्य हैं तथा मनरेगा के क्रियान्वयन में शासन के सदस्यों का सहयोग प्राप्त नहीं होता हैं, कहने वाले 56 प्रतिशत सदस्य हैं। इस प्रकार कुल 100 प्रतिशत उत्तरदाता सदस्यों में मनरेगा के क्रियान्वयन में शासन के सदस्यों का सहयोग प्राप्त नहीं होता हैं, कहने वालो की संख्या अधिक पाई गई हैं। क्योंकि जब भी इसके कार्य क्रियान्वित होते हैं, तब कोई भी बड़ा अधिकारी मौजुद नहीं होता और न ही इसके प्रावधानों का ध्यान रखा जाता हैं। मजदुरी का भुगतान बैंको में होने के कारण अशिक्षितों के साथ दुरव्यवहार किया जाता हैं।

सुझाव :

- कार्ययोजना का विवरण और काम की जरूरतों के बारे में सभी संबंधित पक्षों को बताने के लिए मजदूरों के साथ एक खुली परियोजना बैठक होनी चाहिए। इस बैठक में ग्राम पंचायत के सभी लोगों को आने की छूट होनी चाहिए, और इसी बैठक में चौकसी और निगरानी समिति के सदस्यों का भी चुनाव होना चाहिए।

इन बैठकों में आवंटित किये जाने वाले सभी तरह के कामों के लिये वेतन की दरों के बारें में जानकारी दी जानी चाहिए तथा इस जानकारी को नोटिस बोर्ड पर लगा दिया जाना चाहिए। बैठक मे इन सवालों के जवाब जरूर सामने आने चाहिये :

1. वेतन कितना होगा?
2. वेतन निर्धारण का तरीका क्या हैं (एक दिन के श्रम का निर्धारण किस आधार पर होगा)?
3. जनता को यह जरूर बताया जाना चाहिए कि प्रत्येक मजदूर के काम को अलग-अलग ही मापा जाऐगां, हालांकि अगर कुछ मजदूर चाहें तो उनके काम को सामूहिक आधार पर ही मापा जा सकता है।

- जनता को जब चाहे तब हाजिरी रजिस्टर देखने का अधिकार मिलना चाहिए।
- सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के प्रावधानों के अनुसार इकट्ठा किये जाने वाले काम के नमूनों तक लोगों की सहज पहुंच होनी चाहिए।
- इस योजना का और अधिक से अधिक प्रचार-प्रसार होना चाहिए जिससे की लोगों को आसानी से इस योजना के उद्देश्य एवं प्रावधानों की जानकारी प्राप्त हो सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

बालकों के मनोविकास में संज्ञानात्मक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व

डॉ. नीलम महाडिक *

प्रस्तावना – संज्ञान से तात्पर्य सूचना संसाधन, स्मृति और प्रत्यक्षण की मानसिक क्रियाओं से होता है जिनके आधार पर मनुष्य ज्ञान प्राप्त करता है और अपनी समस्याओं का समाधान करता है तथा भावी योजनाओं का निर्माण करता है।

विगत वर्षों में हमने संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं में पुनरूत्थान अनुभव किया है क्योंकि संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिकों ने जटिल मानसिक क्रियाओं के अध्ययन में अधिक रूचि प्रदर्शित की है। उन्होंने विचारों प्रतिमाओं प्रतीकों ज्ञान एवं तर्क शक्ति आदि प्रकार के इन जटिल मानसिक प्रक्रियाओं के प्रति अपनी जिज्ञासाओं को प्रकट किया है। इन्होंने अपने को निरीक्षण योग्य मानसिक घटनाओं तक ही सीमित नहीं रखा है, वरन् मस्तिष्क में घटित होने वाले मानसिक प्रक्रमों के प्रति अपनी उत्सुकता प्रदर्शित की है।

संज्ञानात्मक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व – बच्चों के बौद्धिक विकास की गति, प्रक्रिया एवं स्वाभाविक प्रवृति का कारण एवं वैज्ञानिक अध्ययन शैक्षिक परिस्थितियाँ, पर्यावरण एवं साधनों की व्यवस्था को उपयोगी बनाने में शिक्षकों एवं शैक्षिक उत्तरदायित्व को वहन करने वाले अन्य लोगों के लिये अत्यन्त उपयोगी प्रभावित हुआ है। आयु वृद्धि के साथ-साथ बालकों की बौद्धिक क्षमता का भी विकास होता जाता है। भिन्न-भिन्न बालकों की विकास की गति भी भिन्न-भिन्न होती है, इसलिये 'कक्षाओं का वर्गीकरण' न केवल आयु के आधार पर, बल्कि प्रत्येक बालक की बौद्धिक क्षमता के आधार पर होना चाहिये। एक ही आयु के कुछ बालकों के लिये जो कार्य सरल एवं रूचिकर प्रतीत हो सकता है। वहीं उसी आयु के कुछ बालकों के लिये कठिन एवं असाध्य। शिक्षकों एवं शिक्षा अधिकारियों को इस तथ्य की अपेक्षा नहीं करनी चाहिये।

छः वर्ष से लेकर किशोरावस्था के कुछ महत्वपूर्ण वर्षों तक बालक प्राथमिक से लेकर माध्यमिक विद्यालयों तक फैले होते हैं। इन विद्यालयों के पाठ्यक्रमों का निर्माण करते समय विभिन्न आयु के बालकों को संज्ञानात्मक क्षमता की जानकारी रखना आवश्यक हो जाता है। पाठ्यचर्चा का निर्माण करते समय हर अवस्था के बालक की रूचि, अभिरूचि, स्मृति और कल्पना शक्ति, चिन्तन एवं तर्क शक्ति भाषा ज्ञान और प्रत्ययों के निर्माण की क्षमता आदि का अध्ययन कर लेना चाहिये।

प्राथमिक कक्षाओं में बालकों की पाठ्यचर्चा सामान्य हो सकती है, पर उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में पाठ्यचर्या को अनेकरूपता प्रदान करनी होगी। उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों को बहुउद्देश्यीय विद्यालयों का रूप देना इस सम्बन्ध में अधिक उपयोगी होगा।

माण्टेसरी एवं किण्टरगार्डन विद्यालयों का पर्यावरण इसलिये घरेलू, एवं पारिवारिक जीवन के अनुरूप बनाया जाता है। प्रारंभिक कक्षाओं में बालकों को केवल उन्हीं वस्तुओं के सम्पर्क में लाना चाहिये, जो इनके दैनिक जीवन से सम्बन्धित होती है। विद्यालय को हर तरह से साधन सम्पन्न बनाना चाहिये। इन कक्षाओं के 'पाठ्यक्रम को सैद्धान्तिक नहीं अपितु व्यवहारिक एवं क्रियात्मक बनाना चाहिये।'

संज्ञानात्मक क्षमता एवं उसके विकास की गति एवं स्वरूप का अध्ययन शिक्षण कार्य को भी प्रभावित करता है। प्रत्येक बालक के लिये अध्यापक एक ही शिक्षण प्रणाली का प्रयोग नहीं कर सकता। एक ही अवस्था के कुछ बालकों की सोचने-समझने एवं चिन्तन करने की शक्ति मन्द होती है और कुछ की तीव्र होती है। शिक्षण कार्य इन वैयक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए ही किया जाना चाहिये। संज्ञानात्मक क्षमता का विकास एवं सदुपयोग ही हमारी शिक्षा का लक्ष्य है। बौद्धिक क्षमता का विकास एवं सदुपयोग बिना समझे विषयों को रटने एवं अध्यापक के संकेत पर अंधानुकरण करने से कदापि सम्भव नहीं है। आयु वुद्धि के साथ-साथ विद्यालय के परिवेश में परिवर्तित होते रहना चाहिये।

बाल्यावस्था में मानसिक विकास – छः वर्ष बाद से 12 वर्ष की आयु तक बालक की बाल्यावस्था कहीं जाती है। इस अवस्था में बालक के मानसिक विकास के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं :-

1. **स्थायित्व –** बाल्यावस्था का सबसे विशेष मानसिक लक्षण स्थायित्व है। दूसरे शब्दों में, इस दशा को मिथ्या परिपक्वता की दशा कहा गया है क्योंकि इसमें बालक के प्रौढ़ होने का भ्रम होता है। बाल्यावस्था में बालक अपने पर्यावरण से भली भाँति परिचित हो जाता है। और शैशवावस्था के समान चकित नहीं दिखाई पड़ता।
2. **जिज्ञासा –** बाल्यावस्था में बालक की जिज्ञासा शैशवावस्था से भी बढ़ जाती है। अब वह केवल प्रश्न के लिये प्रश्न न करके अपने चारों ओर की चीजों, पशुओं और मनुष्य के विषय में वास्तविक जानकारी प्राप्त करना चाहता है। अतः वह 'क्यों' 'कहाँ' और 'कैसे' के प्रश्न पूछता रहता है। इस आय में बालक की जिज्ञासा को उकसा कर उसको बहुत कुछ सिखाया जा सकता है।
3. **अनुकरण –** शैशवावस्था के समान बाल्यावस्था में भी बालक में दूसरों का अनुकरण करने की तीव्र प्रवृत्ति होती है। दूसरों को तरह-तरह की चीजें बनाते हुए या ठीक करते हुए देखकर वह भी उनकी तरह करना चाहता है। कभी-कभी तो वह दूसरों से छिपकर उनके अनुकरण में लगा

* प्राचार्या, भारतीय महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

रहता है। जिससे कोई उसकी हँसी न उड़ाये।

4. **विधायकता –** बालक में विधायकता की मूल प्रवृत्ति देखी जा सकती है। वह नये–नये मित्र बनाना और मिट्टी तथा रेत के घर आदि बनाना पसंद करता है। इस आयु में उसे लकड़ी के ब्लाकों के खेल दिये जा सकते हैं।
5. **संचय की प्रवृत्ति –** इस आयु में बालक में स्वत्व और अधिकार की भावना दिखलायी पड़ती है। वह तरह–तरह की चीजों का संग्रह करना चाहता है। अत: इस आयु में उसे टिकट, सिक्के, खिलौने तथा रूपये–पैसे, आदि एकत्रित करना सिखाकर उसमें अच्छी आदतें डाली जा सकती है।
6. **समूह प्रवृत्ति की परिपक्वता –** शैशवावस्था में शिशु में जो समूह प्रवृत्ति दिखायी पड़ती हैं। वह बाल्यावस्था में पहुँचकर परिपक्व हो जाती है। अब वह अधिकतर अन्य बालकों के साथ रहना पसंद करता है। उसे अकेले अच्छा नहीं लगता। घर में नये लोगों के आने पर उसे अप्रसन्नता होती है। वह मेले या खेल तमाशे का शौकीन होता है, वह मोहल्ले के बालकों के गिरोह का सदस्य बन जाता है और उनके साथ घूमता और खेलता फिरता है।
7. **खेल –** जब शैशवावस्था में बालक के खेल अधिकतर कल्पनात्मक होते हैं, बाल्यावस्था में बालक वास्तविक जगत के खेलों में अधिक रूचि लेता है। उसमें जो कल्पना होती है। वह भी वस्तु जगत से निकट का सम्बन्ध रखती है। वह कुछ न कुछ उपयोगी कार्य करना चाहता है। अत: खेल–खेल में उसे बहुत सी बातें सिखायी जा सकती हैं।
8. **बहिर्मुखी प्रवृत्ति –** इस आयु में बालक बहिर्मुखी दिखायी पड़ता है। वह अब इतना अधिक अपने आप में रूचि नहीं लेता जितना कि अपने चारों ओर की चीजों में रूचि लेता है। इस आयु में वह काल्पनिक से अधिक यथार्थ वस्तुओं की ओर आकर्षित होता है। उसकी रूचियाँ व्यवहारिक होती हैं और वह वस्तु–जगत में वास्तव में कुछ कार्य करना चाहता है।
9. **नैतिक अनुज्ञाएँ –** समूह के सदस्य के रूप में बालक कुछ नैतिक अनुज्ञाओं का पालन करता है। कभी–कभी तो वह अपने समूह के नेता के कहने पर अपने माता–पिता और शिक्षक से भी झूठ बोलता है और उन्हें धोखा भी देता है। इस आयु में बालक को अच्छे और बुरे की पहचान करायी जा सकती है और उनके नैतिक चरित्र का निर्माण किया जा सकता है।
10. **सुप्त काम–प्रवृत्ति–डॉ.जोन्स –** के अनुसार, इस आयु में बालक में आत्म–प्रेम, ऑडीपस या इलेक्ट्रा मानसिकि ग्रन्थि आदि कुछ भी नहीं देखी जा सकती क्योंकि बाल्यावस्था में उसकी काम–प्रवृत्ति सुप्त रहती है।
11. **प्रशंसा और निन्दा का प्रभाव –** इस आयु में बालक प्रसन्न और निन्दा से दु:खी होता हैं, इसलिये सामान्य रूप से वह ऐसे काम करना चाहता है, जिनसे उसकी प्रशंसा हो। वह दूसरी बात है कि वह अपने गिरोह के सदस्यों की प्रशंसा प्रात करने के लिये ऐसे काम कर बैठे जिनसे उसे घर वालों अथवा शिक्षकों की निन्दा प्राप्त हो।
12. **कठोर अनुशासन के प्रति विद्रोह –** इस आयु में बालक घर अथवा स्कूल में कठोर नियन्त्रण से घृणा करता है और उसके प्रति विद्रोह की भावना रखता है। कठोर अनुशासन होने पर बाह्य रूप से अनुशासित दिखायी देने पर भी उसमें अन्दर ही अन्दर विद्रोह की ज्वाला सुलगती रहती है, जिससे कभी–कभी तो वह स्कूल से ही क्या घर से भी भाग जाता है।
13. **समस्याओं का हल करना –** इस आयु में बालक तरह–तरह की पहेलियों को सुलझाने और समस्याओं को हल करने में रूचि लेता है। इसलिये क्रमश: उसमें अमूर्त विचार की शक्ति भी विकसित होने लगती है।
14. **रूचि और चिन्तन के क्षेत्र का विस्तार –** बाल्यावस्था में बालक की रूचि और चिन्तन का क्षेत्र काफी विस्तृत हो जाता है। उसे देश–विदेश के पशुओं, वस्तुओं, इमारतों और मनुष्यों के विषय में चित्र देखना और पढ़ना अच्छा लगता है। कान में कोई भी रहस्य की बात पड़ जाने पर वह उसको पूरी तरह जाने बिना रह नहीं सकता।

कक्षा में संज्ञानात्मक विकास के उद्देश्य – संज्ञानात्मक विकास से तात्पर्य है, बालकों में किसी संवेदी सूचनाओं को ग्रहण करके उन पर चिन्तन करने तथा क्रमिक रूप से उन्हें इस योग्य बना देता है कि वे इनका प्रयोग विभिन्न परिस्थितियों में समस्याओं के समाधान में कर सकें। उन्होंने अपने अध्ययनों के आधार पर संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

इस सिद्धान्त के अनुसार बालकों में संवेदी सूचनाओं से प्राप्त वास्तविकता के स्वरूप के बारे में चिन्तन करने तथा खोज करने की शक्ति न तो उनके परिपक्वता स्तर पर निर्भर करती है और न ही उनके अनुभवों पर बल्कि इन दोनों की अन्तर्क्रिया के द्वारा निर्धारित होती है।

शिक्षा के क्षेत्र में इस सिद्धान्त का उल्लेखनीय योगदान है। इस सिद्धान्त के अनुसार सीखने में बालक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। बालकों के पाठ्यक्रम की रचना उनकी आवश्यकता, प्रेरणा एवं रूचि को ध्यान में रखकर करनी चाहिये।

संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्त का शिक्षा में प्रयोग :

1. किसी भी आयु के बच्चों के लिये पाठ्यक्रम का निर्माण उनके संज्ञानात्मक विकास एवं प्रत्यय निर्माण के आधार पर करना चाहिये।
2. यह सिद्धान्त इस बात पर बल देता है कि बच्चों को स्वक्रिया द्वारा सीखने के अवसर देने चाहिये।
3. शिक्षकों को अनुकरण एवं खेल विधि से पढ़ाना सिखाना चाहिये।
4. यह सिद्धान्त यह स्पष्ट करता है कि 11 वर्ष की अवस्था पूरी करते–करते बच्चों में समस्या–समाधान की क्षमता का विकास होने लगता है। अत: 11 वर्ष से बड़े बच्चों को पढ़ाने–सिखाने के लिये समस्या समाधान विधि का प्रयोग करना चाहिये।
5. सीखने में प्रगति न करने वाले छात्रों को दण्ड नहीं देना चाहिये।
6. चालक और अभिप्रेरणा अधिगम एवं विकास के लिये आवश्यक है। अत: शिक्षकों को शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में इनका उचित प्रयोग करना चाहिये।
7. बुद्धि परीक्षणों के निर्माण में व्यावहारिक रूप में प्रयोग से सम्बन्धित क्रियाओं का उपयोग करना चाहिये।
8. ज्ञान से शिक्षक एवं अभिभावक बालकों की तर्क शक्ति एवं विचारण शक्ति की प्रकृति को उनकी अलग–अलग अवस्थाओं में समझ एवं पहचान सकते हैं।
9. बालकों को पढ़ाने–सिखाने के लिये ऐसे अनुभव एवं अधिगम सामग्री प्रस्तुत करनी चाहियें, जिन्हें वे आत्मसात कर सकें और आगे के अध्ययन के लिये चुनौती के रूप में सामने आए।
10. सीखना बालक स्वयं और उसके पर्यावरण से अन्त क्रिया के फलस्वरूप होता है। अत: शिक्षक को एवं अभिभावकों को बालकों के लिये उचित

एवं प्रेरणादायक पर्यावरण का निर्माण करना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Best, J.W., (1983) Research in education New York, prentice hall of India.
2. Buch, M.B., (1991): Educational survey New Delhi. NCERT publication 4th edition.
3. अग्रवाल जे.सी. (2007):इसेशनल ऑफ एज्यूकेशनल साइकोलॉजी, नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि.।
4. अग्रवाल, जे.सी., (2006): बेसिक आइडियास इन एज्यूकेशन साइकोलॉजी, नई दिल्ली, क्षिप्रा पब्लिकेशन।
5. अस्थाना विपिन एवं श्वेता (2007)मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर।
6. चित्तौड़ा, डॉ.शशि एवं जरसावत, हरिशचन्द्र (2007) बालविकास एवं शिक्षा मनोविज्ञान, जयपुर; कल्पना पब्लिकेशन।
7. बीना,डॉ. आनन्द डॉ.वशा आनन्द डॉ.बानी (2002):संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, दिल्ली; मोतीलाल बनारसीदास।
8. माथुर, एस.एस., (1980) शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा:विनोद पुस्तक मंदिर रायजादा।
9. सिंह.अरूण कुमार (2006) :संज्ञानात्मक मनोविज्ञान नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास।
10. त्रिपाठी, लाल.बी., (2012/13) :आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, आगरा; एच.पी.भार्गव बुक हाऊस, द्वितीय संस्करण।

****

जल संरक्षण आज की आवश्यकता

डॉ. राजेन्द्र कुमार यादव *

प्रस्तावना – 'जल बिन्दुनि, पातेन क्रमश: घट: परिपूर्यतिय मतलब– बूँद–बूँद से घड़ा भरता है। उक्त उक्ति में, जल संरक्षण के महत्व की गहराई छुपी हुई है। जल को केवल संरक्षण की ही अपितू उसके दुरूपयोग की और भी इशारा है। हमारे प्राचीन ग्रंथों में जल को सबसे पवित्र दृष्य माना है। यह भी कहाँ गया कि जल ही जीवन है, जीवन ही जलमय है। ग्रंथों में कहा गया है।

'धाराया आप: परम पवित्रम।' अर्थात इस धरा का, पृथ्वी का सबसे पवित्र दृष्य जल ही है। बिना जल के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है। वैज्ञानिकों का मानना है,कि बिना जल के जीवन हो ही नहीं सकता, जीवन के विकास में जल प्रथम तत्व है। आज ब्रह्माण्ड में जहाँ भी जीवन की खोज वही की जा रही है। जहाँ पानी होने की संभावना दिखाई देती है। सर्वप्रथम सभी जगह पानी की खोज की जा रही है तब ही वहाँ जीवन संभव हो सकता है। अर्थात् बिन पानी जीवन असंभव है। कहने का तात्पर्य है कि जल जीवन का आधार है। यह भी ज्ञात है कि इस धरा पर जितना भी उपलब्ध पानी है,उससे केवल 'जल', जलचक्र में भाग लेता है, उसमें भी पीने योग्य पानी जो नदियों,तालाबो, झीलों में पाया जाता है। अर्थात शुद्ध जल आधा ही उपलब्ध होता है। जल की कुल मात्रा स्थिर होती हैं, इसे न तो घटाया जा सकता है नहीं बढ़ाया जा सकता है। जो भी उपलब्ध है, इसे समझने की आवश्यकता है। बिना इसे संरक्षित किये हम दिनो–दिन मुश्किल में फंसते जा रहे है। केवल जल संरक्षण ही आज की आवश्यकता नहीं है, वरन् विकराल गति से बढ़ती जनसंख्या को रोकने के प्रभावी उपाय किये जाने चाहिएँ, नहीं तो आने वाली जनसंख्या के लिए पीने योग्य पानी की भयंकर कमी होगी एक–एक गिलास पानी के लिए लोग तरस जायेंगे। आज भी विश्व के अनेक देश इस जल समस्या से जुझ रहें है। खाड़ी देशो में तो पानी के लिए मारामारी चल ही रही है। निश्चित ही भारत के अनेक स्थानों पर पानी के लिए मारामारी देखने को मिल रही है। ऐसे में दीर्घकालीन योजना के साथ–साथ जल स्त्रोतों को बचाने की आवश्यकता है। आज की आवश्यकता है, जल संरक्षता को पर्यावरणीय शिक्षा का एक आवश्यक भाग बनाने की। हमें यह समझना और जानना आवश्यक है कि हमारा जल जो कि हमारा जीवन है। कहाँ से, कितना आता है। इसकी उपलब्धता किस प्रकार की है तथा इसका उपयोग किस प्रकार किया जा रहा है। हम जिस जल को पीने के रूप में उपयोग कर रहें है। वही हमारी जीवन ऊर्जा अर्थात् 'अन्न' के उत्पादन में भी इसकी आवश्यक है। जीवन ऊर्जा के अतिरिक्त भी अनेक जीवन उपयोगी वस्तुऐं जिनका निर्माण जल के बिना संभव नहीं है। चाहे ऊर्वरक,खाद,स्टील निर्माण, परमाणु ऊर्जा, और भी अनेक वस्तुऐं। पर हमें इस बात को निष्चित करना होगा की, 1 किलोग्राम गेहूँ के लिए 1000 लीटर पानी की आवश्यकता है। वही 1 मेट्रिक टन स्टील निर्माण के लिए 2,15,00 लीटर पानी की, ऐसे में हमें यह निर्धारण करना होगा कि जल का कैसे उपयोग किया जाये। आज भी हमारे देश में 'जल संरक्षता' का अभाव है। हमें पानी के मोल को आज भी नहीं समझ पा रहें है।

विचारणीय पहलू :

1. आज विश्व में 60 करोड़ लोग पानी की कमी का सामना कर रहें है। 2025 में 280 करोड़ जनसंख्या हो जाएगी तब पानी कैसे उपलब्ध होगा। इसकी योजना आज से ही विश्व को बनानी पडेगी।
2. धरा पर मात्र 0.6 प्रतिशत पानी है। जिसे भी हम प्रतिदिन प्रदूषित कर रहें है।
3. दिन प्रतिदिन जंगलो को साफ करते जा रहे है। जिससे संग्रहित होने वाले पानी में कमी आ रही है।
4. हम प्राकृतिक जल संसाधनों का दोहन बूरी तरह से कर रहें है। जिसके कारण भयंकर सुखे जैसे स्थिति होने जा रही है, वर्षो से संग्रहित जल को उलीच कर हम बाहर करते जा रहे है।
5. शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के कारण जल का बहुत ज्यादा दुरूपयोग हो रहा है।
6. जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ जल की आवश्यकता भी बढ़ रही है। जनसंख्या नियंत्रण के उपाय कारगर पर सिद्ध नहीं किये जा रहें है।
7. मानसुनी चक्र के बिगड़ने तथा अलनिनों के प्रभाव से सतही जल, प्रदूषण की चपेट में है, जिसे बचाना आवश्यक हो गया है। इसलिए गंभीर प्रयास नहीं किये जा रहे है।
8. जल की फिजूल खर्ची भयंकर रूप ले रही है। इनको रोकने के लिए कोई विशेष पहल नहीं की जा रही है।

'यथार्थ और गंभीर प्रश्न':– दिशा का निर्धारण – आखिर हम जा किस और रहे है। शायद आधुनिक जीवन शैली ही ऐसी है, जिसमें हम अपना होश खो रहे है। बेहोशी की हालत में जीवन यापन करना हमारी आदत सी बन गई है। गंभीर खबरों के बावजूद अपनी आवश्यताओं की पूर्ति एक मात्र लक्ष्य रह गया है। क्या कीमत चुका रहे है। इसका आक्कलन तक नहीं किया जा रहा है। हॉ इस दिशा में विश्व व्यापी चेतना का उदय हो रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 'पर्यावरण संरक्षण' पर सम्मेलन गोष्ठियां हो रही है। तथा पर्यावरण संरक्षण के उपायों पर अमल करने का प्रयास किया जा रहा है। बावजूद इन सबके हमें विचार करना आवश्यक है कि आखिर हम किस तरफ जा रहें है।

1. हजारों वर्षो से संग्रहित पानी जिसे विगत दशकों के उलेच कर रख दिया है।
2. खेती की परम्परागत तकनीक जिसमें 70 प्रतिशत पानी का दुरूपयोग हो रहा है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

3. बढ़ती जनसंख्या, बढ़ता जनसंख्या का घनत्व, जल के वितरण की गंभीर अनियमितता।
4. बडे प़रमाणु रियेक्टर जिसमें पानी का बहुत सारा उपयोग किया जा रहा है।
5. पिघलते ग्लेशियर,बढ़ता तापमान, नदियाँ, खाली होते तालाब, बावड़िया।
6. वनों की अंधाधुंध कटाई।
7. नदियों में बढ़ता प्रदूषण, नदिया मानव मैल से मैली-मैली।
8. पानी पर आधारित उद्योगों का विस्तार।
9. बढ़ता कांक्रिट का जंगल।

जल संरक्षण हेतु मुख्य उपाय :

1. जल संरक्षण हेतु वर्षा के जल को संग्रहित करना अनिवार्य है। इस हेतु भारत सरकार,द्धारा 'पंचवर्षीय योजना में प्राथमिकता के आधार पर' इस मुद्दे पर विशेष योजना बनानी चाहिए। किसी भी एक वर्ष को जल संरक्षण वर्ष घोषित किया जाना चाहिए। इसके लिए राज्य शासन,स्वयंसेवी संस्थाओं,सामान्य नागरिकों का सहयोग लिया जाना चाहिए। इस योजना में बांध,नदियों पर डेम, कुँओं एवं टयूबवेलो में जल को संग्रहित किया जाना चाहिए। मकान निर्माण में जल संग्रहण को अनिवार्य किया जाना चाहिए। इस तरह का सिस्टम लगाने के लिए शासन स्तर पर ही क्रियान्वयन किया जाना चाहिए। लागत मकान मालिक से वसूल की जानी चाहिए।
2. 'जल संरक्षण' के लिए जल संरक्षता अभियान चलाया जाना चाहिए। स्कूल पाठयक्रम में अनिवार्य रूप से इसे शामिल किया जाना चाहिए।
3. सिंचाई के परम्परागत तरीकों में बदलाव लाया जाना चाहिए टपक,सिंचाई योजना को बडे स़्तर पर प्रोत्साहन मिलना चाहिए।
4. जल का पुन: चक्रीकरण किया जाना चाहिए। गन्दे पानी का उपयोग साफ कर फसल, बगीचों में किया जाना चाहिए। जलीय पौधें का उपयोग बढ़ाया जाना चाहिए। 'इसमें नाल' टाईफ,डक बीड जलकुंभी जो जल को छानने का कार्य करते है।
5. घरो में उपयोग आने वाले उपकरण जो पानी से संबंधित है। उच्च कोटी के मानक वाले उपयोग किये जाने चाहिए।
6. नदियों पर स्नान, कपडे धोना,पूजा सामग्री फैलाना, कचरा फैलाने पर तुरन्त और कारगर तरीके से प्रतिबंध लगना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रो.धनंजय वर्मा,प्रधान संपादक-पर्यावरण चेतना-हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल-2004
2. APHA Awwa and WPCF,Standard Methods for Examination of water and waste water 16th Ed.American Public Health ASSOC Waslington D.C.(1985)
3. पर्यावरण संरक्षण - पाईन्टर पब्लिशर्स जयपुर-एस.सी.मलवार
4. मानव विकास रिपोर्ट - 2010
5. पर्यावरण मानव संसाधन और विकास-डॉ.योगेश कुमार शर्मा

****

Comparison between dietary habits of Tribal and non-Tribal peoplesof Chhindwara, Madhya Pradesh, India

Pradeep Kumar Shrivastava *

Abstract - Indiais a country of villages and about 80% of the populations live in rural area. Continuing growing population and consumption is reason for increasing demand of food. But the survey indicates that most of the people get food less than their requirements. The most vulnerable segments of population which is affected from malnutrition problems are infants and young children. Children who belong to poor socio-economic classes come under major public health problems in India. Protein, carbohydrate, vitamins, fats and mineral are the major components of the food. It is indispensible for normal and healthy life for humanbeings. It is not only satisfied hunger but also symbolizes one' social status. In the view, investigate food patterns of tribal area of district chhindwara, Madhya Pradesh, India has been done.
Key words - Food Pattern, Tribes, Public health.

Introduction - A rapidly growing population creates economic strain on a country and in such condition if food supply becomes inadequate, people will primarily from malnutrition. Normal deficiency is one of the serious problems in rural areas comprising mostly infants in weaning and post weaning periods and in pre-school children.Food is prerequisite of nutrition and nutrition has been defined as food at work in the body. Nutrition includes everything that happens to be food from the time it is eaten until it is used for various functions in the body.

Food nutrition and health are intimately connected aspects of Our life.Intake of right kind and amount of food can ensure good health which may be evident in our appearance, efficiency and emotional well being (Mudambi, 1983).

Material and Methods - Study area-Figure 1 shows the chhindwara district, the area under study, in jabalpur division, is situated in Satpuda plateau in the south central part of Madhya Pradesh and lies between Lattitude $21^0$28' and $22^0$49' N and Longitude $78^0$10' and $79^0$24' E. It covers an area of 11815 km^2.

Figure 1. Map shows location of study sites.

Sampling procedure - Field survey conducted to get the first hand information in variuos sample villages such as food survey or diet survey, collection of relevent background infromations.

The following are the sample schedules used in survey.

1. Diet survey schedule (Oral questionnaire/weigtment)
2. Socio-cultural environmet schedule
3. Family economic schedule

Method of data collection - The diet survey of 220 families (Ten families from each village) from twenty two villages was done.

Selection of village - Twenty two villages namely: Panth and Boriya (Chhindwara Block), Anjanpur and Sajwa (Harrai Block), Saliwada and Hingpani (Amarware Block), Rajthari and Jamuniya Khurd (Tamia Block), Sonapipree and charaikalan (Parasia Block), Machhera and Temni Kalan (Mohkher Block), Majiyapar and Ulhavadi (Bichhua Block) Singnna and Ppriyalakkha (Chourai Block), Bargabodi and Jam (Sausar Block), Ambada Khurd and Deorkhapa (Pandurana Block) were selected through random sampling method.

Dietary habits of non-tribal peoples - The dietary habits of the people generally depend upon economic condition of

* Department of Geography, Dr. Hari SinghGourCentral University, Sagar (M.P.) INDIA

the family having regional and cultural influence (Tiwari, 1989).

Dietary habits of tribal peoples - The tribals of the study area scarcely have any restriction of food. They eat fowls, beef, Pork, meat and fish. The common food of the labouringtribals of the study area is gruel of rice, boiled small millets in water due to poverty.

Food consumption pattern of the study area ‘

Table 1: Per Capita/Per Day Food Stuffs Consumption in Chhindwara District (M.P.)

S.	Food Stuffs	Standard Requirement	Average Actual Intake in Gram	Departure from standard requirement	
				Gram	Percent
1	Cereals & Millets	370.00	422.94	52.94	+14.30
2	Pulses	60.00	27.80	32.20	-53.66
3	Leafy Vegetables	75.00	41.35	33.65	-44.86
4	Other Vegetables	60.00	37.41	22.59	-37.65
5	Nuts and Oil Seeds	1.08*	1.08	-	-
6	Condiments and Spices	20.00	4.02	15.98	-79.90
7	Roots & Tubers	50.00	39.29	10.71	-21.42
8	Fats & Oils	38.00	5.95	32.05	-84.34
9	Milk & its Products	180.00	41.29	138.71	-77.06
10	Flesh Foods	30.00	19.29	10.73	-35.76
11	Sugar &Jaggery	40.00	7.98	32.02	-80.05
12	Fruits	37.00	18.72	18.28	-49.40
13	Liquor	24.50*	24.50	-	-

***Average Consumption of the study area.**

Cereals and millets intake

Table 2,3 & 4 (see in next page)

Table 5: Per Capita Daily Surplus (+), Deficit (-) Flesh Food intake Chhindwara (M.P.)

Standard Requirement- 50 g (By NIN)

S.	Name of Villages	Actual Intake in Gram	Departure from standard Requirement	
			Gram	Percent
1	Panth*	26.08	-3.92	-13.06
2	Boriya	21.44	-8.56	-28.53
3	Anjapur*	22.98	-7.02	-23.40
4	Sajwa	9.80	-20.20	-67.33
5	Saliwada*	74.42	+44.42	+148.06
6	Hingpani	39.14	+9.14	+30.46
7	Rajthari*	10.24	-19.76	-65.86
8	JamuniyaKhurd*	8.89	-21.11	-70.36
9	Sonapipree*	7.57	-32.43	-74.76
10	Charaikalan	-	-	-
11	Sagoniya*	7.22	-22.78	-75.93
12	Khajrifulsa	8.26	-21.74	-72.46
13	Machhera*	7.26	-22.84	-76.13
14	Temnikalan	24.78	-5.52	-17.40
15	Majiyapar*	7.89	-22.11	-73.70
16	Ulhavadi	21.70	-8.30	-27.66
17	Singnna*	20.06	-9.94	-33.13
18	Pipriyalakkha	16.75	-13.25	-44.26
19	Bargabodi*	29.23	-0.77	-2.56
20	Jam	31.56	+1.56	+5.20
21	AmbadaKhurd*	25.35	-4.65	-15.50
22	Deorkhapa	4.00	-26.00	-86.66
Average		19.29	-10.73	-35.76
Average of Tribal Villages		20.59	-9.41	-31.36
Average on Non-Tribal Villages		17.74	-12.26	-40.86

Table 6: Per capita daily surplus (+), deficit (-) liquor intake in selected villages of Chhindwara District (M.P.)

Study Area Average- 24.50 g

S.	Name of Villages	Actual Intake in gram	Departure from Study Area Average	
			Gram	Percent
1	Panth*	29.66	+5.06	+20.65
2	Boriya	8.67	-15.93	-65.02
3	Anjapur*	18.19	-6.31	-25.75
4	Sajwa	19.60	-4.90	-20.00
5	Saliwada*	47.16	+22.66	+92.48
6	Hingpani	16.77	-7.73	-31.65
7	Rajthari*	13.31	-11.19	-45.67
8	JamuniyaKhurd*	16.01	-8.49	-34.65
9	Sonapipree*	30.30	+5.80	+23.67
10	Charaikalan	9.47	-15.03	-61.34
11	Sagoniya*	49.07	+19.57	+79.87
12	Khajrifulsa	13.22	-11.28	-46.04
13	Machhera*	30.80	+6.30	+25.71
14	Temnikalan	9.91	-14.59	-59.55
15	Majiyapar*	27.97	+3.47	+14.16
16	Ulhavadi	11.68	-12.82	-52.32
17	Singnna*	79.43	+54.93	+224.20
18	Pipriyalakkha	11.18	-13.32	-54.36
19	Bargabodi*	28.26	+3.76	+15.24
20	Jam	7.57	-16.93	-69.10
21	AmbadaKhurd*	66.12	+41.62	+169.87
22	Deorkhapa	-	-	-
Average		24.50	-	-
Average of Tribal Villages		35.93	+11.43	+46.65
Average on Non-Tribal Villages		10.79	-13.71	-55.95

Conclusion - As far as the dietary pattern of the study area is concerned, the concepts, religious, economic status and availability of food stuffs are the determining factors. The dietary pattern of the study area varies from season to season on the availability of food stuffs, fruits, vegetables as they are not uniformly available in different seasons. The diet of the study area is found below the standard requirement in most of the food stuffs which can be improved through proper modification in agricultural pattern.In the study area, in 54.0 per cent villages intake of cereals and millets; in 95.0 per cent villages Intake of other vegetables; in 73.00 per cent village, intake of roots and tubers; in 64.0 per cent villages intake of Nuts and oilseeds; 91.0 per cent villages intake of fruits and in 86.0 per cent villages intake of flesh foods have been found below the standard requirements.

If the average of all food stuffs is compared with standard requirement, it can be clearly seen that except cereals and millets all other food stuffs intake is less than the standard requirement.

Acknowledgements - Author is grateful to the Head, Department of Geography for providing necessary facilities.

References :-

1. Agrawal, S.K. (1986): Geo-Ecology of Malnutrition : A Case study of Haryana Children, Inter India Publication, New Dellhi.
2. Sahaman, G.N.V. et al. (1987): The Urban People, their Dietary and Nutrition Status, Nutrition Vol. 21, No. 4. pp 14-22.
3. Gopalan, C. at al. (1971) :Diet Atlas of India, National Institute of nutrition (ICMR). Hyderabad, p. 118.
4. Gopalan, C. at al. (1980) : Nutritive Value of Indian Foods, (NIH), ICMR. Hyderabad, p. 37.
5. Murthy, Ramdas (1988) : Interface of Agriculture and Nutrition, Nutrition (NIN), Hyderabad. July Vol. 22. No. 4, pp. 24-30.
6. National Institute of Nutrition (1981): Health and Nutritional Consequence of Drought, Nutrition, October Vol. 21, No.4, pp 24-30.
7. Tiwari, P.D. (1984) : A study of Diet and Nutrition, Intake Pattern in Rural Areas of Satna District (M.P.). Hill Geographer. Vol. 3. No.2, pp 64-12.
8. Tiwari, P.O. (1988) : Agricultural Development and Nutrition A Case Study of Rewa Plateau, Northern Book Centre, New Delhi.
9. Tiwari, P.O. (1989) :Nutritional Problems of Rural India: A Case Study of Saugar. Damoh Plateau, Northern Book Centre, New Delhi.

Table 2: Per Capita Surplus (+), Deficit (-) Cereals and Millets intake in Chhindwara (M.P.)

Standard Requirement- 370 g (By NIN) **All India Average - 498 g**

S.	Name of Villages	Actual Intake in gram	Departure from standard Requirement		Departure from All India Average	
			Gram	Percent	Gram	Percent
1	Panth*	426.93	+56.93	+15.38	-71.07	-14.27
2	Boriya	608.88	+238.88	+64.56	+110.88	+22.26
3	Anjapur*	358.21	-11.79	-3.18	-139.79	-28.07
4	Sajwa	406.84	+36.84	+9.95	-91.16	-18.30
5	Saliwada*	366.85	-3.15	-0.85	-131.15	-26.33
6	Hingpani	442.79	+72.79	+19.67	-55.21	-11.08
7	Rajthari*	671.05	+301.59	+81.36	+173.05	+34.74
8	JamuniyaKhurd*	946.59	+576.59	+155.83	-194.85	+90.07
9	Sonapipree*	303.15	-66.85	-18.06	+448.59	-39.12
10	Charaikalan	340.33	-29.67	-8.01	-157.67	-31.66
11	Sagoniya*	274.55	-95.45	-25.79	-223.45	-44.86
12	Khajrifulsa	333.87	-36.13	-9.79	-164.13	-32.93
13	Machhera*	365.87	-4.13	-1.11	-132.13	-26.53
14	Temnikalan	317.32	-52.68	-14.23	-180.68	-36.28
15	Majiyapar*	406.01	+36.01	-9.73	-91.99	-18.47
16	Ulhavadi	265.44	-104.56	-28.25	-232.56	-46.69
17	Singnna*	441.44	+71.44	+19.30	-56.56	-11.35
18	Pipriyalakkha	359.41	-10.59	-2.80	-138.59	-27.82
19	Bargabodi*	416.16	+46.16	+12.47	-81.84	-16.43
20	Jam	353.53	-16.47	-4.45	-144.47	-29.01
21	AmbadaKhurd*	624.97	+254.97	+68.91	+126.97	+25.49
22	Deorkhapa	283.62	-86.38	-23.34	-214.38	-43.04
Average		422.94	+52.94	+14.30	-75.06	-15.07
Average of Tribal Villages		466.81	+96.81	+26.16	-31.19	-6.26
Average on Non-Tribal Villages		371.20	+1.20	+0.32	-126.80	-25.46

*Tribal Villages

Pulses intake

Table 3: Per Capita Surplus (+), Deficit (-) Pulses intake Chhindwara District (M.P.)

Standard Requirement- 60 g (By NIN) **All India Average - 30 g**

S.	Name of Villages	Actual Intake in gram	Departure from standard Requirement		Departure from All India Average	
			Gram	Percent	Gram	Percent
1	Panth*	38.24	-21.66	-36.10	+8.34	+27.80
2	Boriya	42.86	-17.14	-28.56	+12.86	+42.86

3	Anjapur*	46.64	-13.36	-22.26	+16.64	+55.46
4	Sajwa	45.10	-14.90	-24.83	+15.10	+50.33
5	Saliwada*	35.63	-24.37	-40.61	+5.63	+18.76
6	Hingpani	34.67	-25.33	-43.21	-14.67	+15.56
7	Rajthari*	8.18	-51.82	-86.36	-21.82	-72.73
8	JamuniyaKhurd*	9.77	-50.23	-83.71	-20.23	-67.43
9	Sonapipree*	45.44	-14.56	-24.26	+15.44	+51.46
10	Charaikalan	28.41	-31.59	-52.65	-1.59	-5.30
11	Sagoniya*	11.54	-48.46	-80.76	-18.46	-62.53
12	Khajrifulsa	9.08	-50.92	-84.86	-20.92	-69.73
13	Machhera*	18.62	-41.38	-68.96	-11.38	+37.93
14	Temnikalan	21.48	-38.52	-64.20	-8.52	-28.4
15	Majiyapar*	16.47	-43.53	-72.55	-13.53	-45.10
16	Ulhavadi	27.53	-32.47	-54.11	-2.47	-8.23
17	Singnna*	20.05	-39.95	-66.58	-9.95	-33.16
18	Pipriyalakkha	28.65	-31.35	-52.25	-1.35	-4.50
19	Bargabodi*	22.41	-37.59	-62.65	-7.59	-25.30
20	Jam	34.71	-25.29	-42.15	+4.71	+15.70
21	AmbadaKhurd*	25.34	-34.66	-57.76	-4.66	-15.53
22	Deorkhapa	40.85	-19.15	-31.91	+10.85	+36.16
Average		27.80	-32.20	-53.66	-2.20	-7.33
Average of Tribal Villages		24.86	-35.14	-58.56	-5.14	-17.13
Average on Non-Tribal Villages		31.33	-28.67	-47.78	+	+4.48

Leafy vegetables intake

Table 4: Per capita daily surplus (+), deficit (-) leafy vegetable intake Chhindwara(M.P.)
Standard Requirement- 75 g
All India Average - 23 g

S.	Name of Villages	Actual Intake in gram	Departure from standard Requirement		Departure from All India Average	
			Gram	Percent	Gram	Percent
1	Panth*	43.57	-31.43	-49.90	-20.57	+89.43
2	Boriya	34.20	-40.70	-54.26	+11.30	+49.13
3	Anjapur*	28.73	-46.27	-61.69	+5.73	+24.91
4	Sajwa	39.21	-35.29	-47.05	+16.21	+70.47
5	Saliwada*	41.92	-33.08	-44.10	+18.92	+82.26
6	Hingpani	50.32	-24.68	-32.90	+27.32	+118.39
7	Rajthari*	102.90	+27.90	+37.20	+79.90	+347.39
8	JamuniyaKhurd*	62.27	-12.73	-16.97	+39.27	+170.73
9	Sonapipree*	50.44	-24.56	-32.44	+27.44	+119.30
10	Charaikalan	39.48	-35.52	-47.36	+16.48	+71.65
11	Sagoniya*	21.67	-53.33	-71.10	-1.33	-5.78
12	Khajrifulsa	57.84	-17.16	-22.88	+34.16	+148.52
13	Machhera*	28.64	-46.36	-61.81	+5.64	+24.52
14	Temnikalan	24.79	-50.21	-66.94	+1.79	+7.78
15	Majiyapar*	28.69	-46.31	-61.74	+5.69	+24.73
16	Ulhavadi	50.07	-24.93	-33.24	+27.07	+117.69
17	Singnna*	50.16	-24.84	-33.12	+27.16	+118.08
18	Pipriyalakkha	55.93	-19.07	-25.42	+32.93	+143.17
19	Bargabodi*	48.72	-26.28	-35.04	+25.72	+111.82
20	Jam	25.24	-49.76	-66.34	+2.24	+9.73
21	AmbadaKhurd*	9.05	-65.95	-87.93	-13.95	+60.95
22	Deorkhapa	16.02	-58.98	-78.64	-6.98	-30.34
Average		41.35	-33.65	-44.86	+18.35	+79.78
Average of Tribal Villages		43.06	-31.94	-42.58	+20.06	+87.21
Average on Non-Tribal Villages		39.32	-35.68	-47.57	+16.32	+70.95

Social Settlement in Villages : Problems and Solution

Dr. Neeraj Kumar Soni *

Introduction - Shelters (Houses) are the most important need of human life after food and clothes. He experiences a great satisfaction in his house. Every men dreams for his house. But, some People are not able to fulfill his/her dreams in the difficult situation of life. Rapidly increasing population, scattering of joint family, growing inflation makes the huge problem of residential area. The middle classmen and the poors are tortured by the situation to live on footpath, slums and rental rooms. This problem is arising in urban as well as rural areas

Latest population enumeration is the evidence showing that rate of increase in population is more then the rate of house construction. The rate of increase in population was 23.5% & the rate of housing development was 18.5% in the decade of 1991-2001. Due to this irregularity, according to Rashtriya Bhavan Nirman Sansthan there were lack of 3 crore 10 lakh houses in the year 2001, in our nation (lack of 2 crore 6 lakh houses in rural area & lack of 1 crore 4 lakh houses in urban areas). After watching explosive situation of rising population, it is estimated that during the year 2011 lack of houses will be approx. 4 crore 10 lakh (lack of 2 crore 55 lakh houses in rural regions & lack of 1 crore 55 lakhs houses in urban area). 2/3 houses from the rural houses are made from mud, bamboo & grassy material. There is very less durability in case of these houses. Always there is a need to reconstruct these houses after rain. Lack of facilities like hygienic village, water fulfillment and good sanitation for waste in village.Residence is important for economical development and social justice for every citizen. Compassionating situation is there in rural area of our country, for problems related to residencies. 2/3rd residencies from rural houses area made from mud, bamboo and grassy material. There is very less durability in case of these houses. Always there is need to reconstruct these houses after rain.

Research area - We studied a research on residential settlement in District Bhind ,Tehsil Roun ,village Madijaitpura, Jagnnathpura, Buhare . In these villages the householders are 3857 ,3092, 2880 and there total population is 36367.The study is made on the selected 10% families(House Holder).

Research methodology - This studied a research on settlement problem in rural area on the basis of Primary and secondary Data . By the Questioners Survey of 1000 families shows the population of the above villages which is around 3780 Peoples. Selection of families for survey is done by arbitrary process. The selection of kachcha, pakka and mixed is done as per the schedule. In which classification is done as per the rooms of pakka house are shown by Graph, Table and percentage.

Objective - The main motive of research is to highlight the problems faced by the maximum population who live in rural area or kachcha house.

Table & Graph -1.1, Types of houses, Population % per house.

Home Type	No of	% HH	Population	%
Kachcha	570	56	2095	55.4
Pakka	295	30	1128	29.8
Mixed	135	14	557	14.7
Total	**1000**	**100**	**3780**	**100**

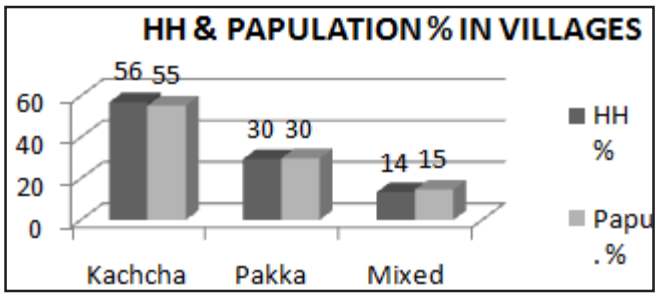

According to Research, the Population of the selected families was 3780 in which People living in Kaccha house 570 (56%) in pakka house 295(29.5%) and in mixed house 135(13.5%) population exists . in which 2095 Person live in kuccha house, 1128 Population live in pakka house. And 557 Person survive in mixed house. which is 55.5% ,29.8% and 14.7%of total living surveyed family per Person.

* Deptt. of Geography, Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

Graph -1.2, Types of Room, Population Distribution and Population Dencity per Room.

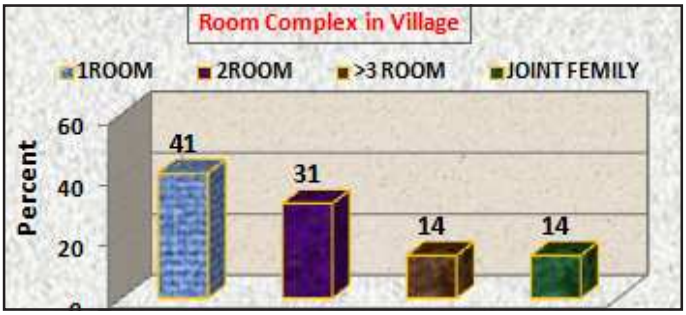

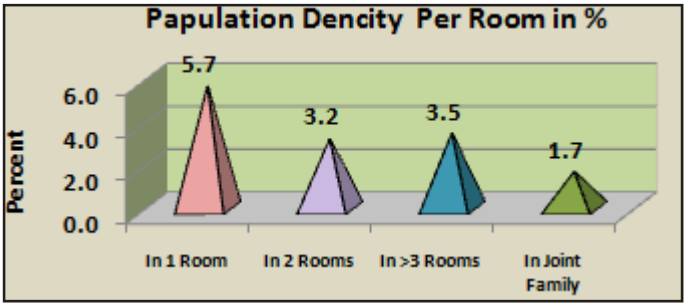

According to table no.1.2, Research area consist on 41% single room houses in which 54.5% population lives & there density is 5.1 people / room.

31% are Two rooms in which 24.9% population lives with 3.2 people /rooms density .

As per research 14% houses are Three rooms where 13.1% population lives and density is 3.5 people/room and 14% houses based on Joint family culture in second word mixed family there are 7.5% population habitat & survive of life with 2.1people / houses density.

Joint family sorting are biggest problem of family dispute in Indian society this is also the main causes of misbehavior, bed habits and social weakness for developing humanities

Settlement Problem - Shortage of shelters leads the families towards poverty and become as a load on society. Problem of houses are bond for labors and villagers. Research has prove the men who lives in slums are developing in human activities. woman's are loosing morality in them. The generous condition of shelters gives bad effect on the working efficiency of the People. Many diseases are spreading because of small space and many lives in untidy and darkness. Availability of drinking water, sanitation, electricity are the problems. Shortage of shelters made the Peoples roam around here and there.

The rapidly growing population is the biggest problem of short housing that's why increasing population should be aborted so that housing deficiency can be control. this can control problems like unemployment, crime , food poisoning, transportation and education. Financial education is the biggest problem in house making .

Residential Planning & solutions - Govt. and Non-Govt. sector - For removing the problem of rural area there are many residential planning started by govt. and non govt. organization which are of three types:

National Housing Policy - The govt. Started a policy "national housing policy" .this policy was accepted by the parliament in 1994 . govt. provided the basic necessities to the People at their residential area like proper sanitation, drinking water, electricity etc.nrw govt. has announced to pay 20 lakhs every year .

Helping institutions of housing Development - it is very essential to construct houses , after watching problems related to houses in our country.

The role of private sector in housing Development - People try to make house if they become economically well. in today's busy and difficult life, it is difficult for a person to make their own house. the business of private builder is rising to fulfill the growing demands of houses.

Role of public sector in housing Development - In the project of construction of houses central govt., state govt. and development authorities play an important role just after the partition of our country housing program were run for refugees till 1960. In which 5 lakhs People get shelter. in 1957 . under the communal development program authority gave 5000 per shelter.

Indira Awas Yojana - Rashtriya Rojagar Karyakaram in the year 1980 and Gramin Bhoomi hin Rojagar was started in year 1983, whose motive was to motivate the changes of rural employment together with the development of rural residence. In the beginning main motive of this program was to provide shelter to labors and ST/SC who are below poverty line. also helping per shelter is 20 thousand rupees.

Housing in urban Development corporation (HUDCO) - The main objective HUDCO is the development residential area establishment of new cities and material required for construction. HUDCO has developed the technical help and became financial help supporting institutions.

National bank of housing - on the basis of advice from many research committee the establishment nation bank of housing takes place of 9, July 1988 under the reserve bank of India. The first motive is to develop institution which can financially helping in construction of houses.

Life insurance corporation of India - Life Insurance Corporation of India gives 25% of his total treasure to those social projects like housing development, electricity production , water and road transportation. the LIC provides financial help to the state government as loan for 25 years, just for residential development LIC provides 15 yearly loan to HUDCO.

The role of co-operative sector in housing Development - In 1969 after the establishment of Indian national co-operative housing union housing rebellion run over. This unions are contributing in housing development buying lands for repair and renovation presenting the loan and enlighten the way of state co-operative institution. According to report by nation co-operative housing union of India 59% houses are make for poor or lower class Peoples, 30% for middle

class men. At present 85 thousand basic co-operative housing committee are running in India.

Conclusion - In urban and rural areas the growth of population is the main problem for lower settlement facilities. This problem has arisen the family distribution and nuclear family. Therefore the solution of this problem should be based on the development of residence in rural area. Increase in education and right guidance is necessary for success of planning. Then only the abolition of problems can be done and the dream of green village become true.

Keywords – Hygiene, Enumeration, Durability, Tortured, Irregularity, Explosive, Abolition.

References :-

1. S.K.Ojha- Ecology & Environment,2012&13] Page 182&210]
2. Yojna Ptrika -july,2011
3. The journal of Environmental management-Volume 64, Issue 3, March 2002, Pages 273–284
4. Blaikie , P.; Brookfield, H.- Land Degradation and Society 1987 pp. 320 pp
5. www.wikipedea.com
6. www.cieem.net

Table 1.2, Types of Room, Population Distribution and Population Dencity per Room.

Rooms Type	Madijetpura	Buhare	Jagnathpura	Total	%	Population	% of Popu.	Popu.Density / Room
1 Room	236	95	79	410	41	2060	54.5	5.1
2 Rooms	128	78	104	310	31	941	24.9	3.2
>3 Rooms	68	40	32	140	14	495	13.1	3.5
Joint Family	57	39	44	140	14	282	7.5	2.1
Total	**489**	**252**	**259**	**1000**	**100**	**3780**	**100**	**–**

****

Water Harvesting : Special Referece to Nagar Panchayat Gautampura

Dharmendra Singh Chouhan *

Abstract - Gautampura nagar panchayat has been facing very severe drinking water problems since 1995 in 2004, the newly elected council took an initiative to recharge water resources so as to improve the ground water level of the whole town one kilometer away from the town a stop dam type structure was constructed to stop the flow of rain water through rainy brooks during the monsoon the structure was constructed to got filled up with rain water within a short span of time a great increae in the groundwater level was observed at present the nagar panchayat is supplying water at 110 litres per capita per day to its citizens due to the stored water. the rise in the water table has been such that the town will have sufficient water for next 20 years.

Introduction - Gautampura is a nagar panchayat town located 55 kilometres from indore in madhya pradesh. gautampura nagar panchayat was constituted in 1981 and presently has 15 wards with an area of 9.5 sq. km. according to censu 2001 the town had a population of 13225 while the present population as per provisional figures of census 2011 is 15600.

There was no perennial source of water for the town , and the town has been dependent on ground water through tube wells since 1981. due to continous extraction, the ground water table declined to 100-150 feet and even up to 50 feet in some places by 1995. the water supply deteriorated during 1995-2004. this resulted in supply of drinking water being available only once in 30 days .subsequently , water supply was discontinued and water was supplied through the water tankers and the town was divided into tankers zone. this causes severe dissatisfaction among the citizens and one of the consequences of the poor water supply was that the percentage of below poverty line population went upto 72% and outmigration also increased.

Two startagies were attempted to improve the water supply situation during this period . the first was to fetch water from a major pond known as bandiya pond located at a distance of 15 km from the town but this proposal could not be taken up as a farmers and villagers dependent on this pond protested vigrously. the secpnd attempt was made by the public health and engineering department which formulated a scheme to bring from about 8 km by constructing a tubewell not only dried up but the quality of water was also found to be saline in nature.

Against this backdrop, the newly elected council in november 2004, under the leadership of the president, resolved to address the water supply problem by implementing a sustainable water supply system utilizing traditional knowledge and material at a low cost with community participation. the objective was to develop a sustainable source through ground water recharging by harvesting rain water.

Objective of the Initiative -

The objective of the initiative are :

1. To slove the drinking water problem
2. To quench the thirst of the people and work-planned and managed way to achieve this.
3. To recharge water resources so as to improve the underground water level of the whole town.

The council first took up the task of developing a good ground water source. for this purpose, the council held discussions with the elderly people of the town who had knowledge about the town and its ground water . their view was that the region was a water course at some point and possibly the river chambal had flown through the area and changed its course over the years. they advised the council to go for dug wells in that region. based on these suggestions, the council dug two wells and found good quality water at a depth of 50-70 feet. the water from these wells was adequate for the entire town.

The council discussed the issue of maintaining the water table in the wells with the community. the community members felt that the only way to maintain the ground water table was to recharge the ground water by rain water harvesting. for this purpose, they unanumously agreed to recharge all the existing sources such as ponds , lakes, nalas, etc., with rain water so that they would be full of water throught the year.

It was deided to construct a pond near the wells so that the water collected in the pond would percolate to the wells and be used for drinking purposes.

* Department of Geography, G.A.C.C. (D.A.V.V.), Indore (M.P.) INDIA

Special Features - One kilometre away from the town, a stop dam-type structure was constructed to collect the flow of rain water through rainy brooks .these rainy brooks were stopped at a place known as " kharcha". the soil of the surrounding area was removed and a 400 meter boundry wall was constructed. the phed opined negative about the scheme but the council and community with consenus to go ahead with the scheme. they adopted traditional methods such as planting of neems trees at the boundries of the pond and using of locals rocks to prevent the damage from the back water of chambal river and enhance conservation. Different departmentsd estimated the cost between rs. 20 to 30 lakh , but the nagar panchayat completed the construction work at a cost of rs. 13 lakh. at about half a kilometre distance another pond named "gautam sarowar" was also repaired and made ready for water recharging.

An innovative approach was adopted to keep the pond recharged by pumping water from the chambal river into the pond which in turn would recharge the well. however this required that the water in the chambal river be stored for a maximum number of days . to ensure this , the community came up with the idea of obstructing the flow and stopping the water at the nearby road bridge by constructing iron enclosures to the pipes

The community got iron closures for 26 pipes fitted in the chambal river bridge . the cost of the closures was only rs. 86000 this could be used to recharge not only the pond but also other tube wells and the wells in the region. because of the success of these ponds, the people in the region of gautampursa town, i.e., runji area, were inspired by the nagar panchayat and another pond was constructed . besides, a drain which passes near the most ancient "anchaleshwar mahadev" temple was cleaned , a stop dam was constructed and converted into a beqautiful lake.

Among the various hurdles, the biggest was non-availablity of electricity . for this madhya pradesh electricity board (mpeb) gave an estimate of rs. 3.7 lakh for laying electric lines from the power house to the wells in kharcha region. due to shortage of funds, this idea was dropped and the nagar panchayat used local labour and put in sincere and honest efforts that resulted in installaton of a transformer and electric lines with a very economic and affordable cost of rs. 65000 only . as wates was available in sufficient quantity from these wells , the water supply network was extended to those parts of the town. it has also resulted in cost saving for the nagar panchayat as expenditure on water supply through tankers has been reduced considerably .
another innovation initiated by the council is that the pumps fixed at the wells can be operated through mobile phones. a moblie phone is connected to the pump's switch board through digital equipment. by giving a missed call to the mobile phone , the pump can be operated . the council invested only rs. 6000 for these system which greatly facilitates pump operations as one person alone can look after not only pump operations but other water supply related activities as well.

Conclusion - The inovative intiative is lead to the substantial improvement in the water supply . firstly, the ground water table has improved across the town including the drinking water source wells. water is available throughout the year for distribution hence the town does not have to depend on water tankers. this has resulted in considerable cost savings for the nagar panchayat .

The cost of water supply operation has also come down as now the nagar panchayat does not have to operate various tubewells in the city for supply of water thus bringing down the electricity expenditure significantly . now , the towns income from water supply exceeds its expenditure . in march 2001, the nagar panchayat's expenditure per house hold connections was rs. 218 which has come down to rs. 43 . with extension of network the number of individual connections has also gone up from 9872 to 1465 during 2001 to 2010. total revenue generation has increased by 50%. the per capita availabilty of water has gone up from 30 lpcd to 105 lpcd.

citizens' confidence has also increased greatly people are highly satisfied with the present water supply and claim that it is probably the best in the entire region.

This has brought down unrest among the citizens and they even contributed to the capital cost of the scheme. the down has become a model for the other town which have adopted similar practices for recharging the ground water. as there is an increase in agricultural activity due to increase ground water table, it is expected that the percentage of bpl population will also come down.

References :-

1. Thornlogy, W.D. (1954). Principles of Geomorphology. John Willey ad. Sons., Ino. New York. pp. 145-147.
2. Lobeck, A.K. (1939). Geomorphology, an introduction to the study of landscaps.
3. www.groundwater.org
4. www.freedrinkingwater.com
5. www.rivers.gov
6. Books for national urban water awards 2010 in Nagar panchayat, Gautampura.

****

रतलाम जिले में भू-क्षरण कारण प्रकार स्थिति

डॉ. ज्योति जैन *

प्रस्तावना –भूमि को ठीक ही 'धरती माता' कहा गया है क्यों कि यह समस्त मनुष्यों, जन्तुओं और वनस्पतियों का पोषण करती है। प्रकृति ने मनुष्य को जो वरदान दिए है, उनकी लंबी सूची में कदाचित मानव जीवन के लिए जल एवं मिट्टी (भूमि) की महत्ता सर्वमान्य है। परन्तु मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा के लिये अधिक महत्वपूर्ण कहलाने वाली मिट्टी, इसकी अपेक्षाकृत वह उपरी परत है जों जीवों वनस्पतियों खनिजों के भिन्न-भिन्न अनुपातों से बनी है। कुछ इंच से लेकर कई फीट तक गहरी होती है। इसमें भी भूमि की 6 से 9 इंच तक की वह ऊपरी सतह अधिक महत्वपूर्ण है। जो उवर्कता का वास्तविक भण्डार है। इसी ऊपरी सतह से वनस्पति का पोषण प्राप्त होता है।जीव जगत के लिये भोजन कपडे आदि का मूल स्त्रोत है। इन स्त्रोतो की निरंतरता के लिये मिट्टी एवं जल बुनियादी महत्व रखते है।

हवा प्रकाश एवं जल की तरह मिटटी भी प्रकृति का बहुमुल्य उपहार है उद्योगों के लिये बहुत सा कच्चा माल प्रदान करने के अलावा यह खाद्य, चारा और रेशे भी प्रदान करती है। मिट्टी से उपजी यें वस्तुएँ औद्योगिक गतिविधियों को उच्चतर धरातल पर पहुँचाने के कारोबार मे तरक्की तथा व्यापार बढ़ाने में सहायक होती है।

मृदा एवं जल किसी देश के दो बुनियादी संसाधन है, उपजाऊ मृदा मानवीय स्थायित्व और सुरक्षा का स्त्रोत है। किसी देश उसकी जनसख्या की खुशहाली मृदा एवं जल संरक्षण पर ही निर्भर करती है।' **किसी राष्ट्र की समृद्धि और सुख का वहां की मिट्टी उत्पादकता के साथ गहरा संबंध हैं।'**

भू-क्षरण की स्थिति – भूक्षरण को मुख्य तीन अंग प्रभावित कर रहे है

(1) वर्षा (2) तापमान (3) वायु

इनमें वर्षा सबसे महत्वपूर्ण है।

भारत की अधिकांश भू संपदा में भू क्षरण के निरंतर स्पष्ट लक्षण दिखाई दे रहे है. इस कारण हमारे अन्नोत्तादयता में बढ़ोतरी और गरीबी उन्मूलन की क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है जलाऊ लकड़ी चारे और इमारती लकड़ियो का उत्पादन भी घरेलू मांग अनुपात में काफी कम रहा है बारानी भूमि के उत्पादन में गिरावट आ रही है।सिंचित उत्पादन प्रणालियों को टिकाऊ बनाए रखने मे भी भूक्षरण एक बड़ी बाधा है। भू क्षरण के सामाजिक आर्थिक ओर परिस्थितिक परिणाम भी दूरगामी है, इनका प्रभाव अनेक समुदायों और भौगोलिक क्षेत्रों पर पड़ता है। भूक्षरण का सबसे अधिक प्रभाव आदिवासीयों ग्रामीण क्षेत्रो के कमजोर वर्गो और भूमिहीन लोगों पर पड़ता है। जो कि पशुओं की चराई और जलावन के लिए सार्वजनिक भूमि की उत्पादन क्षमता पर बहुत अधिक निर्भर है। बढ़ती हुई आबादी का दबाव भूमि पर पड रहा हैं जिससे भू क्षरण की प्रक्रिया तेज हो रही है। निजी सामुदायिक और शासकीय जमीन पशु चराई की अधिकता संभवत: धरती की हरी चादर को समेटने का प्रमुख कारण है।

वायु अपरदन – शुष्क वायु अपरदन में खेतो के बारीक मृदा कण हवा के साथ उड़ जाते है और पीछे घटिया मिट्टी ही बचती है उड़ी हुई मिट्टी जिन स्थानों पर जाकर बैठती है, वहाँ कि उपजाऊ मिट्टी रेतीले कणो से पट जाती है।

नदी अपरदन – नदी अपरदन को सामान्यत: निम्नलिखित तथ्य प्रभावित करते है ।नदी में जितना अधिक प्रवाह होगा उसमें उतनी अधिक अपरदन क्षमता होगी।नदी में जल की मात्रा आयतन अधिक होने पर उसका वेग **भी अधिक होगा इससे नदी में कंकड़ पत्थर बहाने की क्षमता बढ़ जाती है।**

भूमि लवणीकरणज्ञ – खाद्यान्न उत्पादन मे आत्मनिर्भता प्राप्त करने की राजनीति का एक अंग रहा है, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार। 1950 के दो करोड़ हेक्टयर सिंचित क्षेत्र के मुकाबले आज 4.5 करोंड हेक्टयर क्षेत्र है सिंचित क्षेत्रों में बढ़वार का प्रमुख कारण भू जल स्तर की ऊचाई बढ़ी है।

भौतिक भू क्षरण – भौतिक भू क्षरण की समस्या सामान्यत: मृदा में जैविक तत्वों की कमी से संबंधित है जिसमें भूमि के पपड़ाने ओर अपवाह के बढ़ने की प्रवृति बढ़ती है।

भू-क्षरण के प्रकार –

भूमि/मिट्टी क्षरण – भूमि के ऊपर की एक या डेढ़ इंच मोटी परत में भूमि की वास्तविक जीवन शक्ति रहती है, वह भाग भूमि का सर्वाधिक उपजाऊ भाग होता है, भूमि के इस भाग का अनेक कारणों से क्षरण अथवा कटाव होता रहता है। भारत में भूमि क्षरण मुख्यत: तीन प्रकार से होता है।

परत क्षरण– भूमि की ऊपरी पर्त या सतह जो उपजाऊ ढीली तथा मुलायम होती है। उसे वर्षा के पानी का बहाव अपने साथ बहा ले जाता है इस प्रकार उपजाऊ मिट्टी पानी के साथ वह जाती है तथा भूमि की उपजाऊ शक्ति नष्ट हो जाती है। इस क्षरण की संज्ञा हाथ की हथेली से की जा सकती है जिसमें छोटी छोटी नसें इस प्रकार के कटाव को दर्शाती है।

क्षुद्र नालिका – वर्षा होने पर जल खेत के ढाल की और नन्ही नन्ही धाराओं के रूप मे बहने लगता है। ये धाराएँ भूमि कटाव करती है और उंगलियों के समान पतली नालिकाओं इन उथलें नालिकाओं द्धारा कटाव को **'क्षुद्र नालिका क्षरण'** की संज्ञा दी जाती है।

अवनालिका क्षरण – जब मुसलाधार वर्षा होती है, तब पानी भूमि को काट कर नालियॉ बनाता देता है तथा तेजी से बहता है। इस प्रकार भूमि पर नालियां बन जाती है।

भूस्खलन क्षरण – इस प्रकार का क्षरण पर्वतीय क्षेत्रों में देखने को मिलता है जब इन क्षेत्रों में भारी वर्षा होती है तब चट्टाने नमी से पूर्ण संतृप्त हो जाती है तो खडे ढालो पर ढीली चट्टानें एवं भू खण्ड स्खलित होकर निचे लुढक जाते है। इसे **'भूस्खलन क्षरण'** की संज्ञा दी जाती है।

वायु से क्षरण – जब हवा तेजी से चलती है तथा वह अपने साथ भूमि की उपरी सतह पर से मुलायम तथा उपजाऊ कणों को बहा ले जाती है।

* प्रोफेसर, श्री अरिहन्त कॉलेज ऑ प्रोफेसनल एज्यूकेशन, रतलाम (म.प्र.) भारत

भूमि क्षरण के कारण –

भूमि क्षरण के मुख्य कारण निम्न है –

जंगलों को काटना – प्राय: भूमि क्षरण वनों के विनाश के कारण होता है। भारत में वनों का विनाश बड़ी क्रुरता के साथ किया गया है। वृक्षों और पौधों तथा घास की जड़ों में नल के प्रवाह को रोकने की शक्ति होती है, जिसमें भूमि का कटाव नहीं होता है।

वनस्पति का विनाश – वनस्पति के नष्ट हो जाने से भूमि रेगिस्तान हो जाती है हवा के साथ मिट्टी के कण उड़ने लगते है और शनै: शनै: भूमि को ऊपरी सतह जो की अधिक उपजाऊ होती है, उड़ जाती है।

लगातार कृषि – एक ही स्थान पर निरंतर अनेक वर्षो तक खेती होते रहने के कारण भूमि की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है

भूमि या कुमारी खेती – देश के कुछ प्रदेशों असम, बिहार, उड़ीसा और म.प्र. के आदिवासी एक निश्चित स्थान पर खेती नहीं करते वे लोग कभी एक स्थान पर और कभी दूसरे स्थान और कभी तीसरे स्थान पर खेती के लिए स्थान बनाते रहते है। असम मे इसे झूमिंग मध्यप्रदेश में इसे बेवर या पाडे तथा पश्चिम घाट में कुआरी कहते है।

चारागाहों का दुरूपयोग – बिहार , उडीसा , मध्यप्रदेश , पंजाब तथा उत्तरप्रदेश के कुछ भागों में पशुओं द्वारा इस पर पर्याप्त नियंत्रण न होने के कारण स्थिति दिन प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है।

अत्यधिक वर्षा का होना – अत्यधिक वर्षा होने से जल का प्रवाह बहुत तेज हो जाता हैं जिसके कारण भूमि की ऊपरी परत कट कर बह जाती है। इसके अतिरिक्त भूमि के उबड होने से कृषि ठीक प्रकार से नहीं हो पाती ।

भूमि क्षरण के परिणाम – भूमि क्षरण से भूमि ही केवल नष्ट नहीं होती अपितु उसके दुष्परिणाम मनुष्यों को भी सहन नहीं होते है। इसी कारण भूमि क्षरण को रेगती हुई मृत्यु कहा जाता है। भूमि क्षरण से निम्नलिखित हानियॉ होती है।

असमतल भूमि – भू क्षरण से अनेक भागों की भूमि उबड़-खाबड़ हो जाती है जिससे वहां खेती करना कठीन हो जाता है।

मिट्टी जमा होना – नदियों तथा तालाबों में मिट्टी जमा हो जाती है, जिससे अनेक स्थानों पर नदियॉ अपना मार्ग बदलने को बाध्य हो जाती है फलत: उन नदियों के किनारे बसने वाले लोगों को कष्ट होती है।

भूमि के तत्वों का विनाश – मिट्टी के क्षरण से आवश्यक तत्व नाइट्रोजन एवं खनिज पदार्थो में निरंतर ह्रास होने लगता है जिसके फलस्वरूप भूमि की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है और उत्पादन अधिक नहीं हो पाता ।

जल यातायात में बाध्य – मिट्टी के क्षण होने से अधिकांश मिट्टी के कण नदियों एवं बदंरगाहों में जमा हो जाते है, इससे बन्दरगाहों एवं नदियों की गहराई कम हो जाती है

सिंचाई में कठिनाई – बांधो एवं बर्फ के जल प्रवाह द्वारा मिट्टी बहकर आने से उसमें अनेक स्थनों पर मिट्टी की पर्तें जम जाती है, जो कि सिंचाई मे अधिक कठिनाई उत्पन्न करती है।

बाढो की आशंका – भू - संरक्षण से जलाशयों अथवा बांधों मे भी मिट्टी भरने का डर रहता है। जिससें बाढ़ आने की आशंका उत्पन्न हो जाती है।

कृषि एवं कुटीर उद्योगों की हानि – मिट्टी के क्षरण होने से बहुत सी भूमि अयोग्य हो जाती है जिसका परिणाम कृषि उद्योगों पर मिश्रित रूप से पड़ता है।

खड़ी फसल को हानि – आंधी एवं तुफान से मिट्टी के कण उड़कर खड़ी फसल को नष्ट कर देते है। जिसके फलस्वरूप किसानों को अधिक हानि उठानी पड़ती है।

शक्ति – भू क्षरण का सबसे गंभीर दोष यह है कि क्षरित हुए स्थान की भूमि की उपजाऊ शक्ति कम हो जाती है, जिसे पुरा करने मे बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

क्षरण का प्रकार	प्रभावित क्षेत्र मिलियन में	कुल क्षेत्र का प्रतिशत
जल अपरदन –		
सतही मृदा हानि	142.40	
भूमि का विरूपण	12.80	
कुल योग	155.20	47.20
वायु अपरदन –		
सतही मृदा हानि	8.00	
भूमि का विरूपण	3.50	
अति उड़ान	1.50	
कुल योग	13.00	4.20
रासायनिक ह्रास –		
पोषक तत्वों की हानि	3.90	
लवणी करण	10.90	
कुल योग	14.80	4.50
भौतिक ह्रास –		
जलाटन	16.30	16.90

मिलियन :: 10लाख , 10 मिलियन :: 1 करोड़

स्त्रोत - विज्ञान और पर्यावरण केन्द्र 1991

भू–क्षरण और साद अनुमान विवरण–

बिबरण	मात्रा (मिलि मात्रा मिलियन टन मेयन टन मे)
कुल भू क्षरण	5.334
प्रमुख मध्यम और घाटी नदीयों मे गाद का जमाव	20.52
जलाशयों मे गाद का जमाव	480

स्त्रोत – विज्ञान और पर्यावरण केन्द्र (1983)

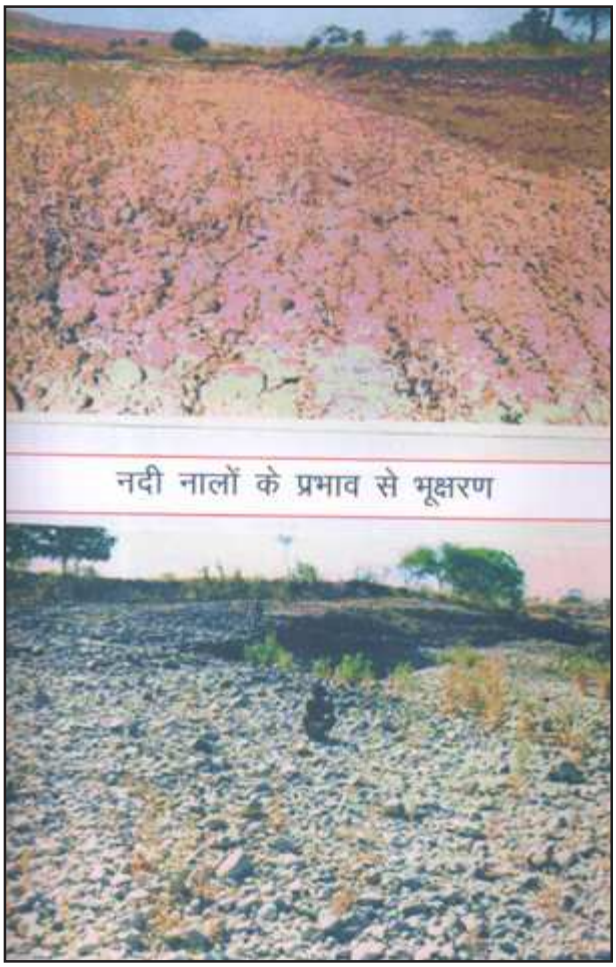

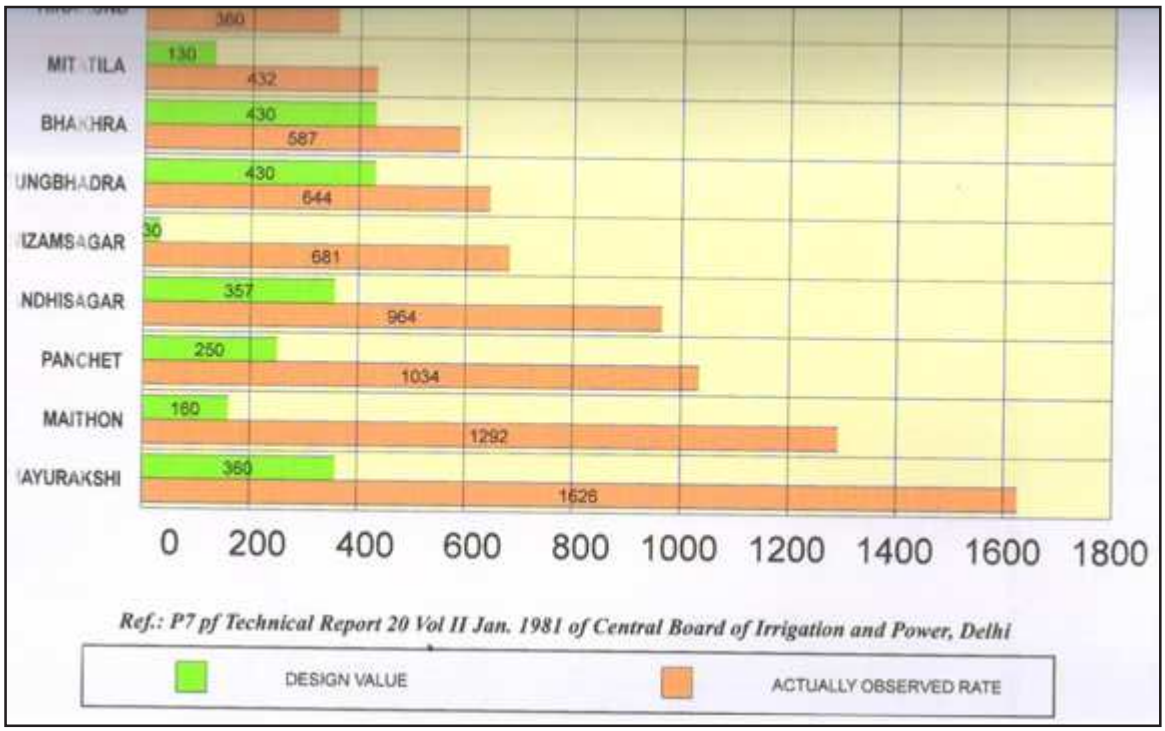
360
MIT TILA
130
432
BHA KHRA
430
587
UNGBHADRA
430
644
IZAMSAGAR
30
681
NDHISAGAR
357
964
PANCHET
250
1034
MAITHON
160
1292
AYURAKSHI
360
1626
0 200 400 600 800 1000 1200 1400 1600 1800
Ref.: P7 pf Technical Report 20 Vol II Jan. 1981 of Central Board of Irrigation and Power, Delhi
DESIGN VALUE
ACTUALLY OBSERVED RATE

****

शोध –प्रविधि में शोध समस्या का चयन

डॉ. बी. एल. पाटीदार * कैलाश डावर **

शोध सारांश – शोधार्थी का पहला कार्य समस्या का चयन करना होता हैं। शोध समस्या का केन्द्र बिन्दु होती है। एवं इसी पर सम्पूर्ण शोध आधारित होती है। समस्या का चयन न केवल नवीन शोधार्थीयों के लिए बल्कि अनुभवी व्यक्तियों के लिए भी कठिन कार्य होता है। कभी– कभी शोधार्थी ऐसी समस्याओं का चयन कर लेते है, जो शोध के योग्य नहीं होती हैं। प्राय: यह देखा गया कि विश्वविद्यालयों में शोधार्थी शोध हेतु पंजीकरण के पश्चात अपना प्रकरण या शोध का विषय ही बदलते हैं। इसका मुख्य कारण अनुपयुंक्त प्रकरण/समस्या का चुनाव ही है।

प्रस्तावना – प्राय: यह देखा गया है कि शोधार्थी को समस्या चयन हेतु पर्याप्त समय नहीं दे पाते हैं। अत: इस समय वे मूलत: अपने शोध निर्देशक पर ही आश्रित रहते है। शोध –प्रविधि के विद्धान यह मानते हैं कि सम्पूर्ण शोध का बहुतांश कम से कम 6 माह का समय समस्या चयन हेतु दिया जाना चाहिए। शरत में अनेक विश्वविद्यालयों में 6 माह का समय नहीं दिया जाता हैं लेकिन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने 2009 के नियम के तहत पी.एच.डी. करने वाले शोधार्थीयों को पंजीयन से पहले 6 माह का कोर्स वर्क करना अनिवार्य कर दिया जो कि शोध विषय के चयन में लाभप्रद होता है। इस पाठयक्रम का मूल उद्देश्य शोध हेतू पूर्व तैयारी तथा शोध प्रविधि में प्रवीणता होता है।

शोध क्षेत्र का निर्धारण – समस्या चयन शोधार्थी अपनी रूचि एंव विशेष अभिरूचि,जिज्ञासा,ज्ञान एंव अनुभव के आधार पर शोध हेतु क्षेत्र का चयन निश्चित करे। पी–एच.डी. के कई शोधार्थी पूर्व में स्नातकोत्तर एंव एम.फिल.उपाधी के समय लघु प्रबंध पूर्ण करते हैं,कई शोधार्थी उसी क्षेत्र में आगे शोध कर सकते है। उदाहरण के लिए यदि शोधार्थी ने स्नातकोतर एंव एम.फिल. स्तर पर निर्देशन एंव परामर्श विषय की कुछ इकाइयों पर प्रश्न कोष का निमार्ण किया हो, तब वह पी–एच.डी. में सम्पूर्ण प्रश्न –पत्र हेतु प्रश्नकोश का निमार्ण कर सकता है। अत: समस्या चयन हेतु शोधार्थी का पहला कार्य है, शोध क्षेत्र का निर्धारण करना। अब प्रश्न यह उठता हैं कि जिज्ञासु अनुसन्धानकर्ता के सामने वह पुरे क्षेत्र में अनेक समस्याएँ होगी उसे किसी एक समस्या का चुनाव करना होगा

शोध समस्याओं के स्त्रोत–: अनुभवी शिक्षक– विभिन्न शिक्षण संस्थाओं में प्रधानाचार्य एंव शिक्षक निरन्तर शोध कार्य में संलग्र रहते हैं,जिसके फलस्वरूप वे विभिन्न प्रकार की शोध समस्याओं से अवगत रहते हैं,कई जिज्ञासु विद्यार्थी अपने स्नातक एंव स्नातकोतर कक्षा में अध्ययन के समय उनके सम्पर्क में आते है, और कक्षा के बाहर तथा गोष्ठियों और महासभाओं में अपने प्राध्यापक एंव अन्य प्राध्यापकों से मिलकर चर्चा करनी चाहिए तब वे शोध की उपयुक्तता अथवा अनुउपयुक्तता के बारे में बताते है,साथ ही अन्य समस्या भी बताते, जिससे कि शोधार्थी को समस्या का चयन करने में सुविधा होती है।

अनुभव– अनुसन्धानकर्ता यदि जिज्ञासु है और सजग दृष्टि से कार्य करने वाला है तथा उसका दृष्टिकोण वैज्ञानिक है, तो उसका स्वयं का अनुभव अनुसन्धान के लिए अनेक समस्याएँ प्रस्तुत करता रहता है। किन्तु यह बात अनुभव विद्धों के लिए तो ठीक है, लेकिन नये शोधाथीयों एंव युवाओं के लिए सही नहीं है।

साहित्य सर्वेक्षण – सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षेण शोध– प्रबन्ध का एक अध्ययन जोड़ने तथा ग्रन्थ–सूची तैयार करने के लिए ही आवश्यक नहीं है, अपितु शोध के सभी स्तरों पर यह सहायक होता है, यथा समस्या का चुनाव,समस्या का पारिभाषीकरण तथा विश्लेषण एंव कथन, परिकल्पनाओं का निमार्ण, अध्ययन की सीमा का निर्धारण ,अध्ययन की रूपरेखा तैयार करने, न्यादर्श के चुनाव,आँकड़ों के सारणीयन ,व्यवस्थापन तथा विश्लेषण, सांख्यिकीय विधियों के प्रयोग तथा निष्कर्ष निकालने– सभी में यह महत्वपूर्ण शूमिका अदा करता हैं। किस क्षेत्र में कितना कार्य किस रूप में चुका है? अन्य शोधार्थीयों ने क्या परिकल्पनाएँ ली थी ? किस विधि से न्यादर्ष तथा ऑकड़ों का संग्रह किया है? सारणीयन एंव विष्लेषण करके क्या निष्कर्ष निकाले?

पहले किये गए कार्य की पुरावृत्ति – पुनरावृत्ति से बचाता है, इसके अभाव में शोधकर्ता एक कदम भी आगे नही बढ़ सकता,किन–किन क्षेत्रों में शोध हो चुका सूचना देता हैं,कालिक विश्लेषण में सहायक होते हैं, विषय चुनाव में सहायक होता हैं, समय, धन की बचत करता हैं, शोध समस्या के सीमाकन में सहायक होता है, अध्ययन की रूपरेखा तैयार करने में सहायक होता हैं, शोधार्थी को त्रुटियों से बचाता एंव सावधान रखता है, अध्ययन की विधि में सुधार कर श्रम की बचत करता है।

विभिन्न संस्थानों की शोध परियोजनाएँ – विभिन्न विश्वविधालयों में प्राध्यापकों के निर्देशन में निश्चित विषय पर कार्य करने हेतु कुछ छात्रवृतियॉ दी जाती है, जिन पर जिज्ञासु शोधार्थी अपना शोध कार्य कर सकते हैं। आय.आय.टी.कानपुर,देहली,बेंगलोर,राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एंव प्रशिक्षिण परिषद, शरतीय राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान परिषद तथा अन्य संस्थाएँ विभिन्न परियोजनाओं पर शोध कार्य करने हेतु शोधार्थीयों को आमंत्रित करती है। शोधार्थी अपनी रूची एंव योग्यतानुसार विषय चयन कर सकते है।

विद्धानों से चर्चा– शोध कार्य में संलग्र अनुभवी विद्धानों से चर्चा कर शोध समस्या का चयन किया जा सकता है। शोधार्थी इनसे पूर्व अनुमति प्राप्त कर विषय चयन हेतु परामर्श ले सकता है। विभिन्न सेमिनार ,परिसंवाद, कार्यशाला

* प्राध्यापक एंव विभागाध्यक्ष (भूगोल) अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, निवाड़ी, जि. टीकमगढ़ (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविघालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

एंव पुराभ्यास कार्यक्रमों के दौरान शोधार्थी अनेक विद्धानों के सम्पर्क में आता है। जिज्ञासु शोधार्थी विद्धानों के सम्पर्क से लाभ उठाकर समस्या चयन कर लेते है। विद्धानों से चर्चा करने से पूर्व शोधार्थी को अपना क्षेत्र निश्चित कर ले तथा सम्बन्धित साहित्य का पूर्ण अध्ययन कर ले।शोध समस्या चयन के पश्चात् एंव शोध प्रारम्भ करने से पूर्व शोधार्थी को अपने विषय का परीक्षण एंव विश्लेषण करना चाहिए।

शोध की अवधि– शोधक को यह ज्ञात होना चाहिए कि वह समस्या जो उसने शोधकार्य हेतु चुनी है, कितने समय में पूर्ण होगी ? प्राय: महत्वपूर्ण एंव सार्थक शोध में समय अधिक लगता हैं, शोधक को यह ज्ञान होना चाहिए कि प्रदत एंव आँकडे एकत्रित करने में उसे कितना समय लगेगा तथा प्रतिवेदन लेखन में कितना समय लगेगा ? सभी संभावनाओं को ध्यान में रखकर उसे समय का निर्धारण करना चाहिए जैसे –प्रदत कब तक एकत्रित हो सकेगे, शोध निर्देशक कितना समय दे सकेंगे एंव उपकरण बनाने में कितना समय लगेगा ?

शोधार्थी की योग्यता – शोधार्थी को अपनी योग्यताओं का विश्लेषण करने हेतु प्रश्न करना चाहिए कि क्या मैं इस शोध समस्या पर शोध सम्पन्न करने में सक्षम हूँ ? क्या मुझ में इतना ज्ञान ,कौषल है जिसके द्धारा मैं शोधकार्य सम्पन्न कर सकूँगा ? प्राय: यह देखा गया है कि शोध निर्देशक के कहने पर अथवा अल्पज्ञानवश शोधार्थी ऐसी समस्याओं का चयन कर लेते हैं।

शोधार्थी की रूचि– मनुष्य को अपने रूचि के अनुसार कार्य करने पर संतुष्टि होती है। शोधार्थी को समस्या चयन करते समय अन्य बातों के साथ–साथ अपनी रूचि का भी ध्यान रखना आवश्यक होता हैं । यदि कोई शोधार्थी अपनी रूचि से हटकर नये विषय को चून लेता हो तो वह उतने उत्साह एंव लगन से कार्य नहीं करेगा।

वित्तीय निर्धारण – शोधार्थी ऐसी समस्या का चयन कर लेता है, जिन पर अधिक धन लगता है। किन्तु जब उसे समस्या पर होने वाले खर्च का ज्ञान होता है, तब वह अपने विश्वविघालय अथवा अन्य संस्थाओं से अनुदान की मांग करता हैं अथवा विवश होकर अपने शोध की इतिश्री कर देता है। शोध के इसी पक्ष को ध्यान में रखकर विभिन्न संस्थाएँ जैसे विश्वविघालय अनुदान आयोग अथवा भारतीय राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान परिषद ने एक प्रपत्र निर्धारित किया है। जिसमें शोधार्थी को अन्य बातों के साथ –साथ स्टेशनरी,पुस्तकें,लिपिकीय कार्य, उपकरण, प्रदत विश्लेषण पर होने वाले संभावित खर्च का ब्यौरा देना होता है।

अत: इस हेतु यह आवश्यक है कि शोधार्थी को पूर्व में ही विशेषज्ञों एंव अन्य व्यक्तियों, जिन्होंने पूर्व में शोध कार्य पूर्ण कर लिया, से प्रश्नावली, मानचित्र, मानकीकृत उपकरण, कम्प्यूटर, स्टेशनरी, प्रिंटिग, टायपिंग, फोटा कापी, टेपरेकॉर्डर तथा शोध से सम्बन्धित अन्य सामग्री पर होने वाले व्यय की जानकारी प्राप्त कर लेना चाहिए तथा अनुदान न मिलने की स्थिति में वह कैसे अपना शोध कार्य सम्पन्न करेंगा।

प्रशासकीय सुविधाएँ – बिना प्रशासकीय सुविधाओं से शोधकार्य सुचारू रूप से सम्पन्न नहीं हो सकता। यदि शोधार्थी ने ऐसी समस्या का चयन किया है, जिस के लिए स्थान, प्रयोगशाला तथा विशेष उपकरण एंव उनके प्रशासन हेतु कुशल कर्मचारियों की आवश्यकता हो, अर्थात शोध बिना प्रशासकीय सुविधाओं के सम्पन्न नहीं हो सकती है।

शोध समस्या का महत्व – शोध किसी समस्या के समाधान तथा किसी अज्ञात तथ्य को ज्ञात करने हेतु की जाती है। समस्या का महत्व तभी हो सकता है उससे प्राप्त परिणामों का प्रयोग किया जा सकें।

निष्कर्ष राज्य–देश एवं विदेश तक उपयोगी हो ऐसी समस्याओं करना चाहिए । ऐसी समस्याओं पर शोध नही करना चाहिए है,जिनके निष्कर्ष अनुपयोगी हो।

समस्या की परिभाषा – अनुसंधान के लिए समस्या के चुनाव और उनके कथन के पश्चात सबसे महत्वपूर्ण कार्य समस्या की पारिभाषीकरण के मूल्य और उसकी व्यावहारिकता को स्पष्ट करेगा। अब प्रश्न यह उठता है कि समस्या के पारिभाषीकरण से तात्पर्य क्या है ? वास्तव में पारिभाषीकरण से तात्पर्य शोध अध्ययन क्षेत्र की समस्या को चिन्तन द्धारा सम्पूर्ण समस्या – क्षेत्र से बाहर निकालकर स्पष्ट करना है।

ज्ञान प्राप्त करने की विधियॉं :

1. व्यक्तित्व अनुभव – समस्या समाधान का सर्वाधिक परिचित एंव प्रयुक्त माध्यम है– व्यक्तिगत अनुभव शोधार्थी द्धारा अपने अनुभव से यह मालूम करता है। कि शोधार्थी अध्ययन क्षेत्र सर्वेक्षित ग्रामों में सर्वे के लिए जाता है ? यह पता करता है? कि क्षेत्र में कौन से मार्ग से जाने में कम समय में गांव पहुँच जावेगा। एंव किस समय बस आसानी से मिल जायेगी। यह शोधार्थी का व्यक्तिगत अनुभव हैं।

2. विशेषज्ञ – कठिन समस्याओं के समाधान हेतु मनुष्य विशेषज्ञों की सलाह लेता है। शादी तय करने के लिए बुजुर्गो की सहायता इसलिए ली जाती है क्योंकि उन्हें पर्याप्त अनुभव होता हैं। शोधार्थी को विषय विशेषज्ञों से सलाह लेना चाहिए। क्योंकि उन्हें विषय के बारे में पर्याप्त अनुभव होता हैं। लेकिन कभी–कभी वे व्यवस्तता के कारण तथ्य की अनदेखी कर अपनी राय ही दे देते है। अत: विशेषज्ञों की सलाह लेते समय शोधार्थी को विशेष सावधानी रखना चाहिए।

3. निगमनात्मक तर्क – निगमन विधि में शोधार्थी यह तर्क करता हैं कि एक समूह अथवा श्रेणी में सभी घटनाओं तथा नियमों को बताया जाता है। इसके पश्चात नियमों एंव उदाहरणों द्धारा सत्यता की जॉच की जाती है। क्योंकि यह विधि उच्च कक्षा के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी होती है। तो शोधार्थीयों के लिए महत्वपूर्ण हो सकती है। यह विधि शोधार्थीयों की स्मरण शक्ति को बढाती है, समय की बचत एंव शोध कार्य समय पर पूर्ण हो जाता है।

4. आगमनात्मक तर्क – निगमनात्मक तर्क से प्राप्त निष्कर्ष तभी सत्य होते हैं,जब शोधार्थी विविध उदाहरणों का अवलोकन करते हुए स्वयं निष्कर्ष निकालकर सामान्य नियमों का निमार्ण करना होता है, जैसे हम किसी वस्तु को फेंकते है तो वह नीचे की और गिरती है, इससे हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि पृथ्वी में आक्रषण;गुरूत्वाकर्षण शक्ति होती है, जिससे सभी वस्तुओं को वह अपनी और खींचती है। इस प्रकार यह विशिष्ट से सामान्य की और चलती है।

वैज्ञानिक विधि के सोपान :

1 . अनुभूत कठिनाई – मनुष्य के पास जब लक्ष्य तक पहुँचने का साधन नहीं हो, अथवा किसी अवांछित घटना की व्याख्या करने में असमर्थ हो, किसी वस्तु की विशेषता की पहचान न कर सके, तब वह कठिनाई का अनुभव करता है।

2. समस्या पहचान एंव परिभाषा – व्यक्ति निरीक्षण करता है और तथ्य एकंत्रित करता है तथा अपनी समस्या को अधिक स्पष्टता से परिभाषित करता हैं।

3. परिकल्पनाएँ – मनुष्य तथ्यों एंव प्राथमिक अध्ययन के आधार पर समस्या के समाधानों के लिए अनुमान लगाता हैं।

4. निगमनात्मक तर्क – मनुष्य निगमनात्मक तर्क से विचार करता हैं कि यदि परिकल्पना सही है, तब इसक क्या परिणाम होगें ?

5. परिकल्पनाओं का परीक्षण – मनुष्य उन परिकल्पनाओं का परीक्षण एंव निरीक्षण योग्य साक्ष्यों की खोज के आधार पर करता है। और परिकल्पना की सत्यता एंव असत्यता का निर्णय लेता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राय पारसनाथ एंव राय, सी.पी. : अनुसन्धान परिचय,लक्ष्मी नारायण अग्रवाल ,आगरा ,1973
2. अनुसन्धान प्रविधि सिद्धान्त एंव प्रक्रिया,एस.एन.गणेशन प्रकाशन, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली
3. रिसर्च मैथडलाजी,डॉ. त्रिवेदी, आर. एम.,डॉ. शुक्ला डी.पी. कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
4. पाल, हंसराज : शैक्षिक –शोध, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 2004.
5. अनुसन्धान- प्रविधि सिद्धान्त एंव प्रक्रिया,एस.एन.गणेशन, लोकभारती प्रकाशन,15-, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद।
6. Creswel, J.W.: Research Design, Sage Publication, India, Pvt. Ltd., 2011.

****

वेदों में पर्यावरण संरक्षण

महेश चन्द्र मीणा *

प्रस्तावना –परिवर्तनशील जगत् में मनुष्य के साथ–साथ प्रकृति में भी बदलाव आया हैं, परिवर्तित होते पर्यावरण और उसके परिणाम स्वरूप होने वाली ग्लोबल वार्मिंग आज धरती के अस्तित्व के लिए एक चुनौती बन चुकी हैं। अमेरिका के नासा संस्थान से जुडे प्रसिद्ध वैज्ञानिक जिम हेनसन ने दुनिया को चेतावनी दी है कि – ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन के विकरण एवं विनाशकारी असर को कम करने के लिए दुनिया के पास बहुत कम समय रह गया हैं।[1]

वर्तमान में प्रकृति के साथ जो खिलवाड़ हम कर रहे है – हरे–भरे खेत खलियान तेजी से कंकरीट के जंगलो में परिवर्तित होते जा रहे हैं, हम सभी मिलकर प्रकृति के उपादानों का जी भरकर दोहन कर रहे हैं, जिससे संरक्षण के स्थान पर उनका क्षरण हो रहा हैं। प्रकृति की चित्कार को अनसुना कर उसकी वेदना पर अट्टाहास करना हम सभी को महंगा पड़ सकता है, सभी इस सत्य से आज आँख मूंदे हुए है कि प्रकृति की यह मौन वेदना जिस दिन कहर बनकर बरसेगी तो उस दिन मानव का अस्तित्व गुजरे समय की वार्ता बन जायेगी। मानव सभ्यता आज जिन भौतिक सुखों को अपनी उपलब्धियाँ जानकर प्रसन्न हो रही है, वहीं उपभोक्तावादी संस्कृति, कल उसके विनाश का कारण बनेगी। आज का मानव अन्तहीन महत्वकांक्षाओं के भँवर में फंसता चला जा रहा हैं। प्राचीन युग में मानव की मूलभूत आवश्यकताएँ मात्र रोटी, कपड़ा और मकान थी किन्तु आज अतिउपभोक्तावादी जीवन –शैली ने उस प्राचीन व्यवस्था को नकार कर एक ऐसी परम्परा को स्थापित कर दिया है जिसमें वह सुविधा सम्पन्नता की चकाचौंध में अन्धा हो गया हैं। उसके सुख संसाधनों में कोई विराम बिन्दु नहीं । सुखों की मृगतृष्णा में वह रेगिस्तान में भटकते प्यासे मृग की तरह अंधाधुंध दौड़ता चला जा रहा है। अत्यधिक सुख सुविधाओं की चाहत के परिणाम स्वरूप बेतहाशा बढ़ती नाभिकीय प्रतिस्पधाएिं, वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोत, औद्योगिक क्रान्ति, बिजली पानी और ईंधन के संसाधनों की अत्यधिक खपत और प्रगति का प्रतीक बने रेफ्रिजरेटर, मोबाइल, एयरकंडिशनर, माइक्रो – इलैक्ट्रिक उपकरण एवं हवाई –यात्राएं मानव के जीवन का अपरिहार्य अंग बन चुकी हैं।

हम सब नहीं जानते हैं कि इस प्रगति के गर्भ में ही विनाश के बीज छिपे हैं। इस स्थिति में 2 से 3 डिग्री सेल्सियस का अतिरिक्त तापमान बढ़ना भी आज मानव के लिए इस धरती पर अन्त का कारण बन सकता हैं। ग्रीन हाउस गैसों के बढतें उत्सर्जन के फलस्वरूप बढ़ते तापमान से ग्लेशियरों का तेजी से पिघलना शुरू हो गया हैं। आर्कटिक, अण्टार्कटिक, एण्डीज, आल्पस और हिमालय आदि का हिम भी प्राकृतिक ढंग से पिघलना जारी है, जिससे समुद्र के जल – स्तर में अप्रत्याषित बढ़ोतरी हो सकती हैं। जो प्रलय कारी बाढ़ और सुनामी जैसी आपदाओं से पृथ्वी को निगलनें के लिए तैयार बैठी हैं। आज यदि हम समय रहते सचेत न हुए तो प्रकृति का मौन कहर बनकर कभी ऐसा टूटेगा कि समुची मानव –सभ्यता की यह इमारत अमेरिका के वर्ल्ड ट्रेड सेंटर की तरह पलभर में भरभराकर कुछ ही क्षणें में ध्वस्त हो सकती हैं, अत: जलवायु–परिवर्तन के भीषण ताण्डव नर्तन को विराम देना होगा तभी पर्यावरण सुरक्षा का स्वप्न साकार हो सकता हैं।

पर्यावरण सुरक्षा की जब कभी बात की जाती है, तो उसे वैज्ञानिक परिप्रेक्ष में देखा जाता है लेकिन वास्तविकता यह है कि हमारे साहित्य में पर्यावरण सुरक्षा पर अत्यधिक विस्तार से विचार किया गया हैं, धर्म और साहित्य में पर्यावरण की गम्भीरता एवं शुचिता को समझाया गया है। वैदिक साहित्य से ज्ञात होता हैं कि वेदों में सभी प्राकृतिक तत्वों के मानवानुकुल व उपयोगी बनने की प्रार्थनाएँ की गई हैं। इनकी प्रार्थना में रची गयी वैदिक ऋचाओं के माध्यम से जन साधारण को उनके संरक्षण करने एवं शुद्ध (प्रदूषण रहित) रखने की शिक्षा दी गयी हैं, प्रत्येक मांगलिक कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व आर्यो में शान्ति पाठ करने की परम्परा थी, जो आज भी हिन्दुओं में प्रचलित हैं। वेदों में परिवार, समाज, राष्ट्र, पृथ्वी तथा पर्यावरण की शान्ति का सन्देश दिया गया हैं–

'ऊँ द्यौ शान्तिरन्तारिक्ष शान्ति पृथ्वी शान्तिराप :
शान्तिरोषधय: शान्ति:।
वनस्पतय:शान्तिर्विश्वेदेवा: शान्तिब्रह्म शान्ति: सर्व शान्ति:
शान्तिरेव शान्ति सा मा शान्तिरेधि।'[2]

पर्यावरण की दृष्टि से शान्ति पाठ में ऋषि यह कामना करता है कि पृथ्वी, आकाश, वायु, जल, औषधियाँ व वनस्पतियाँ मानव के लिए शान्त अर्थात सन्तुलित एवं उपयोगी रहे। स्पष्ट है कि वैदिक ऋषि पर्यावरण के इन मूलभूत तत्वों के संरक्षण एवं सन्तुलित रहने के प्रति सचेत थे। मांगलिक कार्यो में सामूहिक रूप से शान्ति पाठ का गायन जन सामान्य को प्रकृति के इस मूलभूत तत्वों के प्रति श्रद्धा भाव जागृत कर इन्हें अशांत (प्रद्वित) न करने की प्रेरणा देते हैं।

ऋग्वेद3(4.57.1) में गायों के प्रति विशेष प्रेम व श्रद्धा बतायी है जिससे पशु प्रेम की भावना उस समय से ही चली आ रही है यह संकेत मिलता हैं। सोमरस वनस्पति का रस होता था और उच्च कोटि का पेय माना जाता था व भोज्य वस्तुओं में दूध, दही, और धी से बने पदार्थ प्रमुख होते थे। खीर, सत्तू, पुआ, आदि अनेक मिष्ठानों का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता हैं। अन्न का महत्व ऋग्वेद में विस्तार से वर्णित हैं। तत्कालीन सभ्यता के कृषि प्रधान होने के कारण धान्य और पशुधन ऋग्वेद की सबसे बड़ी सम्पत्ति मानी जाती थी, इन संकेतो से यह भी स्पष्ट हो जायेगा कि ऋग्वेद की संस्कृति एक प्रबुद्ध और विकसित मानव समाज का प्रतिनिधित्व करती है और हजारों वर्ष पुरानी होने पर भी उसमें आदि मानव की सी अपरिपक्वता नहीं पाई जाती है यहीं पर्यावरण के प्रति जागरूकता को भी प्रेरित करती हैं।[4] ऋग्वेद में स्पष्ट

* व्याख्याता (भूगोल) राजकीय महाविद्यालय, राजगढ़, अलवर (राज.) भारत

रूप से कहा गया है कि प्रकृति का अतिक्रमण तो देवों के लिए भी निषिद्ध हैं।[5]

'अतिक्रम्य न गच्छति मरूत : । मरूतो नाहरिष्यथ।।'

यजुर्वेद में भी प्रकृति का स्वरूप सभी जगह मिल जाता है, यजुर्वेद में रूद्र देवता को संबोधित जो मंत्र है, उनमें गणित का, समाज के विभिन्न कार्य कलापों का, आजीविकाओं, वर्गों आदि का ज्ञान निहित है। यजुर्वेद में वृक्षों को दुष्प्रभावों का शमन करने वाला कहा गया हैं–

वनस्पर्ति शमीतारम्।' [6]

वनस्पति: शमीता।' [7]

सम्प्रति पर्यावरण संरक्षण हेतु वृक्षारोपण को अत्यधिक महत्व दिया जा रहा हैं, उचित ही है क्योंकि वृक्ष पर्यावरण की प्रथम ईकाई हैं, पृथ्वी पर स्थित पर्यावरण प्रदूषण रूपी दोष को सुधारने का कार्य वृक्ष बड़ी ही सहजता से करते हैं। पृथ्वी के ऊपरी सतह में जल लाने का कार्य वृक्ष–वनस्पतियों की जडें करती हैं। इसके कारण वायुमण्डल में शीतलता एवं आद्रता बनी रहती हैं। कल–कारखानों, वाहनों से होने वाले वायु–प्रदूषण के विष को ये वृक्ष षिव की भाँति पीकर प्राणिमात्र का कल्याण करते हैं।

यजुर्वेद के **'रूद्राध्याय'** [8] में वनस्पतियों, वृक्षों, औषधियों, वनों, अरण्यों के लिए आदर उन्हें समृद्ध करने, उनका उपयोग लेने और शान्ति प्राप्ति आदि का संकेत किया हैं। पर्यावरण का प्रत्येक तत्व जब प्रदूषण रहित एवं सन्तुलित होता है, तब वह शिव है अन्यथा प्रदूषित होकर रौद्र रूप धारण कर लेता है। इस अध्याय के निम्नांकित मन्त्रों में वृक्षों, औषधियों और वनों को रूद्र कहा गया है–

वृक्षाणां पतये नम:। [9]

वृक्षाणां पतये नम:,पछीनां पतये नम:।[10]

रूद्र विषपान करते है और शिव अमृत दाता है, वृक्ष रूद्र हैं, क्योंकि ये वायुमण्डल में फैले विष (कार्बन–डाई–ऑक्साइड) का पान करते हैं। वृक्ष सूर्य के प्रकाश में अपने पत्तों में स्थित हरे (क्लोरोफिल) के द्वारा कार्बनडाईऑक्साइड को पुन: प्राणवायु में परिवर्तित कर देते हैं। यदि कार्बनड़ाईऑक्साइड और ऑक्सीजन का सन्तुलन बिगड़ जाता है, तो रौद्र रूप धारण करने लगते हैं। अत: रूद्र से प्रार्थना की गई हैं –

'या ते रूद्र शिवा तनु: शिवा विश्वाहा भेषजी।
शिवाय रूतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे।।' [11]

आशय है कि रूद्र हमारी रक्षा करे और हमें जीने के लिए प्रत्येक दिन सुखकर बनाए। सम्पूर्ण विश्व की समुन्नति हेतु वृक्षों, वनस्पतियों का संरक्षण आवश्यक हैं।

यजुर्वेद में **वृक्षाणां पतये नम:** [12] के द्वारा वनों की समुचित देखभाल करने वालों के प्रति नम्र भाव दर्शाया गया है तथा **'नमो वृक्षेभ्यों'**[13] कहकर वृक्षों के प्रति नम्रभाव तथा उचित देखभाल का स्पष्ट आदेश दिया गया हैं। सामवेद में ऋचाओं में स्तुतिया स्त्रोत के अर्थ में सामगान का उल्लेख हैं। साम का अर्थ सुखकर भी किया गया हैं, सामवेद में गीतियों के माध्यम से वृक्षों, वनस्पतियों के प्रति आगाध श्रद्धा व्यक्त कर पर्यावरण के प्रति प्रेम दर्शाया गया हैं। [14]

वेदों के क्रम में अन्तिम अथर्ववेद का नाम अथर्वा नामक ऋषि ने इन विद्याओं का साक्षात्कार किया इसलिए इसका नाम अथर्ववेद पड़ा। अथर्ववेद के '**भूमिसूक्त**'[15] में ईश्वर ने यह उपदेश दिया है कि अपनी मातृभूमि के प्रति मनुष्यों में श्रद्धा का भाव होना चाहिए। '**माताभूमि: पुत्रोऽहम् पृथिव्याम्**' अथर्ववेद पृथ्वी माता मुझ पुत्र के लिए दुग्ध आदि पुष्टिकारक पदार्थ प्रदान करे। नाना प्रकार के फल, औषधियाँ, फसलें, अनाज, पेड़–पौधे इसी भूमि पर उत्पन्न होते हैं, उन पर हमारा भोजन और जीवन निर्भर हैं। पृथ्वी सभी वनस्पतियों की माता एवं मेघ पिता है, क्योंकि वर्षा के रूप में पानी बहकर मेघ पृथ्वी का गर्भाधान करता है। पृथ्वी में नाना प्रकार की धातुएँ ही नहीं, वरन जल एवं खाद्यान्न, कन्दमूल भी पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं।[16]

अथर्ववेद में इन्द्र से वर्षा के जल से भूमि को सींचने एवं पोषण करने की प्रार्थना की गयी है–

'इन्द्र: सीतां निगष्हणतु तां पूषभि रक्षतु।
सा न: पयस्वती दुहामुत्तरा मुत्तरां पूर्णाभि रक्षातु।।' [17]

पृथ्वी के साथ ही वायु एवं अग्नि से भी उत्तम औषधियाँ देने की प्रार्थना की गयी है–

'शुनं सुफला वितुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनुयन्तु वाहान्।
शुनासीरा हविशा तोषमाना सुपिप्पला ओषधी:कर्तभस्मै।'[18]

इसी क्रम में जल जो कि मानव जीवन में पेय पदार्थ के रूप में, सफाई करने में, वस्तुओं को शीतल करने में, विद्युत उत्पादन में, नदियों, झीलों और समुद्र में सवारियों एवं सामानों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाने के लिए, अग्निशमन के लिए, कृषि सिचाई, उद्योग एवं भोजन बनाने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। जल के बिना जीवन सम्भव नहीं है। शुद्ध जल मनुष्य को दीर्घ आयु प्रदान करने वाला, प्राणों का रक्षक एवं कल्याणकारी है, यह भाव निम्न ऋचा में दिखाई देता है–

'शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।
शं योर भि स्रवन्तु न: ।।'[19]

अथर्ववेद का ही वह मन्त्र है, जो कहता है कि हम मित्र से भी निर्भय रहें, शत्रु से भी। जाने –पहचाने से भी निर्भय रहें, अनजाने से भी, रात्रि और दिन में सब दिशाओं में हम निर्भय रहें, सब दिशाएँ हमारी मित्र हों। [20]

'अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरोय :।
अभय नक्तमभयं दिवा न: सर्वा आषा मम मित्रं भवन्तु।।'

इस मन्त्र को और अधिक लोकप्रियता मिल गई थी जब संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा में भाषण देते हुए हमारी भू0पू0 प्रधानमन्त्री ने हमारी इन वैदिक कामनाओं का उल्लेख किया था। स्थापत्यकला, वस्त्र निर्माण कला, आभूषण बनाने की कला, चिकित्सा विद्या, शरीर विज्ञान, पाक विद्या, पशुपालन, पक्षी विद्या इस प्रकार की असंख्य लौकिक विद्याएँ इस वेद का विषय है, जो कि पूर्णतया प्रकृति को समर्पित है। तत्व विज्ञान की दृष्टि से ऋक को अग्नि का, यजु को वायु का, साम को आदित्य का और अथर्व को आप: (जल) का रूप बताया गया है।[21]

इसी प्रकार हम देखते हैं कि वैदिक कालीन समाज में न केवल पर्यावरण के सभी पहलुओं पर दृष्टि थी वरन् उसके रक्षा एवं महत्व को भी स्पष्ट किया गया था। वैदिक ऋषियों ने अनेक सूक्तों में पर्यावरण को स्वच्छ, सुन्दर, शिव एवं प्रदूषणमुक्त बनाने के लिए मानव को वृक्ष एवं वनस्पतियों के प्रति उनके क्या कर्त्तव्य है? क्या उपदेश दिया है? वैदिक जीवन एवं चिन्तन पर्यावरण से ओतप्रोत था। सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय पर्यावरण चेतना का संवाहक रहा है। वर्तमान में जब सम्पूर्ण विश्व पर्यावरण प्रदूषण की त्रासदी से जूझ रहा है, ऐसे में वैदिक ऋचाओं का यह संदेश कि **'वृक्ष एक,दो नहीं अपितु वनों के रूप में लगाओं'** क्योंकि वृक्षों से वर्षा का जल रूकेगा, वृक्षों से ही पृथ्वी का क्षरण रूकेगा, वृक्षों से ही पृथ्वी का भूकम्प से बचाव होगा व विश्व प्रदूषण से मुक्त होगा।

अत: आज आवश्यकता है कि नवीन विचारधारा का प्राचीन विचारधारा में समन्वय स्थापित किया जाये तथा वैदिक ऋषियों के उदात्त विचारों से

जन-जन को अवगत कराया जाए। तभी विश्व का कल्याण सम्भव है, क्योंकि वैदिक युग में दिये गये समाधान आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने वैदिक युग में थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यादव, वीरेन्द्र सिंह- भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिन्तन के विभिन्न आयाम-2010 पृ0सं. -
2. यजुर्वेद - 36.17
3. ऋग्वेद - 4.57.1
4. शास्त्री, देवर्षि कलानाथ-संस्कृत साहित्य का इतिहास-2009, पृ0सं0-27
5. यादव, वीरेन्द्र सिंह - पूर्वोक्त सम्पादकीय
6. यजुर्वेद - 28.10
7. तदैव - 29.35
8. तदैव - 16.1.66
9. तदैव - 16.18
10. तदैव - 16.19
11. तदैव - 16.49
12. तदैव - 16.18
13. तदैव - 16.17
14. शास्त्री, देवर्षि कलानाथ - पूर्वोक्त पृ0सं0 -31
15. अथर्ववेद -
16. शास्त्री - पूर्वोक्त पृ0सं0 -35
17. अथर्ववेद - 3.17.4
18. अथर्ववेद - 12.17.5
19. ऋग्वेद - 10.9.4
20. शास्त्री, कलानाथ - पूर्वोक्त - पृ0सं0 - 37
21. शास्त्री, कलानाथ - पूर्वोक्त - पृ0सं0 -32

****

Study Of Occupational Stress Among Married Working Women In Relation To Income

Dr. Mamta Barman *

Abstract - Today, thousands of women- young and old, skilled and unskilled, educated and semi educated contribute meaningfully to the working force of the nation. The Indian workplace is rapidly changing in accordance with the economic conditions, technology, corporate employment practices and demographic trends of the country.

Occupational stress is stress of work. It occurs when there is a discrepancy between the demands of the environment /workplace and an individual's ability to carry out and complete these demands.

Controlling money is generally the prerogative of males but as more and more women are opting for career, this trend is natural. This paper studied occupational stress among married working women in relation to income. It was based on 75 married women working in BSNL and was conducted by occupational stress index. Finding from this study show that income affect occupational stress.

Key words – Occupational-stress, Income, Married Working women.

Introduction - There is an ever-growing interest in women studies in various field at global level. Women's working outside their homes, as such, is not a new phenomenon. In rural India women have been working for a living in the fields along with their men. In urban India also women have been working for a long time. The married women's coming out of the four walls of their homes to seek gainful employment.

Today the attitude of men and of society has also changed. Society attitude towards a married women's employment has charged because of the economic strains of the times. Husbands, relatives and even member of the older generation approve, or do not mind, the educated daughter's, wife's and daughter-in-law's working, and rather want and encourage that they should help the family by supplementing its income.

The nature of work is changing at whirlwind speed. Occupational stress is a term used to define ongoing stress that is related to the workplace. Stress is an inherent factor in any type of vocation or career. It is defined in terms of its physical and psychological effects on a person (or thing). It is mental, physical or emotional strain or tension or it is a situation or factor that can cause this. At its best, the presence of stress can be a motivator that urges the individual to strive for excellence. However, excess amounts of stress can lead to a lack of productivity, a loss of confidence, and the inability to perform routine tasks. As a result, quality employees lose their enthusiasm for their work and eventually withdraw from the company. Stress can lead to emotional and physical disorders that began to impact personal as well as professional lives.

The four primary areas from which occupational stress originates include-task demands, physical demands, role demands, and interpersonal demands. Mohsin A. (2004) worked on – "role stress among women in the Indian information technology sector." The research finds differences in the level of stress between married and unmarried employees on several role stressors. Much of the research indicated that women reported higher level of stress compared to men. Misra and Thakar (1999) found that resources generated by employment (e.g. income, status) appear adequate not only to cope with stresses emanating from multiple roles, but to enhance well being.

The objective of the study is to discuss the effect of income on occupational stress in married working women. It was hypothesized that "there will be no impact of income on occupational stress in married working women".

Method - Sample consisted of 75 married women working in BSNL were selected for the study. Occupational stress Index developed by Shrivastav, A.K. and Singh, A.P. (1984) was administered individually for measuring the occupational stress. It consists of 46 items to be rated on 5 point scale. Higher the score on the test, greater is the occupational stress and vice versa i.e. lower the score on the test lower is the occupational stress.

Table

Comparative results of Occupational Stress in BSNL employees in relation Income.

Period of Marital Life	N	Mean	S.D.
<15000	62	136.18	13.74
15000-20000	6	128.00	20.36
>20000	7	112.29	12.22

*Assistant Profesoor (Psychology) Govt. P.G. College, Narsinghpur (M.P.) INDIA

The results presented in the above table it is clear that the value of 'F' ratio is 9.38 which is more than 4.92 the minimum value for significance at 0.01 level, which shows that there is impact of income on occupational stress in married female BSNL employees. Hypothesis is rejected here.

Thus, it may be concluded from the above results that there is an impact of income on occupational stress in married women working in BSNL. Those having income of less than 15000 have greater occupational stress in contrast to other higher income groups.

Result and Discussion - Employees in various departments experience work stress. However low and moderate level of stress stimulate the body and increase the ability to react (Mcgrath, 1981). Studies of Ross (1961) and Kapadia (1959) also point out that the many women are compelled by the stresses and stains of economic conditions to take up a carrier or a job in order to add to the family income. At the same time husband and family desire her to be obedient, submissive and very efficient as a house wife. Subudhi (1997) found that the main source of stress is from organizational climate, role conflict, career concerns, role overload, rate of life changes and mobility. Work may be s significant source of stress and that it results in negative consequences for both-individuals and organizations.

It is very essential that attitudes of both men and women have to be changed towards female workers. These days, the distinguishing line between a housewife and a career women is very thin. Indian women are handling both roles. Working women found that if she can deal with her emotions, she can manage her career and home, well enough. She know she has mind of her own and can live all by herself. By indentifying self-values, strengths and strong personal beliefs, she can create a good balance within herself. With the changed situation of wife's employment and with all attitudinal and situational changes that it implies, if readjustment and reassignment of roles and statuses as carried out with mutual consent and understanding, harmony is facilitated.

References :-

1. Devi U.L. (1982): Status and Employment of Women in India. B.R. Publishing House, Delhi.
2. Shrivastava A.K. (1999): Management of Occupational Stress Theories and Practice. Gyan Publishing house, Delhi.

Summary ANOVA table

Source of Variations	d.f.	Sum of Squares	Mean Square	F-Ratio	'P' Value
Between Groups	2	3773.07	1886.53	9.38	<0.01
Among Groups	72	14476.48	201.06		

Degrees of freedom – 2,72 Minimum value at 0.05 level – 3.13

Minimum value at 0.01 level – 4.92

****

पति-पत्नी के बीच बदलते अंतर्वैयक्तिक संबंधों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन (भोपाल नगर के सन्दर्भ में)

ममता व्यास *

प्रस्तावना – 'एक सफल विवाह से ज्यादा प्यारा ,दोस्ताना और अच्छा रिश्ता और कोई नहीं हो सकता' (मार्टिन लूथर)

प्रजनन की आवश्यकता,लैंगिक लालसा, आर्थिक आवश्यकताएं व्यक्तियों को आपस में विवाह करने को प्रेरित करती है। उपरोक्त तीन कारणों के अतिरिक्त भी अन्य कई कारण भी हैं, जैसे जीवन के सुखों तथा दुखो में भाग लेने के लिए जीवन साथी की आवश्यकताओं, स्नेह ,प्रेम श्रद्धा तथा आत्मीयता पाने की इच्छा मनुष्य को विवाह करने एवं परिवार की स्थापना के लिए अभिप्रेरित करती हैं। लेकिन सिर्फ विवाह का हो जाना मात्र तो इसके टिके या बने रहने की गारंटी नहीं होता न। विवाह के होने के बाद इसे बनाये रखना और जीवन भर इसका लाभ उठाना एक महत्वपूर्ण जिम्मेदारी होती है।

वर्तमान समय में तेजी से विवाह टूट रहे है और परिवार भी बिखर रहे हैं, परिवार जैसे प्राचीनकाल में थे अब वे वैसे नहीं रहे। हाल के दिनों में उनके स्वरूप तेजी से बदले हैं। इस बदलाव के परिणाम स्वरूप अनेक सामाजिक समस्याएं उत्पन्न हो रही है। हमारे घर अब पारिवारिक जीवन के पुण्यस्थल नहीं रहे, जो वे कभी हुआ करते थे। पाश्चात्य संस्कृति के आगमन से सूचना क्रांति की आमद से परिवारों का स्वरूप बदला है। भला विवाह इनसे कैसे अछूते रहते। सो विवाह विच्छेद तेजी से बढ़ रहे है एवं विवाह के टूटने से परिवार टूटे हैं। टूटने की इस प्रवृत्ति को समय रहते नहीं रोका गया तो सभ्यता का पतन निश्चित है। इसमें कोई संदेह नहीं कि आधुनिक परिवार को अनेक गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है । जिनका समाधाान अत्यंत आवश्यक है ताकि घर प्यारे घर बने रह सके।

समस्या के समाधाान के लिए समस्या के मूल में जाना अनिवार्य है। सामाजिक परिवर्तन के इस भयावह दौर में आपसी सम्बन्धों की नींव हिल गयी है। पहले अंतर्वैयक्तिक संबंधों की नींव हिली फिर समाज का ढांचा चरमराया और फिर विवाह टूटने लगे और अंतत: परिवार बिखरने लगे।

किन्हीं भी दो लोगों में जो एक दूसरे से विवाह करते हैं, उनके बीच समानता बहुत जरुरी है। दम्पति अपने दृष्टिकोण, मूल्यों और रुचियों में समान होते हैं। समानता समय के साथ न तो बढ़ती है और न घटती ही है।

'मित्रता, प्यार और सैक्स तीन महत्वपूर्ण कारक हैं, जो किसी भी अंतर्वैयक्तिक संबंधों का कारण बनते हैं। ये समान कारक उनको भी प्रभावित करते हैं, जो एक व्यक्ति दूसरे से विवाह कर लेते हैं'। समस्या कब और कैसे जन्म लेती है, क्या वजह बन जाती है कि विवाह टूट जाते हैं या उन्हें जबरदस्ती समाज के डर से घसीटा जाता है।

मनोवैज्ञानिकों, थैरेपिस्ट के माने तो वैवाहिक असंतुष्टि की वजह निम्न है। उनके अनुसार विवाह में समानता बहुत महत्वपूर्ण है। दो समस्याएं है, जिनकी उपेक्षा अक्सर की जाती है, पहली ये कि इस प्रकार सामान्य साथी पाना जो व्यक्ति आपकी तरह ही हो आप जैसा ही समान हो।

परिणामस्वरूप बहुत से असमानता के क्षेत्र हैं, अत: दो व्यक्तियों को एक दूसरे की विभिन्न भिन्नताओं को स्वीकार करना और उनके अनुसार समायोजन अवश्य करना चाहिए और दूसरी समस्या ये कि समानता के अतिरिक्त और अन्य कारक भी पार्टनर के चुनाव को प्रभावित करते हैं, शुरू में सम्बन्ध में यह सामान्य होता है कि विषमताओं के क्षेत्र को नजर अंदाज कर दिया जाये या कम कर दिया जाये दूसरे व्यक्ति का आकर्षण, सैक्स,उमंग सम्पत्ति या अन्य बातें पार्टनर के चुनाव को प्रभावित करती हैं। असमानताएं विवाह के शुरू में नगण्य लगती है लेकिन समय के साथ आकर्षण कम हो जाता है। सैक्स भी कम महत्व का विषय रह जाता है। और सम्पत्ति को अपना समझा जाने लगता है। इस स्थिति में विभिन्न विषमतायें अप्रत्याशित रूप से अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाती है और विवाह में असंतुष्टि घर कर लेती है।

विवाह हमारी सामाजिक संस्थाओं में सबसे आधारभूत व अंतरंग संस्था है, लेकिन यह संस्कृति, टेक्नॉलाजी और आर्थिक ताकतों के बदलावों से प्रभावित भी होती है। समय के साथ विवाह भी बदल रहे हैं आधुनिक विवाह में ऐसा क्या है, जो पुरानी शादियों में नहीं था? ऐसा जीवनसाथी जो यह जानता है कि आप वास्तव में क्या है और वह न सिर्फ इसे स्वीकार करता/करती है बल्कि उसमें सुधार भी लाने का प्रयास करता/करती है। अपने पति स्टीफन एडलर के साथ मिलकर 2015 में विवाह के ब्योरों वाली 'मेरिज बुक' तैयार करने वाली लिजा ब्रंवाल्ड कहती है आप जो वादा करते हैं, वह सिर्फ वफादार व सच्चे रहने का नहीं बल्कि एक-दूसरे के सर्वश्रेष्ठ को बाहर लाने का भी है।' और जब आपका साथी आपकी पहचान,आपका वजूद मिटाने की कोशिश करता है या स्पेस नहीं देता तो दूरियां आती जाती हैं, फलस्वरूप विवाह दरकने लगते हैं।

पूर्व में हुए अध्ययन इस प्रकार है :-

1. लोपेज और ब्रेनन (2000) इस शोध अध्ययन में बताया गया कि स्वस्थ सम्बन्ध सुरक्षित लगाव की एक नींव पर बनते हैं। व्यस्क लगाव के माडल सम्बन्ध की अंतरंगता से सम्बंधित आंतरिक अपेक्षाओं तथा वरीयताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं जो उनके व्यवहार में परिलक्षित होता है।

*शोधार्थी,श्री सत्य सांई यूनिवर्सिटी आफ टेक्नोलॉजी एंड मेडिकल साइंस, सीहोर, जिला -भोपाल (म.प्र.) भारत

2. राबर्ट स्टर्नबर्ग (2016) अमेरिकन मनोविज्ञानी राबर्ट स्टेनबर्ग का, प्रेम के त्रिकोण पर अध्ययन मनोवैज्ञानिक राबर्ट स्टर्नबर्ग ने 'प्यार के त्रिकोणीय सिद्धांत' में बताया कि प्रेम तीन भावनाओं का मिश्रण है:-

अ) जूनून या शारीरिक आकर्षण

ब) घनिष्ठता या निकटता की भावनाएं।

स) प्रतिबद्धता,

जिसमें सम्बन्धा को शुरू करने तथा बनाये रखने का निर्णय भी शामिल है। उपरोक्त तीनों भावनाओं की उपस्थिति प्रेम की पराकाष्ठा को दर्शाती है, जो चिरकालीन होता है, इसके अतिरिक्त वैवाहिक संबंधों में घनिष्ठता और जूनून की उपस्थिति वैवाहिक संतुष्टि की द्योतक होती है।

जॉन गोटमैंन का जादुई अनुपात का सिद्धांत- (2016)मनोवैज्ञानिक जॉन गोटमैंन ने कई वर्षों तक विवाहित जोड़ों का अध्ययन करने के बाद सफल शादियों के लिए 'जादुई अनुपात' के सिद्धांत को प्रस्तावित किया। इस सिद्धांत के अनुसार एक शादी की सफलता के लिए, जोड़ों की सकारात्मक और नकारात्मक अंत:क्रियाओं का औसत अनुपात 5-1 होना चाहिए।यदि यह अनुपात 1-1 के निकट पहुँचता है, तो तलाक की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। नकारात्मक संबंधों की अंतर्वैयक्तिक अंत:क्रियाओं में आलोचना,तिरस्कार, बचाव और असहयोग शामिल हैं। समय के साथ उपचार इन अंतर्वैयक्तिक रणनीतियों को शिकायत प्रशंसा जिम्मेदारी स्वीकारने और स्वयं को शांत करने जैसी अधिक सकारात्मक रणनीतियों में परिवर्तन करने की चेष्टा करता है। इसके अतिरिक्त अंतर्वैयक्तिक सम्बन्धों के भागीदार भावनात्मक दूरी से बचने के लिए कठिन विषयों में सकरात्मक घटकों को शामिल कर सकते हैं।

उद्देश्य :

1. वैवाहिक जीवन में जीवन साथी की आय के स्तर के कम या ज्यादा होने से पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना है।
2. वैवाहिक जीवन में इंटरनेट से पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना है।

परिकल्पनाएं – इस अध्ययन के लिए दो शून्य परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया।

1. वैवाहिक जीवन में जीवन साथी की आय के स्तर का उनके अंतर्वैयक्तिक संबंधों पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. इंटरनेट की वजह से पति-पत्नी के बीच संबंधों में कोई सार्थक प्रभाव नहीं होते।

अध्ययन विधि – शोध में सम्पूर्ण जनसंख्या को सम्मिलित किया जाना संभव नहीं हो पाता है। अत: सम्बंधित जनसंख्या के कुछ अंश का चयन कर उसे शोध क्रिया में समाहित किया गया है।

प्रस्तुत शोध में भोपाल जिले के 100 पति-पत्नियों का चयन किया गया।

अध्ययन की परिसीमाएं – प्रस्तुत शोधकार्य हेतु निम्नांकित परिसीमाएं निर्धारित के गई है।

1. प्रस्तुत शोध में पचास विवाहित पुरुषों का चयन किया गया एवं पचास विवाहित महिलाओं का चयन किया गया।

उपकरण – प्रस्तुत अध्ययन में स्वनिर्मित प्रश्नावली को शामिल किया गया है। जिसमें वैवाहिक गुणवत्ता संबंधी 15 प्रश्न पूछे गए।

निष्कर्ष – इस शोध के परिणाम बताते हैं कि पति - पत्नी के बीच अंतर्वैयक्तिक संबंधों के बिगड़ने के मूल में आय के कम या ज्यादा होने का प्रभाव पड़ता है। एवं इंटरनेट मोबाइल या लेपटॉप के अत्यधिक प्रयोग से भी वैवाहिक संबंधों पर प्रभाव होता है।

सुझाव – विवाह होने के बाद इसको बनाये रखने के लिए क्या करे ? सबसे पहले तो यह है कि नफरत को बिलकुल टाला जाए। जीवन साथी के या उसकी कमाने की क्षमता पर अपमानजनक टिप्पणियाँ ना कि जाये। उनके काम में दखल ना दिया जाये । उसकी चिंताओं को ख़ारिज कर देना या बातचीत न करना, इन छोटी-छोटी बातों से बड़े झगड़े शुरू होते हैं, इन्हें बढ़ने से पहले ही रोक देना जरुरी होता है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रेनॉल्ड्स, कैरेन-'अंतर्वैयक्तिक संभाषण का प्रक्षेपण मॉडल क्या है और इसके साथ क्या गलत है'(1997)
2. शैंडलर, डेनियल-(4 सितम्बर 2009 संभाषण का प्रक्षेपण मॉडल)
3. लोपेज ब्रेनन (2000) का अध्ययन
4. राबर्ट स्टर्नबर्ग का प्रेम त्रिकोणीय अध्ययन
5. जॉन गोटमैंन का 'जादुई अनुपात का सिद्धांत'(10 जून 2016)

****

Marriage As A Discord In Anita Desai's Novels

Dr. Vishal Sen *

Abstract - It is the major intention of this paper to unfold the gloomy and dark sides of matrimonial bonds in Anita Desai's fiction. This paper intends a critical evaluation of her novels in the reference of marriage as a major theme. Through this paper, marriage is traced as a disharmony. Marriage is explored as a fatal and deadly act in her fictional world. Marriage is presented as a cause of total failure. A complete absence of love is projected in Desai's novels.

The major responsible factors of failures of wedlocks in Desai's novels are temperamental incompatibility, socio-economic and psycho-political issues, East-West encounter and so many others. The final results of such afflicted matrimonial bonds lead emotional disappointment and psychological depression. The female protagonists only become the victims of such horrible matrimonial bonds.

Keywords - Matrimonial bonds, temperamental incompatibility, east-west encounter, psychological depression.

Introduction - Anita Desai's fictional world is full of the theme of marriage, as a discord. Almost in all her novels, the subject of marital disharmony has been treated. The problems of the female characters due to their unsuccessful wedlocks are of primary concern. Such characters suffer from afflictions and predicaments just because of the dangerous and fatal matrimonial clutches, they are gripped in. Through this paper a modest attempt has been made to study the theme of marriage, as the apple of discord in the novels of Anita Desai.

Marriage, as a discord in Anita Desai's novels - Treatment of marriage in Anita Desai's novels has really been a matter of attraction. In most of her novels, she has painted the colour of marriage. The theme of marriage is projected throughout her novels. Although marriage is considered as a pure and essential institution that provides a legal right to men and women relationship. The changing time also has changed the definition of marriage. In the course of time, the other dark face of marriage has been emerged. Anita Desai has exposed the negative aspects of marriage. She has unfolded the marital dissonance and inharmonious man-woman relationship. Marriage is proved to be a disastrous theme in her novels. Total absence of love results in marital disharmony. Anita Desai has explored incompatible couples-acutely sensitive and emotional wives and dutiful but ununderstanding, rigid and insensitive husbands. Such miserable conditions lead Desai's heroines to existential problems.

In her first novel, Cry, the Peacock, Anita Desai has highlighted a married couple-Maya and Gautama. Both live like aliens under the same roof. Both possess contrary temperaments. Maya is romantic, imaginative and hyper sensitive lady. Gautama is rigid, prosaic and insensitive. Maya suffers from existential miseries due to her unsuccessful marriage, her father fixation, the prophecy of an albino astrologer etc. This marriage is presented as a complete failure. Maya feels identity crisis, faces utter loneliness and suffers from futile and hollow existence. Finally Maya kills Gautama and drowns in deep and gloomy depression. Marriage as a discord is also projected in Desai's another novel, Voices in the City. Monisha's married life is shown as a hellish experience. The causes of her fatal wedlock are childlessness, temperamental differences between her and her husband Jiban, overcrowded joint family etc. Her life is deprived of any happiness. At last Monisha commits suicide. Another character Nirode considers marriage as a destructive, negative and decadent one.

Sarah is another victim of terrible marriage in Bye Bye Blackbird. Being a British girl, Sarah marries an Indian, Adit Sen. Cultural alienation is the biggest cause of Sarah's afflictions. Her inter-racial marriage makes her life meaningless. Sarah feels ashamed among white people. Adit also imposes Indian manners of life. Ultimately Sarah is lost in utter desolation. In Where Shall We Go This Summer, the novelist has presented marriage of Sita and Raman as catastrophic for these both. An incompatible temperament is the basic reason for failure of this marriage. Sita is hyper-sensitive, introvert, poetic and keen-eyed while Raman is rational, extrovert and practical. Sita's life becomes futile and empty. She does not derive any marital pleasure of satisfaction from her lonely monotonous, dull and disgusted married life.

The negative picture of marriage has also projected in the novel Fire on the Mountain. Mr. Kaul's extra marital affair with Miss David is the cause of discord between them. Nanda Kaul suffers from meaninglessness, existential dilemma and rejection, to her hazardous married life. Mr. Kaul just keeps Nanda as a sex object. Rakesh's bad habits make his wife Tara's life colourless and tiring. Finally marriage is proved to

* P.G.T. (English) Sendhwa Public School, Sendhwa, Distt. Barwani (M.P.) INDIA

be unsuccessful. In Clear Light of the Day, Das children suffer because of their parents' unsuccessful marital relationship. Tara is dominated by her husband Bakul. The marital lives of Bim, Mira masi, Misra daughters, Jaya and Sarla are also full of matrimonial disharmony.

Anita Desai has highlighted marital discord between Deven Sharma and his wife, Sarla in the novel In Custody. The major causes of unhappy married life of this couple are Deven's temporary job and extreme devotion for art, Urdu poetry, name and fame etc. Sarla's matrimonial dreams are completely shattered. Her married life remains loveless. In Journey to Ithaca, the unsuccessful married life of Matteo and Sophie is pictured. Matteo searches spiritual enlightment, but for Sophie earthly love is meant for enlightment. They come to Mother's hermitage, where Matteo devotes himself to Mother. Sophie is completely neglected. Matteo's spiritual journey is the responsible factor for their failed wedlock.

Conclusion - To sum-up, it becomes crystal clear that, marriage as sublime theme has provided new dimension to understand, study and analyse Anita Desai's novels. The question of women's existence is raised through the subject of marriage, as a dissonance. Due to matrimonial discord, the women portrayals confront scary experiences of terrible married life. They just start bearing life-time alienation, existential dilemma & identity crisis. They begin contemplation that, are they living entities or dead. Unsuccessful marriage is proved to be a big cause of many unhappy couples. They suffer from meaninglessness, rootlessness and frustration.

Suggestions and findings - Finally, it is found out that through her novels, Anita Desai has pictured the negative aspects of marriage. Marriage remains just an enigma for the major female protagonists of her novels. The fictional regions of Desai are full of deadly consequences of inharmonious matrimonial bonds. Due to such marital discords, the lives of Desai's characters become rootless, meaningless and hopeless. They feel alienation that results in self-hate, self-persecution. They suffer from paranoia, disillusionment, frustration and psychosis. These female characters become neurotic, psychotic, abnormal, crazy and eccentric. Their lives meet complete chaos and disorders. The marital disharmony is transformed into life time pessimism, disappointment and despair.

Anita Desai has made us think over the issue of marriage as a discord through her fiction. The modern people should try to avoid those things that prohibit a continuous happy married life.

References :-

1. Dubey, Vinay: A Study of Love, Sex and Marriage in Anita Desai's Novels. (Bareilly: Prakash Book Depot, 2008).
2. Khanna, Shashi: Human Relationship in Anita Desai's Novels. (New Delhi: Swarup and Sons, 1995).
3. Prasad, Madhusudan: Anita Desai: The Novelist.(Allahabad : New Horizon, 1981).
4. Sharma, R.S.: Anita Desai. (New Delhi: Arnold Heinemann, 1981).
5. Tandon, Neeru: Anita Desai and Her Fictional World. (New Delhi: Atlantic Publishers, 2008).

****

The Autobiographical Elements In Ravinder Singh's ' I Too Had A Love Story'

Tripti Lakra *

Abstract - Ravinder Singh, a writer of the Digital Age, is the bestselling author of his love trilogy- I Too Had a Love Story, Can Love Happen Twice? and Like It Happened Yesterday. He has edited and compiled two crowd sourced anthologies named " Love Stories That Touched My Heart" and " Tell Me A Story ". His debut novel " I Too Had A Love Story " is autobiographical in nature that has touched millions of hearts.The author is of the opinion 'that not all love stories are fortunate enough to have a happy ending'. Ravinder uses this book as an opportunity to relate his own love story beautifully portrayed with various emotions of love and life, and tribulations, victory and defeat. "I Too Had A Love Story" is written in a diary writing form, through this novel he proved himself to be a versatile genius in showcasing the diverse stages of his unfulfilled love story with Khushi. The novel is a romantic saga of the couple belonging to the modern day world of the internet and gadgets, have been innocent, touching, honest and tear-jerking. How two outlander get acquainted with each other, develop a bondage without seeing each other and builds an intense fierce to marry each other in long distance relationship.This situation is in reality felt by today's generation.
Keywords - autobiographical, jerking, gadgets,expedition

Introduction - Ravinder Singh, a descendant from a Sikh family in Odisha, is one of the leading authors in the Indian literary scene. After having spent most of his life in Burla, a very small town in Western Odisha, he is currently based in New Delhi. He has an MBA from the renowned Indian School Of Buisness. His eight year long IT career started with Infosys and came to happy ending at Microsoft where he worked as a seniour programme manager. One day he had an epiphany that writing book is more intresting than writing project plans. He has also started publishing ventures called Black Ink. He is also crazy about Punjabi music and is a die- hard snooker addict.

The novel " I Too Had A Love Story " is dedicated to his beloved 'Khushi' who died in an accident

" The loving memory of the girl whom I loved ,yet could not marry".

Tere jaane ka asar kuch aisa huwa mujh par, tujhe dhoondte-dhoondte,maine khud ko paa liya....

Otherwise, I wouldn't have come across an author in me . (Singh, 2009, p. 1)

The story begins as four friends Manpreet, Amardeep, Happy and Ravin, plan a reunion after many years.

" I remember the date well: 4th March 2006. I was in Kolkata about to reach Happy's home. I had been very excited all morning as I was going to see our gang of four after three years". (Singh, 2009, p. 6).

The four discusses casually about their lives and proficiency at job. In one conversation they move to their plans for their partners and matrimony. Ravin, the protagonist gets inclined to create an account on a matrimonial website Shaadi.com.He hunt for the prospective bride. Multiple girls details were befitting with ravinder,but he doesnot detect his soulmate. Finally when he surrender all his hope,he recieves a message from a girl Khushi, dwell in Faridabad and that was the establishment of his love story July20, 2006.

Khushi was the BPO employer in Gurgaon, they both get familiarize with each other through online chating and uneding phone conversation till late at night and start falling in love and reveal their love affair to their family too.

"True love is unconditional and if it is 'Conditions Apply' scenario,then it isn't true love. It is as good as a mutual fund and if that is the case then investment in love is subject to market risks and therefore one must please read the offer documents carefully ".

October month was fortunate for the love birds as Ravin had a expedition to USA for a month and he was going to halts at Delhi.They both were anxious to meet each other.Ravin encounter Khushi to be more ravishing than the image that she show up in the website.

Latter their parents agree to materialize their relationship into marraige. 5 days before their engagement Ravinder recieves a phone call from Khushi home informing him that Khushi met with a dreadful car casualty. While the driver expire immediately and Khushi was in the ICU,almost on her final stage.

'"Khushi is in the ICU, the doctors haven't confirmed anything. She has suffered a lot of blood loss" (Singh, 2009, p. 158).

* M.Phil Scholar, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

Ravinder ruin completely after listening teribble news.

Friends, there is bad news. Khushi has met with an accident, And everything else stands postponed' (Singh, 2009, p. 159).

Ravinder instantaneous flee to Delhi from Bhubhaneshwar and step straightaway to the hospital where Khushi had been admitted. The doctors told Ravinder that Khushi was in coma and there is slight opportunity of her survival. Ravinder in a grievous behavior recite the horrify state of Khushi, to his family who were zeal in the prepration of engagement ceremony.This moment was passing awfully, Ravinder was shattered and he couldnot defense Khushi from coma and visualize the piteous condition of her beloved who was lying in between life and death. Subsequently the doctors expose that Khushi may regain but still she was in coma. This information was magnificient to Ravinder and he plan to go back Bhubhaneshwar to bring his parents ahead to Delhi, so that all would be present when she open her eyes but destiny proved him wrong, Khushi passes away to paradise.

" NOT everyone in this world has the fate to cherish the fullest form of love. Some are born , just to experience the abbreviation of it" (Singh, 2009, p.1).

Ravinder had a dream while travelling to Bhubhaneshwar that Khushi was sitted next to him, she puts her hand on his forehead and show her love and care for him. When Ravinder asked her when you reached here? instead of you should be assumed to be in the hospital. She smiled and replies 'she was always with him'. She than took out the store bought ceremony ring and put on his finger. He was stunned to discover that Khushi was formerly wearing the ceremony ring which he had brought for her. She than serve him his favourite rajma chawl and then after adoring clean his mouth. She lies in his arms and remarks,

'Thank you for giving me the love of my life '(Singh, 2006, p.166).

Ravinder was woken by a call and realize that it was just a hallucination.He looks for Khushi and she suddely vanished and the ring which she puts into his finger was also absent. The call was from Khushi father he inform in his tear down voice that Khushi had passed away. Ravinder replies him. But she was here with me a few minutes back…

'I heard someone inside me screaming but not a sound came out' (Singh,2009, p. 169).

Ravinder was entirely shattered after this incident. He coulnot accept the bitter actuality. He consider Khushi as a gust of wind who enter in his life and brings a revolution and a year later heartbreaking happening convert his persnality.

Thereafter a year of Khushi demise Ravinder wrote these lines,

"She died I survived.
Because I survived, I died
everyday.
I was bound my stars to live a lonely life.Without her, I felt so alone.
Though the fact is that it's just she who is gone and everything else is the same.
But this 'Everything Else' is nothing to me...."

Ravinder with warm heartedness written,

" Later, standing under the shower, you will cry hard but nobody will hear you. The splashing of the shower will mask the sounds of your sobbing. You will search for and consume anything that can erase your memory. And, believe me, your life will appear worse than death" (Singh, 2009, p. 171).

"I Too Had A Love Story " narrates a very important chapter in Ravinder life . Ravinder quote this line beautifully,

"They say,don't cry because its over but instead smile because it had happened".

References :-

1. Singh, R. (2009). I Too Had a Love Story: New Delhi: Srishti Publishers.
2. Dr.Khanna,Disha : Existence of True Love In the Digital Age in Ravinder Singh I Too Had A Love Story March-2014 (www.worldwidejournals.com)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

The Hollowness of Patriarchal code in Dattani's 'Where There's a Will'

Dr. Shweta Singh baghel *

Abstract - In his first play (1988), Dattani takes up the issue of the patriarchal code. Indian society has been a very traditional society with strong patriarchal values. Fathers have desired to have sons because they are supposed to carry forward the name of the family and because in their sons fathers have hoped to live out their own dreams and aspirations. In the past this has led to a situation where a father demands unquestioning obedience from his son because he firmly believes that he alone knows what is best for him. Subsequently this denies the son any opportunity for independent growth. With changing times, this has begun to change. In Where There's a Will, Dattani exposes the hollowness of the patriarchal code, which cannot be followed in the post colonial setting.
Keywords- Patriarchal code,authority,absolute power,male ego, patriarchy.

Introduction - Patriarchy is a social system in which the role of the male as the primary figure of authority is central to social organization, and where fathers hold authority over women, children, and property. It implies the institutions of male rule and privilege and is depend on female subordination. The principle of patriarchy has been central to the social, legal, political, and economic organizations down the ages.

The play revolves around a 'self made' successful industrialist, Hasmukh Mehta.This patriarch is the supreme malcontent who tries to dictate to his son, Ajit, because he would not toe his father's line. Though he makes Ajit the joint managing director of his firm, he does not allow him to formulate any company policy. However he fails to make Ajit do what he wants. This he succeeds in doing when through his will after his sudden death, he denies Ajit the ownership of his property till the latter becomes forty-five years old and in the intervening twenty one years , continues to run the company exactly in the way his father did. However, as the play unfolds the ghost of Hasmukh Mehta, who is watching everything with triumph, realizes with dismay the folly of his desire. It also depicts the traditional husband and wife relationship through two generations and takes a bolder look at the new woman of the society in the form of Hasmukh's mistress Kiran Jhaveri. Dattani also shows the dark humour and irony through the form of Hasmukh's will left in the care of his mistress.

Hasmukh's father is a typical patriarch. When his elder son runs away from home to join a group of hippies, he tightenes his control over the other son, Hasmukh, who is taken out of school and put to hard work in the factory that his father had set up. Hasmukh is obliged to his father for the training that he has given him. He holds that if today at the age of forty five he is a very successful industrialist and one of the richest men in the city, it is all because of the schooling that he has under his father. He is unhappy with his son, Ajit. The conversation reveals the dominating tendency of Hasmukh :

HASMUKH. ...I will retire one day, either from the company or from this world. What will become of you then? I have to season you now. You need seasoning.

AJIT. Seasoning! What do you mean seasoning? I'm not a block

of wood! (CP 4)

[Ajit reacts to this and says,]

AJIT.¦You want to run the show. Play Big Boss as long as you

can or as long as God permits. And when all of a sudden you

are called to a better world, you still want to play Big Boss. and you can do it through me. In short you want me to be you.

HASMUKH. I should have prayed for a daughter. Yes I want you to be me!

What's wrong with being me?

AJIT. And what becomes of me? The real me. I mean. If I am you,

Then where am I? (CP 461)

This is the basic conflict between the father and the son in this play. The father wants a typical submissive ,hardworking and obedient son. He does not want a son who is imaginative, individualistic and independent. The son, on the other hand, is not ready to be merely a prototype of his father. He believes in living his own life and thinking his own thoughts. "Why is it that everything I say or do has to be something that somebody has told me or taught me to

*A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA

do?"(CP 459). Dramatist presents here not an individual case but a representative of the changed society.

The postcolonial Indian society has undergone some fundamental changes. Even when a young man is working with his father or other elders of the family, for example, in the family business or industry, he has his views on different aspects of the work he is involved in, and wants them to be heard and respected.Such issues have greatly affected the patriarchal code. Dattani's play shows both the strong desire of the older generation to preserve its authority over the young and the determined bid of the young to break free of this patriarchal code. Dattani also questions the patriarchal moral code which demands the faithfulness of a woman to her husband but not the faithfulness of a man to his wife. Sonal is surprised to know about the mistress Kiran Jhaveri only after her husband's death.Sonal remembers well that Husmukh is exactly the same like his father. Kiran Jhaveri, his mistress also recalls how her father is a real patriarch who beats his wife and her brothers also behave exactly the same way like the father.

In this play the family head Mr. Hashmukh Mehta is the symbol of what we say Hitlerism. He does not allow including his son anyone to do as they wish. He is a symbol of patriarchal ego. He was of the opinion that as he was the strict follower of his father's rules, his son Ajit too had to do the same. He believes in 'absolute power'. He couldn't distribute his power among his family members because he wanted to dominate each and everyone including his wife Sonal Mehta. He is the autocratic head who demands unquestionable obedience from his family members.

Hasmukh Mehta is projected as very autocratic father. He controls and checks the every movement of his son. He has no power to use the property of his father in his own way. He has to execute his father's orders and command keeping his own say aside.

Ajit: Don't have any rights at all?

Hasmukh: You have the right to listen to my advice and obey my orders. (CP: 458)

The play focuses on emptiness and uselessness of strict adherence to patriarchal code. One of the major thematic threads that dissect from the play is the conflicting relationship between father and son. It depicts the clash between conservative nations and contemporary generation. Both father and son have their own view points regarding life and business.The father strictly believes that he has right notions regarding life and business; and also son's life, whereas son rejects the idea of command over his life. At the very beginning, Ajit expresses his displeasure regarding his father's idea. He is quite young and innovative. He wants to give touch of modernity to his plant. He needs five lacks rupees. Hasmukh doesn't trust his son's ways of world and his ability of dealing with business affairs. Ajit feels that his father is hard-liner and stubborn fellow. He doesn't respect anybody's decisions.

However, Ajit doesn't raise much voice against the autocratic regime of his father. He just disapproves his father's views and ideology. Kiran appreciate his revolutionary spirit in this manner. "He may not be the greatest rebel on the earth, but at least he is free of his father's beliefs. He resists. In a small way, but at least it's a start. That is enough to prove that Ajit has won and Hasmukh has lost." (CP: 510) Ajit asserts his individualistic identity. He protests against parental hegemony. In his sense, father-son relationship is a post colonial dichotomy of contemporary society. He is content at the idea that he is defiant. He has challenged the dictatorship of his father.

Ajit: All right. I can't fight him now. He has won because he's dead. But when he was alive, I did pretest.In my own way.(laughs) Yes, I'm happy I did that yes, I did fight back. I did do 'peep peep' to him! That was my victory. (CP: 501) Thus, the play dramatizes the discord and disharmony between the father-son relationships. Father and son are shown at constant fight. There is a nerve-war between them. The play depicts the forced harmony among the members of the same family. In this sense, he play may be deemed as the poscolonial protest against the coloniliaizations of self ideatity.

The play exposes the illusion of perfect and complete control over the family for a longer period. Hence the question arises in our mind why a man aspires too much for power and authority? Does it signify any value of life? Clearly- it doesn't attach any meaning to human existence. Nor does it help in improving quality of human life.Dattani is convinced that is an attempt to make oneself secure and survive, so man's drive for the domination arises out of his own apprehension of insecurity.Actually Hasmukh Mehta considers domination as the only and final system which can bring joy and happiness in the family. Ironically he fails to understand that domination kills joy of human heart and soul-domination flourishes killing others self and identity. It is, in fact, biggest hurdle in building up the premise of happiness. It is rightly observed that the grab of authority maintained by Hasmukh was Method to save his own inner self from clashes of the outside world.

References :-

1. Das Bijay Kumar: Postmodern Indian English Litrature, Nice Printing Press, Delhi, 2006
2. Dattani, Mahesh: Cololected plays. Panguin Edition, New Delhi, 2000.
3. Kuthari Chaudhuri, Asha: Contemporary Indian Writers in English Mahesh Dattani, New Delhi, Foundation Books Pvt. Ltd., Cambridge House, 2005.
4. 'Patriarchy'. Wikipedia. Web. 3 Feb. 2011.
5. Prasad, Amar Nath. The Dramatic World of Mahesh Dattani: A critical exploration. New Delhi: Sarup Book, 2009.

****

DSS Divya Shodh Samiksha (An International Refereed Research Journal) July to September 2016
ISSN 2394-3807, E-ISSN 2394-3513, Impact Factor - 1.7591 (2015)

Thematic study of Bharati Mukherjee's Major Novels

Saurabh Mehta *

Abstract - Bharati Mukherjee is a Third World Feminist writer whose preoccupation is to deal with the problems and issues related with the South Asian Women particularly India. Like her contemporary feminist writers she upholds the cause of women, but she differs from them because her basic concern is to delineated the problems of cross cultural conflicts faced by Indian women immigrants. Bharati Mukherjee's fiction truly reflects the temperament and mood of the present American society as experienced by immigrants in America. One of the significant themes of modern literature is the depiction of cross- cultural crisis, a subject which has assumed a great significant in the present world of globalization Bharati Mukherjee is one of the best examples of this kind of writing.
Keywords - Feminist Writer, Delineate, Immigrant, Adaptability, Female Protagonist.

Introduction - Bharati Mukherjee, now settled abroad, is a significant woman novelist. Born in 1940, she went to the U.S.A in 1961. Even though it is more than three decades since she left India for the American Continent, familial ties continue to bind her to the country of her birth. But she is clear about where her loyalties lie today and is at pains emphasizing that she is an American writer. She has been greatly attached to Calcutta. Since she was born and bought up there she says, "The city will remain a habit with me, but as a writer, I have developed entirely in the United States." Mukherjee's writing career began in 1971, with *The Tiger's Daughter*. Her popularity shot up when *The Middleman and Other Stories* begged the 1988 National Book Critics Award in America. This collection seeks to dramatize the "immigration experience" in America. In an interview, Mukherjee clearly states her aim in her writings:

> We immigrants have fascinating tales to relate. Many of us have lived in newly independent or emerging countries…when we uproot overselves from those countries and come here, either by choice or out of necessity, we suddenly must absord 200 years of American history and learn to adapt to American society…I attempt to illustrate this in my novels and short stories. My aim is to expose Americans to the energetic voices of new settlers in this country.[1]

Americans have received Mukherjee's writing with great enthusiasm. They have indeed a healthy curiosity about new writers and new ideas. Mukherjee's stories were quite acceptable to American readers. As soon as she started writing them, her work became more available to American readers than her novels had been.

Thematic analysis is the most common form of analysis in qualitative research. It emphasizes preprinting, examining, and recording patterns (or "themes") within data. Themes are patterns across data sets that are important to the description of a phenomenon and are associated to specific research questions. The themes become the categories for analysis. Thematic analysis is performed through the process of coding in six phases to create established meaningful patterns.

In '*The Tiger's Daughter'*, Tara the protagonist finds in India nothing to her linking. However, Tara cannot escape from Calcutta. She is part and parcel of the city, a place infested with riots, buses burning, and workers surrounding the warehouse. '*The Tiger's Daughter'* has rather a British feel to it. Mukherjee adopts the omniscient point of view and a great use of irony. This is because of her concept of language and the notions of how a novel was constructed were based on British models. The education that she received was essentially British. She felt fascinated by English writers like Jane Austen and E.M. Foster.

Thus Tara's journey to India her own native land ironically proves frustrating slowly leading to his illusion, alienation, depression and finally her tragic end. The greatest irony hidden in the story of Tara is that she survived the racial hardship of survival in a foreign country but nothing happens to her. Tara's journey to India is best represented in her mood presented in the following lines: "It was so vague so pointless, so diffuse, this trip home to India."[2]

In her second novel *'Wife'*, the protagonist Dimple wants to break through the traditional taboos of a wife. This novel tells the story of Dimple, a seemingly docile young Bengali girl who, as any other normal girl, is full of dreams about her married life and so she eagerly and impatiently waits for marriage. She marries Amit Basu. She visualizes a new life for herself in America where Amit is expecting to immigrate. She is expected to play the role of an ideal Indian wife, stay at home and keep the house for the husband. Her frustration is built up gradually by the circumstances. She resents being wife in the Basu family and rebels against wifedom in many

* Research Scholar, Barakatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

ways. One such way is here including a miscarriage by skipping herself free from her pregnancy, which she views as a Basu's property even in her womb. But her/self identity is avoided by marriage.

In her third novel the theme of *'Jasmine'* is an Indian immigrant's encounter with the New World and her gradual transformation as she thoroughly imbibes the new culture. The novel also orchestrates a quest for identity: how a woman comes to terms with her own self. As Sunita Roy points out Jasmine's "search for self-recognition takes her in social and spiritual directions…..till she arrives at a time when she can view the future greedy with wants and reckless from hope."[3] Early in the novel Jyoti tries raise herself above such blind belief in Fate which is adumbrated by the astrologer thus: "Fate is Fate". When Beulah's bridegroom was fated to die of smoke-bite on their wedding night, did building a still fortress his death? A magic snakes will penetrate solid walls when necessary."

The other significant image that Bharati Mukhrerjee associates with Jasmine rebellious spirit is the carcass of a small dog that she encounters as a child. The protagonist does not want to become broken in body and spirit like the dog.

Transformation and migration are once more Bharati Mukherjee's two major themes in her latest novel, *'The holder of the World'*. They are however, presented in a totally new and unique garb-for now there is no longer the usual Indian protagonist, a jasmine or a middleman seeking a new identity in a new world. Here it is Hannah Easton, a white Puritan woman from salem, Massachusetts Bay Colony who makes a journey to the exotic Coromandel shores in the late seventeenth century and finally becomes the mistress of an Indian potentate, Raja Jadhav Singh. The inspiration behind this "fantastic" story was an ordinary incident an ordinary day. In an interview, Bharati Mukherjee recalled. "the novel got started because I was at an auction of Sotheby in New York……Whatever money my husband and I save is spent on Indian miniature painting and my aesthetic for the novel evolves out of my love for Indian miniatuire painting."[4]

In her next novel, '*Leave it To Me'*, Bharati Mukherjee tells that the story of a young woman sociopath named Debby Diamartino, short name Debi who seeks revenge on parents who abandoned her. The story reveals her ungrateful interaction with kind adoptive parents and vengeful search for her real parents. The novel also looks at the conflict between Eastern and Western words and at mother-daughter relationship through the political and emotional involvement of the chief character in her quest for revenge.

Bharati Mukherjee's latest novel '*Desirable daughter'* is a tale of immigrants and attitude of three sisters and their ways of dealing with situations. '*Desirable daughter'* as the title suggests one kind of daughter, which parents would be proud of and for whom every parent would crave. The three sisters, who are the daughters of Motilal Bhattachrya and great-grand- daughters of Jai Krishna Gangoli, belong to a traditional Bengalli family padma, parvati and Tara are symbolic names od Shakti (Goddess of Hindu) do not flaunt the some ethical values but have a grit to crave a niche for them.

In the novel, '*Desirable Daughters'* the main character in the form of Tara Lata struggles with the major themes of Self versus Society, self Destruction and Self Discovery. The novel '*Desirable Daughters'* belong to that genre of American literature which deals with issues of immigrant life and culture assimilation. There are sufficient works in this genre that represent Hispanic, African and Chinese ethnic minorities in the United States, but relatively few that speak for South asian immigrants in general and Indian American literary canon. One can say that the novel is written by a woman for a women audience, as the story's central protagonists is female. The foremost and recurrent theme of Desirable Daughters is the conflict arising from native and foreign cultures.

The theme of "alienation" and "assimilation" becomes significant in the novels of Bharati Mukherjee. Thus, Bharati Mukherjee is a typical feminist writer. His novels truly adhere to the temperament and mood of the society in which she lived.

References:-

1. The times of India, 1 Oct.1989
2. Bharati Mukherjee, The Tiger's Daughter (London: Chatto and Windus, 1973).
3. Jasmine: Exile as Spiritual Quest in Indian Women Novelists, Vol.5, p.203.
4. Bharati Mukherjee, The Holder of the World (New Delhi: Viking, 1993), p.30.

****

Preeti Shenoy As A Modern Novelist

Dr . Manisha Dwivedi *

Abstract - Among the modern Indian writers in English, **Preeti Shenoy** occupies a unique place for the diversity of presentation of plots, themes, characters and situations in her novels. Her main feature as a writer is her ability to deal with relationships related issues in her novels, which is always a hot topic to debate on. She has added a new dimension and marvellous flavour to the contemporary Indian English fiction. She has secured a unique and significant place as she aims at her innovative thematic concerns and deals in her fiction with relationship and its complications.
Key Words - Modernism

Introduction - Preeti Shenoy is an Indian author. Consistently nominated for the Forbes List of the 100 most influential celebrities of India since 2013, she has varied interests ranging from photography and yoga to sociology. India Today has named her as 'being unique for being the only woman in the highest-selling league,' alluding to the immense popularity of her books.

Preeti Shenoy is one of the most talented writers of the present. She is among the best-selling authors in India; she weaves magic with her words and pictures. An extremely talented and versatile individual.

Her Twitter bio used to be: "Author of five best-sellers, Artist (Portraits, Mixed media, paper-quilling), Poet, Yoga-Buff, Ex-basketball player, Blogger, Dobe-owner, Nature lover, Ted X speaker and a Mother."

Her interests are as multifarious and diverse as her several academic degrees which include an internationally recognised qualification from UK in portraiture.

DNA has described her as a 'keenly observant mind' and Times of India describes her writing as 'Excellent story telling skills'. There is simplicity in her writing that appeals to the inherent good in all and her positivity and 'Live life to the fullest' philosophy finds a large number of takers, who follow her very popular blog.

Preeti Shenoy began writing her first book **"34 Bubblegums And Candies"** which is a collection of narratives based on real life incidents, some of which had been previously posted on her blog in a shorter form; it was launched in October 2008. Her second book

"Life Is What You Make It" was among the top selling books of 2011 in India and continues to be in the best-selling charts. Her third book **"Tea For Two And A Piece Of Cake"** which was released in February 2012 made it to the top five best selling Indian fiction of 2012. Her fourth book **"The Secret Wish List"** was released in 2013 and has got excellent reviews. Her fifth book **"The One You Cannot Have"** was released in November 2013, opened at No.2 on the Nielsen list of best-selling Indian Fiction. Her sixth book **"It Happens For A Reason"** was published in 2014. Her latest book **"Why We Love The Way We Do"** was published in 2015.

Her pencil-portraits are life like which strike you with a realism that take you aback. She is also into paper -quilling and is a poet too. She has written for publications like Times of India, Readers Digest and many more. She has worked with under-privileged children teaching them English and Math. She has worked with several schools conducting workshops on thinking skills and creative crafts.

She also writes a regular column called 'Sex and the city' for Financial Chronicle. Read the Saturday issues to catch it.

She says "Life is short. Follow your heart and chase your dreams. And yes, they will come true."

Modernism might be said to have been characterised by a deliberate and often radical shift away from tradition, and being a modern novelist Preeti Shenoy has consequently used new and innovative forms of expression in her novel. She has covered the creative output of artists and thinkers with her 'traditional' approaches to the art and literature in her fictions. Preeti Shenoy being a modern novelist innovatively written fictions with all the day to day general problems faced by youngster's in relationship.

A Brief Summary Of Preeti Shenoy's Novels

Life Is What You Make It

Life Is What You Make It is a story about a young female protagonist whose life gets shaken by her destiny in a highly unexpected manner. Set across two Indian cities in 1989, the story begins when Ankita is shown to be reading letters that she exchanged with Vaibhav. And here onward, the reader is taken on a flashback story that relates the life of Ankita and how she ended up in a hospital.

* **H.O.D (English) Dr. C.V Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**

Ankita is in her twenties and belongs to a conservative middle class family. Her parents are so strict that they do not even like her being friends with guys. She is a smart, career-oriented, confident, young, attractive, sweet, and happy go lucky girl. She has lots of friends and is wooed by many boys at her college. Her college life is what every youngster dreams of but Ankita does not underestimate the importance of studies as well. She secures a seat in a leading management school. She is one of the most happening girls in the college. However, at times she is haunted by some issues that she faced in her past.

Life seems to be sailing smooth for Ankita until one fine day when she is admitted to a mental hospital. Life suddenly snatches everything that Ankita had in her world in a cruel twist of fate. How did things change so badly? How will Ankita take this sudden blow of destiny? Will she survive it? Will she ever be able to live a normal life?

A love story at heart, this tale of unconquerable human spirit shows how Ankita does not succumb to her destiny and decides to fight back. It is an inspiring and moving account of determination and faith as Ankita challenges what destiny throws at her. It is a story that makes the reader question the very concepts of sanities and teaches the fact that life is what one makes of it. Moreover, the simple language and narration of Life Is What You Make It emphasizes that problems are never permanent and it is one's spirit that can carve the path to one's life.

It Happens For A Reason

Vipasha is a young, beautiful and single 18-year-old, who gives up a promising career in modelling to have her baby. She ends up cutting ties with her family and the father of her child, Ankush. Sixteen years later, Vipasha is well settled in life with two unusual careers – she owns a dog boarding facility and is a gym trainer. Her son, Aryan, loves her and hopes for her to find a life partner. Vipasha had feelings for Saurabh, the vet and things were going well, when Ankush comes back into their lives all of a sudden. What will Vipasha do now and how will Aryan react to all this? Will she resume her ties with Ankush and repeat the mistakes she made in the past? It Happens for a Reason will make for an engaging and enthralling read for those who enjoy reading love stories.

References :-

Sites :

1. http://www.preetishenoy.com/
2. https://twitter.com/preetishenoy
3. http://blog.preetishenoy.com/
4. https://en.wikipedia.org/wiki/Preeti_Shenoy

Novels :

1. Life Is What You Make It, Srishti Publishers (2011)
2. It Happens For A Reason, Westland Ltd (2014)

****

हिंदी के आंचलिक उपन्यासों में आधुनिक सभ्यता की चुनौतियों की विवेचना

अशोक कुमार *

शोध सारांश – आजादी के बाद के आंचलिक उपन्यास हिंदी कथा साहित्य की उपलब्धि है। जनतांत्रिक भावना के साथ इन उपन्यासों में पिछड़े समाजों और स्त्रियों के जीवन को गहराई से देखा गया है। आजादी के बाद गांवों य पिछड़े इलाकों के जीवन का सजीव और प्रामाणिक चित्रण भी आंचलिक उपन्यासों में है। हिंदी के आंचलिक उपन्यासों में मुख्यत: खेतिहर किसान और मजदूरों का चित्रण है। उनके जीवन संघर्ष की दशाएं इन उपन्यासों का केंद्रीय भाव है। गांव के बदलते मूल्यों में शोषितों के दमन का विरोध तथा स्त्रियों की करूण जिंदगी इन उपन्यासों का आधार तत्व है। आंचलिकता की परंपरा की बात की जाए तो यह केवल हिंदी ही नहीं बल्कि समूचे भारतीय जनमानस की प्रवृत्ति के प्रतिनिधि होते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में हिंदी के आंचलिक उपन्यासों में जीवन और संस्कृति के उद्देश्यों की विवेचना की गई है।

शब्द कुंजी – उपन्यास, आंचलिकता, खेतिहर, दलित, अंचल, किसान, संस्कृति।

प्रस्तावना – हिंदी में आंचलिकता का उद्भव एवं विकास सामान्य अर्थ में रेणु के उपन्यास मैला आंचल से माना जाता है, लेकिन हिंदी में आंचलिकता की परंपरा उससे पूरानी ही है और उसका श्रेय मन्न द्विवेदी को जाता है। 1914 में प्रकाशित उनकी रचना रामलाल की कथा भूमि ग्रामीण है। मधुकर ने नागार्जुन के उपन्यास बलचनमा (1952) को पहला आंचलिक उपन्यास माना है। वैसे आंचलिक की परंपरा शिवपूजन सहाय के 'देहाती दुनिया'से शुरू हो चुकी थी।आंचलिक उपन्यासों की अवधारणा हमें अंचल और नगरों के बीच सामंजस्य बैठाकर चलने की समझ पैदा करती है। यह माना जाता है कि लोक जीवन ही विश्व की नागरिक संस्कृति का आधारभूत अवलंब है, जिसकी उपेक्षा नहीं होनी चाहिए। आंचलिक साहित्य की प्रेरणा से नगरों में मची हुई आपाधापी, मारकाट, उत्पीड़न और अन्याय जैसी समस्याओं के समाधान खोजे जा सकते हैं। आंचलिक साहित्य में सार्वदेशिक बंधुत्व भावना का संदेश मिलता है। अंचलों के हृदयस्पर्शी चित्रण के माध्यम से लेखकों ने वहां की समस्याओं का विश्लेषण किया है। विश्व के सभी समुदाय दूर से भले ही अलग-अलग सूत्रों में पिरोए हुए लगते हों मगर सभी मानवता की एक मजबूत कड़ी में बंधे हैं, अंदरूनी तौर पर सभी एक ही प्राण-तत्व, संस्कृति-चेतना से संयोजित होते रहते है। मानवीय सभ्यता का मूलाधार एक सार्वभौमिक संस्कृति की नींव पर विन्यस्त है। आंचलिक साहित्य में इन्हीं टूटते-बिखरते अंचलों के प्रति चिन्ता दिखाई देती हैं। बड़े-बड़े महानगरों के फैलाव से उनके अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया है। आंचलिक साहित्य इन्हीं खतरों के प्रति चेतावनी देते हुए अपनी महत्ता सिद्ध करते हैं।

आंचलिक उपन्यासों में पिछड़े हुए प्रदेशों की विभिन्न समस्याओं पर विचार किया गया है और इन प्रदेशों की लोकपरम्पराओं को देशव्यापी बनाने में भी सहयोग दिया है। उनमें पिछड़े अंचलों को युग के साथ आगे बढ़ाने तथा वहां नई चेतना का प्रसार कराने में मदद पहुंचायी है। साम्प्रदायिक एवं संकुचित जातीय क्लेशों दूर करने में इनकी सामाजिक कथा-पीठिका विशेष रूप से सफल सिद्ध हुई है। इनमें मानवीय भावना की अजस्र धारा उमड़-घुमड़ पड़ती हैं। देश की प्रगति के साथ छोटे अंचलों को जोड़ने की भावना लेकर आये आंचलिक उपन्यासों ने जनवादी समाज व्यवस्था पर बल दिया है।[1] अंचल एवं प्रदेश के सम्बंध पर भी विचार करने की जरूरत है। आंचलिकता में लोक संस्कृति के प्रति विशेष आग्रह होता है, जबकि प्रादेशिकता के अन्दर हम सामाजिक व्यवहारों, समस्याओं और निराशा एवं दु:ख की प्रवृत्तियों का समन्वय देखते हैं। प्रादेशिकता में आंचलिकता की तरह ही गहरी भावात्मकता होती है। स्थानीयता या लोकल कलर में भौतिक परिवेश ज्यादा मुखर होने लगता है, जिसमें गहनता की बजाय विस्तार पर ध्यान केन्द्रित कर दिया जाता है। स्थानीय रंग या प्रादेशिक स्वरूप के विपरित आंचलिकता अधिक गम्भीर, महत्वपूर्ण और ग्राम संस्कृति से अधिक गहरी जुड़ी है। यह माना जा सकता हैं कि आज के विकसित समाज के अध्ययन के लिए आंचलिकता का औचित्य और आवश्यकता और ज्यादा बढ़ गयी है।[2]

साहित्यिक रूप से देखें तो विलुप्त होती अन्तर्कथाओं, किवंदतियों और मुहावरों को संरक्षण देने का काम आंचलिक उपन्यासों के महत्व को बढ़ा देता है। सभी में भारत की आजादी के बाद जन-चेतना के विकास का चित्रण भी मिलता है। उस समय की परिस्थितियों, देशकाल तथा वातावरण से परिचय मिलता है। इन उपन्यासों में हम देखते हैं कि किस प्रकार छोटे-छोटे अंचलों में विकसित होती हुई राजनीतिक एवं वैज्ञानिक चेतना देश की जीवन धारा में बदलाव लाती हैं और इन्हीं में हम उस दौर में चलने वाले विभिन्न आंदोलनों की हकीकत भी तलाश सकते है। इन उपन्यासों में पुराने और खत्म होते हुए जीवन-मूल्यों, आस्थाओं, रीति-रिवाजों की जगह पर वैज्ञानिक विकास के आगमन के साथ बदलते हुए जीवन-मूल्यों और परम्पराओं का एक वास्तविक चित्र उकेरा गया है। इन चित्रों में जीवन के संघर्षों और समस्याओं पर विचार किया जाता है।[3]

अंचलों की कलात्मक और सांस्कृतिक चेतना को सामने लाने, पारम्परिक सद्भावनाओं को उभारने तथा लोक-जीवन से समरसता पैदा करने के लिए आंचलिक उपन्यास अस्तित्व में आए। मौलिक परम्पराओं को बचाते हुए एक विकसित एवं आदर्श गांव का मॉडल पेश करना भी आंचलिक उपन्यासों की

*अतिथि विद्वान (हिंदी) शासकीय महाविद्यालय, अटेर, भिंड (म.प्र.) भारत

प्रतिबद्धता में शामिल रहा है। इनमें लेखक सामाजिक भ्रष्टाचार, शोषण, अनैतिकता और अन्याय के खिलाफ आवाज बुलंद करने वाली आम जनता की भूमिका पर विचार करता है और जन-चेतना का ऐसा ऊर्जावान चित्र प्रस्तुत करता है कि वह स्थानीय न होकर सार्वदेशिक एवं शाश्वत बन जाता है। यही वजह है कि हिन्दी के अधिकांश आंचलिक उपन्यास बिहार, मध्यप्रदेश और अन्य पिछड़े राज्यों से सम्बंध रखते हैं।[4]

नारी के प्रति सम्मान, विश्वास और समर्पण जगाने, मानवेतर जीवों के प्रति सहानुभूति का भाव पैदा करने और गांव की छवि के प्रति आकर्षण के साथ वहां के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के अनूठेपन का उद्घाटन जैसे विषय प्राय: सभी आंचलिक उपन्यासों में दिख जाते हैं। आंचलिक उपन्यासों के माध्यम से लेखक समाज की सड़ी-गली मान्यताओं को दूर करने में सहयोग करता है। लोक संस्कृति के संरक्षण के साथ वह समाज में हो रहे बदलावों के प्रति भी सचेत करता है। उद्देश्यपरक रचनाएं होने के कारण इन उपन्यासों में ऐसी भावप्रवणता के दर्शन होते हैं, जो पाठकों पर गहरी छाप छोड़ते हैं।[5]

आंचलिक उपन्यासों के ऐतिहासिक महत्व पर भी सवाल खड़े किए जाते हैं। इस सम्बंध में कहा जा सकता है कि विद्धानों की मान्यता भले ही कथा में विश्वसनीयता पैदा करने की कोशिश की गई हो लेकिन फिर भी आंचलिक उपन्यासों को हमें भौगोलिक या सामाजिक जीवन का इतिहास नहीं मान सकते हैं क्योंकि यह सच है कि आंचलिकता यथार्थ के आधार पर टिकी होती है लेकिन उसमें कल्पना का सहारा तो लिया जाता ही है।[6] वस्तुत: आंचलिक उपन्यासों के ऐतिहासिक महत्व को सिरे से खारिज करना सम्भव नहीं है क्योंकि वे एक काल विशेष में जनजीवन की प्रवृत्तियों को तो सामने लाते ही हैं और संस्कृति के महत्व के दस्तावेज हैं।

आंचलिक साहित्य में पुरानी राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था के भी दर्शन किये जा सकते हैं। आंचलिक उपन्यासों की कथा में राष्ट्रीयता के दायित्वों को भी ध्यान में रखा गया है। इन उपन्यासों की आंचलिकता को राष्ट्रीय तत्व के रूप में ही स्वीकार किया जाए तो यह कहना उचित ही है कि आंचलिक उपन्यास राष्ट्रीय भावना को गति देते हैं। इनके माध्यम से देश के अलग-अलग क्षेत्रों के जनजीवन से परिचय बढ़ता है। इससे सारा देश वैचारिक एवं सांस्कृतिक एकता के सूत्र में बंधता है।[7]

आंचलिक विशेषताओं को उभारने के कारण ही फणीश्वरनाथ रेणु को स्वाधीनता के उपरान्त हिन्दी साहित्य में महान् रचनाकार माना गया है। वास्तव में यदि उनके उपन्यासों से मैथिली अंचल की विशिष्टता को हटा दिया जाए, तो उनमें भारत के तत्कालीन गांवों का सजीव चित्र उपस्थित हो जाता है। गांवों के आर्थिक हालात, रूढ़िवादिता, साम्प्रदायिकता, सामंतवादी दृष्टिकोण, अशिक्षा और गरीबी को उभारने के साथ ही उनमें अंचलों के प्रति सहज प्रेम और आकर्षण, राजनीतिक एवं धार्मिक चेतना, एक दूसरे के प्रति ईर्ष्या, स्वार्थपरता और आपसी नफरत आदि को चित्रात्मक शैली में पेश किया गया है। उनके उपन्यासों में प्रेमचन्द के बाद के गांवों की परिस्थितियां सामने लायी गयी हैं।[8]

'मैला आंचल' में क्षेत्रीय भाषा को जनव्यापी बनाने के उद्देश्य के साथ लोक संस्कृति के अनेक प्रतीकों और विश्वासों के साथ कथाओं, लोकगीतों, जुलूस, त्यौहार, पूजा-महन्ती के रंग-ढंग इत्यादि का जो दिल को छू लेने वाला चित्रण हुआ है। उससे इस उपन्यास को अंचल का रोचक, सरस, यथार्थवादी और सांस्कृतिक इतिहास माना जाए तो गलत न होगा। समाजवादी व्यवस्था ही जीवन के नैतिक संकट का हल दे सकती है। 'परती परिकथा' में तहसीलदार अपनी जमीन को दान में दे देते हैं, जो इस बात का संकेत है कि जनता के हितों का ध्यान रखना वक्त की जरूरत बन गया है। 'मैला आंचल' और 'परती परिकथा' में लेखक ने युग जीवन की कठिनाईयों और अच्छाईयों का जितने अच्छे तरीके से निर्वाह किया है, उसको ध्यान में रखकर कहा जा सकता है कि रेणु के उपन्यासों में ऐतिहासिकता के तत्व मिलते है। प्रो. कमलाप्रसाद सिंह के अनुसार-'आधुनिक भारत के जनजीवन, उसकी मानसिकता, उसकी संस्कृति और सामाजिक बदलाव को ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में निखारने की कला में बंगला के स्वनामधन्य उपन्यासकार विमल मित्र और हिन्दी के फणीश्वरनाथ रेणु में बहुत समानता है।'[9] प्रो. जी. सुन्दर रेड्डी ने लिखा है कि 'उपन्यासों में चित्रित आंचलिकता एक नवीन जीवन चेतना की लहर है। इन उपन्यासों के केन्द्र में एक विशिष्ट समाज निहित रहता है। इनमें व्यक्ति विशेष की महत्ता उतनी नहीं होती। इसकी यथार्थता प्रादेशिकता से भिन्न प्रकार की होती है।'[10]

प्राचीन काल से भारतीय समाज में एकल व्यक्ति परिवार की अपेक्षा सम्मिलित परिवार की व्यवस्था को ही श्रेष्ठ बताया गया है क्योंकि इससे आपसी रिश्ते मजबूत बने रहते थे। संयुक्त परिवार में व्यक्ति आत्मदमन, कुंठा, निराशा और अपराध प्रवृत्ति की ओर नहीं जाता था। वर्तमान में परिवार संस्था के पुराने अवलम्ब बिखरने लगे हैं। पति-पत्नी जैसे प्रगाढ़ सम्बंधों में भी प्राय: समर्पण एवं विश्वास का अभाव रहता है। पुराने सांस्कृतिक परिदृश्य का लोप हो रहा है। आंचलिक उपन्यासों में परिवार की इस टूटन को गंभीर माना गया है। 'मैला आंचल' में फुलिया और खलासी के बीच अनबन दिखती है। 'परती- परिकथा' में जयवंती और उसके पति के बीच सम्बंधों में कड़वाहट है। जयवंती तो दुल्हे को पीटकर ससुराल से रात को ही भाग जाती है। औद्योगिक सभ्यता ने व्यक्ति की संवदेनशीलता को खत्म कर दिया है, सब कुछ हासिल करने के लोभ ने उसका जैविक एवं नैतिक अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। परिवार के बीच आदमी अकेलेपन और नीरसता के वातावरण में जी रहा है क्योंकि सभ्यता के इस घिनौने रूप में धन को ही सर्वस्व मान लिया गया है। आदमी के इसी अकेलेपन को 'परती-परिकथा' में रेणु ने पहचाना हैं-'हजारों हजार जनता के बीच भी हरेक आदमी विछिन्न है, अकेला हैं। हंसी-खुशी, उत्तेजना-अवसाद, आनन्द-उल्लास सभी यांत्रिक।'[11] मां और बेटे के ममतामयी भावनाएं भी जड़ हो गयी हैं। इसी कथा में लेखक के दिल से हूक उठती महसूस की जा सकती है-'बता दे कोई गरूड़ध्वज झा को, एक भी परिवार की ओर आंखों के इशारे से ही सही। कोई घर साबुत नहीं।''अब परिवार का एक प्राणी दूसरे प्राणी को संदेह भरी निगाह से देख रहा है। एक-एक आदमी अपने को किला बना रहा है।'[12]

निष्कर्ष के रूप में यही कहा जा सकता है कि आंचलिक साहित्य आधुनिक विकास और आपाधापी के बीच भी आदमी को दो घड़ी अपने जीवन और प्रकृति का विश्लेषण करने; अपने दूरवर्ती पिछडे अंचलों के विकास के बारे में सोचने और मानवता के प्रति वफादारी करते हुए जीने की प्रेरणा देते हैं। आंचलिकता में क्षेत्रीय स्वार्थ के शामिल होने से उसका महत्व कमतर हो जाता है। वास्तव में दुनिया के समस्त आंचलिक कथा-साहित्य में निम्नवर्गीय जीवन को, करूणा और उल्लास को सृष्टि का आधार बनाया गया है-चाहे इनमें मिट्टी में सने पसीने से तरबतर किसान दिखाई पड़ते हों या समुद्र के अथाह जल में किल्लोल करते हुए मछुआरे हों; जंगलों के दुर्गम रास्तों पर लहराते हुए वृक्षों में विचरते परीश्रमी गिरिजन हों या मरुस्थल की तपती रेत की ढूहों को पारकर पानी की तलाश में घड़ा लेकर भटकती मरु-नारियां। आंचलिक साहित्य में निम्नवर्गीय जीवन अपनी समस्त आस्थाओं और अनास्थाओं के साथ सर्वत्र उपस्थित है। आंचलिकता, आधुनिक विश्व की

अनियंत्रित एवं अनगढ़ यांत्रिकता के मध्य लोक-संस्कृति की सार्वदेशिकता और उपयोगिता का प्रमाण है। आंचलिकता के सरोकारों में मानव के आधारभूत अनुभव समाहित है तथा उसमें संघर्ष के प्रतीक शामिल हैं। आंचलिकता, मशीनी संवादहीनता के बीच मनुष्य में पारिवारिकता एवं शाश्वत प्रेम का गगनभेदी जयघोष है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, राजनाथ, साहित्यिक निबंध, आंचलिक उपन्यास, पृ. 830
2. देवेश ठाकुर, मैला आंचल की रचना प्रक्रिया, पृ. 13
3. शर्मा, राजनाथ, साहित्यिक निबंध, आंचलिक उपन्यास, पृ. 847
4. वही, पृ. 837
5. शर्मा, डॉ. मक्खनलाल, हिन्दी उपन्यास :सिद्धान्त और समीक्षा, पृ. 217
6. सिन्हा, डॉ. सुरेश, उपन्यास शिल्प और प्रवृत्तियां, पृ. 226
7. शर्मा, सुषमा, उपन्यास और राजनीति, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1976, पृ. 173
8. आलोक, सं. डॉ. अशोक कुमार, फणीश्वरनाथ रेणु-सृजन और संदर्भ, आधार प्रकाशन, पंचकुला, प्रथम संस्करण 1994, पृ. 13 से उद्धृत
9. वही, पृ. 114
10. वही, पृ. 285
11. रेणु, फणीश्वरनाथ, परती-परिकथा, राजकमल पेपरबैक्स, नई दिल्ली, संस्करण 2005, पृ. 209
12. वही, पृ. 237

****

लोकतांत्रिक प्रतिष्ठा में आधुनिक हिन्दी कविता–एक विश्लेषण

डॉ. अमित शुक्ल * डॉ. अनिता ठाकरे **

शोध सारांश – आज सम्पूर्ण विश्व में लोकतांत्रिक मूल्यों को लेकर एक जन चेतना का सैलाब सा दिखायी दे रहा है वो सैलाब साहित्य की प्रत्येक विधा, सूचना प्रौद्योगिकी व आधुनिक शिक्षा सभी में व्याप्त है। लोकतांत्रिक प्रतिष्ठा में आधुनिक हिन्दी साहित्य का विशिष्ट योगदान रहा है। रीतिकाल की चकाचौंध से हटकर जब आधुनिक काल के साहित्यकारों को पैनी दृष्टि से देखा जाए तो आज प्रत्येक साहित्यकार देश सेवा में जुटा नजर आ रहा है। लोकतांत्रिक रूपी गाड़ी को चलाने का कार्य एक कवि साहित्यकार ही करता है। उनकी रचनाऐं लोकतांत्रिक मूल्यों का द्योतक हैं। देखा जाए तो मूल अधिकारों मे लोकतांत्रिक प्रणाली आने के पश्चात् अनेक विधाओं में कहानी,उपन्यास,नाटक की तरह आधुनिक हिंदी कविता भी लोकतांत्रिक मूल्यों की सशक्त पक्षधर रही है। इसीलिए 21वीं सदी के वर्तमान समय तक आते–आते जब समाज में लोकतांत्रिक व्यवस्था में अनैतिकता, मूल्यहीनता, और विषमता चारों ओर फैलने लगी तो आधुनिक हिन्दी कविता विघटित होते मूल्यों के विकास मे सहयोग करते दिखायी दे रही है।[1]

शब्द कुंजी– लोकतांत्रिक, मूल्यों, आधुनिक कविता, अंतर्राष्ट्रीयकरण, प्रासंगिक, संवेदना, सार्थकता।

प्रस्तावना –आज लोकतांत्रिक देशों की संस्कृति एक संकट के दौर से गुजर रही है, उसमें जीना आसान नहीं है, वर्तमान समय का मनुष्य अपने अनुभवों के माध्यम से जिस चेतना को खोजता है, वह विखण्डन का शिकार हो रही है।[2] ऐसे में कभी–कभी कविता एक वृत्त चित्र की तरह लगती है, जो समाज की कथा को पिरोता है व समाज लगातार विखंडित हो रहा है और कविता ही अब उसे बचा सकती है। लोकतांत्रिक मूल्यों के पक्ष को लेकर अब कविता के ऊपर बड़ी बहस होती है। लोकतंत्र और कविता के नये समीकरण की तलाश भी की जाती है। आज लोकतंत्र में बड़े समूह का महत्व है, यह कहा जाता है कि अगर कविता एक सीमित समुदाय को ही प्रभावित करती है, तो वह किस प्रकार लोकतंत्र में जरूरी है, जबकि लोकतंत्र में बहुसंख्यक व्यवस्था होती है।[3]

आधुनिक हिन्दी कविता पर एक आरोप यह है कि वह अलोकतांत्रिक है और केवल कुछ विशिष्ट लोगों के लिए ही है, पर इस प्रकार के आरोप सही नहीं हैं, क्योंकि कविता सामान्य मनुष्य की जागरुकता की वाहक बनती है, यदि संवेदना सबसे आवश्यक है, तो कविता को लोकतंत्र के विरोध में खड़ा नहीं किया जा सकता। वह तो एक सहभागी का काम करती है और परस्परता चाहती है। आज आधुनिकता ने जिस मूल्यहीनता को जन्म दिया है और विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी के विकास ने मनुष्य को यंत्र का ही एक उपकरण बना दिया है, वहाँ कविता विशेष रूप से मनुष्य की संवेदना को जागरुक बनाए रखने के लिए अत्यंत आवश्यक है। आधुनिक युग के मनुष्य का अकेलापन बढ़ रहा है। लोकतांत्रिक व्यवस्था मनुष्य को सर्वाधिक राजनीतिक स्वतंत्रता देती है, लेकिन विज्ञान ने उसे समूह मानव में बदलने की कोशिश की है। आधुनिकता और विज्ञान ने मनुष्य का अंतर्राष्ट्रीयकरण किया है तथा समय व देश की सीमाएँ विलीन हो गई हैं। देखा जाए तो मनुष्य के आधुनिक होने की प्रक्रिया और साहित्य की आधुनिकता हर युग में रही है पर इस युग में एक मौलिक परिवर्तन हुआ है। जहाँ मनुष्य एक ओर अपने अकेलेपन और आत्मनिर्वासन को भोग रहा है, तो दूसरी ओर वह अपनी स्वतंत्रता को व्यवस्था से नियंत्रित कर एक समूह का पुर्जा होने को अभिशप्त हो रहा है। आज जब सारी समस्या मानव व्यवस्था की जगह मानव अस्तित्व की है, तब यह संकट और यातना गहरी है इन समस्याओं से कविता ही बचा सकती है।[4]

लोकतंत्र में आधुनिक हिन्दी कविता के इस संदर्भ को आधुनिक कवियों के विचारों और हिन्दी कविता की रचना यात्रा के संदर्भ में देखना आवश्यक है, जो कुछ अनुभूत है वही सच है और उस पर कविता का भविष्य भी निर्भर है। महादेवी जी ने विज्ञान और कविता के सम्बन्ध में अपने विचार को व्यक्त करते हुए कहा था कि आज के विज्ञान की चुनौती को केवल कविता ही स्वीकार कर सकती है। आधुनिक युग की कविता मनुष्य को उज्जवल भविष्य की ओर ले जा सकती है। आज आधुनिक हिन्दी कविता पर राजनीति का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा है और कविता प्रचारात्मक होती जा रही है। उसमें अनेक प्रकार से नये संघर्ष की अभिव्यक्ति भी हुई है। कविता के अनेक चरणों में प्रथम चरण आधुनिक हिन्दी कविता में भारतेन्दु युग में समानता का तत्व मुख्य रूप से विद्यमान है। कृष्ण भक्ति काव्य की परम्परा द्विवेदी युगीन कविता तक अनुगुंजित है।[5] द्विवेदी युग एवं छायावादी काव्य को गांधीवाद का साहित्यिक प्रतिबिम्ब कहते हैं।जिसमें सत्य, अहिंसा, व नैतिकता के मध्यम से रूराज्य की परिकल्पना कर विजय की कामना की गयी है। जैसे मैथलीशरण गुप्त की इस कविता में–

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है
कोई कवि बन जाए सहज संभाव्य है।[6]

इस प्रकार राम का चरित स्वयं ही काव्य का रूप ले लेता है। उनके कालजयी चरित्र में समानता, एकता, धर्म निरपेक्षता, अस्पुष्यता ,सहिष्णुता, न्यायप्रियता, ,सत्यवादिता, नैतिकता, चारित्रिक, दृढ़ता, पारिवारिक प्रियता जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों की सशक्त पक्षधर और प्रतिष्ठता से परिपूर्ण है। साहित्य और समाज का संबंध आदिकाल से रहा है लोकतांत्रिक मूल्यों की संकल्पना भी भारतीय संस्कृति का एक अश्भङ्ग अंग है। कवि सहृदय होने के कारण वो अपनी बात कविता व अन्य विधाओं के माध्यम से रखता है। इस प्रकार कवि व साहित्यकार अपने समय और समाज का एक प्रतिनिधि होता

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** अध्यापिका (हिन्दी) स्कूल शिक्षा विभाग, छिंदवाड़ा, (म.प्र.) भारत

है। बाबा नागार्जुन किसी राजनैतिक सत्ता के कवि नहीं वे जनता के कवि रहे उनकी कविताएं देश, समाज, गांव, शहर, कस्बे, गली एवं पगडंडियों में राष्ट्रीयता की अभिवृद्धि करती है। उनकी रचनाओं में प्रजातांत्रिक समाजवाद की भावना जागृत करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। वे जनता के कवि होने के कारण किसी भी प्रकार सत्ताधारियों द्वारा किया गया उत्पीड़न के प्रतिरोध में उठ खड़ी होती है।

जले ठूंठ पर बैठ कर गयी कोकिला कूक
बाल न बांका कर सकी शासन की बंदूक

नागार्जुन अपने निजी सुखदुख को जनसाधारण के सुख दुख सें अटूट रूप से जोड़ते हैं। सत्ता के खिलाफ लड़ने का उनका अपना तरीका हैं। अन्याय के चेहरे को आम जनता तक लाना। अत्याचार के कारण और उनके तरीकों को सबके सामने उजागर करना उनकी कविता की प्रमुख विशेषता रही ।वे राजनीति व उत्पीड़न के अंदरूनी दांव पेंच खेलने और सत्ता से संघर्ष करने वाले जन कवि रहे। विचारों से वामपंथी पर जनता से गहरा लगाव रखने वाले वे किसी पार्टी से जुड़कर नहीं रहे। आलोचना से कभी विचलित न होने वाले नागर्जुन ने अपनी कविताओं में सहज,सरल और व्यंग्यात्मक अंदाज में गहरी चोट करते हैं।कविता की इन पंक्तियों मे उन्होंने एंसा कुछ ही कह रहे हैं–

कच्ची हजम करोगे पक्की हजम करोगे
चूल्हा हजम करोगे,चक्की हजम करोगे
बोफोर्स की दलाली, गुपचुप हजम करोगे
नित राजघाट जाकर बापू भजन करोगे।

मैथलीशरण गुप्त की कविताओं मे लोकतांत्रिक मूल्य प्रत्यक्ष रूप से झलकता है। गुप्त जी गांधीवाद से प्रभावित थ इसलिए उन्होंने अपने काव्य मे यथासंभव सत्याग्रह सत्य और अहिंसा आदि का वर्णन किया है। अयोध्या की अनेक जनता से रामवन जाते समय वे सत्याग्रह कराते हुए कहा कि–

राजा हमने राम, तुम्हीं को चुना
करो न तुम यों हाय। लोकमत अनसुना।
जाओ यदि जा सको, रौंद हमको यहां,
वो यह कह पथ में लेट गए,बहुजन वहां।[7]

जनवादी कविता में लोकतांत्रिक मूल्यों की अभिव्यक्ति हर कहीं व्याप्त है। जनवादी काव्य जनता के मानसिक परिष्कार का काव्य है। यह आम जनता के घमंड को चूर करने वाला स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति देने वाला तथा मन को मानवीय और जन को व्यापक बनाने वाला काव्य है। जनवादी कवियों की मुख्य धारा में त्रिलोचन, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, धूमिल, लीलाधर, जगूड़ी , डबराल, अरूण कमल, पारसनाथ आदि कवियों ने मौजूदा शासन एवं पूंजीवाद के विरोध में अपने काव्य को अभिव्यक्ति दी। भारत की आजादी को झूठी बताने वाले, राष्ट्रीय पूंजीवादी वर्ग की भुमिका का सही मूल्यांकन करती शमशेर कविता है। शमशेर जी की जनता एकता और उसकी अजेय शक्ति मे दृढ़ विश्वास था।उन्होंने लिखा है– सारे जहां की ताकत इंसान के इरादों में होती है। पुथ्वी का सारा अटल विश्वास उसकी आवाज में बोलता है और अपने सच्चे जन्म सिद्ध अधिकारों के लिए अब ऐसी आवाजें एक होकर उठती है, तब कौमों की किस्मत का फैसला कर देती है। शमशेर की तरह केदारनाथ अग्रवाल भी ये जानते थे कि देश की जनता सामंती, औपनिवेशिक और पूंजीवादी तीनों ही प्रकार की शोषणों का शिकार हो रही है।केदारनाथ अग्रवाल ने मार्क्सवाद की रोशनी में इस शोषण को सही दृष्टि से समझा और एक जनवादी कवि के रूप में आगे का रास्ता चुना। उन्होंने पूंजीवाद व्यवस्था का विरोध किया व मंहगाई पर कलम चलाई जो वर्तमान में पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था की खास देन है।

न चलता घर
अब नहीं चलता चलाये
ठेलने ठालने से
ठस मंहगाई में
कमाई पड़ गयी खटाई में

केदारनाथ अग्रवाल की भी कविताओं मे वर्तमान लोकतंत्र के प्रति आक्रोश दिखायी देता है। उनका ये मानना कि शासन के बदल जाने से राजतंत्र से अचानक जन हितैषी क्रिया कलाप शुरू नही हो जाते जब तक ईमानदार कोशिशों और इच्छा शक्ति से हम बदलाव नहीं कर पाते। केदारनाथ की ये कविता शासन की लोकतांत्रिक प्रणाली की ओर तीखा प्रहार कर सचेत करना चाहती है।[8]

डंक मार संसार न बदल
प्राणहीन पतझार न बदला
बदला शासन देश न बदला
राजतंत्र का भेष न बदला

दिनकर की कविताओं में देखें तो चेतावनी देते हुए अगाह किया है कि गांधीवादी ढंग से यदि समानता नहीं लाई गयी तो बड़ी मुसीबतों का सामना करना पड़ सकता है।

गांधी अगर जीतकर निकला, जलधारा बरसेगी
हारे तो तूफान इसी में फट पड़ेगा।

आधुनिक हिंदी कविता लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति अत्यंत चिंतित है। धूमिल लोकतंत्र की सार्थकता इस बात में समझते हैं कि पहले समस्त मानवों के पेट की समस्या हल करें, अगर ऐसा न हुआ तो वह कितना बड़ा देश क्यूं न कितना भी बड़ा प्रजातंत्र हो उसकी कितनी बड़ी उपलब्धि हो वह सब निरर्थक है। क्र्फ्यू में एक घंटे की छूट कविता मे धूमिल ने इसीलिए लिखा है– [9]

पेट और प्रजातंत्र
उसके पाठ्क्रम में नहीं है।

कविता अनेक प्रयोजनों के साथ आगे बढ़ते हुए भी संवेदना को जगाती है। अब कवि अपनी भाषा को जनसाधारण की भाषा के निकट ले जाता है। आज के लोकतंत्र में आधुनिक हिन्दी कविता अत्यंत प्रासंगिक है और उसे राजनीति के संदर्भ में भी समझा जा सकता है। धूमिल की एक यह कविता है–

एक आदमी रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है
वह सिर्फ रोटी से खेलता है
मैं पूंछता हूँ ये तीसरा आदमी कौन है?
मेरे देश की संसद मौन है।

वह आजादी का मतलब भी पूछता है, और कहता है.....

क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए
रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता है
या इसका कोई खास मतलब है?

उपर्युक्त कविताएँ वर्तमान समय में भी उतनी ही प्रासंगिक हैं, जितनी लिखते समय थीं, लोकतंत्र में उनका महत्व घटने की बजाय बढ़ ही रहा है।

इसी प्रकार जनतंत्र पर आधारित नागार्जुन की यह कविता वर्तमान समय में कितनी प्रासंगिक है जिसमें उन्होंने कहा है कि–[10]

मतपत्रों से भरी पेटियाँ नभ में
नाच रही हैं
बन्दूकें उनकी सहेलियाँ, जी हाँ साथ वही हैं
ताजे–टटके मतपत्रों पर जमें लहू के दाग,
बेल्ट की जादुई पेटियाँ लील रही हैं आग
कंकालों से महाजनों की करनी है रखवाली
और अधिक लम्बी हो आई जीभ चकित है काली
तानाशाही रंगमंच पर प्रजातंत्र का अभिनय
देख रहा हूँ हिंसा का ही मैं असत्य से परिणय।

इस प्रकार आपातकाल में लिखी गई यह पंक्तियाँ लोकतंत्र में कविता की सार्थकता को अंकित करती है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष यह है कि आधुनिक हिन्दी कविता मे जनवादी धारा एक ऐसी धारा है जिसका संघर्ष हर प्रकार के प्रतिगामी लोकतांत्रिक मूल्यों से है। निराला, मुक्तिबोध, नागार्जन त्रिलोआदि की त्रिझोचन आदि की रचनाएं इसी धारा की देन है।[11]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 2. योजना अप्रैल 2010, योजना भवन नई दिल्ली, पृ. 9
3. आजकल, जून 2009, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, लोदी रोड, नई दिल्ली, पृ. 14, 15
4. रचना द्विमासिक पत्रिका, अंक 64–65 जनवरी–अप्रैल, 2007, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृ. 92, 94
5. रचना द्विमासिक पत्रिका अंक 84, मई–जून, 2010, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृ. 69
6. वीणा साहित्य की मासिक पत्रिका, अक्टूबर, 2009, रवीन्द्रनाथ टैगोर मार्ग, इन्दौर, संपादक विनायक पाण्डेय, पृ. 16, 18, 20
8. दैनिक भास्कर समाचार पत्र, भोपाल, 5 नवम्बर, 2009, पृ. 5
11. स्वयं का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

इतिहास,साहित्येतिहास और इतिहास लेखन की समस्याएँ

डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन *

शोध सारांश – इतिहास जहाँ तिथियों और तथ्यों का आग्रही होता है वहीं साहित्येतिहास संवेदना और प्रवृत्तियों की परिवर्तनशीलता का आपेक्षी। अतीत की सीमाओं का अतिक्रमण इतिहास प्राय: नहीं करता तो साहित्य समय के तीनों कालखण्डों अतीत, वर्तमान और भविष्य में संचरण करते हुए कल्पना, संभावना और आदर्श की परिकल्पना बनाता स्वयं को सिद्ध करता है। इतिहास जहाँ विजेताओं की रूचियों का संकलन भर रहता है। वहीं साहित्य जनता की चित्तवृत्तियों का साक्षी बनता है। इस तरह साहित्येतिहास प्रवृतिमूलकता और उसके परिवर्तनों को अपना लक्ष्य बनाता है। यों साहित्येतिहास लेखन थोड़ा दुष्कर कार्य बन जाता है। हिंदी में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल साहित्येतिहास लेखन का कार्य पहली बार व्यवस्थित ढंग से करने को कटिबद्ध है तो इसका पहला श्रेय भी उनको ही जाता है।

शब्द कुंजी – साहित्येतिहास, प्रवृत्तिमूलकता, चित्तवृत्ति, कालविभाग, नामकरण, संचित प्रतिबिंब, इतिहास, साहित्य, हिन्दी साहित्य।

प्रस्तावना – 'जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्त्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परंपरा को परखते हुए साहित्य परंपरा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही साहित्य का इतिहास कहलाता है। जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, सांप्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है।'[1]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की यह परिभाषा हिंदी साहित्य के संविधान की प्रस्तावना जैसी है। जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब मानकर और उसकी परिवर्तनशीलता की पहचान कर उन्होंने प्रारंभ में ही जता दिया कि साहित्य का इतिहास लेखन एक गंभीर दायित्व है। हिंदी के प्रखर आलोचक मैनेजर पाण्डेय साहित्य का इतिहास क्या है? जैसे प्रश्न से गुजरते हैं तो आश्चर्य कि इस परिभाषा का पूरा प्रभाव उन पर दिखता है। अपनी पुस्तक साहित्य और इतिहास दृष्टि में वह इतिहास क्या नहीं है, उसके बारे में पहले बताते हैं कि 'साहित्य का इतिहास न तो वर्तमान से पलायन का साधन है और न अतीत की आराधना का मार्ग, वह न तो अतीत के गड़े मुर्दे उखाड़ने का फल है और न वर्तमान के कटु यथार्थ के दंश से बचानेवाला कल्पनालोक। इतिहास न अतीत की अंध पूजा है और न वर्तमान का तिरस्कार।'[2] आगे पुन: इसे आगे बढ़ाते हुए लिखते हैं, जिसमें अब भी अंतर्विरोध की शब्दावली में वह यही बताते हैं कि इतिहास क्या नहीं है। 'वह न तो रचना और रचनाकार संबंधी तिथियों और तथ्यों का कोश है और न कविवृत्त संग्रह मात्र।'[3] इतनी बातों के बाद वह एक मुकम्मल निष्कर्ष पर आते हुए कहते हैं कि 'साहित्य के इतिहास का आधार है, साहित्य के विकासशील स्वरूप की धारणा। साहित्य के विकासशीलता में आस्था के बिना साहित्य का इतिहास लेखन असंभव है।'[4]

इन दोनों आलोचकों की दृष्टियों को समझने के बाद साहित्येतिहास की विकसनशीलता की बात समझ में आती है। हम शब्दों में कहें तो वर्तमान से अतीत का और अतीत से वर्तमान का संवाद साहित्येतिहास का मुख्य लक्ष्य और उद्देश्य बन जाता है। 'कवि का काम यदि दुनिया में ईश्वर के कामों को न्यायोचित ठहराना है तो साहित्य के इतिहासकार का काम है, कवि के कामों को साहित्येतिहास की विकास-प्रक्रिया में न्यायोचित दिखा सकना।'[5] हम अब फिर से उस बात को कहेंगे कि साहित्येतिहास लेखन एक गुरूतर दायित्व है, जिसमें विकास की प्रक्रिया, चित्तवृत्तियों की परिवर्तनशीलता और साहित्य की निरंतरता का एक अनवरतु अटूट सिलसिला है।

अब हम साहित्येतिहास लेखन की कतिपय समस्यायों पर दृष्टिपात करेंगे। पहली समस्या है कालविभाजन की और इसी के साथ दूसरी समस्या नामकरण की है। यों ये दोनों समस्यायें इतिहास लेखन की पहली और अनिवार्य समस्यायें हैं। आचार्य शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में लिखा कि नामकरण के लिए मोटे तौर पर प्रवृत्तियाँ ज्यादा कायदे की चीज है। विशेषकर वीरगाथा काल या आदिकाल से संबंध में उन्होंने रचनाओं की प्रचुरता और ग्रंथों की प्रसिद्धि की बात की है। बारह प्रमाणिक रचनाओं में से प्रवृत्तियों का बाहुल्य और ग्रंथों की प्रसिद्धि के आधार पर उक्त काल का नामकरण वीरगाथा काल किया। इस तरह उन्होंने 1050 संवत् से 1375 संवत्, 1375 संवत् से 1700 संवत्, 1700 संवत् से 1900 संवत् और 1900 संवत् से अद्यतन को क्रमश: वीरगाथा काल, भक्तिकाल, रीतिकाल, और गद्य काल या आधुनिक काल कह हिंदी साहित्य के इतिहास का कालविभाजन और नामकरण किया है। भक्तिकाल में जहाँ उन्होंने प्रवृत्तियों के आधार पर उसे निर्गुण-सगुण और फिर निर्गुण को ज्ञानाश्रयी-प्रेमाश्रयी एवं सगुण को कृष्णाश्रयी-रामाश्रयी का प्रवृत्तिमूलक आधार दिया तो रीतिकाल को भी रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध और रीतिमुक्त धारा में बाँटकर उसके नामकरण और प्रवृत्तियों की परिवर्तनशीलता के साथ न्याय किया है। आधुनिक काल विचार तर्क और ज्ञान-विज्ञान का समय था तो उसे गद्य काल कह उन्होंने अपनी आलोचकीय विवेक का अद्भुत परिचय दिया है। बाद में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने आदिकाल का नामकरण देकर तर्क प्रस्तुत किये हैं। परंतु आज भी आचार्य शुक्ल द्वारा किया कालविभाजन और नामकरण निर्विवाद रूप से मान्य हैं। इस तरह इतिहास लेखन की ये दो पहली समस्यायें दोनों आचार्यों द्वारा तर्कपूर्ण तरीके से सुलझा ली गई। आज भी अगर कोई इतिहास लेखन का कार्य करे तो उसे नये सिरे से इन दोनों समस्याओं से दो चार होना पड़ेगा।

तीसरी समस्या इतिहास लेखन की विशेषकर हिंदी साहित्य के इतिहास लेखन की है कि वह पद्य केंद्रित या कवितामुखी है। यानी आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल ये कविताओं की प्रवृत्तियों के नामकरण है। रीतिकाल

* सहायक प्राध्यापक (हिंदी) राँची कॉलेज, राँची (झारखण्ड) भारत

तक तो चलिए साहित्य की मुख्य विधा कविता ही रही इसलिए उनका नाम कविता केंद्रित होना समझ में आता है। पर दिक्कत तब होती है जब गद्य केंद्रित आधुनिक काल का नामकरण भी कविता केन्द्रित है। छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, अकविता, समकालीन कविता ये प्रवृत्तियाँ कविताओं की है। जबकि नाटक, उपन्यास, कहानी निबंध, संस्मरण, रेखाचित्र, आत्मकथा, जीवनी, यात्रा वृत्तांत, रिपोतार्ज, डायरी जैसी गद्य विधाओं का नामकरण उनकी प्रवृत्तियों के आधार पर आज भी नहीं हो पाया है। कहानी उपन्यास की बात हो तो प्रेमचंद पूर्व, प्रेमचंद, प्रेमचंदोत्तर या स्वातंत्र्योत्तर; नाटक का हो तो भारतेंदु युग, प्रसाद युग, प्रसादोत्तर, स्वातंत्र्योत्तर, निबंध का हो तो भारतेंदु युग, शुक्ल युग, शुक्लोत्तर युग और स्वातंत्र्योत्तर। ये नामकरण है महत्वपूर्ण गद्य विधा नाटक, उपन्यास, कहानी और निबंध के। शेष गद्य विधाएँ यथा, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी, आत्मकथा की स्थिति तो और दयनीय है। खैर इसका कारण भी है कि इन गद्य विधाओं का बाहुल्य नहीं है और पाठकीय विवेक इन विधाओं का लेकर अब तक विकसित नहीं हुआ है। रचनाधर्मी चिंता नहीं है तो आलोचकीय विवेक भी कुंद है या सजगता नहीं है। परंतु नाटक, उपन्यास, कहानी और निबंध की तो लंबी परंपरा है। बहुत कुछ श्रेष्ठ आ चुका है। पाठक भी रूचि लेते हैं और रचनाकार भी निरंतर इन विधाओं की पताका लिए आगे बढ़ रहा है पर आलोचकीय सजगता की गुमशुदगी इन विधाओं के उचित नामकरण पर अखरती है। बाद में इन विधाओं की अलग से आलोचना परंपरा का जबरदस्त विकास हुआ लेकिन फिर भी प्रवृत्ति के आधार पर इनके नामकरण की चुनौती अब तक बरकरार है। कुल मिलाकर यह दिखता है कि साहित्येतिहास लेखन में कविताओं की प्राथमिकता और प्रियता अभी भी बनी हुई है।

कुछ और समस्यायें इतिहास लेखन को लेकर के है जिसकी चर्चा अप्रासंगिक नहीं होगी। यूँ तो हिन्दी साहित्य का इतिहास हिंदी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी में जो कुछ लिखा-पढ़ा जा रहा उसको लेकर सजग है। पर हिन्दीतर क्षेत्रों में जो हिंदी की रचनाएँ है उसकी प्रवृत्तियाँ और पहचान लगभग नदारद है। इसके साथ ही भारतेतर या विदेशों में हिन्दी भाषा में या साहित्य में जो रचनाएँ मौजूद हैं उनको लेकर भी अब तक हमारा साहित्येतिहास मौन है। आज ज्ञान, विज्ञान और संचार के आधुनिकतम दौर में जब हमारे परिचय और जानकारियों का दायरा बढ़ा है तो यह चुप्पी ठीक नहीं है। अप्रवासी साहित्य की जानकारी टुकड़ों में हमारे पास आती है पर मुक्कमल अवधारणा के अभाव में वह विकसित नहीं हो पायी है। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हम उन रचनाओं से परिचित भले हों ले पर जब तक वह हमारे इतिहास लेखन का हिस्सा नहीं बनेगी तब तक हमारी समझ अधूरी बनी रहेगी।

निष्कर्षत: हम इतिहास लेखन की कुछ महत्वपूर्ण समस्यायों कालविभाग, नामकरण, पद्य केंद्रित, हिन्दीतर और भारतेतर क्षेत्रों के हिंदी साहित्य की गुमशुदगी पर विचार करते हुए उसकी सीमाओं और उपलब्धियों पर विचार एवं विमर्श कर सकते हैं। अभी तक तो बँटवारा है, वह लगभग 1000 वर्षों का है। जबकि साहित्य समय और रचना के हिसाब से रोज बढ़ रहा है। समकालीनता के बाद साहित्य की विधाओं का इतिहास लेखन शांत पड़ा है। उत्तरआधुनिकता जैसी पारिभाषिक अवधारणाओं पर विमर्श हो रहा है, कई बदलाव नजर आ रहे हैं इसलिए यह दायित्व बन जाता है कि इतिहास लेखन की दूसरी पारी तत्काल प्रारंभ हो। वैश्विक दौर में तब हिन्दीतर, भारतेतर और अप्रवासी साहित्य का इतिहास लेखन में आना दिलचस्प और नवीनता से पूर्ण होगा इसमें कोई संदेह नहीं। आलोचना एक गुरूतर दायित्व है तो इतिहास लेखन आलोचना का संवैधानिक प्रारूप जिसका निरंतर अद्यतन होना आवश्यक ही नहीं बल्कि अनिवार्य भी है। पाठक, विद्यार्थी, अध्यापक, शोधक एवं आलोचक जितनी जल्दी तैयार हो इस इतिहास लेखन को अद्यतन करने के लिए उतना ही अच्छा। 'भाषा, साहित्य और संस्कृति के अंतरसंपर्क में हिंदी क्षेत्र और वहाँ के जन-समुदाय की संवेदना कैसे विकसित होती गई है, और साहित्य उसे किस रूप में प्रतिफलित करता है, यह इस समूचे अध्ययन की अंतर्वस्तु है। संसार को समझना दर्शन का काम है, उसे बदलना राजनीति का और उसकी पुनर्रचना साहित्य का दायित्व है।'[6]

संसार की पुनर्रचना साहित्य का दायित्व है तो आलोचना उसके दायित्व की परख है और इतिहास लेखन दायित्व और परख का अनिवार्य और रचनात्मक प्रतिफलन है। आज हमें उक्त समस्याओं को दूर कर इतिहास लेखन की नवता की ओर बढ़ना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास-आचार्य रामचंद्र शुक्ल, भूमिका-रामस्वरूप चतुर्वेदी-कालविभाग-लोकभारती, प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 2002, पुनरावृत्ति, 2013, 2014
2. साहित्य और इतिहास दृष्टि-मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, पृ0-4, शाहदरा, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1981, आवृत्ति संस्करण, 2009
3. वही, पृ0-4
4. वही, पृ0-4
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास-आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ0-24, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 2002
6. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी, आमुख, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1986, सोलहवाँ संस्करण, 2002

****

आलोचना का स्वरूप

डॉ. विजय कुमार पाण्डेय *

प्रस्तावना – 'आलोचना' शब्द का संयोजन आ+लोचनम् से हुआ है। लोचनम् 'लुच्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है देखना। 'आ' वर्ण से शब्द संयोजित हुआ है–आलोचनम्। 'आ' का अभिप्राय 'समन्नात' इस प्रकार आलोचनम् का अर्थ हुआ– वस्तु या पदार्थ के चारों ओर समग्रत: देखना। चारों ओर से देखना या परीक्षण करना आलोचना है। आलोचना शब्द का पर्याय समीक्षा या समालोचना है। सम+ईक्षा= समीक्षा और सम+ लोचना = समालोचना। ईक्षा का शब्द कोशीय अर्थ है– दर्शन या दृष्टि। जिसका तात्पर्य है 'सब प्रकार से विधि पूर्वक किसी वस्तु के देखने की व्यवस्था। इस प्रकार किसी के बाह्य और आंतरिक समस्त बातों पर विचार करके एक निश्चित मत स्थिर करना ही 'आलोचना' है।

'समीक्षा' या 'समालोचना' वह साधु तात्विक प्रक्रिया है, जिसमें मनुष्य कुछ दर्शनीय पदार्थ, वस्तु, व्यक्ति या विषय देखने की इच्छा करे और बाद में उसमें निहित तत्वों को दूसरों तक पहुँचाने का कार्य करे। इस प्रकार साहित्य के आलोचना का मुख्य क्षेत्र साहित्य के विविध पक्षों की विवेचना ही निर्धारित होती है। साहित्य के क्षेत्र में समीक्षात्मक विश्लेषणात्मक अथवा निर्णयात्मक दृष्टिकोण से ग्रंथो का अध्ययन कर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मत प्रकट करना ही 'आलोचना' कहलाता है।

बाबू गुलाबराय ने आलोचना के विषय में कहा है– 'आलोचनाओं का मूल उद्देश्य कवि की कृति का सभी दृष्टिकोणों से आस्वाद कर पाठकों को उसी प्रकार के आस्वाद में सहायता देना है, उनकी रूचि को परिमार्जित करना एवं साहित्य की गतिविधि को निर्धारित करने में योग देना है'। आलोचन का व्युत्पत्तिलम्य अर्थ 'सम्यक निरीक्षण' है। मानव को अनेक अन्य वृत्तियों अथवा संवेदनाओं की भाँति आलोचना की प्रवृत्ति भी चिरकाल से सिद्ध है। किन्तु जीवन के व्यवहार क्षेत्र की तुलना में साहित्य क्षेत्र में आलोचना का प्रवेश बाद में हुआ है।

आलोचना का अर्थ कृति विशेष के गुण–दोष के विवेचन मात्र से है। इस कारण चिरकाल तक आलोचक किसी कृति के गुण–दोषों की ओर इंगित कर देना ही अपना मुख्य कर्म समझते रहे। अब हिन्दी आलोचना का क्षेत्र विस्तृत हो चुका है और उसमें इतनी विविध रूपिणी विधियों को प्रश्रय मिल चुका है कि 'आलोचना' शब्द का अर्थ मात्र गुण–दोष विवेचन सिद्ध करना अनुचित होगा। किसी भी कृति की विशेषताओं पर उसकी उपलब्धियों एवं अभावों का मूल्यांकन करना और सहृदयों के हृदय पर उसकी प्रतिक्रिया का विश्लेषण करना, उसकी श्रेष्ठता एवं अभावों के विषय में निर्णय देना उसे श्रेणीबद्ध करना आदि अनेक कार्य आलोचना के अन्तर्गत आते हैं। डॉ. नगेन्द्र का अभिमत है– आलोचना की आत्मा कलामय है, किन्तु इसकी शरीर रचना वैज्ञानिक है। आत्मा के कलामय होने का अर्थ यह है कि आलोचना भी मूलत: आत्माभिव्यक्ति ही है, आलोचक भी किसी भी कृति के विवेचन विश्लेषण के माध्यम से उत्साहित होता है और आत्म लाभ करता है– गुलाबराय का अभिमत है– ''जिस प्रकार कवि संसार से उत्पन्न अपनी भावात्मक और विचारात्मक प्रतिक्रिया को प्रकाश में लाता है और अपने पाठकों को अपने हृदय के रस में मग्न करने का प्रयत्न करता है, उसी प्रकार आलोचक कवि की कृति से जागृत अपनी प्रतिक्रियाओं को चाहे उनका शास्त्रीय आधार हो और चाहे उनकी सूझ–बूझ गहरी पैठ और वैयक्तिक रूचि को, प्रकाश में लाकर दूसरों को अपने भावों और विचारों से अवगत करा देना चाहता है।''[1] आलोचना का विषय रसात्मक होता है और आलोचना की परिणति भी आत्मसिद्धि में होती है। ''कवि की भाँति आलोचक दृष्टा व सृष्टा दोनों होता है।''[2]

डॉ. बच्चन सिंह के अनुसार– ''जब तक काव्य की अपनी आन्तरिकता, उसके अपने नियमों, गुणवत्ता, बन्ध के सम्बन्ध में लोगों की अपनी दिलचस्पी बनी रहेगी तब तक आलोचना प्रामाणिक बनी रहेगी।''[3] हिन्दी में आलोचना अंग्रेजी के 'क्रिटिसिज्म' के पर्याय में प्रयुक्त होता है, जिसका अर्थ है मूल्यांकन अथवा निर्णय करना। वर्ष फेल्ड ने आलोचना के विषय में लिखा है– ''आलोचना कला और साहित्य के क्षेत्र में निर्णय की स्थापना है।'' जबकि डॉ. बच्चन सिंह का मानना है कि– आलोचना साहित्य की किसी रचनात्मक विधा के बौद्धिक और समीक्षात्मक विश्लेषण की ऐसी संश्लिष्ट प्रक्रिया है, जिसमें कृति के संदर्भ में उद्भूत रचनात्मकता और मूल्यवत्ता का युगपत विवेचन किया जाता है।[4] अत: कृति विशेष के रचयिता के व्यक्तित्व के प्रकाश में जब आलोचक उपयुक्त व्याख्या–विश्लेषण पूर्वक उस स्तर की अन्यकृतियों में उसके स्थान और महत्व का निर्धारण करता है तब पारिभाषिक शब्दावली में इस आलोचना की संज्ञा दी जाती है।

आलोचना सृजनात्मक साहित्य का अंग है। प्राचीन आचार्यो के अनुसार कवि और कवि की भावना में अन्तर नहीं है, क्योंकि वे दोनों ही कवि हैं, आलोचक को सहृदय होना चाहिए, न ही तो वह कवि की भावनाओं को यथार्थ रूप में ग्रहण नहीं कर सकेगा। इस सम्बन्ध में आचार्य धर्मदत्त का मत है कि– 'वासना युक्त सम्यों को ही रस का आस्वादन प्राप्त होता है।' रीति कालीन आचार्यो में भिखारीदास ने भी यही धारणा व्यक्त की है– 'रस कवित्त परिपक्वता जाने, रसिक न और।' पाश्चात्य कवि– आचार्यो में बेनजानसन का भी मत है– 'किसी कवि के विषय में मत निर्धारित करना कवि का ही कार्य है और वह भी सब कवियों का नहीं। केवल मुख्य कवियों का ही साध्य है।' मैथ्यू आर्नल्ड ने लिखा है– 'प्रत्येक साहित्य का लक्ष्य और परणति 'जीवन की आलोचना है।' वस्तुत: काव्य की रचना हृदय के आवेश से सम्बद्ध है, अत: उसमें प्राप्य आत्मिक आनन्द के आस्वादन के लिए भी कवि– हृदय को रखना ही चाहिए।

आलोचक का धर्म तो कवि द्धारा रचित सृजनात्मक साहित्य की विशेषताओं का उद्धाटन करना है, पाश्चात्य आलोचक हरबर्ट रीड के

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, बरही, जिला- कटनी (म.प्र.) भारत

अनुसार– ''काव्य और आलोचना के क्षेत्र में पूर्णतया भिन्नता है: वे भिन्न भावभूमि पर स्थापित हैं और यदि इसमें प्रवृत्त होता है तो उत्तम आलोचक नहीं बन सकता। ''यह सत्य है कि आलोचक में मूलभूत प्रतिभा के बीच अपेक्षित है। हिन्दी लेखकों में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने आलोचकों के अनुबन्ध पर बल देते हुए कहा है कि – 'कवियों के कार्यो से आनन्द का यथेष्ट अनुभव वहीं कर सकते हैं, जिनका हृदय इन्हीं के सदृश, किम्बहुना इनसे भी अधिक सुसंस्कृत कोमल और भावग्राही होता है। अत: कवि ऐसे समीक्षकों को काव्य के आनन्द की अनुभूति करने के लिए अपनी कृति को अस्वादनीय बनाते है।'

जिस प्रकार सामान्य जीवन में हम किसी भी व्यक्ति, वस्तु अथवा क्रिया–कर्म के प्रति प्रवृत्ति रखते हैं, लेकिन संस्कारों, समाज बोध के स्तर तथा चिन्तन क्षमता तथा अन्य व्यक्तिगत विशेषताओं के अनुरूप हमारी प्रतिक्रियाओं में अन्तर रहता है, उसी प्रकार साहित्य की आलोचना भी प्रतिक्रियाओं की देन है, किन्तु ये प्रतिक्रियाएँ व्यवहार में न आकर एक प्रकार के वैज्ञानिक संयम से अनुशासित रहती है। अत: आलोचना के लिए आलोचक को एक निश्चित विचार क्रम और शिल्प–बोध अपनाना होता है। आलोचक सर्व प्रथम आलोच्य कृति का अध्ययन करके उसमें निहित मूल भाव को ग्रहण करता है। इस प्रकार आलोचना पद्धति के मुख्य तीन अवयव है– (1) विषय बोध (ख) व्याख्या–विश्लेषण (ग) एवं मूल्यांकन। किसी भी कृति के विषय में अध्ययन करने से पूर्व आलोचक के लिए यह सबसे आवश्यक है कि उसे आलोच्य विषय का पूर्ण बोध हो। अगर आलोचक को आलोच्य कृति का पूर्ण बोध नहीं होगा तो निष्पक्ष आलोचना करना असंभव होगा। आलोचक के लिए सिर्फ विषय–बोध के ज्ञान से पर्याप्त पूर्ति नहीं होती– बल्कि कृति के अध्ययन के बाद कृति से प्रभाव ग्रहण की क्षमता भी आलोचक के लिए अनिवार्य है। उपयुक्त विषय बोध के द्वारा ही कृति से प्रभावित होने पर आलोचक विशेषताओं का उद्घाटन व मूल्यांकन कर सकेगा। लेकिन किसी भी आलोच्य कृति के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रिया तो संस्कार, आयु तथा स्तर सापेक्ष है। जैसे रीतिकालीन कविता में श्रृंगार के कारण एक भक्त की प्रतिक्रिया शायद अरूचिकार होगी, किन्तु आनन्द प्राप्त करने वालों के प्रति वह रीतिकालीन कविता परमानन्द को प्राप्त करने वाली है। शायद इसलिए बालकृष्ण शर्मा नवीन ने समीक्षा में सहृदयता के समावेश को आवश्यक माना है और देश–विदेश के साहित्य की उसी देशी की सांस्कृतिक विचारधारा की पृष्ठ भूमि में समीक्षा करने पर जोर दिया है–''प्रत्येक देश की कुछ विशेषताएँ होती हैं, उनको ध्यान में रखे बिना, उस देश के साहित्य, उस देश की कथा आदि के सम्बन्ध में यदि मत–प्रदान किया जाय तो वह एक अशुद्ध बात होगी। किसी देश के साहित्य की आलोचना उस देश के गुण विशेष की ओर दृक्पात किये बिना की ही नहीं जा सकती।''[5] वैसे भी रचनाकार अपने देश में निहित मूलभूत समस्याओं को केन्द्र में रखकर रचना करता है। फ्रांसीसी समीक्षक टेन– ''काव्यालोचन के लिए कवि की जाति गत मनोवृत्तियों, सामाजिक–राजनीतिक परिस्थितियों और काल दशा को दृष्टिपथ में रखने पर बल दिया है।''[6]

आलोचक की प्रतिक्रियाओं को आयु की भिन्नता भी भिन्न कर देती है। क्योंकि समीक्षक को जो कृति युवावस्था में अच्छी लगती तो जरूरी नहीं है कि, वृद्धावस्था में भी उसी प्रकार की कृति प्रिय हो, समय के साथ–साथ विचारों में भी परिवर्तन होता है इस परिवर्तन के साथ आलोचकों की प्रतिक्रियाएँ भी भिन्न हो सकती हैं। इसी प्रकार अभावों के बीच में गुजर करने वाले आलोचक, और सभी प्रकार से सम्पन्न आलोचक की प्रतिक्रियाएँ भी जरूरी नहीं कि एक ही समान हो। आलोचना समीक्षा पद्धति में यह स्थिति प्राय: उभरती रहती है। अत: कृति की प्रियता–अप्रियता के विषय में इतना ही कहा जा सकता है कि अधिकाधिक सहृदय समाज की कृति विशेष के प्रति जो प्रतिक्रिया है, वही प्रामाणिक है।

व्याख्या–विश्लेषण आलोचना का दूसरा अवयव है। इसके लिए समीक्षक को काव्य शास्त्र, सौन्दर्यशास्त्र, मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र का अध्ययन आवश्यक होता है। किसी भी आलोच्य कृति की आलोचना करते समय आलोचक के सामने चार तथ्य होते हैं– (अ) काव्य का बाह्यकार (आ) उसमें निहित भाव (इ) कवि की मन:स्थिति और (ई) लेखक की समकालीन परिस्थितियाँ जिन्होंने कवि की मन:स्थिति का निर्माण किया। आलोचक का कर्तव्य है कि वह आलोचना में इन सभी तथ्यों को उचित स्थान दे। काव्य शास्त्र के आधार पर कृति के रूप में विवेचन, सौन्दर्यशास्त्र के आधार पर उसके भावगत सौंन्दर्य का उद्घाटन, मनोविज्ञान के आधार पर मन:स्थिति का विश्लेषण समाजशास्त्र के आधार पर युगीन परिस्थितियों का वर्णन और कवि पर उनके प्रभाव का विश्लेषण आलोचक का चरम लक्ष्य है। अत: साहित्य का मूल तत्व भाव है किन्तु भाव विशेष की प्रियता–अप्रियता लेखक और उसकी परिस्थितियों पर निर्भर करती है। यदि लेखक की परिस्थितियाँ विषम हैं तो उसके काव्य पर आलोचक का प्रभाव अवश्यक पड़ेगा। किन्तु यदि आलोचक इस ओर ध्यान नहीं देता तो वह रचनाकार के प्रति न्याय नहीं कर सकेगा। अत: व्यवस्था–विश्लेषण के क्रम में आलोचक के लिए उक्त चारों तथ्यों का अनुसंधान अपेक्षित है।

'आलोचक' व्याख्या विश्लेषण के उपरांत कृति को समग्रत: दृष्टि में रखते हुए, रचनाकार के साहित्यिक महत्व का आलेखन करता है, जो कि आलोचना का अन्तिम चरण है। किन्तु कुछ विद्धानों के मतानुसार आलोचक को निर्णय करने का अधिकार नहीं है, उसका कार्य तो कृति के सौन्दर्य का उद्घाटन करना है। किन्तु हम देखते हैं कि जब आलोचक कृति से प्रभावित होता है, तभी उसके मन में एक निश्चित धारणा बन जाती है, व्याख्या विश्लेषण से तो पुष्टि मात्र होती है। अतएव कृति के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को व्यक्त करते हुए आलोचक उसके महत्व को भी निर्धारित कर देता है, जबकि आलोचक का दायित्व यह भी है कि वह पाठ्क तथा कवि का मार्गदर्शन करे। बाबू गुलाबराय के अनुसार – ''जिस प्रकार शासन के आलोचक शासन को शिथिलता से बचाये रखते हैं, उसी प्रकार साहित्य के आलोचक साहित्य में शिथिलता और कुत्सितता नहीं आने देते और उसकी गतिविधि निर्धारित करने में सहायक होते हैं।''[7]

अत: स्पष्ट है आलोचक को रचना विशेष के सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया अथवा निर्णय स्पष्ट रूप में व्यक्त करता है, तथा आलोचक व्यक्तिगत रूचि, नैतिक मूल्यों, शास्त्रलब्ध ज्ञान तथा मानवता के शास्वत मूल्यों से किसी के भी आधार पर अपना निर्णय दे सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. काव्य के रूप, गुलाबराय, पृष्ठ–243
2. काव्य के रूप, गुलाबराय, पृष्ठ–243
3. साहित्य का समाजशास्त्र, डॉ0 बच्चन सिंह, पृष्ठ–55
4. आलोचक और आलोचना, डॉ0 बच्चन सिंह, पृष्ठ–55
5. क्लासि, बालकृष्ण शर्मा नवीन, पृष्ठ–19
6. सिद्धांत और अध्ययन, गुलाबराय, पृष्ठ–301
7. काव्य के रूप, गुलाबराय, पृष्ठ–244

श्रीकृष्ण 'सरल' के काव्य रूपों में राष्ट्रीयता के स्वर

डॉ. दीपक कुमार गुप्ता *

प्रस्तावना –श्रीकृष्ण 'सरल' ने देश और मातृभूमि के प्रति उस समय लेखन प्रारंभ किया जब भारत स्वतंत्र नहीं था। राष्ट्र, शहीदों और राष्ट्र के लिए समर्पित होने वाले मां धरती के वरद पुत्रों पर लेखन को ब्रिटिस सरकार घोर अपराध मानती थी और दंडित करती थी। परन्तु इन अत्याचारों का सरल जी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उन दिनों अंग्रेजी अत्याचार चरम सीमा में था। 'सरल' जी ने स्वयं तो अंग्रेजी अत्याचारी शासन की चुनौती को स्वीकार किया, साथ ही अपनी लेखनी से दूसरों में भी नवचेतना तथा नवजागरण के लिए समर्पित होने का भाव भरा। वे अपनी आग्नेय लेखनी की लपटों से विदेशी सत्ता का मुंह झुलसाने लगे। उन्होंने अंग्रेजों को 'फूट डालो और राज करो' नीति का मुंह तोड़ जवाब दिया और खून का बदला खून तथा हिंसा के लिए प्रतिहिंसा, ईंट का जवाब पत्थर से देकर बलपूर्वक अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकने की बात कही। अपनी इस निर्भीकता का उन्हें दुष्परिणाम भी भुगतना पड़ा। वे अनेक बार जेल गये तब भी उन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेते हुए लेखन कार्य को नहीं छोड़ा।

देश की खोई हुई आजादी प्राप्त करने के लिए 'सरल' जी ने अंग्रेजी सरकार को सीधी और खुली चुनौती दी और ललकार कर नवयुवकों का आव्हान कर कहा कि आजादी प्राप्त करने के लिए आवश्यक हुआ तो हम हिंसा के द्वारा आजादी की बात करना – बड़े हिम्मत और साहस की बात थी। 'सरल' जी ने ऐसा ही अद्भुत साहस दिखाते हुए साहित्य सृजन किया, उनकी कविता – 'मेरी इस छोटी कुटिया में क्यों डाली तुमने चिनगारी' का एक उदाहरण देखिए –

'मेरी इस छोटी कुटिया में, क्यों डाली तुमने चिनगारी?
मैं कहता पलटें चूम-चूम आई अब मेरी भी बारी
मुझमें गौरव का उदय हुआ, भावना जगी विप्लवकारी
यमेरी इस छोटी कुटिया में, क्यों डाली तुमने चिनगारी।।'[1]

सन् 1941-42 ई. में 'सरल' जी ने वह चित्र बना आज साकार कविता के माध्यम से एक चित्रकार को, 'भारत माता' की वस्तुस्थिति का चित्रण करने को कहते हुए, वे लिखते हैं–

'चितेरे! चित्रित करके दिखा विजन के घर-घर बन्दनवार
बना वह चित्र आज साकार'[2]

असहयोग आंदोलन की विफलता और क्रांतिकारियों के बढ़ते हुए प्रभाव ने 'सरल' जी की राष्ट्रीय चेतना को क्रांतिकारियों की ओर उद्धृत कर दिया। गाँधी जी देश को अहिंसा से जीतना चाहते थे। इसी कारण वे क्रांतिकारियों का विरोध करते थे। इसी संदर्भ में 1939 के त्रिपुरी सम्मेलन की अध्यक्षता के लिए कई प्रांतों की कांग्रेस कमेटियों ने दूसरी बार सुभाषचंद्र बोस का नाम प्रस्तावित किया तो महात्मा गाँधी जी उनका विरोध करते हुए पंडित नेहरू को उकसाया परन्तु नेहरू जी स्वयं पीछे हट गए तब गाँधी जी ने पट्टाभि सीता रमैया को सुभाष के मुकाबले खड़ा कर दिया परन्तु वे बुरी तरह पराजित हुए। इस घटना से यह सिद्ध होता है कि गाँधी जी का स्नेह सुभाष पर नहीं, जवाहरलाल नेहरू पर था। वास्तव में वे क्रांतिकारियों का समर्थन नहीं करते थे परन्तु अहिंसा की भाषा अंग्रेजों को समझ में नहीं आ रही थी तब 'सरल' जी ने 'मोहन'! क्यों आज अहिंसा का तुम पाठ पार्थ को पढ़ा रहे? उनका मानना था कि द्वापर युग में मोहन कृष्ण ने अर्जुन को शत्रुओं का संहार करने के लिए शस्त्र उठाने को उत्प्रेरित किया था, जो कि स्वयं उसके परिवार के थे, ये अंग्रेज तो बाहर से आए हैं जो सोने की चिड़िया कहे जाने वाले भारत को कंगाल कर रहे हैं। उनके विरोध में गाँधी जी (मोहन) क्यों आज अर्जुन रूपी जवाहर को अहिंसा का उपदेश दे रहे हैं। प्रस्तुत है कविता के पद–

'मोहन! क्यों आज अहिंसा का तुम पाठ पार्थ को पढ़ा रहे?
क्यों गिरा रहे उसको नीचे, क्यों नहीं शिखर पर चढ़ा रहे?[3]

इसी प्रकार 1931 में, 'गाँधी-इरविन-वार्ता' असफल हो चुकी थी। वाइसराय लॉर्ड इरविन ने गाँधी जी से छल किया था। वह छल का धृतराष्ट्र बनकर गाँधी जैसे भीम को कुचलना चाह रहा था। उस समय गोल मेज-परिषदों का आयोजन असफल हो गया था। अगस्त क्रांति का भी दमन किया जा चुका था और नए सिरे से संधि-वार्ता के लिए क्रिप्स-मिशन भारत भेजा गया था। परन्तु ब्रिटिश शासन स्वराज देने की बात न करके संघीय स्वराज्य, औपनिवेशिक स्वराज्य या स्वराज्य जैसी कोई चीज़ शब्दावली में भारतीयों को उलझाये रखना चाहती थी। इन परिस्थितियों में गाँधी जी को सम्बोधित करते हुए 'सरल' जी ने यसंधि-वार्ता नहीं चलाओं कविता लिखी। प्रस्तुत कविता के पद यहाँ द्रष्टव्य हैं–

'संधि-वार्ता नहीं चलाओं
देश जल रहा धू-धू करके, बातों में न उसे उलझाओ
संधि-वार्ता नहीं चलाओं'[4]

इसी तरह 'राष्ट्र की चिंता' में 'सरल' जी ने व्यंग्य के माध्यम से देश के दुश्मनों को बाहर खदेड़ कर राष्ट्र की चिंता की बात कही है। हमारे देश में क्रांतिकारी वर्ग ऐसा था, जिसे अपने घर की चिंता न होकर राष्ट्र की चिंता थी और इस चिंता में वे घुले जा रहे थे–

'आओ हम राष्ट्र की चिंता करें,
आओ हम राष्ट्र की नसों में अपना बीमार खून भरें'[5]

सर्वस्व, समर्पण और त्याग द्वारा ही लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए स्वाधीनता आव्हान संबंधी रचनाओं में 'सरल' जी ने देशवासियों को अपना सर्वस्व-त्याग और समर्पण की प्रेरणा देते हुए कहा है–

'आज देश की आजादी हित, करना हर कुर्बानी है।
आज शत्रु के शोणित से ही हमको प्यास बुझानी है।[6]

'सरल' जी का समस्त लेखन का मूल स्वर राष्ट्रीयता का स्वर ही रहा है।

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बुढ़ार (म.प्र.) भारत

उन्होंने अपना लेखन प्रारम्भ भी इसलिए किया कि ब्रिटिश शासन को उखाड़ कर अपनी मातृभूमि पर अपने राज्य की स्थापना की जाए और अत्याचारों का डटकर मुकाबला किया जाए। उनके देश-भक्ति पूर्ण गीतों में फिरंगी अत्याचारियों के लिए सीधी ललकार है और उनसे टकराने का सीधा संकल्प 'सरल' जी के इस प्रकार के गीतों में इन अत्याचारों पर सब कुछ कुर्बान करने की बात कही गई है-

'अनाचार, अत्याचारों की होली हमे जलानी है,
आज देश की आजादी पर करना हर कुर्बानी है।'[7]

'सरल' जी का देशवासियों से आव्हान था कि यदि मानव शरीर प्राप्त किया है, तो इस ईश्वर द्धारा प्रदत्त अमूल्य धरोहर को व्यर्थ मत जाने दो। घुट-घुटकर जिने से अच्छा है कि बलिदान हो जाए। देश के लिए सब कुछ समर्पित कर दो न की भाग्य को कोसते हुए बैठे रहो, उठो और तैयार हो जाओ क्योंकि आह भरने से दर्द कम नहीं होगा, इसके लिए कर्म की धार को, तलवार से ही पैना बनाओ और स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रयास में जुट जाओ-

'विश्व में कुछ भी असंभव नहीं, निश्चय हो जो,
जय का आनंद अधिक होता है, पराजय हो जो,
जिन्दगी अभी हमें और सुहानी लगती-
अपने हर काम में गति ताल और लय हो जो'[8]

भारत को स्वतंत्र कराने का काम हमारा है- केवल हमारा। वह उत्तरदायित्व हम और किसी और पर नहीं डालेंगे क्योंकि यह बात हमारे राष्ट्रीय सम्मान के विरूद्ध होगी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'सरल' जी का सम्पूर्ण काव्य राष्ट्र के लिए समर्पित है। क्रांतिकारियों के प्रति उनकी सच्ची श्रद्धांजलि है। गाँधी जी के विचारों और सिद्धांतों से वे पूर्णरूपेण सहमत हैं। फलत: 'सरल' जी के काव्य रूपों में राष्ट्रीयता के स्वर हमारे हृदय को उल्लासित और जागृत करने वाले हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीकृष्ण सरल - कु. गोमती शनकुशल, पृष्ठ-30
2. श्रीकृष्ण सरल - कु. गोमती शनकुशल, पृष्ठ-30
3. श्रीकृष्ण सरल - कु. गोमती शनकुशल, पृष्ठ-42
4. श्रीकृष्ण सरल - कु. गोमती शनकुशल, पृष्ठ-44
5. राष्ट्र की चिंता - श्रीकृष्ण 'सरल' पृष्ठ-52
6. श्रीकृष्ण सरल - कु. गोमती शनकुशल, पृष्ठ-30
7. काव्य कुसुम - श्रीकृष्ण 'सरल' पृष्ठ-54
8. श्रीकृष्ण सरल - कु. गोमती शनकुशल, पृष्ठ-57
9. कालजयी सुभाष (जीवनी) श्रीकृष्ण 'सरल' पृष्ठ-533

****

वर्तमान में आहत नैतिक मूल्य

डॉ. बिन्दू परस्ते *

प्रस्तावना – संस्कृति 'एक पारिभाषिक शब्द है, इसकी शब्दगत व्युत्पत्ति है, सम+कृ+क्ति=संस्कृति। अर्थात् कृ धातु से क्तिन प्रत्यय और सम उपसर्ग लगाने से संस्कृति, शब्द बनता है जिसका अर्थ होता है, परिमार्जन अथवा परिष्कार। शिष्टता, सौजन्य, शुद्धता एवं परिनिष्ठता के लिए भी संस्कृति शब्द का प्रयोग किया जाता हैं।

कुछ विद्धानों ने संस्कार, संस्कृत और संस्कृति के एक ही धातु एवं उपसर्ग रूपों में तीन पृथक-पृथक अर्थ किए है। संस्कार को परिमार्जित स्वभाव, संस्कृत को परिमार्जित वाणी एवं संस्कृति को परिमार्जित युग या समाज कहा जाता है, किसी भी संस्कृति का मुख्य लक्ष्य शारीरिक, मानसिक व आत्मिक शक्तियों का विकास करना है, संस्कृति मानव के समाजिक सम्बन्धों व व्यवहारों को निश्चित करती है। इस प्रकार संस्कृति से आशय मनुष्य की मानसिक, नैतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं कलात्मक जीवन की समस्त उपलब्धियों की समग्रता से है। वास्तव में संस्कृति के अंतर्गत भौतिक व अभौतिक तत्वों की वह जटिल सम्पूर्णता सम्मिलित होती है, जिसे हम प्राप्त करते है तथा जिसमें मध्य हमारा सम्पूर्ण जीवन व्यतीत होता हैं।

भाषा और व्यक्तित्व में अविनाभाव सम्बन्ध है। भाषा व्यक्ति का निज भाव हैं। व्यक्तित्व निर्माण में भाषा की अहं भूमिका है, भाषा के मूल में व्यक्ति का संस्कार, जीवन का अनुभव और परिवेश कार्य करता है। इस कृति में भारतीय संस्कृति का स्वरूप और विशेषताएँ भारतीय समाज व्यवस्था, संस्कार, उद्योग, व्यापार, शिल्प और कला न्याय प्रणाली, धर्म, दर्शन, नीति, संगीत और कला को व्याख्यायित किया गया है, इन सभी संदर्भो को भारतीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संदर्भो में समन्वयीकरण करके रेखांकित किया गया है, चिंतको ने भारतीय संस्कृति को अनेक रूपों में व्याख्यायित किया है किसी ने हिमालय, किसी ने वटवृक्ष और किसी ने महासागर कहा हैं।

ये सभी पक्ष भारतीय संस्कृति को पूरी तरह रेखांकित नहीं कर पाते। भारतीय संस्कृति दूर्वा है। इसमें अनेक संस्कृति एवं सभ्यताओं का विलीनीकरण हुआ है। इसी रूप में संस्कृति दर्शन और सभ्यता प्रदर्शन हैं, अब हम बात करेंगे नैतिक मूल्यों की। सबसे पहले यह जाना आवश्यक है कि, नैतिक मूल्य वास्तव में क्या है ? वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की चर्चा समाज में क्यों छाई हुई है, तो हम कहेंगे कि नैतिक मूल्य वे मापदण्ड है, जो हमें उचित अनुचित की पहचान कराते है। सही गलत की समझ हमारे अंदर विकसित करते है। अच्छाई और बुराई के व्यवहार को समझने में हमारी मदद करते है। नैतिक मूल्य किसी भी समाज के आदर्श होते है, जिनके प्रति व्यक्ति श्रद्धा व्यक्त करता है। नैतिक मूल्य सम्बन्धित समाज की विशिष्ट एवं अमूल्य निधि होते है। नैतिक मूल्यों से मनुष्य के व्यक्तित्व की पहचान होती है। व्यक्ति के आचार व्यवहार में नैतिक गुणों का अहम् योगदान होता है।

नैतिक मूल्यों के अभाव में व्यक्ति कभी 'मानव नहीं बन सकता भारतीय संस्कृति में मानव में ही सभी नैतिक मूल्यों का समन्वय पाया जाता है। विश्व में अनेक संस्कृतियॉ पाई जाती है किन्तु भारतीय संस्कृति ही ऐसी संस्कृति है, जिसमें सभी मानवीय मूल्य समाहित दिखाई देते है। नैतिक मूल्यों में भारतीय विद्धानों ने आठ गुणों को सर्वोपरि माना है। इन मूल्यों में सर्वप्रथम एवं प्रमुख गुण है शील। शील उसका सर्वप्रमुख और महत्वपूर्ण गुण है। शील से तात्पर्य मनुष्य का मर्यादित आचरण, शालीनता इत्यादि। चूँकि शील का भारतीय समाज में मुख्य स्थान है, इसलिए शील का गुण भारतीय नैतिक मूल्यों का सर्वोपरि गुण है। दूसरे स्थान पर आता है, त्याग का गुण। भारतीय संस्कृति में त्याग अर्थात् तपस्या के बराबर उसकी तुलना की जाती है। मनुष्य में त्याग किसी भी हद तक करने की भावना होनी चाहिए। हमारे त्याग से यदि किसी अन्य व्यक्ति को सुख मिलता है वह त्याग किसी भी बड़े सुख से कम नहीं होगा। नैतिक मूल्य का तीसरा गुण है दया। दया की भावना वह भावना है हर व्यक्ति के मन में कहीं न कहीं छुपी हुई रहती है। परन्तु मनुष्य उसे सामने नहीं लाता। मनुष्य को हर प्राणियों के प्रति दया का भाव मन में रखना चाहिए किसी भी व्यक्ति से निर्दयता पूर्वक व्यवहार न कर उसका दिल नहीं दुखाना चाहिए। मूक प्राणियों पर हमें दया रखना चाहिए उन्हें प्रेम पूर्वक व्यवहार करना सिखाना चाहिए। नैतिक मूल्य का चौथा महत्वपूर्ण गुण है प्रेम अर्थात् सभी व्यक्तियों से प्रेम पूर्वक आचार व्यवहार करना चाहिए प्रेम पूर्वक व्यवहार करने से दुश्मन भी झुक जाते है और शत्रुता भूलकर एक साथ मिलकर कार्य करते है। नैतिक मूल्य का अगला गुण है सत्य, मनुष्य को हमेशा सत्य बोलना चाहिए। सत्यता मन वचन एवं कर्म में होना चाहिए, हमारे पूर्वजों ने भी कहा है कि, ईश्वर ही सत्य है और सत्य ही शिव है। सत्य और अहिंसा के ब्रम्हास्त्र द्धारा ही महात्मा गांधी ने अंग्रेजों को देश से निर्वासित किया था। सत्य का गुण नैतिक मूल्यों में एक अहम् और सर्वप्रमुख गुण होता है। नैतिक मूल्यों का अगला गुण ईमानदारी है। ईमानदार व्यक्ति की अपनी एक विशिष्ट पहचान होती है, ईमानदारी मनुष्य को बचपन से ही माता-पिता के द्धारा विरासत में मिली होती है, जो आजीवन हमारे साथ रहती है मनुष्य को अपने कर्त्तव्य के प्रति हमेशा ईमानदार रहना चाहिए। उसे जो भी कार्य दिया जाए उसे वह निष्ठापूर्वक करें। नैतिक मूल्य के अगले गुण में आती है सहिष्णुता। सहिष्णु का तात्पर्य सभी धर्म अच्छे है, सभी में अच्छी बातों का अच्छे गुणों का समावेश है, नैतिक मूल्यों का अंतिम महत्वपूर्ण गुण है विनम्रता। व्यक्ति के व्यवहार में विनम्रता दिखनी चाहिए। विनम्रता पूर्वक व्यवहार करने वाले व्यक्ति के साथ सभी अच्छा व्यवहार करते है। विनम्रता से व्यक्ति का व्यक्तित्व निखरता है, विनम्र व्यवहार से पत्थर के समान हृदय वाला व्यक्ति भी पिघल जाता है। इन गुणों से व्यक्ति का जीवन तो सुधरता ही है साथ ही परिवार, समाज और राष्ट्र भी आध्यात्मिक विकास करता है। देश में शांति एवं सुखी जीवन के लिए नैतिक मूल्यों की अत्यन्त आवश्यकता है।

आज के वैज्ञानिक व प्रौद्योगिकी के युग में शिक्षा के प्रसार के बावजूद

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर, (म.प्र.) भारत

मूल्यों में ह्रास दिखाई दे रहा है। आज हमारे देश में मूल्यों की जो अवमानना हो रही है, वह गहन चिंतन की ओर प्रेरित करती है। राजनीतिक सामाजिक व धार्मिक मान्यताओं के नाम पर जिस प्रकार से मूल्य हीनता अंकुरित हो रही है सिद्धान्तों की परिभाषा देने वाले व्यक्तित्व जिस प्रकार से स्वार्थ की गठरी में बंधा हुआ है, भारतीय इतिहास के साथ छेड़छाड़ भी मॉ भारती को शर्मिन्दा किए हुए है, ये मूल्यों में गिरावट की पराकाष्ठा हैं।

प्राय: सभी शिक्षाविद व मनीषी शिक्षा में जीवन मूल्यों के समावेश पर बल देते रहे है, स्वामी विवेकानन्द ने कहा था – 'हमें वह शिक्षा चाहिए जिससे की चरित्र बनता है मन की शक्ति बढ़ती है, प्रतिभा का विस्तार होता है और आदमी अपने पैरों पर खड़ा हो सकता हैं। परन्तु आज हमारी बुद्धि भी शिक्षा को विषयों के घेरे के बाहर करके स्पष्ट नहीं देख पाई है। इसी विचारधारा के विद्वानों ने नैतिक शिक्षा को स्कूल विषय बनाकर मूल्य परक शिक्षा के भविष्य पर प्रश्न-चिन्ह लगा दिया है। इसी तारतम्य में शिक्षा आयोग ने अपने प्रतिवेदन में कहा है – 'विद्यालय शिक्षाक्रम में एक गम्भीर दोष यह है कि, उसमें सामाजिक नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा की व्यवस्था की कमी है।

नैतिक मूल्य व्यक्ति के व्यवहार के रूप में व्यक्ति के आचरण का आइना दिखाते है, व्यक्ति का व्यवहार दूसरे लोगों के साथ कैसा है। भाषा, बड़ों के प्रति आदरभाव छोटों से स्नेह उसको अच्छा या बुरा बनाते है। समाज में रहकर व्यक्ति को उसके नियमों का पालन करना पड़ता है, ये नियम ही सामाजिक मूल्य कहलाते है। जैसे विवाह संस्कार में विश्वास, चोरी न करना, मर्यादित आचरण करना। नई दिशा नीति 1986 ने अपनी शिक्षा योजना पृथक से निर्मित की। इसकी कुछ नई संकल्पनाएँ भी थी, जिसमें नैतिक मूल्यों का महत्व स्वीकार किया गया क्योंकि स्वस्थ नैतिकता के विकास से व्यक्ति 'भाग्यवाद' के स्थान पर अपने कर्म पर विश्वास करेगा। चूँकि समाज में परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा का सशक्त साधन है।

इस नीति में महत्वपूर्ण बात यह रही है कि, इसमें औपचारिक शिक्षा तथा सांस्कृतिक परम्पराओं के बीच विरासत के संरक्षण तथा नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना पर विशेष बल दिया गया है।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में आज के नव युवकों में नशे की बढ़ती हुई, प्रवृत्ति, अनुशासनहीनता तथा शिक्षकों के प्रति अनादर की भावना से मुक्त करने के लिए हमें अपने नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना करनी होगी और परस्पर मतभेद, धर्मान्धता, अंधविश्वास, स्वार्थपरता आदि को दूर फेकना होगा तभी राष्ट्र का स्तर ऊँचा रहेगा।

आज का युग विज्ञान का युग है, इस युग हर मनुष्य मशीनों से लेस हो चुका है, उसका भावनात्मक जुड़ाव व्यक्तियों से कम होता जा रहा है। अपने साथियों , परिवार और समाज के साथ समय बिताने का वक्त मनुष्य के पास नहीं है, वह मशीनों से बाते करने में लगा हुआ है। आज इस बात की महत्वपूर्ण आवश्यकता है कि, युवा वर्ग खासकर अपने परिवार समाज और अपने देश के प्रति अपने दायित्वों का निर्वाह ईमानदारी से करें। अपने आप में नैतिक मूल्यों के गुणों को विकसित करें। नैतिक मूल्य ही व्यक्ति का उज्जवल भविष्य निर्धारण करते है। सभी व्यक्तियों से नैतिकता में रहकर आचार व्यवहार करें। युवा वर्ग से यही आशा है नैतिकता से परिपूर्ण गुणों से ही हमारे देश का नाम विश्व में ऊँचा रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नैतिक मूल्य और भाषा – डॉ. प्रतिभा जोशी।
2. नवीन शोध संसार – आशीष नारायण शर्मा।
3. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा – डॉ. के.एन. शास्त्री।
4. शिक्षा के आयाम – डॉ. सत्यप्रकाश पंचौली।

****

मीरा की भक्ति में प्रेम की उपासना

डॉ. मनीषा सिंह मरकाम *

प्रस्तावना –मीराबाई अमर काव्य की प्रणेता हैं। उन्होंने अपने पदों की रचना आत्मा की गहराइयों से की है। मीरा ने अपने काव्य के माध्यम से लौकिक जगत की शाब्दिक सृष्टि तो की है किन्तु वहीं लौकिक शब्द भावनाओं के आलौकिक जगत में विवरण भी करने लगा है। उन्होंने अपने शब्दों की ऐसी चैतन्यमयी सृष्टि कर दी है, जिसके द्वारा इस नश्वर जगत के लोकमानस पर अमोघ प्रभाव पड़ा है। उनकी इस कवित्व शक्ति में नारी सुलभ कोमलता एवं हृदय की मधुर और सरस वेदना भरी हुई है, जो अपने समकालीन किसी भी कवि महाकवि के काव्य में उपलब्ध नहीं है। वस्तुत: मीराबाई साहित्य, संगीत और भक्ति की त्रिवेणी तो है ही, पर इसके अलावा उनके गीतों में केवल यही भक्ति नहीं बोलती विश्व की मानवता का दुख–दर्द और विद्रोह भी बोलता है। मीरा ने अपने पारिवारिक परिवेश और सामाजिक परिवेश से जो भी सुख–दुखात्मक अनुभव लिए हैं, वे मीरा काव्य में महत्वपूर्ण मूल्यबोध हैं। वर्तमान में मूल्यबोध अत्यंत प्रासंगिक हो गया है, आधुनिकता और भौतिकता के सागर में हम पूर्णत: डूब चुके हैं उसमें गोता लगा रहे हैं, इस नरक रूपी सागर से निकालने का कार्य अब मूल्य का हो गया है, पश्चिमीकरण की चाहत ही हमें हमारे मूल्यों से दूर रख रही है। इसलिए वर्तमान में बौद्धिक वर्ग ने संत–सत्संग समागम पर विचार बनाए हैं और लोकमानस पर भारतीय मूल्यों का प्रभाव रहे इसलिए प्रयासरत हैं।

वस्तुत: मूल्य एक धारणा है। जिसे अलग से कहीं लटकाना नहीं है, जो मानस मात्र के साथ हमेशा विद्यमान रहती है। मूल्य हमारे अंदर चल रहे विचारों की इकाई है, जिसके आधार पर ही हमें अपना जीवन जीना चाहिए। इसलिए मनुष्य में संवेदना और उन संवेदनाओं की सार्थकता होना आवश्यक है। संवेदनाओं के बिना मूल्य की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मनुष्य को मूल्य का बोध होना या मूल्य से हमारी सोई हुई चेतना जागृत होना यही मूल्य का एहसास और मूल्यबोध है। वैसे तो मीरा के काव्य में व्यक्ति प्रतीति है याानि उनका काव्य जनमानस के हृदय में परितोष, आनंद, आपूर्ति, प्रेरणा, विवेक और सार्थकता की अनुभूति या संवेदना जागृत करने में सहायक है। उनका कृतित्व प्रत्येक व्यक्ति को विद्युत तरंगों की तरह ऊर्जा प्रदान करता रहता है, उनका काव्य हर युग में अमर है। मीरा काव्य के मूल्य सामाजिक संदर्भ से भी संबद्ध हैं। मीरा का व्यापक मूल्यबोध आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना वह उनके समय में या बल्कि आज तो यह कहना आवश्यक हो जाता है कि अधिकांश मूल्य आज के चरित्र संकट और अन्तर्विरोधों के युग और भी अधिक महत्वपूर्ण प्रतीत होते हैं।

'जुहर करां न जीव सतावां, गुण गोविन्द जी गास्यां।
जिण मारग वे संत पहूँता उण मारग म्हे जास्यां।'

मीरा अपने हर कार्य में अडिग और अटल रही कोई भी राजा या राजकीय सेवक उन्हें अपने सत्य मार्ग से तनिक भी नहीं डिग पाया था। मीरा ने तत्कालीन राजा और राजनायिकों की मानसिकता की नाड़ी भी वर्षों पूर्व ही पहचान ली थी। सत्संग जैसे श्रेष्ठ भाव को स्वीकारने और तत्कालीन पर्दा प्रथा जैसी बुराई को त्यागने का संदेश भी उन्होंने युगों पूर्व ही दे दिया था। नारी जागृति और नारी की सामाजिक प्रतिष्ठा और गौरव की बात आज जो सार्वभौमिक हो रही है। विश्व की प्रमुख सोच बनी हुई है। मीरा ने नारी के सामाजिक से सम्बद्ध कई मूल्यबोध पहले ही सम्प्रेषित कर दिए हैं।

'राज करंता नरक पडंता, भोगीन जम लिया।
भगती करता मुगत पहूँता, जोग करंता जीया'

मीरा की मान्यता थी कि भक्ति से मुक्ति और भोग से रोग प्राप्त होता है। मूल्यहीन व्यक्ति पहले भ्रष्ट होता है, फिर नष्ट हो जाता है। मानव मूल्य समाज के निर्माण के लिए हैं। इसका मुख्य लक्ष्य लोकहित है। व्यक्तिगत रूचि–अरूचि मूल्य निर्माण का आधार नहीं हो सकती। मीरा ने मूल्यों के संबंध में एक उल्लेखनीय बात यह कही है कि जो मूल्य सामाजिक प्रगति में बाधक है उनका क्षरण अवश्यम्भावी है। मीरा का काव्य अंधकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर एवं मृत्यु से अमरता की ओर व्यक्ति का प्रस्थान कराता है। मीरा का समग्र जीवन उनकी समग्र पदावली इसी का जीवन्त प्रमाण है। मीरा की दृष्टि लक्ष्योन्मुखी थी, वे किसी पक्ष या सम्प्रदाय में नहीं भटकी। लोक के शोषण और नारी पुरूष की असमानता, पुरूषों द्वारा दमनगत नीति से जन्में प्रश्न आज तक हल नहीं हुए ऐसे भिन्न–भिन्न प्रष्नों पर मीरा ने अपनी प्रासंगिक पदावलियाँ लिखीं। असल में मीरा काव्य की लोकप्रियता का मूल कारण उनकी लोकधर्मिता है। मीरा कृष्ण प्रेम की दीवानी हैं और कृष्ण प्रेम का यह मूल्य उसके लिए सर्वोपरी है वे ही उनके लिए सर्वसमर्थ हैं। राजसी परिवेष में पली–बढ़ी मीरा के लिए कुछ भी अप्राप्त नहीं था। जीवन के सभी सुखोपभाग उन्हें सहज ही प्राप्त थे। वस्त्राभरण, आभूषण, भोग इन सभी सुख सुविधाओं से मुँह फेरकर उन्होंने उद्दाम उत्कटता के साथ जीवन मूल्यों के अमृत कणों को श्रेयस्कर माना। अपने एक पद में मीरा ने सतीत्व के मूल्य का गुणगान करते हुए छप्पन प्रकार के भोगो आदि की नि:सारता का वर्णन कर संतोष, सत्य, सहनशीलता, शालीनता, सुचिता, नश्वरता आदि मूल्यों को वरीयता दी है।

झूठा माणिक मोतिया री, झूठी जगमग जोति।
झूठा सब आभूषण री, साँची पियाजी री पोति।
झूठा पाट पटंबरा रे, झूठा दिखणी चीर।
साँची पियाजी री गूदरी, जामै निरमल रहै सटीर।

मीरा ने संगीत के माध्यम से कष्ट और नृत्य के सहारे अपनी मधुरा भक्ति का रूपायन किया। उस समय राजघराने की स्त्रियों का नृत्य करना वह भी भरे सभामण्डप में अत्यंत ही घृणित और लज्जित कार्य समझा जाता था। मीराबाई ने नाचने गाने की चेष्ठा नहीं की थी वह तो उनके कृष्ण के प्रति प्रेम के उफान

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

में अनायास ही फूट पड़ता था। जिसमें सरसता, प्रसादिकता, मधुरता, कोमलता, सरलता एवं तन्मयता आदि गुणों से ओतप्रोत होकर मीरा को तत्कालीन परिस्थितियों से विद्रोही बना देते थे। मूल्यविधान की स्थापना की दृष्टि से देखें तो मीरा के भजनों में, कृष्ण भक्ति में, प्रेमभक्ति में, सरस कथन के रूप में, भाषा के क्षेत्र में साहित्यिक सौंदर्य के रूप में मीरा का मूल्यपरक विधान देखा जा सकता है। भक्तिमती मीरा के पद अनुभूतियों से परिपूर्ण होने के कारण अनुभवगत परिणाम होने के कारण लोकमानस को एवं भावुक हृदय को हठात् विमुग्ध कर लेते हैं। इसलिए मीरा के काव्य में मूल्यपरक विधान को कोई नकार नहीं सकता।

'हरि म्हारा जीवन प्राण आधार
और आसिरो ना म्हारा थे विण, तीनूं लोक मँझार।'

मीरा काव्य में वेदना भाव, रहस्य भाव, दार्शनिक भाव आदि का उद्घाटन किया गया है। उन्होंने प्रेम को मूल्यों से भरा हुआ आलौकिक तत्व माना। जिसकी अनुभूति और अनुभव को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। संसार की समस्त रम्यता और आकर्षणों के मध्य मीरा का प्रेम अनुस्थूत है। मीरा का कहना है कि जहाँ सिर्फ प्रेम के नाम पर मांसलता है वहाँ कुछ भी नहीं है। संसार में किसी भी रूप, आकृति, आकार और वस्तु में मोहवश उत्पन्न आकर्षण को अथवा निज प्रिय भाव को भी हम प्रेम की संज्ञा दे देते हैं किन्तु यह प्रेम नहीं है। इसमें सुनिश्चित रूप में कभी ना कभी रूप, आकृति, आकार और वस्तु का अभाव अथवा लोप होने पर न्यूनता आ जाती है किन्तु इस सबसे परे मीरा का प्रेम में सदैव भावचिन्तन की आलौकिक अनुभूति रहती है। जो स्थायी और अमिट होती है। मीरा पूर्णत: गोविन्द के रंग में रंगी है। उसी को अपनी आत्मा समर्पित करना चाहती है। मीरा के काव्य में कल्पनासाम्य, धर्मसाम्य, रूपसाम्य और गुणसाम्य की सुंदर संयोजना हुई है। मीरा ने स्वयं को गोविन्द में लीन कर दिया है।

'तुम बिच हम बिच अंतर नाहीं, जैसे सूरज घामा'
'जिनरा पिया परदेस बस्यां हो
लिखि लिख भेजत पाती।
म्हारां पिया म्हारे हियरे बसतां
ना आवां जाती।'

मीरा ने अपने काव्य में दिव्य चक्षुओं से काम लिया है। मीरा के दिव्य प्रज्ञा चक्षुओं ने स्थूल और सूक्ष्म दोनों ही प्रकार को समझकर उस परमतत्व को प्राप्त करने के लिए भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही पक्ष का ज्ञान प्राप्त किया। मीरा मानव कल्याण के लिए यह संदेश देती है कि यदि हमें समस्त सांसारिक दुखों, कष्टों, पीड़ाओं से मुक्ति पाना है तो अपने चंचल मन को आलौकिक रूप सौंदर्य के स्वामी के चरणों में समर्पित करना होगा। तभी आपको अनुभव होगा कि उस परम सत्ता के चरणों के स्पर्श से कितनी शांति कितने आनंद की अनुभूति होती है। जितने भी मत-मतान्तर, साधना, प्रणालियाँ, योग की विधियाँ हैं ये सभी उस परम सत्ता को पाने के साधन मात्र हैं। जब व्यक्ति को इस बात का एहसास हो जाता है. तब ये सभी बाह्य साधन और विधियाँ सब कुछ व्यर्थ हो जाते है। मीरा का मानना है कि सर्वस्व समर्पण ही एकमात्र उपलब्धि है। मीरा ने यह सिद्ध कर दिया है कि यदि व्यक्ति को स्वयं क्या है, इस बारे में पता चल जाए तो वह निश्चित रूप से अपने मूल्यों के साथ ही जीवित रहना चाहेगा और परमत्व, सत्य, ज्ञान, अनंत ब्रह्म में ही लीन रहेगा और अपने परमलक्ष्ये के प्राप्त करेगा। जैसे - मीरा कहती है - 'पायोजी मैंने राम रतन धन पायो'।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मीरा का सौन्दर्य बोध - डॉ. रणजीत सिंह गठाला।
2. मीराबाई - डॉ. प्रभात।
3. सृजन और समीक्षा - डॉ. सुंदरलाल कथूरिया।
4. मीरा की प्रेम साधना - डॉ. भुवनेश्वर मिश्र।
5. मीरा जीवन और काव्य - डॉ. सी. एल प्रभात।
6. साहित्य का मर्म - हजारी प्रसाद द्विवेदी।

****

प्रियंवद की कहानियों में वृद्ध जीवन

रामेश्वर धुर्वे *

प्रस्तावना – समकालीन कथाकार प्रियंवद की कहानियां मानव-मन के गहरे स्तरों को छूती सर्वश्रेष्ठ कहानियां हैं। प्रियंवद जी ऐसे रचनाकार हैं,जो समाज के आस-पास के वातावरण का अपनी कहानियों में बारीकी से समायोजन किया है। मजदूर वर्ग, काबड़ बिनने वाला बूढ़ा/ वृद्धजनों की बीमारी, अकेलेपन, अकेले जीवन यापन करने एवं पेट भरने की मजबूरी का उल्लेख है। समाज में बूढ़ों के प्रति लोग किस प्रकार संवेदनहीन होते जा रहे है। प्रियंवदजी ने इस वर्ग पर काफी लेखनी चलाई है।उनकी अनेक कहानियों मेंवृद्धों के जीवन का उल्लेख है। जो उनके यथार्थ जीवन एवं वास्तविकता का बोध कराती है। उनकी निम्न तीन कहानियां ही वृद्ध जीवन को समझने के लिए काफी हैं।

'बूढा काकुन फिर उदास है' कहानी में एकल जीवन व्यतीत कर रहे बूढ़े की कहानी है। समाज में, परिवार में बूढ़े या वृद्ध लोगों को सम्मान, प्यार, सहानुभूति, संवेदना नहीं मिल पाती इस कारण उन्हें इस प्रकार स्वयं काम करके अपना पेट भरना पड़ता है।बूढ़ा काकुन फिर उदास है बूढ़ा काकुन की एवं भिखारियों, कबाड़ी के जीवन, दिनचर्या की कहानी है। बूढ़े भिखारी की कहानी है, जो कबाड़ बिनने का काम करता है,बूढे को बीबी छोड़कर चली गई 70 वर्ष का बूढ़ा कूड़ा बीनने के कारण हर घर की पहचान कर लेता था। उसे पता चल जाता था कि किस घर का कचरा कौन सा है, कौन-कौन किस उम्र के लोग वहाँ रहते है। एक सफेद घर पर रहने वाली बच्ची से उसे लगाव रहता है, बच्ची के बीमार होने से बूढे को नहीं दिखती है। बूढ़ा कूडे में दवाई के रैपर कपास आदि देखकर समझ जाता है कि बच्ची बीमार है।उसके अंदर की मानवीय संवेदना उस बच्ची के लिए छटपटाने लगी वह उसका इंतजार करता उसे देखते रहता था। बूढे का मन मचल उठता है उस घर के आजू-बाजू मण्डराने के कारण उसे पुलिस पकड़कर थाने ले जाती है और उसे जेल हो जाती है। वृद्ध जीवन में परेशान है, जैसे-तैसे कबाड़ बीनकर अपना जीवन यापन करता है। पुलिस भी निसहाय गरीब बूढे को जेल में डाल देती है। अकेले बूढ़े व्यक्ति का जीवन कितना दुखी होता है, साथ में समाज में उनके प्रति कोई संवेदना नहीं होती। परिवार में पत्नी द्वारा पति को त्यागना, अकेले बूढ़े का जीवन यापन, एक बच्ची के प्रति बूढ़े का प्रेम स्नेह संवेदना लगाव आदि है किन्तु संवेदनहीन प्रशासन फिर भी उस बूढ़े के प्रति सख्त है। उसे पकड़कर जेल में डाल देती है। कहानी में इन्हीं प्रश्नों को लेखक ने उठाया है।

'बूढ़ा काकुन सड़े हुए पीले पपीते की तरह सत्तर के करीब था और कूड़ों के ढेर से गूदड़ बटोरता था। उसका चेचक के दागोंवाला चेहरा, झब्बे जैसे बड़े-बड़े कंधे तक बिखरे बालों से ढका रहा। भूरी आँखें गड्ढों के अंदर धंसी रहती और गालों की हड्डियां मैल की मोटी परतों को फोड़कर भाले की तरह तनी रहतीं। एक गंदा-सा लंबा दांत उसके होंठों के ऊपर निकला था। माथे पर आडू जैसा एक बड़ा मस्सा था। छाती तक फैली दाढ़ी और थोड़ा-सा कूबड़।'[1]

बूढ़ा काकुन फिर उदास है, कहानी में कहानीकार ने एक गरीब बूढ़े के जीवन का चित्रण किया है। किस प्रकार समाज में बूढ़े बुजुर्गों की दशा है। किस प्रकार घर से बेघर हो रहे हैं, बूढ़े लोग ? उनकी दशा क्या हो जाती है? इसका सजीव चित्रण कहानीकार द्वारा किया गया है।समाज आज वृद्धजनों के प्रति कैसे संवेदनहीन होते जा रहा है। वृद्ध लोग अपना जीवन किस कठिनाई के साथ व्यतीत कर रहे हैं, इसका उल्लेख किया है। कहानी में लगभग 70 साल का बुजुर्ग जो कि कबाड़ बीनने का काम करता है। उसकी दिनचर्या इस उम्र में अनेक बीमारी आदि के साथ जीवन यापन वास्तव में समाज के सामने एक ज्वलंत समस्या भी है। लेखक ने कहानी में इस प्रकार का जीवन यापन करने वाले बुजुर्गों के प्रति समाज की संवेदनहीनता को उजागर किया है।

'इसी गूदड़ में एक बार जाड़े के दिनों में उसे साबुन का एक टुकड़ा मिल गया था, उस दिन धूप में बैठकर उसने खुद को और कोट को अच्छी तरह धोया था।'[2]

कबाड़ी बूढ़े की जीवन शैली का उल्लेख किया गया है।कूड़े के ढेर में जब बूढ़े कबाड़ी को एक साबुन का टुकड़ा मिलता है तो वह बहुत प्रसन्न हो जाता है। और उस साबुन के टुकड़े से वह अपने को धोता है एवं कोट को भी अच्छी तरह धोता है। लेखक ने उस बूढ़े कबाड़ी की दयनीय स्थिति को उजागर किया है। किस तरह बूढ़े और कबाड़ी अपना जीवन यापन करते है।

'दो बूढ़े' कहानी दो बूढ़े लोगों की कहानी है जो पीटर के शराब खाने में बैठकर शराब पीते है। जीवन के दृष्टिकोंण के बारे एक दूसरे को बताते है, अनुभव बांटते हैं। मूछँवाला अपने जीवन का अनुभव बताता है। माँ बाप के शारीरिक संबंध से तंग आकर एक अंग्रेज फौजी के यहाँ नौकरी कर लेता है, फिर फौज में नौकरी वहाँ साथी जवान द्वारा एक साथी जवान को मार डालने के बाद घर आ जाता है। मॉ से मिलता है, जमींदार उसे सौ बीघे जमीन का मुकद्दम बना देता है। किन्तु वह शहर भाग जाता है, वहाँ एक औरत से शादी कर लेता है किन्तु औरत दो साल बड़ी है, उसे छोड़कर भाग जाती है। इस तरह से उसके नजर में जीवन का अर्थ सिर्फ शून्य है। किन्तु दूसरा दस्ताने वाला बूढ़ा कोढ़ से ग्रसित रहता है। अनाथ खाला के यहाँ रहता है, खाला की बहन की बेटी से उसे प्रेम रहता है, जो उससे प्रेम करती है, यह जानकर भी वह कोढ़ी है, इस तरह वह जीवन की सार्थकता को स्पष्ट करता है। कहानीकार ने दो बूढ़े नामक कहानी में वृद्ध हो चुके दो बूढे लोगों का उल्लेख किया है। जिसमें दोनों ही अपने पुराने बीते दिनों का अनुभव बतलाते हैं। एक वृद्ध जीवन के दृष्टिकोंण पर बात करते हुए कहता है कि जीवन व्यर्थ है क्योंकि वह जीवन में हमेशा दुखों के बीच रहता है, जबकि दूसरा बूढ़ा कोढ़ से ग्रसित होने के बाद भी उसे इस जीवन में अपार प्रेम मिलता है जिससे वह अपने दुख को भूल जाता है और जीवन को सार्थक एवं सफल मानता है। कहानी में लेखक ने जीवन के दोनों पहलू सुख और दुख को उजागर किया है।

'मैं आपकी बात नहीं मानता, 'दस्तानेवाला बूढ़ा कह रहा था।

'क्या....कौन-सी बात ?'

'यही....जीवन के लिए आपका दृष्टिकोण....मैं नहीं मानता कि जीवन का अर्थ सिर्फ शून्य है। 'फिर....फिर क्या मानते हैं आप ?' मूंछवाले ने पूछा।'मैं जीवन को बहुत आस्था के साथ देखता हूं....भरा-पूरा, नदी की

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, लांजी, जिला - बालाघाट (म.प्र.) भारत

तरह बहता....बहुत कुछ है इसमें ।'

'छोड़िए....मैं जीवन की अर्थहीनता एक मिनट में साबित कर सकता हूं....खुद अपने भोगे हुए जीवन से ।'

'आप ऐसा नहीं कर पाएंगे ।' दस्तानेवाला मुस्कराया । 'आप यह साबित नहीं कर सकते....आखिर आपने इतनी बड़ी उम्र क्या शून्य में बिता दी, बिना इससे कुछ हासिल किए हुए ?'[3]

दो बूढ़े कहानी में प्रियंवदजी ने दस्ताने वाले बूढ़े एवं मूँछवाले बूढ़े के जीवन के प्रति दोनों बूढ़ों के बीच होने वाले जीवन के लिए विचार का उल्लेख किया है ।दस्तानेवाला बूढ़ा मूँछ वाले बूढ़े से कह रहा था । मैं आपकी बात नहीं मानता । मूछ वाला कहता है । कौन सी बात ? यही दृष्टिकोण मैं नहीं मानता कि जीवन का अर्थ सिर्फ शून्य है । दस्तानेवाला बूढ़ा मूँछ वाले बूढ़े से कहता है । जीवन व्यर्थ नहीं है । कहानीकार दस्ताने वाले बूढ़े के माध्यम से स्पष्ट किया है कि जीवन कितना महत्वपूर्ण है । उसके माध्यम से जीवन के दृष्टिकोंण पर प्रकाश डाला है ।

'मैं एक बूढ़ी खाला के यहां रहता था....अनाथ था । उसी के यहां आने-जाने वालों की खिदमत करता था....बाहर से सामान ला देता, बख्शीश मिल जाती । फत्तो उसी खाला की बहन की लड़की थी ।'[4]

दस्ताने वाला बूढ़ा अपनी आप-बीती मूँछवाले बूढ़े को बताता है । दस्ताने वाला बूढ़ा मूँछवाले से कहता है कि मैं एक बूढ़ी खाला के यहां रहता था । चूकि वह अनाथ था । उसी के यहां आने-जाने वालों की खिदमत करता था । बाहर से सामान ला देता, बख्शीश मिल जाती । फत्तो उसी खाला की बहन की लड़की थी । वह उससे प्रेम करती थी । वह कहता कि इस प्रकार मेरे जीवन में घटनाक्रम हुआ । और इसलिए मैं मानता हूं कि जीवन बहुत महत्वपूर्ण है । जीवन शून्य नहीं है । उसको जीवन में इतना स्नेह और प्रेम मिलता है कि वह कोढ़ी होकर भी अपने जीवन को धन्य मानता है । कहानीकार ने दस्ताने वाले बूढे के माध्यम से जीवन की उपयोगिता का उल्लेख किया है ।

'दूसरा अलीबाबा' बूढ़े व्यक्ति की कहानी है बारिश के बाद ठंड का मौसम आता है । बूढ़ा बेकरी में आटा गूंधने का कार्य करता है । वह गरीब अकेला है, इसलिए अपनी भूख मिटाने के लिए बेकरी की टूटी डबलरोटी खरीद लेता है या शहर में किसी की मौत होने पर दस से तेरह दिन का आकलन लगाकर मृत्युभोज में पहुंचकर अपनी भूख मिटा लेता है । बाजार में बाजारू औरत के साथ मजे करता है, उसे शराब की भी लत रहती है । एक दिन उसे रेत पर पर्स मिलता है, उसे वह घर लेकर जाता है । उसमें चार सौ रूपये थे, वह बहुत खुश होता है । वह अपने दूसरे सबसे अच्छे कपड़े पहनकर घर से निकलता है, टैक्सी पकड़कर वह इत्र की दुकान जाता है । अपने कपड़ों पर इत्र लगता है, अच्छा खाना खाने निकल जाता है नहीं नहाने के कारण उसका शरीर बदबू करता है । वह शहर भ्रमण करता है । शहर के चकाचौंध को देखता है वह मुर्गा खाता है, बहुत जल्दी खाता है, क्योंकि वह बहुत दिनों से ऐसा खाना नहीं खाया था । खाना खाकर वह बाजारू औरत के पास जाता है । जहाँ पैसे में औरत मिलती है, तीस से दो सौ रूपये में वेश्यावृत्ति होती है । हर औरत जिंदा लाश की तरह है, कूड़े पर बिना सिर का एक धड़ पड़ा मिलता है ताजे बच्चे का वेश्यावृत्ति करके गर्भपात कर भ्रूण हत्या कर दी जाती है । इस तरह बूढ़ा उस शहर में जीवन यापन करता है और पुन: अपने बेकरी में आटा गूंथने की पारी का इंतजार करता अखबार में ताजा मरने वालों की मृत्यु सूचना पढ़ता है । अलीबाबा को चार सौ रूपये का बटुआ मिलता है, उसका उपयोग इस तरह करता है ।

'नीचे सड़क पर गुजरती हुई एक टैक्सी को रोका उसने । उसी तरह जिस तरह वह औरों को रोकते देखता था । उसने शहर के बहुत बड़े रेस्तरां का नाम बताया । वहां धुंए में डूबा मुर्गा मिलता था । छन्न की आवाज करता। टैक्सी वाले ने उसे एक बार घूरा, फिर मीटर गिराकर दरवाजा खोल दिया । वह फैलकर सीट के एक कोने में बैठ गया । रास्ते में इत्र की दुकान पर रोकने की हिदायत दी उसने । उसे मालूम था कि उसके शरीर से अक्सर बदबू आती है, जो शायद कई दिनों तक नहीं नहाने के कारण या फिर बेकरी के आटे की होती है । दूसरी औरतों ने भी उससे यह शिकायत की थी। इत्र की दुकान से उसने एक शीशी खरीदी और उड़ेल ली । फिर आराम से सीट से टिककर दोनों ओर के शीशे से बाहर झांकने लगा ।'[5]

कहानीकार ने बूढ़े को पैसे मिलने पर सैर सपाटे करते दिखाया है । जिसमें वह उस हकीकत को दिखाया है, जिसमें वास्तविकता झलकती है ।समाज में ऐसे बूढ़े होते हैं, जो पैसे मिलने पर मौज मस्ती में लग जाते हैं । जो अपनी अवस्था को भूलकर ऐसे काम करते हैं । टैक्सी को रोका रेस्तरां का नाम बताया, सीट के एक कोने में बैठ गया । इत्र की दुकान गया । इत्र की दुकान से उसने एक शीशी खरीदी और उड़ेल ली । और अपने शौक को पूरा किया। 'दूसरा रास्ता उसके पास 'मत्युभोज' का था । शहर के विशिष्ट या धनवान व्यक्ति के मरने पर परिवार वालों द्धारा अखबार में सूचना दी जाती थी । उस तिथि के अनुसार दसवें या तेरहवें दिन जोड़कर रात को वह उस घर में पहुंच जाता । शहर में इतने अधिक विशिष्ट लोग मरते थे कि रोज कहीं-न-कहीं ऐसी तिथि पड़ती । 'मृत्यु भोज' का बचा हुआ भोजन, जो कि हर घर में बचता था, रखा नहीं जाता था ।'[6]

कहानी में भारतीय संस्कृति में व्यक्ति के मृत्यु पश्चात होने वाले 'मृत्यु भोज' का उल्लेख किया गया है । बूढ़े व्यक्ति जो अपने घर से निष्कासित हैं या अकेले हैं, जो अपनी भूख मिटाने को मृत्युभोज आदि पर निर्भर रहते है। मृत्युभोज में जो खाना बचता है, उसे रखा नहीं जाता इसलिए भोजन मिलने की पूरी गुंजाइश रहती है । कहानी में मृत्युभोज एवं बूढ़े व्यक्ति जो उसमें दसवें या तेरहवें दिन जोड़कर शामिल हो जाता है । जिसका उल्लेख लेखक ने किया है जो एक वास्तविकता को उजागर करता है । लेखक ने एक बूढ़े व्यक्ति का जिक्र अपनी कहानी दूसरा अलीबाबा में किया है, जो इस दुनिया में बिल्कुल अकेला है । वह अपने पेट भरने के लिए डबलरोटी के कारखाने में या मृत्यु भोज में शामिल होकर अपनी भूख मिटा लेता है । वास्तव में देश में ऐसे अनेक बूढ़े है जिनका जीवन इसी तहर अपना पेट भरकर जीवन यापन हो रहा है, लेखक ने एक वास्तविकता का उजागर किया है, जो कहानी पढ़ने का कौतुहल उत्पन्न करती है ।आज भी समाज में जो बूढ़े व्यक्ति हैं आर्थिक तंगी के कारण भीख माँगने, कबाड़ बिनने आदि काम करने मजबूर है । कहानी में जो बूढ़ा व्यक्ति है, वह अपने खाने की व्यवस्था कैसे किन मजबूरियों में करता है इसका उल्लेख कहानीकार ने इस कहानी में किया है जो हमें और समाज में संवेदना जगाने का काम करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बूढा काकुन फिर उदास है प्रियंवद आईना घर भाग 1 पृ. सं. 287 संवाद प्रकाशन मेरठ उ. प्र. फरवरी 2008
2. बूढा काकुन फिर उदास है प्रियंवद आईना घर भाग 1 पृ. सं. 288 संवाद प्रकाशन मेरठ उ. प्र. फरवरी 2008
3. दो बूढे प्रियंवद आईनाघर भाग 2 पृ. सं. 160-161 संवाद प्रकाशन मेरठ उ. प्र. फरवरी 2008
4. दो बूढे प्रियंवद आईनाघर भाग 2 पृ. सं. 166 संवाद प्रकाशन मेरठ उ. प्र. फरवरी 2008
5. दूसरा अलीबाबा प्रियंवद आईना घर भाग 2 पृ. सं. 9 संवाद प्रकाशन मेरठ उ. प्र. फरवरी 2008
6. दूसरा अलीबाबा प्रियंवद आईना घर भाग 2 पृ. सं. 8 संवाद प्रकाशन मेरठ उ. प्र. फरवरी 2008

नारी जीवन में संस्कृति (भारतीय संदर्भ में)

डॉ. विम्मी बहल *

प्रस्तावना – भारत देश में नारी युगों से संस्कृति का केन्द्र बिदु रही है जिसकी अभिव्यक्ति परिवार, समाज, धर्म कला साहित्य आदि में परिलक्षित होती है। 'नारी' सृजक और पालनहार है, जिसके जिम्मे संस्कारों और मूल्यों का परिचय है। नारी हर पीढ़ी में परिवर्तन का सामना करने का हौसला करती रहती है। नारी–जीवन में संस्कृति के अनेक तत्वों का विस्तृत विश्लेषण इस शोध पत्र के माध्यम से रखने का प्रयत्न किया है।

संस्कृति, साहित्य, त्यौहार, उत्सव, धार्मिक आस्था, नृत्य – गायन आदि।सभ्यता के आरम्भ से आज तक नारी इतिहास के पृष्ठों पर उस नक्षत्र की भांति टिमटिमाती रही है, जिसकी धूमिलता अथवा प्रखरता अप्रत्यक्ष रूप से सभ्यता की शिथिलता अथवा गतिशीलता का संकेत करती रही है। सांस्कृतिक स्तर पर भी नारी जिन मूल्यों, मापदण्डों ,आर्दशों एवं परम्पराओं की वाहक बनती है उसका बीज–सूत्र भी विद्यमान समाज की नारी की आर्थिक और राजनैतिक स्थिति और आत्मनिर्भरता होती है। भारतीय संस्कृति के आदिम स्त्रोतों में नारी प्रसंगों के अन्तर्गत विरोध भी रहा है, जिसके कारण भारतीय वैचारिकी में नारी के प्रति विरोधामास पूर्ण परिलक्षित होती है।

इसी परिप्रेक्ष्य में नारी की सांस्कृतिक भूमिका को समझने व परखने के लिए नारी के व्यक्तित्व विकास में विद्यमान रही समाज की सकारात्मक एवं नकारात्मक दशाओं का विश्लेषण करना आवश्यक है।

मनुष्य जीवन में पायी वाली सांस्कृतिक अवधारणा के परिप्रेक्ष्य में किये सस्कृंति क्योंकि हमारे जीवन के सौन्दर्यात्मक एवं कलात्मक पक्षो की अभिव्यक्ति है, इसलिए यह अपने आप में समाज के अन्य आयामों अर्थात आर्थिक, सामाजिक, राजनैति पक्षों से स्वतन्त्र नहीं है इसलिए जब हम किसी समाज के संस्कृतिक जीवन को देखने व समझने का प्रयास करते है तो हमारी दृष्टि उस समाज की आर्थिक एवं राजनीतिक दोनों पक्षों पर भी आ जाती है। इसी परिप्रक्ष्य में मैंने (राजस्थानी भारतीय) नारी की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के लिए पूरे भारतीय समाज में पाये जाने वाले नारी–जीवन और उसके विभिनन पक्षों का अध्ययन करने का प्रयत्न किया है।

भारतीय वैचारिक में नारी अलग –अलग स्वरूप तथा भूमिका में पाई गई है। समाज की धूरी रही थी, वही वैदिककाल में नारी के प्रति को दर्शात्मक जीवन का प्रतीक माना गया, जिसमें वह शक्ति, परिवार की केन्द्र बिन्दु, पुरूष की अर्द्धागनी, देवी, मातृत्व की प्रतिमा व त्याग की मूर्ति थी किन्तु इन आदर्शात्मक स्थितियों के साथ –साथ यदि यर्थाथत: नारी की रही स्थिति को देखे तो विकास क्रम में प्रारम्भ से मृत्यु पर्यन्त पुरूष की छाया के रूप में ही स्वीकारी गई परन्तु इस काल में पितृसत्तात्मक समाज के ढ़ाचे के अन्तगर्त नारी को उचित स्थान दिये जाने के कारण नारी के लिए सुखद प्रभात य कहा जा सकता है। महाकाव्य काल तक देवत्व –पद पर स्थापित रही नारी के प्रति मापदण्ड बदलने लग गये थे और नारी स्वतन्त्रता का स्थान परिव्रत धर्म ने ले लिया था। इस काल की सीता, गान्धरी आदि नारी रूप इसलिए सम्मानीय माने गए थे।

धार्मिक संक्रान्ति काल में जैन व बौद्ध धर्म में नारी को जो अवलम्बन दिया वह नारी की धार्मिक स्वतंत्रता की दिशा में बड़ा कदम था। जिससे स्त्रियों ने उच्चतम आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त किया। निश्चित रूप से इस काल में स्त्री–पुरूषों के आर्थिक –सामाजिक अधिकारों में समान्ता परिलक्षित होने लगी थी।

कालान्तर में मौर्यकाल तक आते –आते राजनैतिक बदलावों के परिणामसवरूप सामाजिक व्यवस्था में नारी मात्र सन्तान उत्पत्ति, आमोद –प्रमोद के रूप में उसका उपयोग होने लगा। राजपूत काल में तो सती प्रथा, बहुविवाह , विधवा विवाह पर रोक पुरूषों पर आर्थिक निर्भरता आदि कारणों से नारी जीवन नारकीय बन गया था। वैदिक काल के बाद लम्बे मध्यकालीन युग में तो नारी मूल मानवाधिकारों से वंचित रही थी। लम्बे मध्यकालीन युग में नारी का दर्जा एवं समाज विकास में उसकी भूमिका अधिकाधिक कठिनाइयों वाली एवं बर्बर रीति रिवाजों के कारण स्त्री सतीत्व की रक्षा के नाम पर वह अधिक सामाजिक बंधनों व मर्यादाओं में पकड़ गयी कि उसका अस्तित्व ही नहीं रह गया। भारतीय इतिहास के परिपेक्ष्य में नारी की भूमिका को देखने के बाद राजस्थान में नारी जीवन के सांस्कृतिक आधार की दृष्टि से यह एक गौरवशाली राज्य रहा है। राजस्थान पदिमनी के जौहार, मीरा की भविन्त एवम् पर्यावरण की रक्षक अमृता देवी के बलिदान आदि। यहाँ तुलनात्मक दृष्टि से नारी की आर्थिक स्थिति अच्छी देखी जा सकती है बल्कि भौगोलिक दृष्टि से राजस्थान में अनेक तरह की विषमताएँ है। सभी वर्गो के नारी जीवन स्तरो में पायी जाने वाली भिन्नताओं को भी विशेषता का आधार बनाने का प्रयास किया है। इसलिए उच्च वर्ग की नारी के साथ–साथ मध्यमवर्ग व सामान्य वर्ग की की नारी का अध्ययन किया है, ताकि नारी जीवन के सांस्कृतिक पक्षो का समग्रता से अध्ययन किया जा सकें।

इस अवधि में राजस्थानी सम्मान में प्राचीन वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था के अंतर्गत भी विभिन्न जातियों में सम्मान व प्रतिष्ठा में परिणामात्मक भिननता के बावजूद भी एक सीमा तक नारी का समाज के सामाजिक एवं सांस्कृतिक ताने–बाने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। राजस्थान की समस्त स्त्रियों की स्थिति एक समान नहीं थी। इन वर्गो की स्त्रियों को पुरूषों की तरह सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, व धार्मिक क्षेत्र में समान अधिकार प्राप्त नहीं थे, लेकिन घरेलु व पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह करने में उनकी स्थिति महत्वपूर्ण एवं सम्माननीय रही थी।

अध्ययनकाल में राजस्थान का स्त्री परम्परागत बंधनों में जकड़ा हुआ दिखलाई देता था। जिसमें नारी की प्रतिष्ठा ममतामयी माँ, सेवाभावी पत्नी और वीरांगना होने में सिमट गई थी। इस कालावधि में राजस्थानी स्त्री –

* अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

जीवन के आदर्श का आरम्भ व अन्त मातृत्व से ही परिलक्षित होता है। इसीलिए क्षेत्रीय समाज में माता का सबसे उच्च, द्वितीय स्थान पर पत्नी का और तत्पश्चात् पुत्री का स्थान रहा था। लेकिन इसके उपरान्त भी नारी को दूसरे दर्जे का मानव समझा जाता है। इसी के साथ-साथ समाज में अन्तर्जातीय विवाह भी परिलक्षित होते थे। उच्च वर्गो में स्त्रियों के पुनर्विवाह तथा विधवा विवाह को धर्म विरूद्ध माना गया है। राजपरिवारों तथा सम्पन्न घरानों में बहु विवाह व उपपत्नियों आदि रखने की परम्पराएँ भी पूर्णतया विकासित हो गई थी, किन्तु सामान्यत जन साधारण में एक विवाह ही लोक प्रिय रहे थे। यह सत्य है कि राजस्थान के रीति रिवाजो ने मनोरजंन के साथ-साथ नारी की महान शक्ति को बढ़ने से ही नहीं रोका वरन् उसे दबाया और कुचला भी है। साथ ही नारी की यथा स्थिति को बनाये रखने में अकेले पुरूष का ही हाथ नहीं कहा जा सकता है बल्कि उस व्यवस्था के साथ -साथ सदियों से संस्कार जन्म अनुभव से विकसित स्वंय नारी के मनोविज्ञान ने भी उसमें योगदान दिया था।

सुझाव इस सदंर्भ में -

1. प्रत्येक स्त्री को नारी निन्दक शास्त्रों और प्रवचनों का बहिष्कार करने का साहस करना चाहिए।
2. वैधत्य जीवन के सम्बन्ध में भी नारी के प्रति दृष्टिकोण बदलना चाहिए, क्योंकि यदि उत्सवों आदि में विधुर की उपस्थिति अपशुकन नहीं मानी जाती है, तो विधवा के लिए दोहरा मापदण्ड भी नहीं होना चाहिए। साथ ही विधवा को वेशभूषा में भी परिवतन नहीं करना चाहिए।
3. पदो प्रथा के परिप्रेक्ष्य में भी दृष्टिकोण बदलना चाहिए।
4. अन्त में स्त्री का उन्नति मार्ग में अग्रसर होने के लिए पुरूषों के सहयोग के साथ -साथ निज शक्ति का भी विकास नहीं होगी तब तक वह सच्चे अर्थ में सुरक्षित और स्वतन्त्र भी नहीं हो सकती। नि:सन्देह स्वावलम्बी बने बिना नारी सही मायने में स्वतन्त्र नहीं ही सकेगी और स्वविवेक बिना स्वतन्त्रता का सदुपयोग नहीं कर पाएगा।

निष्कर्ष - अत: हम कह सकते है कि स्वतन्त्र और प्रजातान्त्रिक समाज में संवैधानिक रूप से महिला के लिए हर तरह से सुरक्षित, गरिमामय एवं समानता को पोषित करने वाले कानून बनाये गये है किन्तु हम सभी जानते है कि चाहे काई भी अवधारणा ही , विचार हो, स्थिति हो, उसको व्यवहार में परिभाषित करने हेतु निश्चित भौतिक, सामाजिक अवस्थाओं, परिस्थितयों की पूर्ति होना आवश्यक है। यही कारण है कि कानूनी रूप से समानता का अधिकार रखने वाली नारी उसे व्यवहार में प्राप्त नहीं कर सकी। ये स्थितियॉ यह जानने के लिए पर्याप्त आधार प्रदान करती है कि परम्परागत भारतीय समाण जो कि एक पितृसतात्मक समाज है, इसमें पुरूष मनुष्य है, मानव है , किन्तु नारी केवल माता है, पत्नी है, पुत्री है, बहिन है, नारी है लोकिन मानवी नहीं है। पुरूष और नारी सृष्टि के निर्माण और सचांलन के दो मूलभूत तत्व है। लेकिन व्यवहार इन दोनों तत्वों के जीवन एवं उनके पारस्परिक सम्बन्धों में काफी गहरी खाई है जिसके बिना एक स्वस्थ परिवार समाज और देश की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजस्थान में नारी जीवन का सामाजिक आधार।
2. विवाह एवम् प्रथाओं में नारी का स्वरूप।
3. नारी जीवन में संस्कृति।
4. तिवारी एवं शुक्ला - भारतीय नारी - वर्तमान समस्याए व भावी समाधान।
5. चेतन मेहता - महिला एवं कानून , पृष्ठ 122-123
6. आशा रानी व्होरा - भारतीय नारी अस्मिता और अधिकार पृष्ठ-75

****

धर्म व कला का सौन्दर्यात्मक सामंजस्य प्रस्तुत करती डॉ. जगमोहन की कलाकृतियाँ

प्रो. किरन सरना * प्रिया बापलावत **

प्रस्तावना – आदि काल से जब मानव सभ्यता का उदय हुआ है तभी से कला धर्म की सहचरी रही है अर्थात् कला एवं धर्म का उदय साथ–साथ हुआ। 'धर्म का अर्थ है, धारण करना तथा धर्म की ही दृष्टि से कला ने अपना स्वरूप ग्रहण किया है। कला का सृजन धार्मिक प्रेरणा से होता है तथा धर्म से आध्यात्मिक चेतना जागृत होती है तथा इस आध्यात्मिक चेतना से कला की सृजन प्रवृत्ति मुखर होती है।'[1] प्राचीन काल से ही कला का क्षेत्र वृहद् एवं व्यापक रहा है, जिसकी परिधि में धर्म को समय–समय पर आश्रय प्राप्त होता रहा है आरम्भ से ही धर्म मानव जीवन में आस्था का प्रतीक रहा है वहीं दूसरी ओर कला मानव जीवन में सौन्दर्य व सृजन का प्रतीक रही है।

'परन्तु कला और धर्म दोनों ही मानव जीवन में अपना–अपना अभिन्न स्थान रखते हैं, प्राचीन काल से अनेकों शताब्दियों तक प्रत्येक देश में धर्म का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान रहा है तथा मानव जीवन के सभी कार्य एवं संस्कार धर्म से ही अनुप्राणित और अनुशासित थे। धर्म को मानव जीवन में प्रतिष्ठित करने के लिए आदिकाल से ही कलाओं का सहारा लिया गया और कलायें सदैव धर्म की संगिनी सहायक और प्रतिपादक बनी रही।'[2]

संसार की सर्वश्रेष्ठ कृतियाँ धार्मिक ही है जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण बौद्ध कालीन अजन्ता, जोगीमारा व बाघ के महानतम् उत्कृष्ट चित्रकृतियाँ है जहाँ कलाकार ने अपनी कल्पना व सोच को धर्म के द्वारा प्रकट किया है। जिसके द्वारा कलाकार ने धर्म का प्रचार व प्रसार करने के लिए कला को श्रेष्ठतम् माध्यम के रूप में अपनाया तथा अपने भावों की अभिव्यंजना को मूर्तरूप प्रदान किया। 'मध्यकाल या 16वीं शताब्दी तक धर्म के अतिरिक्त ही कलाओं का प्रमुख स्थान था। भारत, चीन, जापान, यूनान, मिस्त्र तथा इटली आदि देशों में आरम्भ से ही धर्म को कला के साथ संजोया जाता था। अनेकों इष्ट देवी–देवताओं की आराधना के लिए और उनके साकार रूपों में दर्शन प्राप्त करने के लिए चित्र और मूर्तियाँ बनाने की बड़ी आवश्यकता थी। इसी कारण प्राचीन चित्रकला तथा इन देवी–देवताओं की छवियों के अतिरिक्त इनके साथ–साथ और भी संदर्भित गौण देवी–देवता, गण, गंधर्व, किन्नर, देवदूत, पुष्प, लतायें, वृक्ष, पक्षी आदि का बड़ा ही भव्य एवं सौन्दर्यपूर्ण चित्रांकन करने के लिए अनेक धार्मिक प्रतीक एवं अलंकरण अभिप्राय बनाये गये।'[3] इस प्रकार प्रत्येक काल के कलाकार ने धार्मिक भावना से ओत–प्रोत होकर अनेक धार्मिक मूर्तियों एवं चित्रों का सृजन कर अपनी धार्मिक भावना को साकार अभिव्यक्ति दी साथ ही मूर्तियों में विभिन्न अलंकरणों व प्रतीकों का प्रयोग कर कलाकार ने सौन्दर्यपूर्ण चेतना को साकार रूप दिया। इस प्रकार कला की सृजन प्रवृत्ति में ही धर्म का उद्देश्य समाहित है।

'हमारे संगीत में संकीर्तन रामलीला, लोककथाएँ, लोकगीत, मंदिर मूर्ति के निर्माण में कलात्मक सौन्दर्य ही प्रधान रहता हैै। देवी–देवताओं की उपासना में तीज त्यौहारों एवं धार्मिक स्थलों पर यात्राओं और मेलों में नृत्य वाद्यसहित समवेत स्वर में समूह गान तथा कीर्तन होते हैं। अनादि काल से आज तक नृत्य, संगीत तथा अन्य कलाओं का धर्म के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। कला और धर्म की समानता को डॉ. आनन्दकुमार स्वामी ने इन शब्दों में प्रतिपादित किया है – 'धर्म में उपासना तत्व की अनिवार्यता होती है, तब प्रेम का उदय होता है और प्रेममय ईश्वर की उपासना हेतु प्रतिमा का सृजन किया जाता है।'

कला के आकर्षण गुणों के बिना धर्म निर्जीव और नीरस होकर अब तक समाप्त हो जाता। नि:सन्देह धर्म ने कला को गौरव प्रदान किया है और कला ने धर्म को सौन्दर्य अत: धर्म एवं कला एक दूसरे के पूरक, सहयोगी व कल्याणकारी है।'[4] इन दोनों के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति में सौन्दर्यात्मक भावों का स्फुटन होता है और वह सदैव अपनी सृजनात्मक अभिव्यक्ति द्वारा सत्यम् शिवम् को ही प्रतिबिम्बित करता है। इस प्रकार धर्म एवं कला का उद्देश्य विश्व में लोक कल्याण करना है ताकि समस्त मानव जाति सौन्दर्य, एकता एवं सौहार्द्र के सूत्र में बाँध सके। इन दोनों का उद्देश्य विश्व में सौन्दर्यमयी स्वर को बिखेरना है। 'इसके अतिरिक्त कला को शुभ और मंगल का भाव धर्म ने ही दिया है। शुभ से ही शोभा होती है अशुभ नहीं शुभ और मंगल का प्रतीकात्मक भाव अनके चित्रों मूर्तियों तथा मंगलाचरणों में उतारा गया है जिनमें पति, पुत्र आदि के कल्याण हेतु इष्ट देवी–देवताओं की उपासना की जाती है। अथवा जिनसे घर आँगन सजाया जाता है। अहोई, करवा चौथ, गणेश चतुर्थी, अक्षय तृतीया आदि अनेक ऐसे मांगलिक अवसर हैं, जब स्त्रियाँ पारिवारिक कल्याण के लिए मंदिरों में आरती करती है, चौक पूरती है, हल्दी, रोली आदि से छाप लगाती है। यंत्र–तंत्र–मंत्र आदि धर्म के अंगीभूत तत्व भी इन्हीं मांगलिक और शोभा कार्यों में पिराऐ जाते हैं हिन्दुओं में दुल्हे को द्वाराचार (दरवाजे पर स्वागत) आदि सामाजिक संस्कार भी धर्म और कलाओं के संगम का उत्युक्त उदाहरण है।'[5]

इस प्रकार कला व धर्म के संगम ने हमारे सामाजिक संस्कारों को जीवित रखा है और यही सामाजिक संस्कार हमारी संस्कृति के पर्याय है, जिसके द्वारा हम अपने रीति रिवाजों से परिचित होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक देश व प्रान्त में धर्म ने कला के द्वारा अपनी धार्मिक मान्यताओं को कलात्मक रूप में सामान्य जन तक पहुँचाने का प्रयास किया है।

* प्रोफेसर (दृश्यकला विभाग) वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज.) भारत
** शोधार्थी (कला संकाय) वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज.) भारत

'भारत की प्राचीन कला धार्मिक भावना से ओत-प्रोत रही है और इसी परम्परा को कलाकारों ने धार्मिक ज्ञान से पूर्णतया अनुप्राणित होकर ही अपनी कलाकृतियों की उत्कृष्ट रचना की।'[6] भारतीय कलाकारों ने धार्मिक शास्त्रों तथा पुराणों से भली-भाँति साक्षात्कार कर धार्मिकता को अपने चित्रों में श्रेष्ठ स्थान दिया। 'एक कलाकार को धार्मिक व आध्यात्मिक अनुभूति के लिए कलात्मक साधन की आवश्यकता होती है'[7] तथा उस अनुभूति को वह एक कृति के द्धारा व्यक्त कर साकार रूप प्रदान करता है, तब एक कलाकार के कला सृजन में धार्मिक व्यवहार उसकी कलाकृति में निखर कर आती है एक कलाकार के लिए धर्म प्रेरणा का मार्ग है तथा कलाकार के मन में कला सृजन का अंकुर तभी फूटेगा जब उसका दृष्टिकोण धार्मिक होगा तथा धर्म में उसकी आस्था गहन होगी। रवीन्द्र नाथ टैगोर, एम.एफ.हुसैन, रामगोपाल विजयवर्गीय जैसे महान् कलाकारों ने धर्म को प्रेरणा का मार्ग बनाकर उत्कृष्ट धार्मिक कृतियों का निर्माण किया। इस प्रकार कला जगत में अनेक चित्रकारों ने धार्मिक विषयों को अत्यन्त रूचिकर, सहज एवं सौन्दर्यपूर्ण रूप से चित्रफलक पर चित्रांकित किया है। इस प्रकार धार्मिकता एवं धार्मिक विषयों को कला में चित्रांकित करना कोई नूतन विषय नहीं है

इसी पथ पर अग्रसर होते हुए जगमोहन माथोड़िया जी ने अपनी धार्मिक कृतियों में धर्म के आलोक को अपनी आन्तरिक अनुभूतियों के साथ मिश्रित करते हुए धार्मिक कृतियों का सौन्दर्यात्मक विशाल संसार रचित कर डाला है। जगमोहन माथोड़िया व्यक्तिगत रूप से धर्म में श्रद्धा व विश्वास रखते हैं, जिसका पालन आप नियमित रूप से पूजा अर्चना करके पूर्ण करते हैं। बाल्यकाल में माता-पिता को पूजा अर्चना व धार्मिक अलंकरण व चित्र बनाते देख आपके अन्तस में धार्मिक प्रवृत्ति का प्रवेश स्वयं ही होता चला गया। इसी धार्मिकता को अपने भीतर संग्रहित कर आपने अपनी कृतियों में धार्मिकता को सौन्दर्यात्मक रूप से संजोया है।(चित्र संख्या 1)

(चित्र संख्या 1)

यहाँ पर दुर्गा नामक कृति का उदाहरण देना यथोचित होगा जहाँ पर कलाकार की कलाभिरूचि के साथ धार्मिकता का सौंदर्यपूर्ण मेल दिखाई देता है। दुर्गा की सार्वभौमिकता को स्वीकार करते हुए कलाकार माथोड़िया जी ने प्रस्तुत कृति के माध्यम से दुर्गा के विराट स्वरूप को दर्शित किया है, कृति में माँ दुर्गा के सशक्त भुजाओं में त्रिभुज है, जिससे वह राक्षस का संहार कर रही है तथा नीचे रक्त धारा का प्रवाह हो रहा है। यहाँ देवी के चेहरे पर क्रोध एवं वीरोचित मुद्रा का भाव उनके सौंदर्य में अपार वृद्धि कर रहा है। साथ ही माँ दुर्गा को विविध आभूषणों से सज्जित कर अत्यन्त आकर्षित रूप दिया गया है। सम्पूर्ण कृति का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि कृति का निर्माण किसी मंदिर के झरोखे के बाहर से किया है, साथ ही कृति के मध्य में अलंकरण से युक्त स्थापत्य का निर्माण किया है। इस प्रकार माथोड़िया जी ने प्रस्तुत कृति के द्धारा माँ दुर्गा के शृंगारिक, शक्तिरूपा व लालित्य भाव को सौन्दर्यात्मक पृष्ठभूमि पर रचित किया है।

साथ ही आपने प्रदेश के प्रमुख तीज त्यौहारों को क्रमबद्ध शृंखला के रूप में चित्रित किया है। माथोड़िया की इस चित्र शृंखला के प्रमुख विषय तीज त्यौहारों व समसामयिक विषयों में निहित सौंदर्य है, इन चित्रों में निहित आध्यात्मिकता का साक्षात् दर्शन किया जा सकता हैं । जिनमें कृष्ण, जन्माष्टमी, तीज, गणगौर, गणेश तथा हनुमान, क्रिसमस डे, दीपावली, दशहरा, दुर्गाष्टमी, खोले के हनुमान, ईद इत्यादि धार्मिक विषयों पर चित्रांकन किया है । लगभग 50 से अधिक चित्राकृतियों का निर्माण कर चुके हैं। काले रंग के पेपर पर अपारदर्शी रंगों से निर्मित तीज त्यौहारों के विभिन्न चित्रों को एक नई शैली का स्वरूप प्रदान कर उसे कलाकृति का रूप दिया है। ये सभी चित्र काली पृष्ठभूमि पर विविध जलरंगों द्धारा बनाए गए हैं ये सभी कलाकृतियाँ भारत के धार्मिक सामाजिक आयोजनों पर कलाकार की सौंदर्यात्मक दृष्टि के परिचायक है। किन्तु उनकी इस कला में आंशिक प्रभाव परम्परागत, लोक रूपाकारों तथा अलंकरणों का भी देखा जा सकता है।

अत: इन दोनों तत्वों का सौन्दर्यपूर्ण सामंजस्य 'तीज माता' नामक रेखाचित्र में देखा जा सकता है (रेखाचित्र संख्या1) आधुनिक परिप्रेक्ष्य में 'तीज माता' का चित्रण अत्यन्त रोचक व भिन्न रूप में किया गया है अर्थात् उसे नवीन दृष्टि व परम्परागत सोच के साथ दिखाने का प्रयास किया गया है। जहाँ लोक रूपाकारों का चित्रण दर्शक को परम्परा के सूत्र में जोड़ता दिखाई देता है। रेखाचित्र में तीज माता को मानवीय रूप में दर्शित न करके उन्हें ज्यामितीय आकारों में चित्रित किया है, जो कलाकार की नवीन प्रस्तुती है। रेखाचित्र में त्रिभुज, वक्र जैसे ज्यामितीय आकारों का चित्रण कर कलाकार ने तीज माता को प्रभावशाली व नवीन रूप दिया है। तीज माता के पांव में कमल का चित्रण लोकरूपाकारों का प्रतिनिधित्व करता प्रतीत होता है, माता के शरीर पर रेखाओं का सर्वत्र पुंज चित्रित कर नारी शक्ति को अनन्त रूप में उद्धघाटित करने का प्रयास किया है। इस प्रकार रेखाओं का तीव्र वेग आकार को गतिशीलता प्रदान कर रहा है। अत: सम्पूर्ण रेखाचित्र में परम्परागत लोक रूपाकारों व अलंकरणों का मिश्रित रूप रेखाचित्र को प्रभावशाली रूप प्रदान कर रहा है।

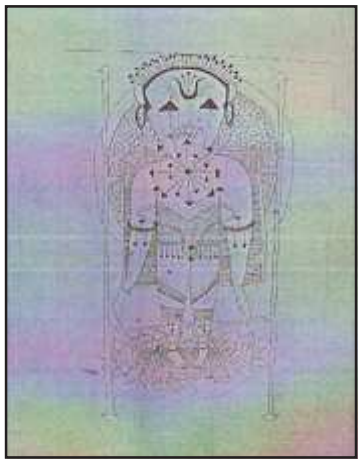

(रेखाचित्र संख्या1)

यद्यपि आपकी कृतियों का परिवेश साधारण सा दिखाई देता है परन्तु जब गौर से देखते हैं तो पाते हैं कि उसमें प्राकृतिक संवेदना के बिम्ब भी दृष्टिगत होते हैं। इसमें स्पष्ट होता है कि कलाकार किसी परम्परा में बँधकर चित्रण नहीं करना चाहता। अत: आपके द्वारा चित्रित 'खोले के हनुमान जी' में हमें धर्म के साथ प्रकृति का विराट सौंदर्य भी देखने को मिलता है। कृति में कलाकार ने अपने आध्यात्मिक स्वरों को प्रकृति की छांव में वाणी देते हुए प्रकृति व आध्यात्मक का गहन सामंजस्य दिखाने का प्रयास किया है। जो आपकी निजी विशेषता है। कृति में हनुमान जी के ओजस्वी रूप, को सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति दी है एवं उन्हें एक हाथ में पहाड़ उठाये व दूसरे हाथ में गदा उठाये चित्रित किया है तथा पृष्ठभूमि में पहाड़ों की अनन्त दृश्यावलियाँ अपने सौन्दर्य विधान के कारण दर्शक को प्रकृति की सैर कराती है, प्रतीत होती है तथा नीले आकाश का अन्त: विस्तार दर्शक के भीतर सुषुप्त संवेदनाओं को जाग्रत करता प्रतीत हो रहा है। इस प्रकार प्रस्तुति कृति के द्वारा जहाँ एक ओर प्राकृतिक बिम्बों का विशाल परिप्रेक्ष्य निर्मित किया है, वहीं दूसरी ओर धर्म के नव्य रूपों का कलात्मक सर्जन किया है। (चित्र संख्या 2)

इस प्रकार आपकी धार्मिक श्रृंखला में सौन्दर्यात्मक दृष्टिकोण के साथ-साथ प्रयोगधर्मिता का गहन परिप्रेक्ष्य दिखाई देता है चित्रों में धार्मिकता का आधिक्य इतना दृढ़ है कि हमें आध्यात्म की अनुभूति स्वयं ही हो जाती है। माथोड़िया जी मूल रूप से धार्मिक प्रवृत्ति के चित्रकार है और यही धार्मिकता की उजास कृतियों में पारदर्शी होकर प्रतिबिम्बित होती है। जिसके कारण आपने दार्शनिक पृष्ठभूमि पर धार्मिक बिम्बों को पूर्ण दक्षता के साथ साकार अभिव्यक्ति दी है। शायद यहीं से कलाकार ने धार्मिक पक्ष को गहनता से समझा और उसे चित्रपटल पर अभिव्यक्ति देने की सोची माथोड़िया जी के पास रंगों व रेखाओं की विरल समझ है तभी तो आपकी धार्मिक कृतियों में हल्के रंगों के साथ गहरे रंग की हरीतिमा है जो कृतियों में विषयानुरूप चित्रांकित की गई है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. मावड़ी, मोहन सिंह - भारतीय कला सौन्दर्य, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2008, पृ.सं.60,61
2. वर्मा, अमित बहादुर, डॉ. अविनाश - कला एवं तकनीक, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, प्रथम संस्करण-1998, पृ.सं.67
3. वही, पृ.सं.67
4. शर्मा, डॉ. सुनीता - भारतीय संगीत का योगदान आध्यात्मिक एवं दार्शनिक, प्रकाशन संजय प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण-1996, पृ.सं.152
5. वही, पृ.सं. 153
6. वर्मा, अमित बहादुर, डॉ. अविनाश - कला एवं तकनीक, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, प्रथम संस्करण-1998, पृ.सं. 69
7. मावड़ी, मोहन सिंह - भारतीय कला सौन्दर्य, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2008, पृ.सं. 67

****

प्रकृति के मानवीकरण में रहस्य का बोध कराती लालचन्द मारोठिया की कलाकृतियाँ

प्रो. किरन सरना * पारूल बापलावत **

प्रस्तावना – प्रकृति मनुष्य की चिर संगिनी रही है। मनुष्य जीवन्तपर्यन्त प्रकृति की गोद में पल्लवित पोषित व पुष्पित होता रहा हैं। 'प्रकृति के विविध उपादानों से ही वह जीवन के रहस्य को समझता रहा हैं। प्रकृति की नाना वर्स है, संतुलित है, सार्थक है, इसलिए सुन्दर है। प्रकृति सौन्दर्य के विविध रूपों के दर्शन सागर–सरिताओं में पर्वत–मैदानों में, घने वृक्षों की छाया में, कोयल की कूक आदि में सरलता से किए जा सकते हैं।'[1] वस्तुतप्रकृति का लोक सौन्दर्य प्रधान है। जहाँ जड़ से लेकर सभी तत्वों में सौन्दर्य का पुट स्वत: ही आभासित होता रहता हैं। 'चूँकि मनुष्य एक सहृदय–प्राणी है, इसलिए उसके द्धारा निर्मित कोई भी कला प्रकृति–सौन्दर्य की अभिव्यक्ति रिक्त नहीं है। कलाकार और प्रकृति का संबंध तो लोक–विश्रुत है ही। आदिकाल से ही भारतीय वाङ्मय में भी प्रकृति की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। कलाकार ने अपने हृदयगत भावों की अभिव्यक्ति के लिए प्रकृति का चित्रण कभी अरूप में तो कहीं उद्दीपन रूप में किया है जब प्रकृति कलाकार की अन्तर्रसता को अपनी सौन्दर्यमयी कलाकृतियों के विभिन्न तत्वों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। तब कलाकार सौन्दर्य के रूप में रंगों का परिधान प्रदान कर प्रकृति का चित्रण सौन्दर्य रूप में चित्रण करता है।'[2] जिसे भावों की शुद्धता के साथ कलाकार कृतियों में रंजित करते हुए बहुआयामी लोक का सृजन करता है, जो कलाकार की अपनी सौन्दर्यात्मक चेतना का द्योतक होता हैं। प्रकृति में 'अचेतन पदार्थों को मानवीय भावना और क्रिया–व्यापारों से संयुक्त देखने और अनुभव करने की प्रवृत्ति को मानवीकरण कहते हैं। मानवीकरण वास्तव में अभिव्यक्ति की प्रणाली मात्र ही नहीं अपितु एक भाव पद्धति भी हैं। मानवीकरण मानवीय अनुभूतियों का वस्तु या आलम्बन पर आरोप मात्र हीं है, अपितु वह भावुक कलाकार की वास्तविक अनुभूति पर आधारित हैं।'[3] मानवीकरण एक संवेदनशील कलाकार के अन्तश्चेतना के भावों का साकार रूप हैं।

'प्रकृति को मानवी रूप में देखने की परम्परा प्राचीन काल से ही रही है। कुछ विद्धान प्रकृति चित्रण की इस प्रवृत्ति को अंग्रेजी की देन मानते हैं, परन्तु वेदों में ऊषा, मरूत आदि से सम्बन्धित ऋचाओं में मानवीकरण की प्रवृत्ति को देखकर उसे अपनी ही वस्तु माना हैं।'[4] अत: मानवीकरण प्रकृति के विभिन्न उपादानों में मानवीय चेतना की रचनात्मक अनुभूति हैं। चित्रकार लालचन्द मारोठिया के प्रकृति वर्णन की प्रमुख विशेषता मानवीकरण हैं। 'कलाकार ने प्रकृति के विभिन्न रूपों एवं कार्य–व्यापारों पर मानवीय भावों का आरोपण अत्यन्त सूक्ष्मता, सजीवता एवं स्वाभाविकता के साथ किया है। चित्रकार लालचन्द मारोठिया ने पर्वत, नदी, वृक्ष, मछली, बादल पत्थरों, प्रकृति के विभिन्न उपादानों का स्वतन्त्र रूप में चित्रण करते हुए आंशिक रूप से मानवीय भावनाओं से आरोपित किया है।'[5] मारोठिया ने संवेदनाओं के स्वर में प्रकृति को मानवीकरण रूप में चित्रित किया हैं। लालचन्द मारोठियाअन्तर्जगत के मूर्धन्य कलाकार हैं, उनके चित्रों में जिस आन्तरिक सौन्दर्य के सत्य की अभिव्यक्ति हुई हैं' 'वह रंगों व रेखाओं के माध्यम से प्रस्फुटित हुआ है। मानवीकरण द्धारा प्रकृति के जिन रूपों की रचना हुई है, वे कलाकार के भाव जगत से प्रभावित और परिचालित हैं। उनके चित्र जगत का अवलोकन करने पर समस्त प्रकृति उनके चित्रों में मूर्त एवं स्पंदित चेतना बनकर अवतरित हुई है। मारोठिया ने प्रकृति के मानवीय रूप की सीमा में केवल प्राकृतिक उपादानों की ही नहीं अपितु विराट प्रकृति को भी बाँध दिया है।'[6] मारोठिया ने प्रकृति में मानवीकरण का दर्शन कर अपने चित्रफलक को भावात्मक पृष्ठभूमि प्रदान की है।

पर्वत – 'ब्राह्य प्रकृति के शत–सहस्त्र रूपों में पर्वत प्रदेश का सौन्दर्य चित्रकार लालचन्द मारोठिया को अत्यधिक प्रिय है। पर्वतीय प्रकृति के अन्तर्गत कलाकार उस पर निरंतर अपनी भावना का अर्ध्य अर्पित करते रहे हैं। कलाकार ने पके मानवीकरण में वनस्पति, पशु, पक्षी और अन्य संबद्ध तत्वों का मनोयोग पूर्ण चित्रण किया है। मारोठिया ने पर्वत के जो वृत्त चित्र प्रस्तुत किए हैं, वे प्रकृति सौन्दर्य की दृष्टि से अतुलनीय है।'[7] 'मारोठिया ने पर्वती के मानवीकरण में विभिन्न रंगों और वर्णों को अपने भाव चित्रण के लिए सहायक बनाया है। श्वेत, नीले–भूरे, हरे आदि रंगों के बिंबो का स्पष्टीकरण करके उन्होंने मानवीकरण के संवेग को उद्धीप्त किया है।'[8]

प्रस्तुत कृति में मारोठिया ने पर्वत के मानवीकरण में जिन मुखाकृतियों को बनाया है। वे चेहरे अर्द्ध–अमूर्त है। चेहरे व्यक्तिगत पात्रों के न होकर आम व्यक्तियों के सदृश्य हैं। जिस प्रकार प्रकृति का कण–कण मारोठिया कल्पना की गहराईयों में समाहित हैं। ठीक उसी प्रकार स्पष्ट व अस्पष्ट चेहरे कहीं न कहीं मारोठिया के मन की गहराईयों के मर्म से जुडे हैं। भूरे, हरे, नीले, रंगों का ओज समस्त प्रकृति को अपने में समेटे हुए हैं। संवेदनात्मक पृष्ठभूमि या प्रकृति को सौन्दर्य की कन्दराओं में संजोया हैं। कृति में कहीं सुन्दर व सुसज्जित वृक्ष है तो कही भव्य विशाल रूप में पत्थर अपनी संवेदनाओं का संचरण प्रकट कर रहे हैं। जल में मछलियोअपनी समग्रता का एहसास करा रही हैं। पक्षियों की उड़ान मानों नभ को विस्तार दे रही हैं। कृति में सीधी खड़ी रेखाएँ मानों उत्साह, आकांक्षा की अनुभूति कराती सी प्रतीत हो रही हैं। इस प्रकार मारोठिया ने पर्वत के मानवीकरण के रूप में अपने प्रकृति बिम्बों को प्रतीकात्मक रूप में चित्रित कर साकार अभिव्यक्ति दी हैं।

* प्रोफेसर (दृश्यकला विभाग) वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज.) भारत
** शोधार्थी (कला संकाय) वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज.) भारत

(चित्र संख्या 1)

वृक्ष – 'कलाकार लालचन्द मारोठिया ने वृक्षों के विभिन्न रूपों एवं कार्य व्यापारों पर मानवीय भावों का आरोपण रेखाओं के माध्यम से अत्यन्त सूक्ष्मता, सजीवता एवं स्वाभाविकता के साथ किया है। मारोठिया की मानवीयकृत प्रकृति में कहीं प्रणय व्यापार चलता है, तो कहीं नारी अभिसारिका नायिका बनती है, तो कहीं उसका सहचरी का रूप सुन्दर है, तो उतनी ही माँ के रूप में ममतापूर्ण हैं।'[9] उनके वृक्षों की लताओं में छिपकलियों व मगरमच्छो के डरावने प्रतीकों को भी मानवीकरण के रूप में संयोजित करने का प्रयास किया है। सघन वनों की लताएँ, पेड़ों के आडे-तिरछे हिस्से उनसे लिपटे हुए उन पर रेंगते हुए जीव-जन्तु की अठखेलियाँ, उलझी हुई शाखाएँ समसामयिक जीवन के उलझाव बिखराव और तनाव को वाणी देने का प्रयास कर रही हैं। वहीं दूसरी और प्रकृति व मानव के घनिष्ट सम्बन्ध को भी उजागर कर रही हैं

प्रस्तुत कृति में कलाकार ने नारी की पीड़ा के मर्म को अपने रेखाचित्र द्वारा उजागर करने का प्रयास किया है। कलाकार ने मछली को बन्धनों से जकड़ा हुआ प्रदर्शित कर अपने मनोवेगों के संताप को पूर्ण विराम दिया है। वह अपने आप में अतुलनीय है। कृति में नारी के जीवन के संघर्ष की वेदना को उन्माद बनाकर संवेदना की सुकुमारता को बड़ी ही सौन्दर्यात्मक रूप में चित्र सृजन का माध्यम बना जिस प्रकार काली सफेद रेखाओं के द्वारा विविध प्रतीकों, एवं बिम्बों का उपयोग करते हुए कलाकार ने कृति में कल्पना लोक की सृजना की हैं, वह उत्कृष्ट है। पेड़ की शाखाओं को मछली के साथ जकड़ा हुआ दर्शाते हुए नारी की जीजिविषा की पीड़ा को कलाकार ने दर्शाने का प्रयास है। पुरूष सत्तात्मक समाज में आज भी नारी शोषण, पीड़ा, आदि बन्धनों से मुक्त नहीं हो पाई हैं। आज भी समाज नारी का शोषण कर रहा हैं। प्रकृति के माध्यम से कलाकार इसी पीड़ा को दर्शाने का प्रयास कर रहा है।

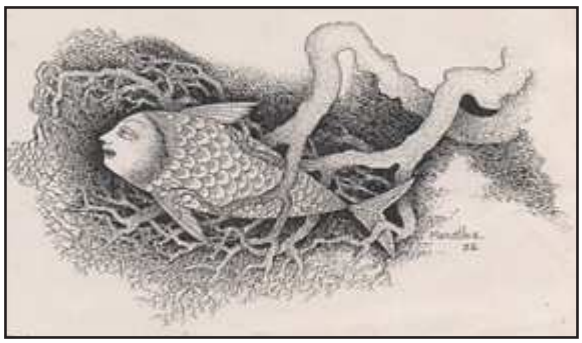

(रेखाचित्र संख्या1)

सागर-सरिता – 'लालचन्द मारोठिया के प्रकृति सौन्दर्य में जलाशयों विशेषत: सागर-सरिता का महत्वपूर्ण स्थान है। कलाकार ने सागर के अक्षितिज विस्तार, उसकी तरंगों और उसकी अनन्त गहराईयों का भाव विमुग्ध वर्णन नीले वर्ण में किया है।'[10] कलाकार ने मानवीकरण के सहारे इन लहरों को मनुष्य की आवृत्ति से सुसज्जित किया है।

प्रस्तुत चित्र में कलाकार ने अपनी भावात्मक अनुभूतियों को स्वप्निल रूप दिया है। मारोठिया की कलाभिव्यक्ति में प्रकृति एक महत्वपूर्ण घटक है, जिसे आपने अपनी तूलिका के माध्यम से चित्र को संवेदना के साथ चित्रित किया है। मारोठिया ने सागर-सरिता के जल का मानवीकरण कर अपने सहज भावों की एक निर्मल अनुभूति प्रस्तुत की है। कलाकार के अनुसार आज के समाज में पर्यावरणीय असंतुलन से जो नदी सागर का जल विलुप्त हो रहा है, उसी से आहत हो कलाकार को इस चित्र सृजन की प्रेरणा मिली। कृति में कलाकार ने जल के ठोस रूप बर्फ का मानवीकरण कर जीव-जन्तुओं की आकृतियों को सागर की लहरों के साथ किलोल करती सहचर भावों के साथ चित्रित किया है। कृति में पीला व नीला रंग शीतलता प्रखरता, प्रफुल्लता, फैला सम्पूर्ण वातावरण को जीवन्तता प्रदान कर रहा हैं। कृति में वृक्षों की जड़ों को पशुओं व मानवाकृतियों के रूप में चित्रित किया।

(चित्र संख्या 2)

बादल – मारोठिया ने बादलों को पुरूष रूप में चित्रित किया हैं, सम्पूर्ण आकाश को बादलों से भरे हुए अभिराम सौन्दर्य को प्रस्तुत किया है। मारोठिया के बादलों के मानवीकरण में मौलिकता व नवीनता का पुट दृशित होता हैं। 'बादलों में उन्होंने आदमी और प्रकृति को एक साथ खोजा है। वहीं छटपटाते निरीह मानव की पीड़ा को समझा है। उन्होंने बादलों में सम्पूर्ण प्रकृति को एक साथ देखने व दिखानें का प्रयास किया है।'[11]

प्रस्तुत कृति में बादल मारोठिया की कला अभिव्यक्ति में प्रकृति का एक महत्वपूर्ण घटक हैं। कलाकार ने अपनी तूलिका का संस्पर्श दे पृथ्वी से आसमान तक नयनाभिराम रंगों में बादलों को मानों रंग ड़ाला हैं। कृति में कलाकार ने अपनी सौन्दर्यमयी भावनाओं के प्रकटीकरण में बादलों का मानवीकरण किया हैं। बादलों में निर्मित मूर्त अमूर्त आकृतियाँ हमारे सामाजिक जीवन के सरोकारों से जुड़ी हुई प्रतीत हो रही हैं। कलाकार ने अपने कल्पना नेत्रोद्धारा बादलों को मानवीय पुरूष के रूप में चित्रित कर मानवीकरण के माध्यम से सौन्दर्यमयी प्रकृति को अत्यधिक संवेदनशील बना दिया है। कलाकार के अनुसार जीवनदायी बादल प्रकृति का एक महत्वपूर्ण अंग है।

कलाकृति में आकार बनती-बिगड़ती मुखाकृतियाँ जीवन के रहस्यों को उद्घाटित करती प्रतीत हो रही है। यही कला की प्रेरणा मारोठिया के सृजन का सेतु बनी। क्योंकि प्रकृति का हर उपादानमानव मन के पहलू से जुड़ाहैं। कृति में मटमैला, भूरा, नीला, श्वेत वर्ण अपनी रंगतों की आभा सर्वत्र फैलाते प्रतीत हो रहे हैं। श्वेत रंग में 'वृक्ष अनावृत खडे चित्रित हैं। जो मनुष्य की दृढ़ इच्छाशक्ति के प्रतिबिम्ब रूप हैं। कृति में सुडोल पत्थर अपने संघर्ष की

कहानी कहते प्रतीत हो रहे हैं। जीवन श्वासों से स्पंदित प्रकृति अपने होने का एहसास कराती प्रतीत हो रही हैं

(चित्र संख्या 3)

निष्कर्ष – अत: चित्रकार लालचन्द मारोठिया ने प्रकृति के सेतु पर मानवीकरण की परिपूर्णता को ग्रहण किया है। इन्होंने प्राय: प्रकृति का मानवीकरण या नारीकरण किया है। कलाकार ने प्राय: सौन्दर्य उपासक के रूप में प्रकृति की उपासन की कलाकृति में आकार बनती-बिगड़ती मुखाकृतियाँ जीवन के रहस्यों को उद्घाटित करती प्रतीत हो रही है। यही कला की प्रेरणा मारोठिया के सृजन का सेतु बनी। क्योंकि प्रकृति का हर उपादानमानव मन के पहलू से जुड़ा हैं। कृति में मटमैला, भूरा, नीला, श्वेत वर्ण अपनी रंगतों की आभा सर्वत्र फैलाते प्रतीत हो रहे हैं। श्वेत रंग में 'वृक्ष अनावृत खडे चित्रित हैं। जो मनुष्य की दृढ़ इच्छाशक्ति के प्रतिबिम्ब रूप हैं। कृति में पत्थर अपने संघर्ष की कहानी कहते प्रतीत हो रहे हैं। जीवन श्वासों से स्पंदित प्रकृति अपने होने का एहसास कराती प्रतीत हो रही हैं

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. टण्डन डॉ.पूरनचन्द, सौन्दर्य विमर्श, संजय प्रकाशन, अंसारी रोड़ दरियागंज नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2004 पृ.सं.-37
2. वही पृ.सं.-37
3. मलिक, बलजीत सिंह : डॉ.हरिशचन्द्र वर्मा व्यक्तित्व और चिन्तन, हिन्दी साहित्य संस्थान हरियाणा प्रथम संस्करण अप्रैल 1995 पृ.सं.-205
4. सिंह डॉ.गोविन्द पाल, महादेवी वर्मा के काव्य में सौन्दर्य भावना, लोक भारती प्रकाशन महात्मा गाँधी मार्ग इलाहाबाद प्रथम संस्करण 1989 पृ.सं.-156
5. वही पृ.सं.-156
6. वही पृ.सं.-158
7. दीक्षित; डॉ.सूर्यप्रसाद, छायावादियों का सौन्दर्य विधान दि मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड दिल्ली प्रथम संस्करण-1974 पृ.स.-138-39
8. किशोर प्रो.श्याम नंदन, छायावादी काव्य का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण आर्य प्रकाशन मंडल सरस्वती भंडार, गांधी नगर संस्करण 2000
9. सिंह डॉ.गोविन्दपाल, महादेवी वर्मा के काव्य में सौन्दर्य भावना, लोक भारती प्रकाशन महात्मा गाँधी मार्ग इलाहाबाद प्रथम संस्करण 1989 पृ.सं.-157
10. दीक्षित, डॉ.सूर्यप्रसाद, छायावादी कवियों का सौन्दर्य विधान, दी मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड दिल्ली प्रथम संस्करण 1974 पृ.सं.-141
11. दैनिक सीमा संदेश 2606 2001 पेड़-पौधों में बनी आकृतियाँ।

****

टैगोर के चित्रजगत में रूपाकारों की अद्भुत विविधता

शालिनी रानी *

प्रस्तावना –टैगोर के चित्रों में रेखाएं जब छंदपूर्ण थिरकन के साथ अपनी ही मौज में लहराती हुई घुमती है, तो चित्रफलग पर अनेको/रूप धारण करती हैं कहीं वह मूर्त रूप धारण करती है, तो कहीं अमूर्त रूपों के सौंदर्य का आनंद देती हैं। अंतस में व्याप्त प्रेरणा ही उक्त रूपों का नियामन करती हैं। वह साधारण: जगत् की कुछ अतीतमय स्मृतियों से इस प्रकार से प्राभावित होती हैं कि वे रूप प्राकृतिक वस्तुओं की तरह प्रतीत होने लगते हैं। ये कहीं कोई परिचित–अपरिचित चेहरों बन मन को उलझाते से हैं। कभी–कभी रूपों का उभरता हुआ,अन्तिम आकार अनिश्चित सा रहता हैं। एक अति विचित्र डिजाइन में चित्रफलक पर आर–पार खींची गई विभिन्न लयात्मक व ज्यामितिक रेखाएं अंकित होती है जो अजीब किस्म के पुष्प रूप में उभरती है, लेकिन उनमें कुछ बदलाव हुआ और पुष्प की पंखुड़ी पंख बन गई और निचला भाग एक पंजा बन गया । अंतत इस प्रकार एक पुष्प की बजाय यह एक अद्भुत पक्षी का रूप धारण कर जाता है। **(देखिए चित्र सं.–1 अन्तिम पृष्ठ पर)** इस प्रकार मानव मस्तिष्क टैगोर के चित्रों में उपस्थित रूपों की विविधताओं से अचरज में पड़ जाता हैं। अत: ऐसे बनाए गए रूप जो उनके पूर्व निश्चित घटकों के अनुरूप होते हैं, कभी–कभी अपने ठोसपन और अपनी वास्ताविकता की दृष्टि से चिस्मयकारी प्रतीत होते हैं। अन्य समय ये रूपों की विविधता करूणाजनक भावों को व्यक्त कर दृष्टा को बहुत हृदयस्पर्शी होते हैं। ये वक्र एवं वर्तल रेखाएं जिन से इन रूपों का निर्माण हुआ है। स्वाभाविक और स्वछंद आकारों से संचलन करती हुई प्रत्येक शैली का पुन: अविष्कार करती है जो टैगोर की मौलिक शैली की विशिष्टता हैं।

टैगोर ने जब चित्रात्मक रूपजगत में प्रवेश किया, तब उनका देखने का दृष्टिकोण परिवर्तित हो गया था। उन्होंने प्रसिद्ध **कलाकार जामिनी राय** को एक पत्र में लिखते हुए कहा था कि **'बचपन में एक कक्ष में अकेला, जब बंदी बना पड़ा रहता था– तब केवल खड़खड़ी (पट्टेदार झिरी) के अंदर से ही थोड़ी बहुत चीजें दिखायी पड़ती थीं– जिनकी उत्सुकता मन को जगाए रखती थी। यही था चित्र का संसार। ...जब मैं चित्र नहीं आँकता था, तब विश्व के दृश्य में कान में गान का सुर जगा करता था, मन में भाव का रस उतरता था। लेकिन जब चित्र उकेरने के लिए इसमें मन को आकर्षित किया तब दृष्टि की महायात्रा के बीच मन अपना रूप लियें चारों ओर प्रत्यक्ष हो, सामने आने लगे। तब रेखाओं में और रंगों में सर्जना करने लगे और अभिव्यक्ति पाने लगे।'**[1]

अत: टैगोर ने जब चित्रसृजना की तब उनकी दिव्य दृष्टि केवल उनके अन्तस के मर्म भाव को ही नहीं देख पा रही थी बल्कि उनके प्रत्यक्ष रूपों की भिन्नता को भी पकड़ रही थी और दूसरे यहाँ टैगोर ने बताया कि जब वे अकेले कक्ष में बंदी रहते थे। तब वह पट्टेदार झिरी के अंदर से ही कुछ चीजों को जान व देख पाते लेकिन मन की इच्छायें ओर जानने की करती है, तब अंतस में कहीं विभिन्न रूपों की कल्पना जन्म लेती हैं। और टैगोर के चित्रात्मक रूपसंपदा में भी उनकी इन्हीं कल्पनाओं में उपस्थित विभिन्न विचित्र रूपों की सर्जना हुई। टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में हमें जो विचित्र रूपों की प्राप्ति हुई है उनमें उनके बचपन की कल्पनाओं का एक विशेष महत्त हैं जो उनके मस्तिष्क में बिंबों के रूप में सदैव सुस्तावस्था में जीवित रहें। एक अन्य संस्मण को देखिए **'बाल्यावस्था में रात्रि को सोते समय कम रोशनी के कारण दिवार पर विभिन्न विचित्र व डरावनी शक्लों को छतों पर देखता था। यह सब दिवारों पर नमी के कारण होती थी और ये सब देख डर से मैं अपने चेहरे को चादर से ढ़क, घुटनों को मोड़ पेट में गढ़ा लेता था।'**[2] निश्चित: ऐसे पलों की स्मृतियाँ टैगोर के अचेतन में बहुत गहराई से व्याप्त थी। यहाँ देखे गये विभिन्न रूपों की अस्पष्ट सी कल्पनिय रूपछवि सदैव उनके अंदर रही। **फ्रायड़ ने भी कहा कि बाल्याकाल के अनुभव व्यक्ति के अन्दर सदैव सुस्तावस्था में जीवित रहते है, जो सुअवसर प्राप्त होते ही व्यक्तित्व में दिखाई पड़ते है। मनोवैज्ञानिक एडलर ने भी व्यक्तित्व को समझाते हुए बचपन के प्रभाव विषय पर कुछ ऐसे ही विचारों को प्रकट किया हैं।** अत: हम यहाँ यह तो जान पाते है कि टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में रूपों की यह अद्भुत विविधता में जो विचित्र से प्रतीत होते है वो संभवत उनके बचपन के प्रतीक बिंबों का प्रभाव हैं।

अत: इस प्रकार टैगोर ने रूपों की विविधताओं में जैसे बरसात के पानी में तैरते तेल पर पड़ते सूर्य की किरणों से दिखाई देने वाले विभिन्न रूपों की उत्पत्ति होती है उन्हें पकड़ना चाहा है या कहें दृश्यागत के पीछे छिपे उन रहस्यमय रूपों को चित्रायित करने का प्रयास किया जो सामान्य नेत्रों की दृष्टि पहूँच से दूर है जहाँ केवल कल्पना की दिव्य दृष्टि से ही पहूँचा जा सकता है। यही पर उनके तीसरे नेत्र–सौन्दर्य दृष्टि की अद्भुत महत्वपूर्ण भूमिका रही हैं जो एक अन्य कलाकार की दृष्टि से प्राप्त करना दुर्लभ हैं।

टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में रूपों की विविधता में हमें कही **मानवाकृति सामान्य लम्बत् आयताकार (देखिए चित्र सं.–2 अन्तिम पृष्ठ पर)** रूपों में जान पड़ती है, जो कहीं रेखाओं की गत्यात्मकता के साथ कुछ **गोलाकार व अण्ड़ाकार (देखिए चित्र सं.–3 अन्तिम पृष्ठ पर)** रूपों में।

कहीं पर रूपों को संसार से परिचित वस्तु के साम्य पाते है, जो कहीं केवल पूर्ण काल्पनिक रूपों की प्रस्तुति हुई हैं। इस प्रकार जहाँ एक ओर लयात्मक अक्षरों की भाँति लयकारी रूप बनाए वहीं दूसरी ओर ज्यामितीय आकृतियों **(देखिए चित्र सं.–4,5,6 अन्तिम पृष्ठ पर)** का निर्माण भी किया।

जिसमें उन्होंने पक्षियों, मानवाकृतियों के चित्र संयोजन और व्यक्ति चित्रों का निर्माण भी किया। उनका यह चित्र देखिए **(देखिए चित्रफलक**

* कला शिक्षिका (चित्रकला) उच्चतम माध्यमिक विद्यालय, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

सं.–7 अन्तिम पृष्ठ पर) जहाँ एक लाठी लेकर चलती वृद्धा का चित्र उल्लेखनीय है। इस चित्र में मुखाकृति को छोड़कर सम्पूर्ण आकृति कोणों के रूप में ज्यामितीय ढंग से अंकित की गयी है। आकृति का यह असंतुलित चित्रण भी अपने सम्पूर्ण भाव प्रदर्शित करने में समर्थ हैं। जो कि टैगोर की सबसे बड़ी विशिष्टता हैं। **टैगोर की ये ज्यामितीय नकुली आकृतियाँ हमें अपभ्रंश शैली की भी याद दिलाती हैं।** इस शैली में भी ऐसे ही कोणीय मानवाकृतियाँ को प्रस्तुत किया जो अपने रूप गठन में अतुलय है। टैगोर कला में उपस्थित रूपों को हम **दो वर्गों** में विभाजित कर सरलता से समझ सकते हैं। जो निम्नवत हैं–1 **वास्तविक या उसके समरूप 2 शुद्ध अमूर्त**

वास्तविक रूपों में वे आकार आते है, जिन्हें देखते ही दृष्टा आसानी से समझ जाते है कि उक्त रूप कोई मानवाकृति या पुष्प या कोई जन्तु इत्यादि हैं। **टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में जो वास्तविक आकार प्राप्त होते है वह भी पूर्णत वास्तविक या यर्थाथ नहीं। अर्थात कहने का तात्पर्य है कि ये आकार यर्थाथवादी सिद्धांत को पूर्णत: अनुपालन नहीं करते हैं। ये रूप वास्ताविकता के समरूप हैं।** नंदलाल बोस ने एक बार उनके चित्रों के विषय में कहा था कि **'उनके चित्र हमेशा वास्तविक होते थे, हालाँकि उनमें वास्तकिता यदा–कदा ही होती थी।'**[3] अर्थात तात्पर्य यह हैं कि ये पूर्णत: अमूर्त नहीं होते यहाँ वास्तविकता का पूट सदैव उपस्थित रहता हैं। टैगोर की रूपसंपदा को समझाते हुए नंदलाल बोस ने कुछ उदाहरण दिए जिनको यहाँ चर्चित करना लाभकारी हैं। यथा: उन्होंने एक बार कहा कि **'उनमें वस्तु की अनुकृति न होते हुए भी वे वास्तविक हैं–'**REAL WITHOUT BEING REALISTIC [4]नन्दलाल बसु ने इसे ओर स्पष्ट करते हुए बताया कि ' वस्तु की अनुकृति करने में पाश्चात्य चित्रकला सीमा का अतिक्रमण करती रही हैं। वास्तववादी चित्रकारों का प्रधान लक्ष्य होता है चित्र द्वारा वास्तव का भ्रम उत्पन्न करना। किन्तु यदि कला को नजरबंद करके भी काया के अंतर में स्थित सत्ता या सत्य का आभास न दिया जा सका तो वह रचना कला सृष्टि न होगी। मान लीजिए एकदम सही अनुपात में विभिन्न अंग–प्रत्यंगों के चित्रण के द्वारा सिंह आंका गया किंतु यदि उस चित्र में सिंहत्व नहीं आया, सिंह का नि:शंक तेज और गांभीर्य नहीं उभरा तो हूबहू अनुकृति होते हुए भी सिंह की प्रकृति नहीं उभरती और उस चित्र द्वारा सार्थक रस–सृष्टि नहीं की जा सकेगी। इस दृष्टि से प्राच्य चित्रकार की दृष्टि मूलत: उस 'सिंहत्व' को व्यक्त करने की होती है। शारीरिक बनावट के चित्रण में सारे छोटे–मोटे detail न आए तो न सही पर सिंह का चित्र या मूर्ति वास्तव में सिंह बने–अशिक्षित अनाड़ी व्यक्ति को भी वह सिंह के सिवा और नहीं लगे –यह आवश्यक हैं। भाव व्यंजना की यह रहस्यमयी पद्धति ही गुरूदेव के चित्रों की पद्धति थी।'[5]

और स्पष्टत समझाया जाए तो इस चित्र **(देखिए चित्र सं.–8 अन्तिम पृष्ठ पर)** को देखें। जहाँ वस्तुनिष्ठ दृष्टि से सिंह बनाया गया हैं। अंग–प्रत्यंग का अनुपात भी निर्मूल हैं। दूसरा चित्र में देखें यह अत्यंत प्राचीन असीरिया की अर्द्धमूर्ति के अनुकरण पर हैं। शरीरविज्ञान की दृष्टि से विचार करें तो इसमें अनेक त्रुटियां हैं किन्तु इस चित्रांकन में कुछ तो ऐसा हैं, जो दृष्टि पड़ते ही प्रबल रूप में हमें अपनी ओर आकृष्ट करता हैं। लगता है – अरे यह तो सचमुच का सिंह हैं–शक्ति, साहस एवं गरिमा की पाषाण मूर्ति सिंह की मूर्ति या सिंह का आकार मात्र नहीं। इस रूप–कल्पना में पशुराज की अपनी स्वाभाविक जीवन्तता समन्वित है। अत: अंग–प्रत्यंग के सही चित्रांकन या अनुपात की उपेक्षा संभव हुई है। अब तीसरे चित्र में देखे यहाँ सिंह की जीवन्तता अंकित की गयी हैं। केसरी की मुख्य विशेषताएं–विभिन्न सिंहों के रूपों में दिखलायी पड़ने वाला प्राय: अस्पष्टसा भाव – सत्य अथवा भंगिमा – इस चित्र में परिस्फुटित हुई हैं।यहीं भंगिमा, भाव, सत्य टैगोर चित्रों की प्राणछंदता है। जो टैगोर के चित्रों के मूल की वास्तविकता को या रहस्य को स्पष्ट करता हैं। टैगोर के चित्रों का ध्यान से अवलोकन करने पर यह प्राणछंदता का भाव उनके चित्रों में स्पटत: झलकता हैं। यथा चित्र **(देखिए चित्र सं.–1 अन्तिम पृष्ठ पर)** को देखिए जहाँ देखते ही एक अद्भूत जीव के दर्शन होते है। अगर हम मस्तिष्क पर दबाव डाल सोचे कि यह जीव जो यहाँ प्रस्तुत हुआ क्या वह वास्तविक संसार में है ? क्या किसी ने पहले उसको देखा है? तो हम असमंजस्य में पड़ जाते है, किन्तु फिर दूसरे ही पल महसूस होता है कि यह तो कोई पक्षी, भले ही यह अपने वास्तविक रूप में न हो लेकिन अपने अस्तित्व व स्वभाव को पूर्णत प्रस्तुत कर रहा हैं। ऐसे एक अन्य चित्र को देखिय **(देखिए चित्रफलक सं.–9 अन्तिम पृष्ठ पर)** जहाँ हमें **'मरूस्थल का जहाज' कहा जाने वाले 'ऊँट' का प्रतीकात्मक रूप में चित्रण हुआ हैं।** यह चित्र इस विचित्र पशु की व्यथा भावात्मक रूप में प्रकट करता हैं।

अतएवं टैगोर के रूपागार में रूपों की विविधताओं में उनके वास्तविक या उनके समरूप आकारों की यहीं सहज अभिव्यक्ति है कि वो विचित्र है, वैज्ञानिकता के सिद्धान्तों को खुली चुनौतियाँ देते है किंतु फिर भी मानव हृदयों में निवास करते है व अपनी कहानी स्वयं कहते है और जहाँ दृष्टा उन्हें इसी जगत के ही विविध रूपों की साकार व मूर्त अभिव्यक्ति के रूप में पाते हैं।

आकारो की विविधता में **दूसरा वर्ग शुद्ध अमूर्त आकारों** की अभिव्यक्ति के रूप में दृष्टव्य हैं। जहाँ हमें ऐसे आकारों की प्रस्तुति मिलती है, जहाँ वह पूर्ण रूप से अमूर्त आकार हैं।**(देखिए चित्र सं.–10,11,12 अन्तिम पृष्ठ पर)** जहाँ केवल रंगों व रेखाओं से कोई मूर्त रूप की सृजना नहीं की गई बल्कि केवल अमूर्तता में ही ईश्वरी रहस्यमीय भावों की अनुभूति तो करता है, लेकिन कोई मूर्त रूपों को पहचान नहीं पाता। जैसे जीवात्मा परमात्मा के अस्तित्व को तो महसुस कर पाती है लेकिन सामान्यत: दृष्टि से उनके दर्षन नहीं कर पाती हैं। टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में प्रस्तुत उनके ऐसे अमूर्त रूपों में मुझे ऐसी ही अनुभूति होती है, जहाँ मस्तिष्क ज्ञान की खोजी प्रवृति के कारण कुछ न कुछ खोजता रहता हैं। लेकिन मन यह नहीं समझता कि इन आकारों से सरोकार होने के लिए अपने ज्ञान को दर किनार कर जीवात्मा के अंहकार के जैसे भाव को छोड़ केवल परमात्मा में लीन हो जाने के जैसे ही इन चित्रों से आनन्दानुभूति प्राप्त की जा सकती हैं। जहाँ हमारा मस्तिष्क केवल इन अमूर्त रूपों में मूर्त आकारों को न देख केवल अमूर्ता में ही आनन्द प्राप्त करें। मुझे टैगोर के अमूर्त रूपों की सृष्टि में उनके ब्रह्मसमाजी होने का प्रभाव भी नजर आता हैं। जैसे ब्रह्मसमाज में रूप की उपासना नहीं होती अरूप की प्रार्थना हैं। इसी तरह टैगोर के अमूर्त रूपों में उसी ईश्वरीय अरूप सत्ता की अर्चना हैं।

दूसरा अमूर्त चित्रों की अपनी ही विशिष्टता होती है, उनमें आनन्द लेने के लिए रूपों की नहीं बल्कि भावों की, रेखाओं की गत्यात्मक शक्ति की अर्थात प्राणछंद व प्रवाह की अद्भुत अनुभूति होती हैं। यहाँ हमें विभिन्न वर्णों का प्रयोग चमतकृत कर सकता हैं। **(देखिए चित्र सं.–10,11 अन्तिम पृष्ठ पर)** यहाँ चित्र में अमूर्तता में छिपे गूढ़ रहस्य मन को आन्दिति कर सकते हैं। जो कि टैगोर के अमुर्तरूपों में पूर्णता से उपस्थित रहें हैं।

अतंत इस प्रकार दृष्टा टैगोर की चित्रात्मक रूपसंपदा में वास्तविक व उनके समरूप आकारों और शुद्ध अमूर्त रूपों की सफल अभिव्यक्ति में पूर्णता से आनन्द प्राप्त करता हैं। टैगोर ने कहा कि **'हमारे चारों ओर वास्तविक जगत विद्यमान है। जब मैं इस दृश्य प्रपंच का अपनी कलात्मक दृष्टि से**

से अवलोकन करता हूँ, तो वस्तुएँ मेरे समक्ष भिन्न आलोक अथवा दृष्टिकोण में प्रकट होती है, जिन्हें मैं अपने चित्रों में मूर्तरूप देने का प्रयत्न करता हूँ और मूर्तरूप दे देता हूँ। चाहे उन्हें वास्तविक कहें या न कहें। स्वप्नों और स्वैरकल्पनाओं का भी एक संसार है जो केवल मानव की कल्पना में विद्यमान है, यदि मैं इसे अपने चित्रों में मूर्तरूप दे सकूं तो मैं स्वयं सृष्टिकर्त्ता को उसके इस खेल में मात दे सकता हूँ। स्वयं सृष्टा भी कल्पना की इन वस्तुओं के लिए अपने सृष्टि जगत में स्थान नहीं बना सका।'[6]

अत: यहाँ टैगोर के विचार से भी उनकी कला का एक प्रमुख गुण प्रकाशित होता है और वह है, अरूप का अरूप ही रहना अर्थात् अमूर्तता। टैगोर के चित्र वास्तविक जगत के नहीं है, ये उनके अचेतन मन की प्रस्तुति है जो उनके अन्तस की गहराईयों में व्याप्त थे। यह उनके स्वप्नों और स्वैर कल्पनाओं का एक संसार है, जो इन्होंने अपने जीवन अनुभवों से रचा था और वही से ये आकार इनकी चित्रात्मक रूपसंपदा में उपस्थित हो अपना भिन्न भिन्न अस्तित्व प्राप्त करते थे। अब चाहे दर्शक को यह वास्तविक लगे या कल्पनाजन्य लेकिन इन रूपों का जन्म तो कलाकार की कल्पना से हुआ है या कहे अचेतन मन की गहरी पर्तों के हटने से।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Dey, Bishhnu, The painting of Rabindranath Tagore, The visva bharti Quarterly, V- XXIII, 1957-58, visva bharti, Santiniketen, P.n.-94
2. Chaitanya, Krishna, A History of Indian Painting : The Modern period, Abhinav Pub., New Delhi, 1st edd. 1944, p.n.-210
3. बसु, नंदलाल, उनके चित्र वास्तविक होते थे, उनमें वास्तविकता यदा-कदा ही होती थी, विजय शंकर, 'क' कला सम्पदा एवं वैचारिकह, वर्ष 8, अंक 4-5, जुलाई-अक्तूबर 2011, विजयशंकर, गणेश नगर-2, शकरपुर, दिल्ली, पृ. सं.-28
4. Bose, Nand Lal, Painting & Drawng By Rabindranath Tagore, Exhibition June 16 to June 30, 1955, Published by Gopal Chandra Ghosh, Academy of Fine Arts, Indian Museum House, 27, Chowringhee, Calcutta, p. n. 5
5. बसु, नन्दलाल, दृष्टि और सृष्टि, विश्वभारती ग्रन्थ विभाग, कलकत्ता, भाद्र 1398 बंगाब्द, पृ. सं.-222
6. राय, क्षितिज, रवींद्रनाथ ठाकुर, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, जयपुर हाउस इण्डिया गेट, नई दिल्ली, 1988, पृ.सृं - 10

चित्र संख्या - 1

चित्र संख्या - 2

चित्र संख्या - 3

चित्र संख्या - 4

चित्र संख्या – 5 चित्र संख्या – 6 चित्र संख्या – 7

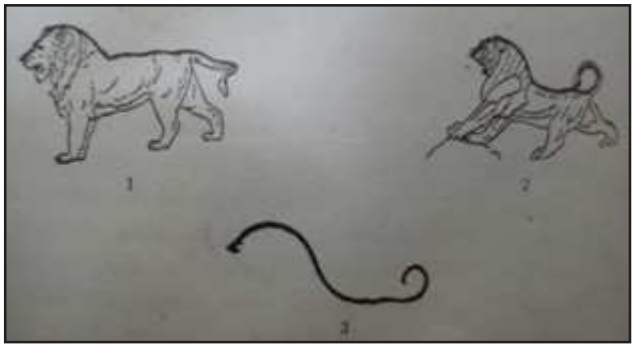

चित्र संख्या – 8

चित्र संख्या – 8 चित्र संख्या – 8 चित्र संख्या – 8 चित्र संख्या – 8

****

अमृता शेरगिल की पौर्वात्य एवं पाश्चात्य कृतियों का मनोवैज्ञानिक कलात्मक रूप

करूणा *

प्रस्तावना – सर्वप्रथम अमृता की शैली यूरोपीय है, जो फ्रांस के प्रभाववाद और विशेषकर फ्रांसीसी कलाकार पाल गोगिन से प्रभावित है और उसमें भारतीय लयात्मकता तथा अवसाद का समावेश है। इस प्रकार उनकी कृतियों में अतीत की मोहमयी स्मृतिपूर्ण सौंदर्य और उत्साह या स्फूर्तिरहित, स्वप्नवत निष्क्रियता ने अपना विशेष स्थान बनाया है। अमृता ने यूरोपीय विषयों के साथ ही भारतीय विषयों को भी अपनी कलाकृतियों का श्रृंगार बनाया। उनकी यूरोपीय कला की दीक्षा का प्रभाव उनके अचेतन मन पर हुआ होगा। उनके सेल्फ न्यूड इस बात का प्रमाण है। उन्होंने अपनी यूरोपीय तकनीक से ही भारतीय विषयों को कलात्मक रूप दिया। अमृता ने पौर्वात्य से रंग और संरचना की समृद्धि बटोरी और पश्चिमी से तकनीकी कौशल। अमृता की यूरोपीय कृतियों में रंग तथा भाव इन दोनों पक्षों की प्रधानता है और भारतीय कृतियों में अस्तित्व और अनास्तित्व अर्थात जड़–चेतना के बोध की लालसा है। इस तरह से अमृता की भारतीय व यूरोपीय कलाकृतियों का जन्म एक अनूठे कलात्मक रूप में हुआ। **अमृता की यूरोपीय कलाकृतियों का विश्लेषण मैंने विभिन्न मनोवैज्ञानिकों की विचारधारा से किया है जैसे– फेचनर, बैरलाइन, E. Bullough ।**

अमृता की यूरोपीय कृतियाँ औपचारिक दृष्टिकोण के पैमाने से मापी जा सकती है। उसमें कला तत्वों का विशेष महत्व है। उन्होंने अपनी यूरोपीय कृतियों में वहाँ के परिवेश को प्रमुखता दी। कोई भी कलाकार अपने परिवेश व परिस्थितियों से अछुता नहीं रह सकता। अमृता ने यूरोपीय कृतियों में कला तत्वों के माध्यम से नये–नये रूपों को संवारा। अमृता ने यहाँ की कलाकृतियों में शारीरिक सौंदर्य में दक्षता प्राप्त की थी **(देखिए चित्रफलक– 1 'नवयुवक का रूपचित्र' 1930) (अन्तिम पृष्ठ पर)**

अमृता नग्न–मानव मॉडलों को बैठाकर चित्रण करती थी। यूरोप की कृतियों में अमृता ने बाह्य रूप पर विशेष ध्यान दिया और अधिकतर व्यक्तिरूपों का चित्रण किया। जिसे देखकर दर्शको को आनन्द की प्राप्ति होती है। कला के क्षेत्र में मनोदैहिक विचारधारा मूलत: एक विचार है, जिसके अंतर्गत **फेचनर** की विचारधारा में कलाकृति के औपचारिक सौन्दर्य के पक्ष को रखा गया है। अमृता की पाश्चात्य कलाकृतियों को हम औपचारिक सौंदर्य द्वारा समझ सकते है।

किसी भी सुन्दर वस्तु को देखकर अपने स्तर पर आनन्द लेना व बाह्य रूप से समझना औपचारिक सौंदर्य है या किसी भी सुन्दर वस्तु को अपने लिए पसंद करना। औपचारिक सौन्दर्य कला का भावात्मक आंनद है। औपचारिक सौन्दर्य की **फेचनर** ने इस प्रकार व्याख्या की है–कलाकृति की समीक्षा जब कलाकृति के औपचारिक पक्ष पर आधारित हो तो वह समीक्षा औपचारिक सौन्दर्य समीक्षा कहलाती है। **फेचनर** ने अपनी पुस्तक में औपचारिक सौन्दर्य समीक्षा के लिए कुछ आधार प्रस्तुत किए हैं जिसमें उसने कला तत्वों (रेखा, रूप वर्ण, तान, पोत, अंतराल) के द्वारा कलाकृतियों की समीक्षा पर प्रकाश डाला। **फेचनर** के अनुसार 'आनन्दानुभूति एक आंतरिक अवस्था होती है तथा औपचारिक सौन्दर्य में दृश्यात्मक प्रत्यक्षण, रंग, आकार आदि प्रमुख रूप से आनंद प्रदान करते हैं।'[1] यहाँ हम अमृता शेरगिल की यूरोपीय कलाकृतियों की समीक्षा कला तत्वों के द्वारा करते है।

'नवयुवतियाँ' 1932 – यह कृति भी यूरोपीय पद्धति की है। अमृता ने इसमें अपनी बहन इन्दिरा व उसकी सहेली को मॉडल रूप में बैठाकर बनाया है। शारीरिक चित्रण बहुत सुन्दर ढंग से किया है। और कपड़ों के बलों पर विशेष ध्यान दिया गया है। कपड़ों को पारदर्शी तथा चटक रंगों में बनाया है। दोनों आकृति क्रियाशील हैं, कंघी को भी सम्पूर्ण रूप से बनाया गया है। मेज पर रखा सामान व्यवस्थित ढंग से बना है। सादगी और सफाई का विलक्षण मेल साफ–साफ उभर कर सामने आया है। दोनों आकृतियों के चेहरे पर एक आरोपित मुद्रा का कुछ ठहराव का आभास होता है। मनोविज्ञान की शारीरिक सौन्दर्यशास्त्र की प्राथमिक पद्धति मानी जाती है। अमृता ने एक पत्र में लिखा था –'मैं पागल की तरह उस पर काम कर रही हूँ...बहुत अच्छा बनेगा। हो सकता है इस पर मुझे पुरस्कार भी मिले...'[2] अमृता को इस कृति पर ग्रांड संलों ने पुरस्कार भी दिया और वहाँ का एसोसिएट भी बना दिया। इस कलाकृति में सौंदर्य, शक्ति, आकर्षण, रंग, रेखा व कलात्मक रूपों का अद्भुत समन्वय है। इस कृति को हम औपचारिक सौन्दर्य के रूप में समझ सकते हैं। उनके रंग तकनीक, रेखा, तान, पोत आदि से। कलाकृति में रंग संयोजन का अपना विशेष महत्व होता है और किसी भी कृति की रंग संगति दर्शक पर अलग–अलग प्रभाव डालती है जिससे वह कृति से आनन्द प्राप्त करता है। **(देखिए चित्रफलक–2) (अन्तिम पृष्ठ पर)**

इस प्रकार **फेचनर** की विचारधारा ने कला समीक्षा को एक नया मोड़ प्रदान किया, जिससे कला समीक्षा के क्षेत्र का विकास हुआ और समीक्षा के नये आधार सामने आए। **फेचनर** ने मनोभौतिकी विचारधारा के अंतर्गत औपचारिक सौन्दर्य की व्याख्या कर कला समीक्षा के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया है। अनेक विद्धानों का यह मानना रहा कि कोई भी कलाकृति दृश्य तत्वों से युक्त होती है और उनके दृश्य रूप में हम उन्हें आकारों, रंगों, तानों के माध्यम से जान पाते है। कला के यही तत्व औपचारिक सौन्दर्य में दर्शक के लिए एक उद्दीपक (भावनाओं को जगाने वाला) का कार्य करते है।

बैरलाइन (Berlyne) का यह मानना है कि किसी भी कृति में प्रस्तुत की जाने वाली वस्तु भी स्वयं में महत्वपूर्ण होती है। जैसे चित्र में बनी हुई एक कुर्सी, वास्तविक कुर्सी के आकार को प्रकट करती है। इस माध्यम में कला सूचना देने का कार्य करती है।'[3] औपचारिक सौंदर्य में सूचना अधिक मिलती है। अमृता की कृति **'वायलिन' 1931 व 'वस्तु चित्र'(1) 1932 –** इन कृति में अमृता ने जो वस्तु बनायी है, वो स्थिर है। जैसा दिखाई देता है वैसा ही इनको बनाया गया है। **'वस्तु चित्र** 1' में जग को जग के वास्तविक रूप में ही बनाया है। इसके आस–पास की वस्तु भी जैसी है वैसी ही बनाने का सम्पूर्ण प्रयास किया है। इस प्रकार अमृता की यह कृति औपचारिक रूप से

* रिसर्च एसोसिएट (चित्रकला) वनस्थली विद्यापीठ (राजस्थान) भारत

सूचना देने का कार्य कर रही है। यह कृति भी इनकी यूरोपीय शैली की बनी कृति है। छाया प्रकाश के माध्यम से इस कृति की वस्तु को उभारा गया है जो कि हमें आगे और पीछे की वस्तु का आभास कराती है। **(देखिए चित्रफलक–3, 4) (अन्तिम पृष्ठ पर)**

बैरलाइन (Berlyne)का यह मानना है कि कला के क्षेत्र में सांस्कृतिक व अभिव्यंजनावादी स्त्रोत भी महत्वपूर्ण होते हैं। जो समाज में प्रचलित सामाजिक नियमों की जानकारी देते हैं या हम इस प्रकार कह सकते हैं कि कलाकार के द्वारा प्रस्तुत चित्र में कलाकार की मनोवैज्ञानिक क्रियान्वयन प्रगति को प्रस्तुत करते हैं। साथ ही उससे जुड़े हुए समाज व संस्कृति के अदृश्य तत्वों को भी प्रस्तुत करते हैं।[4] अमृता की कृति **'भारतीय नमस्कार' 1937** इस कृति से यूरोपीय व भारतीय समाज की संस्कृति को भी समझा जा सकता हैं। इस कृति में दो आकृतियाँ बनायी गई है, जो दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार कर रही है व भारतीय संस्कृति को प्रस्तुत करती हैं। जैसे अमृता यूरोप के संस्कारों से परिचित थी, वहाँ का रहन–सहन, मिलना–जुलना सब उनके संस्कारों का एक हिस्सा था, लेकिन जब उन्होंने भारतीय समाज के संस्कार, रहन–सहन तथा भारतीयों की विचारधारा को स्पर्श किया और उनके भावों से आत्मसात हुई तो उन्होंने यह अभिव्यक्ति प्रस्तुत की। भारतीय नमस्कार करने का तरीका अमृता को बेहद खूबसूरत लगा क्योंकि यूरोपीय शैली में तो कोई गले मिलकर अतिथि का स्वागत करता है, कोई चुम्बन लेकर, तो कोई हाथ मिलाकर परन्तु भारतीय संस्कृति में दोनों हाथ जोड़कर, शीश झुकाकर अतिथि का स्वागत किया जाता हैं। ये विचारधारा उनकी मानसिकता का व भारतीय समाज में कला संस्कृति के प्रति योगदान का उत्तम उदाहरण हैं। अमृता शेरगिल के कार्य में भीतर की उनकी संवेदना और कला कल्पनाओं का ऐसा ताना–बाना है जिसमें समाज के तमाम क्षण जैसे स्पन्दित होते है। **(देखिए चित्रफलक–5)(अन्तिम पृष्ठ पर)**

बैरलाइन मानते हैं कि कलाकृति कलाकार के मन के समस्त पक्षों को प्रस्तुत करती है। साथ ही दर्शक के मन को भी स्वयं से जोड़ती है।

आधुनिक मनोविज्ञान में मनोवैज्ञानिकों ने मानवीय आस्तित्व को समझने की चेष्टा की। वैसे तो आरंभ से ही मनुष्य अपने आस्तित्व को लेकर शोध या चिंतन मनन करता रहा है। किन्तु आधुनिक काल में उन्होंने एक नई दृष्टि से नये पक्षों पर चिंतन मनन किया और आधुनिक मनोवैज्ञानिक ने कला के क्षेत्र में भी मनोवैज्ञानिक सौन्दर्यशास्त्र विषय के अंतर्गत कुछ नये पहलुओं को समझने की चेष्टा की। जैसे उदाहरण के तौर पर **E. Bullough** ने कला के अनुभव संबंधी गहन विचारों को प्रस्तुत किया। **Bullough** ने एक शब्द का प्रयोग किया। **'सौन्दर्यात्मक चेतना'** और उसे एक गहन चेतना मानते हुए उसके अलग–अलग स्वरूपों को प्रस्तुत किया और उसका एक महत्वपूर्ण रूप **'मानसिक अंतराल'** के रूप में जाना गया जो मनोवैज्ञानिक सौन्दर्यशास्त्र के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण योगदान है।

'सौन्दर्यात्मक चेतना' oOgs Bullough ने अपनी विचारधारा में 'मानसिक अंतराल' का नाम दिया है।'[5] इसमें इसने माना कि सौन्दर्यात्मक अनुभव स्वयं में सोचने विचार करने या अनुभव करने की एक विशिष्ट अभिवृत्ति, मनोवृत्ति या दृष्टिकोण है न कि केवल सामान्य प्रतिक्रिया है। जब दर्शक कलाकृति को भौतिक और नैतिक रूप से ऊपर उठकर उस कलाकृति को सौंदर्य दृष्टि से देखे तो वह मानसिक अंतराल होता है। प्रत्येक कलाकृति अपना एक विशिष्ट प्रभाव उत्पन्न करती है।

"Bullough (1907, 78) ने Leon cogniet द्वारा बनाए गए एक चित्र का उदाहरण दिया, जिसमें उसने तिन्तोरेत्तो को अपनी मृत पुत्री का चित्र बनाते हुए बनाया है। Bullough के अनुसार वह मानसिक अंतराल का अच्छा उदाहरण है। चित्र में तिन्तोरेत्तो को अपनी मृत पुत्री के चेहरे का अध्ययन करते हुए अंकित किया गया है। चित्र में तिन्तोरेत्त अपनी पुत्री के चेहरे को sergical coldness से देखता हुआ बनाया गया है। मानो उसने अपने आपको सत्य की भयानकता से अलग कर रखा हो। तिन्तोरेत्तो का व्यवहार आत्मकेन्द्रित और हृदयहीन प्रतीत होता है। किन्तु Bullough ने इस दृश्य में कलाकार को contemplation of his daughter के रूप में देखा और इस दुख के समय रोने चिल्लाने की अपेक्षा चित्र बनाने में खोया है और इसे बहुत महान माना **(देखिए चित्रफलक–6)।(अन्तिम पृष्ठ पर)** यहाँ **Bullought** ने मानसिक अंतराल को 'Distance between our oweself and its affections'[6] के रूप में माना। मानसिक अंतराल कलाकार और कृति के बीच के समान दर्शक और कृति के बीच भी होता है। यहाँ दर्शक की 'सौन्दर्यात्मक चेतना' कार्य करती है और यह सामान्य चेतना से अलग होती है। जैसे अमृता के पिता फोटोग्राफर थे। अमृता के पिता उमराव सिंह ने अपने व अपनी पुत्री अमृता व इन्दिरा की फोटोग्राफी की जो एक मानसिक अंतराल का अच्छा उदाहरण है। उमराव सिंह ने अपने फोटो को एक मानसिक अंतराल के जरिये खींचा है जिसमें उन्होंने केवल एक ही छोटा वस्त्र पहना हुआ है अगर हम इस फोटो को मानसिक अंतराल से न देखे तो यह हमें भद्दा लगेगा (**देखिए छाया चित्र सं.–1)(अन्तिम पृष्ठ पर)**। जब बच्चे का जन्म होता है या जब बच्चा छोटा होता है, तब पिता उनके फोटोग्राफ लेते है, लेकिन जब बच्चे बड़े हो जाते है, तो पिता उनके फोटो नहीं लेते। लेकिन उमराव सिंह अमृता की फोटाग्राफी करते थे, तो अमृता उनको पोज बताती थी कि हाथ ऐसे रखूँगी ऐसे खड़ी होऊँगी। (**देखिए छाया चित्र सं.–2) (अन्तिम पृष्ठ पर)** उस समय एक पिता अपनी पुत्री से व पुत्री अपने पिता से मानसिक अंतराल बनाये हुए यह सब पोज देती थी। अमृता ने अपने उन्हें फोटो से आपने आत्म–चित्र बनाये। जब अमृता पाश्चात्य परिवेश में अपनी कलाकृति का निर्माण करती थी तो वह मॉडलों को नग्न अवस्था में बैठाकर उनका चित्र बनाती थी। अमृता की कृति 'पुरूष धड़' **(Male Torso) 1930 पेरिस** में अमृता ने यह चित्र मानसिक अंतराल द्वारा बनाया। अपने मानस पटल को उनके नग्न शरीर से अलग रखती थी अपने व मॉडल के बीच एक मानसिक अंतराल बनाकर कार्य करती थी। वह मानव शरीर के भाव व उनके शारीरिक स्वरूप का गहराई से अध्ययन करती थी। अत: दर्शक जब अमृता की नग्न कलाकृति देखता है, तो कलाकृति व दर्शक के बीच भी एक मानसिक अंतराल होता है जिससे दर्शक कलाकृति से आंनद प्राप्त करता है।

पश्चात्य में अमृता ने नारी व पुरूष तन पर जोर दिया बल्कि भारत में उन्होंने नारी मन के आंतरिक भावों पर विशेष जोर दिया।

अमृता की भारतीय कृतियों में भारत की रहस्यवादपूर्ण आध्यात्मिक कला का सृजन है और ग्राम्य जीवन की वह पीड़ा स्पष्ट रूप से प्रकट होती है जिसे ग्रामीण लोग विधाता की अमिट देन समझ कर स्वीकार कर चुके है। यहाँ अमृता ने गरीब लोगों की जीवनी पर चित्रकारी शुरू की। अमृता की कृतियों में भारतीय 'महिला व पुरूष का साँवला व छरहरा शरीर, उदास चेहरे, करूणिकता निस्सन्देह एक मौन छाया की तरह अवर्णनीय है।'[7] कृतियों में उनकी उदास दु:खी बड़ी आँखें और खाली सीढ़ियाँ जिंदगी के निराशामय या खालीपन को दर्शाते है। उनकी दुबली पतली उँगलियों से शायद विषादपूर्ण मन:स्थिति और मन की खिन्नता भी दिखाई देती है। अमृता की कृति **'ग्रामीण बालिकाएँ' 1941** –यह कृति 'इस दु:ख भरे संसार में मानव–रूपी पुष्पों अर्थात् बालिकाओं की है जो इस कलाकृति में एक के बाद दूसरे के साथ सटे, सघन नजर आ रहे है। ये नन्हें बालक धरती माँ के फल रूपी

उपहार पाने की प्रतीक्षा में है, जो उन्हें कोई स्वयं दे दे, या वे जाकर किसी खेत में अनाज की बाल से, हरे कच्चे चने या बेर तोड़ लें। अमृता के चेतन मन में इन प्यारे छोटे काले अश्वेत बालको के लिए स्त्री हदय का सहज प्रेम था जिनकी आँखों में सफेद धारियां मानों जिज्ञासापूर्ण कुछ पूछ रही हैं। अमृता ने इनके लचकदार जिस्म को अपने प्यार भरे ब्रश से इस तरह बनाया कि चित्र में उनकी चुस्ती-स्फूर्ति खिल उठे, और वे धरती पर नदी की रवानी के साथ दौड़ते नज़र आये।'[8] **(देखिए चित्रफलक-7)**

'दक्षिण भारतीय ग्रामीण बाजार जाते हुए' 1937 -यह कृति ग्रमीणवासियों के जीवन-व्यापार का एक अंग है। अपने परिवार व जीने की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इन ग्रामीण लोगों को क्रय-विक्रय के लिए बाजार जाना होता है। स्त्री हो या पुरूष सभी को इस प्रक्रिया से गुजरना होता है। इस कृति में एक ठहराव है, जो ग्रामीण लोगों की ठहरी हुई जिन्दगी का प्रतीक है। बच्चों के तन पर वस्त्र न होना और वयस्कों के तन पर मात्र एक-एक वस्त्र का होना उनकी गरीबी व सादगी को व्यक्त करते है। एक बच्ची जो अपनी माँ के आँचल से लीपटी खड़ी है जैसे कह रही हो माँ मुझे भूख लगी है और दूसरी स्त्री का उस बच्ची की ओर ममतयी दृष्टि से देखना सहानुभूति प्रकट करता है। माँ का उस बच्ची के कंधे पर रखा हाथ सहनशीलता का आभास देता है। यह कृति माँ और बेटी के दैनन्दिन स्नेह का अनूठा उदाहरण है **(देखिए चित्रफलक-8)**

अमृता की भारतीय कृतियों में आज के युग का इतिहास बसा है। उनकी कृतियों में सत्यता के दर्शन होते है। नारी वर्ग की विषमताओ को अमृता ने जिस शक्ति और दृढ़ता से अभिव्यक्त किया उसका एक विशेष महत्व है। उनकी भारतीय कृतियाँ सामाजिक जीवन की यथार्थता को प्रकट करती है। उनकी कृतियों का एक अनूठा उदाहरण यह भी है कि अमृता ने जीवन के विभिन्न पक्षों व भिन्न स्थितियों को व्यापक स्तर पर जीवन की विभिन्नताओं को काफी समीप से अपनी संवेदनीय दृष्टि से देखने-परखने का प्रयत्न किया है। ये जीवन अनुभव चाहे उन्हें भारत के विभिन्न प्रदेशों से मिले हो या पाश्चात्य से, सही रूप से तो ये उनके कलात्मक संसार की मजबूत जड़े है, जिससे आज भी कलात्मक क्षेत्र हरा-भरा, पल्लवित और पुष्पित बना हुआ है। यही कारण है मृत्योपरांत भी अमृता शेरगिल की प्रतिष्ठा कलात्मक-संसार में निरन्तर बढ़ती रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 Funch, Bjarne Sode, The Psychology of Art Appreciation, Museum Tusculanum Press University of Copenhagen, 1997,p.-14
2 नंदन, कन्हैयालाल, अमृता शेरगिल, पराग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, जनवरी 1987, पृ.सं.-90
3 Funch, Bjarne Sode, The Psychology of Art Appreciation, Museum Tusculanum Press University of Copenhagen, 1997,p.-27
4 वही,पृ.सं.-27
5 वही,पृ.सं.-188
6 वही,पृ.सं.-90
7 Rao, P.R. Ramachandra, Modern Indian Painting, Rachana Bhimasena Gardens Madras-4 India, First Published 1953, P.n.-36
8 Anand, Mulk Raj, Amrita Sher-Gil, National Gallery of Modern Art, New Delhi, 1989, P.n.-85

चित्रफलक–1

चित्रफलक–2

चित्रफलक–3,4

चित्रफलक–5

चित्रफलक–6

छाया चित्र सं.–1

छाया चित्र सं.–2

चित्रफलक–7

चित्रफलक–8

****

मध्यकाल में अवन्तिका की सांगीतिक परम्परा में कालिदास का योगदान

डॉ. कमलेश राठौर *

प्रस्तावना –संगीत नाट्य शास्त्र का अनिवार्य अंग भी है और स्वतंत्र कला भी। इस शास्त्र के सिद्धान्त और प्रयोग दोनों ही पक्षों पर महाकवि कालिदास को पूरा अधिकार था। कालिदास की रचनाओं में वीणा और वल्लरी जैसे शब्दों का प्रयोग तो है, परन्तु 'किन्नरी' शब्द का प्रयोग नहीं है। किन्नरी ही वह सर्वप्रथम तंत्री वाद्य है जिसमें सारिकाओं का प्रयोग होता है। कालिदास के ग्रन्थों में किन्नरी की चर्चा न होना इस तथ्य का प्रबल प्रमाण है कि उनके समय तक सारिका वाद्यों का आविष्कार सम्भवत: नहीं हुआ था। 'नाट्य शास्त्र' की परम्परा में 'मत्तकोकिला' नामक तंत्री वाद्य को ही वीणा कहा जाता है। जिसमें तीनों सप्तकों के प्रत्यक्षीकरण के लिये 21 तंत्रियां होती है। आचार्य अभिनव गुप्त ने भी इस तथ्य का स्पष्टीकरण करते हुए कहा है कि तंत्री वाद्यों में मत्तकोकिला ही प्रमुख है, जिसे वीणा कहा जाता है। मत्तकोकिला में वांछनीय स्वर, सप्तक या मूर्छना की प्राप्ति के लिये तंत्रियों को यथा परिणाम कसा अथवा ढीला किया जाता है। इस क्रिया को सारणा कहते है।

'मेघदूत' में यक्ष अपनी प्रियतमा का वर्णन करते हुए मेघ से कहता है– 'उत्संगे वा मलिनवसने सौम्य निक्षिप्य वीणां,

'मद्गोत्रांकं विरचितपदं गेयमुद्गातुकामा।
तन्त्रीमार्द्रा नयनसलिलै: सारयित्वा कथंचित्,
भूयो भूय: स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती ।।26।।'

अर्थात – ओ सौम्य ! मेरी प्रियतमा अपनी गोद में मलिन वसन पर वीणा को रखे हुए अपनी ही मिलाई हुई मूर्च्छना को बार–बार भूलती हुई, आँसूओं से भीगी हुई तंत्री को यथा स्थान मिलाकर, मेरे नाम से अंकित गेय पद को गाने की कामना करती होगी।

'नाट्य शास्त्र' में सात ग्राम राग गिनाए गए हैं। इन रागों में कैशिक अथवा शुद्ध कैशिक का व्यवहार दिन के प्रथम प्रहर में होता है। इसमें प्रयोज्य स्वर–सप्तक स्थूल रूप में गौरी–मनोहारी मेल जैसा है और उसका देवता मंगल है। कैशिक राग के प्रयोग की चर्चा **'कुमारसम्भव'** के अष्टम सर्ग में इस प्रकार आई है –

'स व्यबुध्यत बुधस्तवोचित: शातकुम्भकमलाकरै: समम्
मूर्च्छना परिग्रहीतकैशिकै: किन्नरैरूशसि गीत मंगल: ।।85।।

अर्थात – किन्नरगणों के द्वारा मूर्च्छना विशेष में छेड़े हुए कैशिक राग से युक्त मंगल गीत को सुनकर बुधों के द्वारा स्तुती से भगवान शंकर स्वर्णाभ कमलों के विकास के साथ ही जागते थे।

उस समय अवनद्ध वाद्यों में तीन मुख भी होते थे– दाहिनी, बायीं और ऊपर की ओर। जब दाहिने मुख पर षड्ज, बाएँ मुख पर गन्धार, और ऊपर वाले मुख पर मध्यम – ग्रामीय पंचम की स्थापना लेप द्वारा की जाती थी तब इस क्रिया को मायूरी मार्जना कहा जाता था। **'मालविकाग्निमित्रम्'** के प्रथम अंक में मृदंग की ध्वनि सुनकर परिव्राजिका कहती है –

'जीमूतस्तनितविषंकिभिर्मयूरैरूद्गीवैरनुरसितस्य पुष्करस्य।
निर्हादिन्युपहितमध्यमस्वरोत्था मायूरी मदयति मार्जना मनांसि ।।21।।'

अर्थात – मिलाए हुए पुष्कर वाद्य पर मध्य स्थानीय आरम्भक स्वर से उठने वाली आल्हादक मार्जना उन मोरों के मन को मदमत्त कर रही है जिन्हें मृदंग वादन सुनकर मेघ–गर्जन का भ्रम हो रहा है।

राग – प्रयोज्य स्वरावली के आरोह को प्राचीन परम्परा में **'तान'** कहा जाता था। स्वर – वाद्यों द्वारा अभीष्ट राग के स्वरों का पहले से ही छेड़ा जाना **'तान प्रदायित्व'** कहलाता था।

कालिदास के साहित्य में संगीत शास्त्र के पारिभाषिक शब्दों का विपूल प्रयोग मिलता है। इसी प्रकार वहाँ विभिन्न वाद्य यंत्र और गीति–प्रकार सहज उपलब्ध है। कालिदास का प्रत्येक ग्रंथ संगीत के संदर्भो से ओतप्रोत है। **'मेघदूतम्'** में मेघ को संबोधित करते हुए यक्ष का यह कथन **कालिदास के संगीत प्रेम** को व्यक्त करता है जिसमें उन्होंने एक ही श्लोक में वंशी, कंठ–संगीत एवं मुरज की सुन्दर संगत को चित्रित कर दिया है –

'शब्दायन्ते मधुरमनिलै: कीचका: पूर्यमाणा:
संसक्ताभिस्त्रिपुरविजयो गीयते किंनरीभि:।
निर्हादस्ते मुरज इव चेत्कन्दरेषु ध्वनि: स्यात्
संगीतार्थो ननु पशुपतेस्तत्र भावी समग्र:।।'

(मेघदूतम् 1 /60)

अर्थात – हे मेघ वहाँ के पोले बांसों में जो वायु भरने लगती है, तब उनमें से मीठे–मीठे स्वर निकलने लगते हैं और किन्नरों की स्त्रियाँ भी स्वर मिलाकर त्रिपुर विजय का गीत गाने लगती हैं। उस समय तुम गरजकर पहाड़ की खोहों को गुँजाकर मृदंग के समान शब्द कर दोगे तो शिवजी के संगीत के सब अंग पूरे हो जाएगें।

उनके **'अभिज्ञान शाकुन्तलम्'** का आरम्भ गान से ही होता है। इसके पंचम अंक के प्रारम्भ में दुष्यन्त की एक उपेक्षिता रानी हंसपादिका का उपालम्भ गीत वर्णित है, जिसे सुनकर राजा मुग्ध हो जाता है। इस प्रसंग में संगीत का वह प्रभावकारी पक्ष सामने आता है, जिससे हृदय विदारक उपालम्भ भी मधुर प्रतीत होने लगता है। इसी प्रकार **'मेघदूतम्'** में एक मार्मिक विरह गीत का चित्रण मिलता है जहाँ विरहणी यक्षिणी मनोविनोद के लिये वीणा बजाना चाहती है किन्तु उसकी आँखों से बहते हुए आँसुओं की धारा से वीणा के तार भींग जाते हैं। इस कारण वह चाह कर भी गीत के पदों को बार–बार भूल जाती है।

'कुमारसम्भवम्' में भी प्राकृतिक संगीत का बड़ा सुन्दर वर्णन मिलता है। कवि कहता है कि हिमालय अपनी गुफा रूपी मुख की वायु से बांसों के

*अतिथि विद्वान (संगीत) श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

छिद्रों को भरता हुआ अथवा उससे मधुर ध्वनि उत्पन्न करता हुआ ऐसा प्रतीत होता है मानो गाने वाले किन्नरों को तान देने की इच्छा कर रहा हो –

य: पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान् दरीमुखोत्थेन समीरणेन
उद्गास्यतामिच्छति किन्नराणां तानप्रदायित्वमिवोपगन्तुम्।

'कुमारसम्भवम्' में शिव–विवाह के अवसर पर वरयात्रा में सम्मिलित विश्वावसु इत्यादि संगीत कुशल गंधर्व त्रिपुर–विजय का गीत गाते हुए आगे–आगे चलते हैं। संगीत की यह लोक–परम्परा युगों युगों से निरन्तर प्रवाह मान है।

गायन ही नहीं वरन् वादन संबंधी सन्दर्भो का भी प्रचुर उल्लेख कालिदास के साहित्य में उपलब्ध है। **'मेघदूतम'** में यक्ष उज्जैन में स्थित महाकालेश्वर मन्दिर में संध्या को मेघ से रूकने का अनुरोध इसलिए करता है कि वह संध्या आरती में बजते ढोल की आवाज के साथ अपने गंभीर गर्जनों को मिला कर पुण्य लाभ प्राप्त कर सके। तत् वाद्यों में वीणा के अतिरिक्त अवनद्ध वाद्यों में पटह, पुष्कर, मृदंग, मुरज, मर्दल, दुंदुभी तथा भेरी का उल्लेख कालिदास ने किया है। सुषिरवाद्यों के अंतर्गत तुर्य, वंशी और शंख वर्णित हुए हैं, तो घन वाद्यों में ताल, घण्टा, क्षुद्रा, घंटिका (किंकणी) तथा कांची।

कालिदास के साहित्य में शास्त्रीय संगीत के साथ – साथ लोकगीतों की भी चर्चा मिलती है। 'विक्रमोर्वशीयम्' के चतुर्थ अंक में कवि चर्चरी, द्विपदिका, खण्ड धारा आदि विभिन्न गीतियों का प्रयोग करता है। 'मालविकाग्निमित्रम्' के प्रथम अंक में गणदास के मुख से शमिष्ठाकृत चतुष्पदा गीति के चर्चा आती है जो नृत्य की दृष्टि से चलित नामक परिभाषा के अंतर्गत है। 'शाकुन्तलम्' के पंचम अंक में हंसपदिका की गीति भी इसी प्रकार की है। ऐसे और भी प्रसंग हैं, जिनमें नटी गीत, मदन गीत, वैतालिक गान, ऋतु गान, भावगीत, विरह गीत, उपालम्ब गीत आदि का उल्लेख है। स्पष्ट है कि कालिदास साहित्य के साथ संगीत के भी मर्मज्ञ थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मेघदूतम् अष्टमसर्ग, ले.कालिदास, श्लोक 26
2. कुमारसंभव, ले. कालिदास, श्लोक 85
3. मालविकाग्निमित्रम्, ले. कालिदास, श्लोक 21
4. मेघदूतम् ले. कालिदास, श्लोक 1, पेज नम्बर 60

****

गरीब एवं वंचित वर्ग के बालकों के निजी विद्यालयों में प्रवेश संबंधी (आर.टी.ई- RTE) अधिनियम के क्रियान्वयन से संबंधित समस्याओं का अध्ययन

नीलिमा पहारे *

शोध सारांश – राष्ट्र का विकास उसके निवासियों की शिक्षा पर निर्भर है, हमारे संविधान मे शैक्षिक अवसरों के समानता हेतु पहल की गयी किंतु हमारे देश मे बच्चों की शिक्षा जैसी बुनियादी जरूरत की पूर्ति अभिभावक नहीं कर पाते। हमारी आजादी के 66 सालों तक और राष्ट्रीय नीति के क्रियान्वयन के बावजुद 58 प्रतिशत से ज्यादा बच्चे निरक्षर है। मध्यप्रदेश में वंचित बच्चों की संख्या बहुत अधिक है।

स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में भारत ने अपने नवनिर्माण के लिए शिक्षा प्रसार की आवश्यकता का अनुभव किया। क्योंकि स्वतंत्रता प्राप्ति के समय 6–11 वर्ष वाले आयुवर्ग के केवल 30 प्रतिशत बच्चे प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। अत: देश की राष्ट्रीय सरकार ने प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क सार्वभौमिक तथा अनिवार्य बनाने का एवं 6–14 वर्ष की आयु तक प्रत्येक भारतीय बच्चे के स्कूली शिक्षा का लक्ष्य रखा गया। लेकिन वित्तीय पंचवर्षीय योजना के अंत तक 11 वर्ष के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा का प्रबंध अवश्यक किया जाए, किंतु इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु कड़ा परिश्रम करना पडेगा।

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध शिक्षा अधिकार अधिनियम (आर.टी.ई.) से संबंधित है। शिक्षा की पहली सीढ़ी विद्यालय है। विद्यालय शिक्षा के द्वारा राष्ट्र का विकास होता है। क्योंकि जिस राष्ट्र कर प्रत्येक नागरिक जितना शिक्षित होगा, उस राष्ट्र का उतना ही विकास होगा। हमारे संविधान के आधार स्तम्भ, स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व एवं सामाजिक न्याय है, संविधान में इस बात का भी प्रावधान हैं कि शिक्षा प्राप्त करने के सभी को समान अवसर दिए जायेंगे तथा किसी भी व्यक्ति को जाति, धर्म, लिंग भाषा या अन्य किसी कारण से भेदभाव नहीं रखा जायेगा अर्थात एक स्तर पर सभी को अनिवार्यतह: शिक्षा प्राप्त करने के अवसर देना।

अत: इस बात की आवश्यकता समझी गई की विद्यालय जाने वाली आयु अर्थात 6 से 14 वर्ष तक की आयु वर्ग के सभी बालक, बालिकाओं के लिए अनिवार्य रूप से शिक्षा वर्ग व्यवस्था की जाए तथा 6–14 वर्ष के सभी बालक–बालिकाओं के लिए अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाए।

शैक्षिक अवसरों की समानता से तात्पर्य जाति, धर्म, रंग, रूप, लिंग तथा क्षेत्र के आधार पर पक्षपात न करते हुए सब के लिए उपयुक्त शैक्षिक अवसर प्रदान करने से है। बालक के सर्वांगीण विकास में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, मानव का व्यैक्तिक व सामाजिक विकास शिक्षा द्वारा संभव है।

शिक्षा का संकुचित अर्थ – जे.एस. मेकेन्जी के अनुसार – 'संकुचित अर्थ में शिक्षा से आशय शक्तियों के विकास एवं उन्नति के लिए जानबुझ कर किए गए किसी भी प्रयास से लिया जा सकता है।'

शिक्षा का व्यापक अर्थ – डी.वी. के अनुसार –शिक्षा अनुभवों के सतत पुनर्निर्माण के माध्यम से जीवन की प्रक्रिया है। यह व्यक्ति में उन समस्त क्षमताओं का विकास है। जिनके द्वारा यह अपने पर्यावरण को नियंत्रित करता है तथा अपनी उपलब्धि की संभावनाओं को पूरा करता है।

शिक्षा का महत्व – भारतीय पौराणिक शास्त्रों में कल्पवृक्ष की कल्पना की गयी है और यह माना गया है कि कल्पवृक्ष से जो इच्छा प्रकट की जाती है, वह, वृक्ष उस इच्छा की पूर्ति करता है, विद्या को इसी कल्पवृक्ष के समान कल्पलता माना गया है और यह माना गया है कि इस विद्यारूपी कल्पलता से जो भी इच्छा की जायेगी वह यह पूरी करेगी, अर्थात् विद्या मनुष्य की हर कामना को पूरा कर सकती है।

शिक्षा की आवश्यकता – शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली सार्थक, सामाजिक और नैतिक प्रक्रिया है। इसके माध्यम से कोई भी समाज अपने सदस्यों की अपनी पूर्व संचित सभ्यता और संस्कृति से परिचित कराता है और उन्हें इसमें निरंतर विकास करने की शक्ति प्रदान करता है। अब यदि उस समाज के सामने इसकी स्पष्ट तस्वीर नहीं है, तो उसे अपनी आने वाली पीढ़ी को क्या पढ़ाना है और क्या नहीं पढ़ाना है, तो उस समाज की शिक्षा सुचारू रूप से नहीं चल सकती, जब बालक को अच्छी प्राथमिक शिक्षा दी जाए। प्राथमिक शिक्षा संपूर्ण शिक्षा की वह आधारशिला है। जिसकी नींव पर शिक्षा के सुदृढ़ भवन का निर्माण किया जा सकता है। अत: राष्ट्र के लिए उपयोगी नागरिक बनाने के लिए आवश्यक है कि सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध करायी जाए। अत: देश की राष्ट्रीय सरकार ने प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क सार्वभौमिक तथा अनिवार्य बनाने का निश्चय किया। इस उद्देश्य से स्वतंत्र भारत के संविधान की 45 की धारा में स्पष्ट रूप से 10 वर्ष के अंदर सभी बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क एंव अनिवार्य बनाने की घोषणा की गयी है।

शैक्षिक अवसरों की समानता – शैक्षिक अवसरों की समानता से तात्पर्य जाति, धर्म, रंग रूप, लिंग तथा क्षेत्र के आधार पर पक्षपात न करते हुए सबके लिए उपयुक्त शैक्षिक अवसर प्रदान करने से है। मूल अर्थ में शैक्षिक अवसरों की समानता से तात्पर्य है, उन व्यक्तियों के लिए अतिरिक्त शैक्षिक साधन जुटाना जो किन्हीं कारणों से पिछड़े हुए है, जब ऐसे वर्गों तथा व्यक्तियों के लिए अतिरिक्त शैक्षिक साधन उपलब्ध होंगे तो वे सुविधा प्राप्त वर्गो के समान शिक्षा प्राप्त कर अपनी उन्नति व उत्थान के करने के लिए पर्याप्त अवसर

* शोधार्थी, फेक्ल्टी ऑफ एज्युकेशन, पेसीफिक ऑफ हायर एज्युकेशन एंड रिसर्च यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

प्राप्त होंगे शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हो, इन्हें हम निम्न वर्गों में विभक्त कर सकते है, महिला वर्ग, अनुसूचित एवं पिछड़ी जातियाँ, विकलांग व्यक्ति, विकट भौगोलिक क्षेत्र, समाज का निर्धन एवं श्रमिक वर्ग।

आर.टी.ई. अधिनियम 21 (ए) –किसी देश में लोकतंत्रीय शासन की सफलता के लिए जनता का शिक्षित होना पहली अनिवार्यता है। जनता के द्वारा जनता के लिए, जनता का शासन तंत्र तभी सुचारू रूप से चल सकता है जबकि देशों में आम लोगों को कम से कम इतनी शिक्षा प्राप्त हो सके कि वे अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक एवं संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों का उचित प्रयोग कर सके। अत: जनवर्ग का शिक्षित होना बहुत जरूरी होता है।

इसी संदर्भ में देश में धारा 45 (1) अप्रेल 2010 से 'नि:शुल्क और अनिवार्य' बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम 21 (ए) लागू हुआ। इस अधिनियम के तहत गैर अनुदान प्राप्त प्रायवेट स्कूलों में वंचित समूह और कमजोर वर्ग के बच्चों का न्यूनतम 25 प्रतिशत प्रवेश दिये जाने के संबंध में प्रक्रिया निर्धारित की गयी। इसके अंतर्गत वंचित समूह और कमजोर वर्ग में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, नि:शक्त बच्चे एवं गरीबी रेखा के नीचे के परिवार रखे गए है। प्रायवेट स्कूलों में, स्कूलों के पड़ोस के, उपरोक्त श्रेणी के बच्चों को प्रवेश की सुविधा होगी। इसमें पड़ोस की सीमा से लगे ग्रामीण वार्ड तथा ग्राम होंगे।

इस अधिनियम के तहत नवीन विद्यालयों की स्थापना, अतिरिक्त शिक्षकों की भर्ती एवं अशासकीय विद्यालयों में दर्ज संख्या के न्यूनतम 25 प्रतिशत तक कमजोर वर्गो के पालकों के बच्चों की शिक्षा पर अनुदान की व्यवस्था की जाएगी।

वंचित समूह – वंचित का अर्थ है रहित होना, विहीन होना यदि हम किसी को विहीन होना यदि हम किसी को विहीन कर देते है, तो वह वंचित होता है। इस समूह में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, विमुक्त जाति वन भूमि के पट्टाधारी और 40 प्रतिशतता से अधिक नि:शक्तता वाले बच्चे शामिल है। इसके अंतर्गत, माता पिता के स्नेह से वंचित, शारीरिक विकलांगता, मानसिक विकलांगता, सांस्कृतिक दृष्टि से वंचित, सामाजिक दृष्टि से वंचित, आर्थिक दृष्टि से वंचित आदि।

अध्ययन का औचित्य – स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में भारत ने अपने नवनिर्माण के लिये शिक्षा प्रसार की आवश्यकता का अनुभव किया। क्योंकि स्वतंत्रता प्राप्त के समय 6–11 वर्ष वाले थे। अत: देश की राष्ट्रीय सरकार ने प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क सार्वभौमिक तथा अनिवार्य बनाने का निश्चय किया। एवं 6–14 वर्ष आयु तक प्रत्येक भारतीय बच्चे के लिए करने का लक्ष्य रखा गया लेकिन तृतीय पंचवर्षीय योजना के अंत तक 11 वर्ष के सभी भारतीय बच्चों को अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा का प्रबंध अवश्य किया जाए। हमारे शिक्षा आयोगों ने इस पर ध्यान दिया और अने महत्वपूर्ण सुझाव दिए, शिक्षा नीतियों में भी इस ओर ध्यान दिया और अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिए, और सर्वाधिक ध्यान अनिवार्य शिक्षा के क्षेत्र में दिया गया। किंतु इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु परिश्रम करना पड़ेगा। 1 अप्रैल 2010 से 'नि:शुल्क और अनिवार्य' बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम 21(ए) लागू हुआ।

संबंधित पूर्व शोधों का निरीक्षण व विश्लेषण करने पर पाया गया कि चिटनीस (1981, त्रिपाठी (1981), यादव (1981), आचार्य (1984), राय (1987), ऐलेगोवन (1989) ने प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के प्रभाव को प्रशासनिक स्तर पर लड़कियों की शिक्षा और अभिभावक व विद्यार्थियों के लिये नकारात्मक पाया गया।

अलकारा (1980), नयनतारा (1981), कुमार (1983), कृष्णमूर्ति (1985), ने प्राथमिक स्तर एवं उच्च स्तर पर अनामांकित व शाला छोड़ने के आधार पर विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया।

सोनी (1974), चिटनीस (1981), कुलकर्णी (1985), देशपांडे (1992), कालेदत्ता (1992) ने वंचित वर्ग को उपलब्ध शैक्षिक सुविधाओं के आधार पर विभिन्न पहलुओं जैसे नामांकन विद्यालय छोड़ने, बुद्धि, आरक्षण, छात्रावास आदि के आधार पर अध्ययन कर पाया कि शैक्षिक समस्याऐं तथा सामाजिक आर्थिक स्तर छात्रों के व्यक्तित्व को प्रभावित करते पाये गए है।

गुप्ता (1976), नागराजू (1977), रंजन (1983), सिंह (1986), सिंह (1989), ने आर्थिक सामाजिक रूप से वंचित के आधार पर समस्याऐं एवं विद्यार्थियों में अभिवृत्ति का अध्ययन कर पाया कि विद्यार्थियो में सकारात्मक अभिवृत्ति को पाया गया था।

दंदा (1985) ने अनुसूचित जाति में प्रशासनिक समस्याओं के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण को प्रदर्शित किया।

उपर्युक्त शोधों के पुनरावलोकन से स्पष्ट है कि शिक्षा के विभिन्न पहलुओं जैसे सार्वभौमिकरण, अनामांकित, शाला छोड़ने वाले, उपलब्ध शैक्षिक सुविधाओं व प्राथमिक स्तर पर कमजोर एवं वंचित वर्ग की शिक्षा व समस्याओं आदि पर अध्ययन किए गए किंतु शिक्षा के अधिकार अधिनियम (आर.टी.ई.) के क्रियान्वयन के पक्ष के संदर्भ के प्रभाव के अध्ययन के लिये पूर्व में कोई शोध उपलब्ध न होने के कारण रिक्तता की पूर्ति हेतु शोधिका द्वारा शिक्षा अधिकार अधिनियम (आर.टी.ई.) को इस शोध अध्ययन के लिये निश्चित किया गया था।

समस्या कथन– इस अध्ययन में समस्या कथन इस प्रकार था –'गरीब व वंचित वर्ग के बालकों के निजी विद्यालयों में प्रवेश संबंधी आर.टी.ई. (RTE) अधिनियम के क्रियान्वयन से संबंधित समस्याओं का अध्ययन।'

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध के निम्नलिखित थे –

1. आर.टी.ई. अधिनियम से प्रवेशित वंचित एवं निर्धन वर्ग के विद्यार्थियों के अभिभावकों को निजी विद्यालयों में आरक्षित सीटों पर प्रवेश दिलाने संबंधी कठिनाईयों का अध्ययन।
2. आर.टी.ई अधिनियम से प्रवेशित वंचित एवं निर्धन वर्ग के विद्यार्थियों को निजी विद्यालयों में शैक्षिक क्षेत्र में आने वाली कठिनाईयों का अध्ययन करना।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध कार्य में शिक्षा के अधिकार (RTE) के अंतर्गत निजी विद्यालयों में प्रवेशित निर्धन व वंचित वर्ग के बालकों के अभिभावकों, शिक्षको, प्रशासनिक स्तर के शाला प्रमुखों का चयन उद्देश्यपरक विधि द्वारा किया गया। आर.टी.ई. के अंतर्गत 25 प्रतिशत आरक्षित स्थानों पर आवेदित वंचित व कमजोर वर्ग के बालकों के अभिभावकों का चयन किया गया था। अभिभावकों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग के थे। शिक्षकों का चयन–चयनित निजी शालाओं में प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों एवं प्रशासनिक स्तर के विद्यालय प्रमुखों का चयन निजी विद्यालयों के तीन स्तरों निम्न स्तर, मध्यम स्तर, व उच्च स्तर के विद्यालयों से किया गया था।

उपकरण –प्रस्तुत शोध में प्रदत्त संकलन हेतु तीन प्रकार की प्रश्नावली का उपयोग किया गया था–

अभिभावक समस्या प्रश्नावली।

शिक्षक समर्पित विद्यार्थी समस्या प्रश्नावली।

प्रशासनिक समस्या आधारित साक्षात्कार प्रश्नावली।

प्रदत्त विश्लेषण – प्रस्तुत शोध में प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु शिक्षक समर्पित विद्यार्थी समस्या प्रश्नावली के प्रदत्तों का विश्लेषण आवृत्ति तथा प्रतिशत जबकि अभिभावक व प्रशासनिक समस्या आधारित प्रश्नावली से प्राप्त प्रदत्तों का विषय वस्तु विश्लेषण तदुपरांत प्रतिशत गणना द्वारा किया गया।

अध्ययन के निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए –

1. अभिभावकों द्वारा आर.टी.ई. के प्रवेश से संबंधित कुछ कठिनाईयाँ प्रमुख पायी गयी – जैसे योजना के प्रचार का अभाव, अधिकारियों का दृष्टिकोण, असमान रिक्त सीटें, अयोग्य या अप्रशिक्षित कर्मचारी जो योजना का लाभ उठाने में बाधक थी।
2. अभिभावकों द्वारा कुछ सुझाव कठिनाईयों हेतु दिये गये जैसे– योजनाओं का अधिक प्रचार प्रसार, सरल प्रक्रिया, अन्य कक्षाओं में प्रवेश आदि जिससे आर.टी.ई. योजना में सुधार किया जा सके।
3. शिक्षकों द्वारा बताया गया कि आर.टी.ई. में प्रवेशित विद्यार्थियों को सीखने से संबंधित कठिनाईयों को उच्च स्तर पर पाया गया है। इनमें सर्वाधिक रूप से भाषा की समस्या को पाया गया था।
4. शिक्षकों द्वारा कहा गया कि इन बालकों के सीखने में मनोवैज्ञानिक कारण बाधक होते है। जिससे बालक स्वयं को एकाग्र नहीं कर पाते है।
5. आर.टी.ई. में प्रवेशित बालकों को विषयों की शिक्षण क्रियात्मकता में परेशानी का सामना करना पड़ता है। इन बालकों को लिखित कार्य एवं अंग्रेजी विषय में कई प्रकार के कार्य करने में स्वयं को असहज महसूस करते है।
6. शिक्षकों का मानना है कि आर.टी.ई. प्रवेशित बालक पाठ्य सहगामी क्रियाओं एवं पाठ्येत्तार क्रियाओं में मिली जुली प्रक्रिया को दर्शाते हैं।
7. माता पिता की आर्थिक स्थिति, एवं उनकी शैक्षिक योग्यता भी शैक्षिक उपलब्धि में बाधक पाए जाते है।
8. प्रशासकों ने माना की आर.टी.ई. में प्रवेशित बालकों में शिक्षण समस्या, उच्चारण में कमी, प्रेषित सूचनाओं को समझ न पाना, पी.टी.ए. में न आना, आदि थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल जे.सी. एवं गुप्ता एस : भारतीय माध्यमिक शिक्षा की 21वीं शताब्दी में दिव्य दर्शन; शिप्रा पब्लिकेशन्स, प्रथम संस्करण 2011
2. अ.ह. विनोद कुमार : भारतीय शिक्षण का परिदृश्य; सुचित इंटरप्राइजेस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2008
3. किसलय शरदेन्दु एंव प्रसाद गोविंद : भारत में शिक्षा का विकास साहित्य प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2006
4. नाटाणी नारायण प्रकाश : शिक्षा तथा उदीयमान भारतीय समाज माया प्रकाशन मंदिर जयपूर प्रथम संस्करण 2010
5. पाण्डेय रामसकल : नई शिक्षा नीति, अग्रवाल पब्लिकेशन, पुन: मुद्रित संस्करण 2007
6. शर्मा पी.डी. : भारती समाज में शिक्षा, श्री विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, प्रथम संस्करण 2007
7. त्रिपाठी मधुसूदन : आधुनिक भारतीय समाज में शिक्षा, ओमेगा पब्लिकेशन प्रथम संस्करण 2007।
8. Buch H.B. : Third Survey of research in education 1978-83
9. Buch H.B. : Fourth Survey of research in education vol II 1983-1988
10. Buch H.B. : Fifth Survey of Reaserch in education vol I and II.

****

बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये प्रोत्साहन योजनाओं की भूमिका

बालेन्द्र श्रीवास्तव * डॉ. एम. के. तिवारी **

प्रस्तावना –सर्वशिक्षा अभियान अंतर्गत बालिकाओं की शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए शासन द्वारा चलाई जा रही विभिन्न गतिविधियों के बारे में जानने एवं उसके क्रियान्वयन के बारे मे अध्ययन करेगें।

सर्व प्रथम मुख्य रूप से उन कारणों को जानना जरूरी है जिनके कारण या तो बालिकाएँ शाला में दर्ज नहीं हो पाती या शाला में दर्ज होने के बाद शाला छोड देते है।

इसके मुख्यत: चार कारण है।

आर्थिक कारण –

1. इसके अंतर्गत बालिकाओं का खेतीहर मजदूरी में लगे होना।
2. गाय भैंस चराना।
3. परिवार की आर्थिक स्थिति कमजोर होना।
4. परिवार के मुखिया का रोजगार के कारण पलायन।

सामाजिक कारण –

1. पालकों की सोच कि बालिकाओं को पढ़ाने से क्या फायदा।
2. छोटे भाई–बहन की देखभाल करना।
3. घर के काम–काज में हाथ बटाना।
4. बिमारी या विकलांगता की स्थिति में शाला न भेजना।

शैक्षिक कारण –

1. ग्राम में शिक्षा सुविधा का उपलब्ध न होना।
2. शाला का वातावरण उपयुक्त न होना।
3. शाला में पृथक शौचालय का न होना आदि।

इन कारणों को दूर करने के लिए शासन द्वारा विभिन्न योजनाए चलाई जा रही है। बालिकाओं की प्रारम्भिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम एन.पी.ई.जी.ई.एल.चलाया जा रहा है। इसके अंतर्गत मॉडल क्लस्टर शालाओं पुरस्कार, बालिका छात्रावास , कस्तुरबा गांधी बालिका आवासीय विद्यालय, साईकिल वितरण, गणवेश वितरण, निर्धन छात्रवृत्ति योजना , नि:शुल्क पाठ्यपुस्तक वितरण योजना आदि संचालित है।

बालिकाओं की शिक्षा के लिये संचालित समस्त कार्यक्रम एवं गतिविधियों का उद्देश्य है कि सभी बालिकाएँ शाला में दर्ज हो तथा दर्ज बालिकाएँ प्रारम्भिक शिक्षा की पढ़ाई बीच में न छोड़े, बालक–बालिका के बीच भेदभाव समाप्त हो तथा बालिकाओं की शिक्षा की गुणवत्ता पर विशेष ध्यान देना है।

कस्तुरबा गॉधी बालिका आवासीय विद्यालय – इस योजना के अंतर्गत ऐसे विकासखण्ड का चयन किया गया, जहॉ महिलाओं की साक्षरता की स्थिति कमजोर है। उन विकासखण्ड में कस्तुरबा गॉधी बालिका आवासीय विद्यालय खोले गये। इन स्थानों पर किसी अन्य विभाग द्वारा आवासीय विद्यालय नहीं थे।

गणवेश वितरण – इस योजना अंतर्गत शालाओं के समस्त बालक बालिकाओं को 400/– प्रति विद्यार्थी के मान से दो जोडी गणवेष खरीदने हेतु संबंधित हितग्राही के खाते में जमा की जाती है।

मॉडल क्लस्टर शाला – इस योजना अंतर्गत जनशिक्षा केन्द्र से एक–एक माध्यमिक शाला जहॉ बालिकाओं का नामांकन अधिक है का चयन किया गया। जिन शालाओं में कस्तुरबा बालिका विद्यालय एवं छात्रावास संचालित है उन्हें अनिवार्य रूप से मॉडल क्लस्टर शाला बनाया गया। विभिन्न प्रकार की गतिविधियों के लिए अलग से राशियों का प्रावधान किया गया। एक अतिरिक्त कक्ष जो पूर्णत: सुसज्जित हो बनाया गया। जिसमें शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए गतिविधिया करने के लिए उपकरण, जीवन कौशल, शिक्षक प्रशिक्षण, शिक्षा प्रशिक्षण, व्यवसायिक शिक्षा प्रशिक्षण तथा उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की गई। मॉडल क्लस्टर शालाओं में खोज यात्रा का आयोजन बालिकाओं में खोज एवं अन्वेषण के प्रति रूची पैदा करने के लिए किया जाता है। इसके अंतर्गत आस–पास के परिवेश के से परिचित कराने के लिए ऐतिहासिक स्थल का भ्रमण कराया जाता है। बालिकाओं को विभिन्न व्यवसाय में कार्यरत महिलाओं से यथा डॉक्टर , इस्पेक्टर, वकिल आदि को विद्यालय में आमंत्रित कर जानकारी दिलाई जाती है।

मॉ–बेटी मेला – मेला एक ऐसी गतिविधि है, जिसमें बच्चों को बहुत अधिक मजा आता है। मेले का आयोजन अवकाश के दिन किया जाता है, इसमें बालिकाएं और माताओं को शिक्षा में एवं स्वास्थ्य के बारे में जानकारी की जाती है। योजनान्तर्गत बालिकाओं के लिए पेटिंग, निबंध, कविता, संगोष्ठी भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है।

ब्रिज कोर्स – शाला अप्रेषी एवं शाला त्यागी बालक बालिकाएं जो कभी शाला नहीं गई या कक्षा 5 पूर्ण करने से पहले शाला छोड़ दी हो। उन्हें शाला कि मुख्य धारा से जोड़ने के लिये वे तरह के ब्रिज कोर्स की व्यवस्था शासन द्वारा की गई है।

गैर आवासीय ब्रिज कोर्स – ग्राम में यदि 10 से अधिक शाला से बाहर बच्चे हो तो वहां गैर आवासीय ब्रिज कोर्स खोले जा सकते है या तीन से नौ माह की अवधि के लिये संचालित किये जाते है जो सामान्यत: शाला या समुदाय घोषित है, इनमें अध्ययनरत बच्चे जैसे निर्धारित कक्षा का स्तर प्राप्त करते है, उन्हें कथाओं में प्रवेश के दिय जाता है।

* व्याख्याता, डाईट शाजापुर, शोधार्थी पहेर विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** प्राचार्य, मेवाड़ कन्या शिक्षा महाविद्यालय, चित्तौडगढ़ (राज.) भारत

आवासीय ब्रिज कोर्स – विशेष प्रशिक्षण हेतु बालिकाओं के लिए नि:शुल्क पठन–पाठन की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है बालिकाएं निर्धारित दक्षता अर्जित कर शाला में दर्ज होकर अपनी प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण करती है।

छात्रवृति योजना – छात्रवृति योजना अंतर्गत कक्षा एक से दस तक दर्ज समस्त अजा, अजजा के बालिकाओं को वार्षिक छात्रवृति दी जाती है कक्षा 6–8 में दर्ज सामान्य एवं पिछड़ा वर्ग की बालिकाओं को कन्या निर्धन छात्रवृति दी जाती है। अ.जा. एवं अ.ज.जा. के बालिकाओं को कन्या प्रोत्साहन योजना अंतर्गत छात्रवृति दी जाती है। लाडली लक्ष्मी योजनातंर्गत प्रदेश में माह अप्रैल 2007 से लाडली लक्ष्मी योजना क्रियांवित है। 1 जनवारी 2006 के बाद जन्मी बालिकाएं जिनके माता पिता आयकर दाता न हो तथा दो बच्चों पर परिवार नियोजन कराया गया हो। यदि बालिका अनाथ हो तो उसे 30000 हजार रूपये के राष्ट्रीय बचत पत्र इस योजना के अंतर्गत प्रदान किए जाते है।

सायकल वितरण योजना – कक्षा 5 पूर्ण करने के बाद कक्षा 6 में प्रवेश लेने वाली तथा 8 पूर्ण कर कक्षा 9 में प्रवेश लेने वाली ऐसी बालिका जिनके ग्राम में शिक्षा सुविधा नहीं है, को पास की शाला में आने जाने के लिए नि:शुल्क सायकल दी जाती है। सायकल के लिए शासन द्वारा निर्धारित राशि संबधित के बैंक खाते में जमा की जाती है इस प्रकार बालिका शिक्षा को बड़ावा देने के लिए सर्व शिक्षा अभियान अंतर्गत विभिन्न योजनाएं लागू की गई। जिनके फलस्वरूप बालिकाओं का नामांकन एवं विद्यालय में ठहराव में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। वर्तमान स्थिति में प्रत्येक ग्राम में शतप्रतिशत बालिकाएं विद्यालय में दर्ज होकर अपनी प्रारम्भिक शिक्षा समस्त योजनाओं का लाभ लेकर पूर्ण कर रही हे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

A Comparative Study Of Locus Of Control And Personality Characteristics Of Residential And Non Residential Schools Of Udaipur Region

Seema Gurjar* **Gajender Sharma****

Abstract - The main purpose of the investigation was to compare the locus of control and personality characteristic of Residential and Non Residential Schools of Udaipur district of Rajasthan. A sample of 30 students of XII class was selected from 10 schools(05 Residential +05 Non Residential) of Udaipur District.100 students from Residential. schools and 100 students from Non Residential Schools were taken for the study. Locus of Control constructed by Rotter(1966).Locus of Control generally refers to the mechanism through which individuals determine or do not determine their actions and behavioral controls.Aziz and Agnihotri's Introversion Extroversion Inventory (IEI) has been used to measure the personality characteristics. Mean, S.D. And't' value were used for analysis of data. Significant difference has not been found regarding Personality Characteristics of students between Residential and Non Residential Schools.
Keywords :- ***Locus of Control, Personality Characteristics.***

Introduction - Education today has been considered as the most powerful tool for the development of a nation and its citizens. The impact of good educational environment in the development of personality and Locus of Control hardly need to be emphasized. Studies till date have proved that the students who receive parental love, conducive home and school environment, proper care and facilities during his impressionable period of life helps to develop both cognitive and non cognitive competence in his/her future life.

Locus of Control is a cognitive style or personality trait characterized by a generalized expectancy about the relationship between behavior & the subsequent occurrence of reinforcement in the form of reward and punishment. People with internal locus of control tend to expect them to be the consequences of chance, luck, fate, or the actions of powerful others. Between these two extremes lies a continuum of intermediate cognitive styles Rotter also provided the internal external scale to measure it andcalled Internal-External control of reinforcement.

Personality characteristics of a person includes five broad domains or dimensions as Openness, conscientiousness, extraversion, agreeableness and neuroticism. **Openness** reflects the degree of intellectual curiosity, creativity and a preference for novelty and variety a person has. **Conscientiousness** is a tendency to show self discipline, act dutifully and aim for achievement planned rather than spontaneous behavior organized and dependable. **Extraversion** refers to energy, positive emotions, assertion, sociability and tendency to see stimulations in company of others and talkativeness. **Agreeableness** means a tendency to be compassionate and cooperate rather than suspicious and antagonistic towards others. It is also a measure of one's trusting and helpful nature. **Neuroticism** also refers to the degree of emotional stability and impulse control and is sometimes referred to by its low emotional stability.

Wolfe (2011) Past studies have shown that internal locus of control is closely linked to positive outcomes in life, such as sport performance, job performance, happiness, & socio-economic status. To understand the relati -onship between locus of control and academic success at the college level, freshmen psychology students at the University of Minnesota Duluth (UMD) were first tested using Rotter's Locus of Control Inventory Scale, then performed a task, and finally completed a follow-up survey. The hypothesis for this study was that locus of control orientation will change over time from pre-test locus of control scores to post-test locus of control scores depending on the quality of feedback received on the post-test. Reactions to the feedback quality (positive, negative,or neutral) willbe distinguished to determine whether positive & negative feedback has differential effects on locus of control. Results indicate that locus of control orientation did not change based on the quality of post-test feedback.

Studies of **McCandle and Evans(1973)** revealed that students who were low achievers had poor relationship with their parents.**Fraser(1958)and Straman (1979)** also concluded that encouragement given by parents helps the children to surpass the limits circumscribed by his intelligence. **Singh and Gill (1984)** have also reported academic achievements are also affected by parental relationship.Therefore the encouragement is an important factor in the personality make up of a student. Difference

* **Professor, Pacific Physical Education College, Udaipur (Rajasthan) INDIA**
** **Research Scholar, Pacific Physical Education College,Udaipur (Rajasthan) INDIA**

observed in the performance students studying in dual (Govt. as well as Non Govt. schools) system may involve many factors like Self concept, Academic stress, scholastic achievement and no personality Characteristics. Prior literature has shown that much has not been really achieved in this area in India. Twelfth standard in schooling stage is always considered to be a very crucial stage in student's life. So an attempt has been made in this study to investigate their Locus of Control and Personality Characteristics.

Objectives Of The Study - The following objectives have been formed for the purpose of the study:

1. To compare theLocus of Controlof Xll class students of Residential and Non Residential Schools.
2. To make a comparative study of personality characteristics of XII class students of Residential and Non Residential Schools.

Hypotheses - To carry out the study smoothly the following null hypothesis are formed.

1. There is no significant difference between XII class students of Residential Schools and Students of Non Residential Schools in relation to Locus of Control .
2. There is no significant difference in relation to personality characteristics between XII class students of Residential and Non Residential Schools.

Research Design & Methodology - The study was conducted through descriptive survey method of research as it is most suitable for the present study.

Sample - A sample of 200 students of XII class was selected from 10schools(05 residential +05 non residential) of udaipur district.100 students from residentialschools and 100 students from non residential schools were taken for the study. students selected on the basis of randomized technique of sampling from different residential and non residential schools.

Research Tool - Locus of control constructed by rotter(1966).locus of control generally refers to the mechanism through which individuals determine or do not determine their actions and behavioral controlsaziz and agnihotri's introversion extroversion inventory (iei) has been used to measure the personality characteristics.

Collection Of Data - Collection of data was done by investigator by personally meeting with students and distributing the questionnaire by giving important directions. a proper rapport was established to collect the pertinent data.

Analysis Of Data - The collected data was analyzed by using both descriptive and inferential statistics mean standard deviation, standard error of the difference between independent means and't' test was used for data analysis.

Table 1 (See in next page)

It is evident from the table -1 that the obtained t value was found to be equal to0.49, which is less than table value so not significant at .05 level. It means that students of XII class of Residential and Non Residential schools. do not differ significantly in relation to their Locus of Control. Hence the research null hypothesis that there is no significance difference between XII class students of Residential and Non Residential Schools in relation to Locus of Control is accepted.

Table 2 (See in next page)

It is evident from the Table No. 2 that the obtained t value was found to be equal to1.15, which is less than table value so not significant at two levels of significance (.01 and .o5).It mean students of XII class do not differ significantly with reference to their personality characteristics . Hence the research null hypothesis that students of XII Class do not differ significantly in relation to their personality characteristics is accepted.

Major Analysis Of The Study - After analysis of tabulated data the investigator found out the following major findings.

1. There is no significant difference between XII Class students of Residential schools and students of Non Residential Schools in relation to Locus of Control.
2. There is no significant difference in relation to personality characteristics of XII Class students of Residential schools and students of Non Residential Schools.

Conclusion - It is concluded from the study undertaken that there doesn't matters student is studying in a residential school or non residential schools. locus of controland personality characteristics of xii class students do not change with the place of study. therefore, residentialschools as well as non residential school should be provided with more conductive environment for learning. teachers should have to provide academic facilities to culminate in the student's positive attitudinal modernity. so that they can achieve better adaptation to their environment, get clarity of vision, tenacity of purpose & strength of will.

References :-

1. Bhagirathi, S.E.(2011).Relationship of anxiety and achievement motivation to goal keeping among secondary school level girl hockey players. Journal of exercise science and physiotherapy, vol. 4, no. 2: 115-
2. Karad,P.L (November 2010). Gender Differences in Personality Characteristics of Kabaddi Players. Variorum, Multi- Disciplinary e-Research Journal, Vol.-01, Issue-II.
3. McKelvie, Stuart J.; Lemieux, Patrice and Stout, Dale (2003). Extraversion
4. and Neuroticism in Contact Athletes, No Contact Athletes and Non-athletes:
5. A Research Note. Athletic Insight The Online Journal of Sport Psychology,
6. Volume 5, Issue 3.
7. Watson, A. E., & Pulford, B. D. (2004). Personality differences in high risk
8. sports amateurs and instructors. Perceptual and Motor Skills, 99, 83-94.
9. Wolfe, Jessica F. (2011). The effects of perceived success or failure on locus of control orientation in college students. Spring Journal of Psychology. Volume 4.

Table 1 : Comparison of Locus of Control of XII class students Residential of and Non Residential Schools

GROUP	N	MEAN	SD	't'	Significance
Residential School Students	100	37.20	8.42	0.49	NS
Non Residential schools.Students	100	34.60	6.53		

Here N-Number of Students,SD-Standard Deviation, t- t value, S- Significant.

Table 2 : Significance of Difference in Mean Scores of Personality Characteristics of Students of XII Class of Residential and Non. Residential schools

GROUP	N	MEAN	SD	't'	Significance
Residential School Students	100	12.00	12.25	1.15	NS
Non Residential schools Students	100	10.02	12.06		

Here N-Number of Students,SD-Standard Deviation, df-Degree Of Freedom, t- t value, NS- Not Significant.

****

The Right to Life of Foetus

Dr. Narendra Sharma *

Introduction - "Everyone has the right to life, liberty and security of person" **Universal Declaration of Human Rights, Article 3**

"No person shall be deprived of his life or personal liberty except according to procedure established by law" **Article 21 of the Indian Constitution**

Killing of girl foetus and infanticide or the murder of children because they are female, is of growing concern in contemporary society worldwide. This violation of a girl's basic right to life requires urgent attention and action. The following report, drafted by members of the Working Group on the Girl Child (part of the NGO Committee on the Status of Women in Geneva), focuses on two main areas: the right to be born (female foeticide) and the right to live (girl infanticide). The Working Group recognizes these two areas as being of particular importance in the education of the concerned societies. This report also identifies many of the root causes of girl infanticide in the private and public sphere of society, thus identifying specific actions to be taken.

The publication and presentation of this report is to occurs with the **51st Session of the Commission on the Status of Women meeting in New York**[1] focusing on the "Elimination of all forms of discrimination and violence against the girl child". This is hoped that this report will serve as an educational and working tool for civil society, social entrepreneurs, other NGOs and the interfaith community to help them to speak out against girl infanticide and killing of girl foetus.

Girl infanticide and killing of girl foetus has crept into Indian society like never before. With the advancements in medical science helping to quicken the pace of foeticide, thousands of girls are denied the right to be born.

"There is not any right like freedom, equality, full human dignity, survival and personhood possible for women until they belief confidently and demand control over their own bodies and reproductive process. The right to have killing of girl foetus is not matter of individual conscience and conscious choice for the women concerned."[2]

Right to life and freedom of pregnant women is connected with right to born of girl or boy foetus. Right to Life and Personal Liberty is the most precious, regarded as too important, unable to be taken away and it is fundamental right of citizens. Guarantee of Life and Personal Liberty is liability on the Government. It is also a part of the cultural and social awareness of the society. Makers of Constitution framers it with the awareness and responsibility that people must be protected against misuse of power by the Government. Constitution provided the Fundamental Rights in Part-III where under the guarantee of right to life and personal liberty. It is most precious rights which are enshrined in Article 21 of the Constitution.

An unusual view is formed by the judiciary for the unborn and young children democracy. The judiciary, guardian of the Constitution gave a restrictive interpretation and limited the scope of the right to life. As the child grows and become older, the law started providing favourable conditions for its healthy growth with the right to Life and Personal Liberty. Decision in **Maneka Gandhi's Vs Union of India**[3] case and cases thereafter gave a new dimension to Article **2**1.

In India, causing abortion is an offence Under Section **3**12 of IPC, 1860. Killing of foetus or girl foetus, in the view of people, is a moral issue, but it is also a constitutional issue. It is a woman's right to choose what she does with her body, and it should not be altered or influenced by anyone else. As rights of girl has an absolute freedom to conceive a child but after she exercises this freedom, termination of foetus becomes an offence under IPC sec 312.

In 1971, the Medical Termination of Pregnancy Act was passed to provide for the termination of certain pregnancies by registered medical practitioners and for matters connected therewith or incidental thereto. This Act Permits abortion/ killing of foetus subject to conditions laid down in the Act itself. "Section **3(2)** provides:

Subject to the provisions of sub-section **(4),** a pregnancy may be terminated by a registered medical practitioner,-

a) Where the length of the pregnancy does not exceed twelve weeks, such medical practitioner is, or
b) Where the length of the pregnancy exceeds twelve weeks, but does not exceed twenty weeks, if not less than two medical practitioners are, of opinion in good faith, that -
i) The continuance of the pregnancy would involve a risk to the life of the pregnant women, or of grave injury to her physical or mental health; or
ii) There is a substantial risk that if the child where born, it would suffer from such physical or mental abnormalities

* Guest faculty, Govt. Law College, Ujjain (M.P.) INDIA

as to be seriously handicapped.

***Explanation 1* -** Where any pregnancy is alleged by the pregnant woman to have been caused by rape, the anguish caused by such pregnancy shall be presumed to constitute a grave injury to the mental health of the pregnant woman.

***Explanation 2* -** Where any pregnancy occurs as a result of failure of any device or method used by any married woman or her husband for the purpose of limiting the number of children, the anguish caused by such unwanted pregnancy may be resumed to constitute a grave injury to the mental health of the pregnant woman."[4]

"The classification of pregnant women as married and unmarried violets the equality clause enshrined in Article 14 of the constitution of India."[5] The Supreme Court held in **savita samvedi Vs union of India**[6] that differentiation based on marital status is wholly unfair, unreasonable and gender-biased and is violation of the equality clause of the constitution. Should an unborn baby have the right to life? What if the baby is diagnosed with a terminal illness? How about if the woman has an unplanned pregnancy? Many people ask these same questions about the right to life or death.

In our country the right to abort or kills deformed, abnormal foetus or girl foetus is recognised only till the 20th week of pregnancy. After this period no pregnancy can be terminated except on the ground of mother life is in danger. A woman's rights over her body do not give her right to Killing of foetus or girl foetus. The right to life that everyone takes for granted should be extended to the unborn. Killing of foetus or girl foetus is a practice that should be prohibited because it basically amounts to murder. A middleaged person, a teenager, and an unborn baby are all in stages of human life. Unborn babies need to be recognised as persons. The taking of an innocent, defenseless human life is unacceptable and morally wrong. There is no morally relevant difference between deliberately killing a human being who has been born and deliberately killing a human being who is still in the womb.

A foetus's right to life outweighs the parents' rights to wealth, pride, or convenience, whether the foetus is male or female. The term "sex selective abortion" is preferable to the term foeticide, since it points to both of the ethical evils inherent in this practice.

Killing of girl foetus is not only denies the girl child her most basic human right "the right to be born" but it also turns women into silent victims. Scientific evidence has shown that mothers who have been put under pressure to kill their baby girls remain deeply hurt and injured for the rest of their lives as they cannot forget their own offspring.

The reasons for not allowing Killing of girl foetus on demand are more than one including the subservient status of the women in society where she may be forced to abort against her will and the health of the women. But these are not the only reason. The life and liberty of the born and unborn is also one of the compelling reasons for not allowing killing of foetus after certain period. It is argued that since Constitution guarantees right to life and personal liberty to all, it implies that even the unborn child has the right to life under Article 21. However, it has other aspect as well i.e. the choice to rear and bear children or not should essentially belong to the women concerned if Article 21 has to have any meaning for them.

Nikita metha and Haresh metha case - In a judgement that could have far reaching implications for the abortion debate in India, the Mumbai High Court, denied permission to a woman who wanted to abort her 25 week old unborn child, saying the law does not permit such late-term abortions.

The High Court said that it was up to Parliament and not the court to change the provisions of Indian law, known as the Medical Termination of Pregnancy (MTP) Act, which specifies that an abortion after 20 weeks can only take place if the mother faces a grave medical risk.

The recent verdict by the Mumbai High Court turning down the plea of a mother to abort her 25-week-old foetus bears the imprint of the golden rule applied by successive judicial decisions maintaining the unborn child's **right to life**. Yet the case of Niketa Mehta has thrown open an area of debate that should the right of a woman to abort as part of her right to privacy clash with that of an unborn child's right to life, which is to prevail. The Indian courts have generally attached a moral outlook towards abortion being an act against ethics. **Court decision dated Aug. 4, 2008, D. Dr. Nikhil Datar, Gynaecologist, Mr. Haresh metha and Mrs. Nikita metha Vs Union of India (UOI).**[7]

Decision of two-judge Bench of the Supreme Court in **Jacob George vs State of Kerala**[8] where the punishment to a doctor who aborted a foetus was upheld. Quoting a hymn from Rig Veda II celebrating life, the judges remarked, "Life is beyond price and it is not only a legal wrong, but a moral sin as well to take away life illegally." This perception remained with the lawmakers while drafting the Indian Penal Code inserting Section 312 making abortion punishable.

In Prakash & Ors vs Arun Kumar Saini & Anr in the High Court of Delhi[9] "This appeal involves an important question as to whether an unborn child in womb should be considered at par with a minor child.

An unborn child aged five months onwards in the mother's womb till its birth can be treated as equal to a child in existence. The unborn child to whom the live birth never comes can be held to be a 'person' who can be the subject of an action for damages for his death. As already stated above a person means a human being regarded as an individual and an individual's body: concealed on his person'. Therefore, human foetus to which personhood could be attributed was also destroyed in the accident in the instant case; had the accident not occurred the unborn child would have survived and seen the light of the day." The above decision shows that high court of Delhi considers child in the womb as person so right to life under article 21 is his/her right.

Bhawaribai Vs New India Assurance Co. Ltd.[10] (Karnataka High Court) –The claimant suffered abortion on account of the accident. The Karnataka High Court considered the death of foetus in womb at par with death of a minor. The findings of the Court are as under: - "In the case of abortion and death of foetus in the womb should be considered on par with the case of a death of a minor."

Reference : -

1. Child Right in India - Asha Bajpai
2. The Medical termination - Government of India Of Pregnancy Act, 1971

(ACT No. 34 of 1971)

3. Indian Constitution - J.N. Panday
4. Indian Penal Code - K.D. Gaur
5. Legal aspects of pregnancy - J.V.N. Jaiswal, Delivery & abortion
6. Sex-selective abortion in - Tulsi Patel, India

Footnote :-

1. 26 February to 9 March 2007
2. Betty Friedman, "Abortion: A women's Civil Right." Keynote Speech, First
3. National Conference for Repeal of Abortion Laws; Chicago 111, February
4. 14, 1969.
5. AIR 1978 SC 579
6. Government of India 1971. the medical termination of pregnancy act (Act No. 34 of 1971) section 3
7. The medical termination of pregnancy act, 1971 A doctrinal anachronism
8. discounted by society by varsha Jalan and Vivek bajoria AIR 2009 journal
9. page 131
10. (1996) 2 SCC 380
11. W.P. (L) No. 1816 of 2008 (Bombay High Court)
12. 1994 SCC (3) 430, JT 1994 (3) 225)
13. MAC.APP.No.602/2009
14. 2006ACJ208

****

पर्यावरण संरक्षण के विधिक प्रावधानों के क्रियान्वयन का परिदृष्य एवं सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका- (पोषणीय विकास की अवधारणा के क्रियान्वयन के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रश्मि शर्मा *

शोध सारांश – आधुनिक विकास गतिविधियों ने संसाधनों के साथ-साथ पर्यावरण को भी बुरी तरह से प्रभावित किया है। घटते प्राकृतिक संसाधन एवं बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण आज वैश्विक स्तर पर गंभीर चिंता का विषय है। अत: इन समस्याओं के समाधान के लिए पोषणीय विकास को अपनाना आज समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है ताकि हम आने वाली पीढ़ियों के लिए संसाधनों के साथ-साथ स्वस्थ एवं प्रदूषण रहित पर्यावरण भी प्रदान कर सकें। न्यायपालिका के साथ देश की जागरूक जनता का भी यही अभिनत है। अब पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधनो के संरक्षण हेतु 'पोषणीय विकास व्यवस्था' को लागू करना आवश्यक है।

शब्द कुंजी- पोषणीय विकास, पारिस्थतिकी तंत्र, पर्यावरण-सरंक्षण, प्रदूषण।

प्रस्तावना – आधुनिक विकास की गति और स्वरूप ने पर्यावरणीय संसाधनों के ऊपर भारी दबाव डाला है। दुनिया के तमाम देशों में अपने हितों से ऊपर उठकर नष्ट होते पर्यावरण के प्रति गंभीर चिंता कहीं दिखाई नहीं पड़ती है। विकसित देश बड़ी जनसंख्या का हवाला देते हुए विकासशील देशों को पर्यावरण के प्रति पहली जिम्मेदारी लेने की बात कर रहे है, वहीं विकासशील देश अधिक उपभोक्ता दर का हवाला देते हुए विकसित देशों से ज्यादा जिम्मेदारी उठाने की बात कर रहे है, विकसित देशों का कार्बन उत्सर्जन के प्रति अड़ियल रवैया इसका सबूत है। अत: आज ऐसे विकास की आवश्यकता है जो पर्यावरण हितैषी होने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में मददगार साबित हो सके।

मानव ने अपनी भोगवादी एवं लालची प्रवृत्ति के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन किया, इसका परिणाम पर्यावरणीय असंतुलन के रूप में अब सामने आने लगा है।यह सत्य है कि हमारी विकास संबधी प्रत्येक गतिविधि किसी न किसी रूप में प्रकृति को कुछ न कुछ क्षति अवश्य पहुंचाती है। अत: आज ऐसे विकास की आवश्यकता है, जो पर्यावरण हितैषी होने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षण में मददगार साबित हो सके।

पोषणीय विकास, संसाधनों के उपयोग करने का एक आदर्श मॉडल प्रस्तुत करता है। ब्रंटलैण्ड कमीशन ने सबसे पहले पोषणीय विकास इस टर्म का प्रयोग किया था। पोषणीय विकास सतत् विकास या टिकाऊ विकास अंग्रेजी शब्द "Sustainable Development" के पर्यायवाची है। ब्रंटलैण्ड कमीशन (1987) के अनुसार 'पोषणीय विकास वह विकास प्रक्रिया है, जिसमें वर्तमान पीढ़ी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति आने वाली पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति को बिना नुकसान पहुंचाए करती है।' अर्थात् पर्यावरण व पारिस्थितिकी को संरक्षित रखते हुए जो विकास किया जाए वहीं पोषणीय विकास है।

शोध का उद्देश्य- यहां पर्यावरण एवं विकास के बीच संतुलन हेतु 'पोषणीय विकास' की अवधारणा को क्रियान्वित करने की आवश्यकता का पता लगाना हो शोध का उद्देश्य है।

शोध का अपेक्षित परिणाम- पुष्टि की प्रत्याषा में प्राकल्पना की जाती है कि- वर्तमान मे पर्यावरण एवं विकास के मध्य संतुलन हेतु पोषणीय विकास की अवधारणा का क्रियान्वयन आवश्यक है।

शोध हेतु प्रयुक्त विधि- प्रस्तुत शोध के लिए पर्यावरण संरक्षण हेतु निर्मित कानून से संबंधित पुस्तकों का अध्ययन किया गया है साथ ही पर्यावरण को संरक्षित रखते हुए आर्थिक विकास किये जाने के संबंध में प्राथमिक जानकारी प्राप्त करने हेतु विभिन्न श्रेणी के 300 उत्तरदाताओं से सम्पर्क किया गया तथा उनका अभिमत लिया गया है। यहां पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण व संरक्षण के साथ विकास संबंधी पूर्व में अभिव्यक्त विचारों व दृष्टिकोणों का भी शोध हेतु अध्ययन किया गया है। साथ ही विभिन्न समाचार पत्र-पत्रिकाओं में पूर्व प्रकाशित विषय- सामग्री का भी अध्ययन किया गया।

विषय-विस्तार एवं पल्लवन- पोषणीय विकास प्रकृति के साथ मानव सहयोग एवं साहचर्य की भावना पर आधारित है। भारतीय मनीषी परंपरा में पोषणीय विकास की अवधारणा सदैव रही है, जो सुख-शांति, समृद्धि, सौहार्द, संतोष जैसे मानवीय भावों के साथ प्रकृति की समीपता और नैसर्गिक चिंतन पर आधारित थी। भौतिक, औद्योगिक व उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण विकास अब विनाश का पर्याय बन गया है और इसके लिए प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन पारिस्थितिकीय संतुलन बिगाड़ रहा है। पर्यावरणीय समस्याऐं जैसे 'जलवायु परिवर्तन' से आज पूरी दुनिया त्रस्त है। अत: आज पोषणीय विकास की अत्यधिक आवश्यकता है, जो पर्यावरण और पारिस्थतिकी को बिना क्षति पहुंचाये जीवन स्तर को उच्चता प्रदान कर सके। पोषणीय विकास इसलिए भी आवश्यक है कि आज से दो-तीन दशक पूर्व दुनिया इस भ्रम में थी कि आर्थिक विकास ही मानव विकास का द्योतक सूचकांक है। इस सोच के चलते जहां विकसित देशों ने तीव्र आर्थिक विकास के लिए अतिवाद की सीमा तक प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया, वहीं ऐसा करते हुए विकासशील देशों के प्राकृतिक संसाधनों का भी भरपूर दोहन किया। इससे आर्थिक समृद्धि तो आई, किंतु इससे पर्यावरण प्रतिकूल रूप से

* अतिथि विद्वान (विधि) शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रभावित हुआ। यह स्थिति सामने आने पर विकसित और विकासशील देशों को तथा उनके विकास विशेषज्ञों को यह बात समझ में आने लगी कि यदि पर्यावरण की दशा में सुधार न लाया गया तो सिर्फ आर्थिक प्रगति से मानव विकास संभव नहीं है।

पोषणीय विकास के सिद्धान्त का मुख्य लक्ष्य विकास को प्रोत्साहित करते हुए पर्यावरण को प्रदूषण से दूर रखना है। पोषणीय विकास की अवधारणा के संबंध में मुख्य सिद्धान्त नि.लि. है:-

1. अन्तर्पीढ़ी साम्या,
2. प्राकृतिक स्रोतों का उपयोग तथा परिरक्षण,
3. पर्यावरणीय संरक्षण
4. पूर्व चेतना या पूर्व सतर्कता का सिद्धांत,
5. प्रदूषण भुगतान करें सिद्धांत,
6. सहायता तथा सहयोग करने का दायित्व,
7. गरीबी का उन्मूलन तथा विकासशील देशों को आर्थिक सहायता

उपरोक्त सिद्धान्तों में न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह के अनुसार 'पूर्व सर्तकता' का सिद्धांत तथा 'प्रदूषक भुगतान करें' के सिद्धांत, पोषणीय विकास के आवश्यक लक्षण है।[1]

वैलोर सिटीजन्स वेलफेयर फोरम बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया नामक वाद में अभिनिर्धारित किया है कि 'प्रदूषण भुगतान करें का सिद्धांत' का तात्पर्य है कि पर्यावरण को क्षति के लिए अत्यधिक दायित्व का विस्तार न केवल प्रदूषण के पीड़ित की क्षतिपूर्ति करने तक बल्कि पर्यावरण संबंधी अपक्षय को प्रत्यावर्तित करने की कीमत तक भी है। क्षतिग्रस्त पर्यावरण का उपचार निरंतर विकास की प्रक्रिया का भाग है और इस प्रकार प्रदूषण व्यक्तिगत क्षतिग्रस्त को क्षतिपूर्ति तथा क्षतिग्रस्त पारिस्थतिकी को परिवर्तित करने के व्यय का भुगतान करने का दायी है। सर्वोच्च न्यायालय ने इण्डियन कौंसिल फार इन्वायरो लीगल ऐक्शन बनाम भारत संघ[2] के मामले में अभिनिर्धारित किया है कि प्रदूषण को प्रदूषण से प्रभावित व्यक्तियों की क्षतिपूर्ति के साथ ही साथ पर्यावरण क्षति को पुर्नस्थापित करने की लागत को वहन करना चाहिए।

वर्तमान में विकास, बुनियादी ढ़ांचे और रोजगार की जरूरत तो है, लेकिन यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यदि हमने पारिस्थतिकी से छेड़खानी की तो इन आर्थिक हितों की भी लंबे समय तक रक्षा नहीं की जा सकेगी। देश के किसी भी क्षेत्र में पर्यावरण की कीमत पर विकास नहीं होना चाहिए। इसका वर्तमान उदाहरण कभी वक्त-बेवक्त बारिश, सूखा, ओले और उत्तरखण्ड, कश्मीर, चेन्नई जैसे मौसमी अति की घटनाएं है। केदारनाथ में हमें एक प्रकार से प्रलय की झलक देखने को मिली है। प्रकृति का गुस्सा, जल की शक्ति, मानव की नासमझी एवं स्थानीय शासन की कमजोरी के कारण गढ़वाल हिमालय क्षेत्र में तबाही मची। ऐसी स्थिति में यह सवाल पूछा जाना भी प्रासंगिक है कि क्या यह महज एक प्राकृतिक आपदा है या इस त्रासदी के लिए हम मनुष्यों के क्रियाकलाप भी समान रूप से जिम्मेदार है?

प्राथमिक शोध प्रक्रियाकरण एवं विश्लेषण-यहां 300 उत्तरदाताओं से प्रश्न के माध्यम से अभिमत ज्ञात किया गया है जो प्रस्तुत है-प्रश्न - 'विकास के साथ पर्यावरण संरक्षण भी आवश्यक है इसलिए आर्थिक विकास हेतु पोषणीय विकास मॉडल क्रियान्वित किया जाना चाहिए।' क्या आप इस अभिमत से सहमत है?

(अ)हॉ। (ब)नहीं। (स) ज्ञात नहीं।

तालिका 1 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उपरोक्त प्रश्न के उत्तरदाताओं से प्राप्त अभिमत की सारणीकृत प्रस्तुति निम्नलिखित है- सारणी मे प्रदत्त पृष्ठभूमि के आधार पर ज्ञात होता है कि पोषणीय विकास मॉडल लागू करने के पक्ष मे सर्वाधिक 66.67 प्रतिशत उत्तरदाता है जबकि मात्र 13.67 प्रतिशत उत्तरदाता ने विपक्ष में अभिमत दिया है साथ ही 19.67 प्रतिशत व्यक्तिओं ने पक्ष या वि विपक्ष में कोई मत नहीं दिया है।

इस प्रकार यहां यह स्पष्ट होता है कि 66.67 प्रतिशत सर्वाधिक अभिमत पोषणीय मॉडल व्यवस्था क्रियान्वित करने के पक्ष मे है साथ ही शिक्षा एवं पर्यावरण जागरूकता के अभाव में 19.67 प्रतिशत व्यक्तियों ने कोई रूचि न लेते हुए अभिमत नही दिया है । जबकि सबसे कम 13.67 प्रतिशत उत्तरदाता पर्यावरण संरक्षण के स्थान पर तीव्र विकास गतिविधियो को निरंतर जारी रखने क पक्ष में है जिनमें सर्वाधिक उद्यमी सम्मिलित है, उनके अभिमत निहित निजी हित के कारण पोषणीय विकास के विरूद्ध माने जा सकते है।

पर्यावरण संरक्षण एवंपोषणीय विकास में न्यायालयों की भूमिका-

पर्यावरण संरक्षण एवं पोषणीय विकास में न्यायपलिका का महत्वपूर्ण योगदान है। हमारी न्यायपालिका विशेषत: सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों ने अपने निर्णयों के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण के कई उपाय तथा निर्देश निर्गत करते समय विभिन्न महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। सर्वोच्च न्यायालय ने यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि उद्योगों की स्थापना को अनुमति तभी दी जाए, जब यह सुनिश्चित हो जाए कि प्रस्तावित उद्योग पर्यावरण संरक्षण के प्रभावकारी उपायों की स्थापना करेगा। सर्वोच्च न्यायालय ने पर्यावरण प्रदुषण के लिए उत्तरदायी उद्योगों ,संयंत्रों तथा उपक्रमों के स्वामियों पर क्षतिपूर्ति की आवश्यकता तथा बाध्यता पर बल दिया है। सर्वोच्च न्यायालय ने औद्योगिक विकास के साथ-साथ मानव स्वास्थ्य का भी ध्यान रखने हेतु और तकनीकी विकास तथा पर्यावरण प्रदूषण के मध्य संतुलन स्थापित किये जाने हेतु निर्देश दिये साथ ही निर्देशित किया कि विकास के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण के उपाय की स्थापना की आवश्यकता को ध्यान में रखा जाए तथा इस संबंध मे आर्थिक अक्षमता या असमर्थता को एक आधार न माना जाए सर्वोच्च न्यायालय ने संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न सम्मेलनों में पारित सिद्धांतो ओर अनुशंसाओं का भी पूरा ध्यान रखा है। इनमें पर्यावरण, पोषणीय विकास ,पानी,बंजरभूमि,जैव विविधता, जलवायु परिवर्तन, तापमान में वृद्धि जैसे महत्वपूर्ण विषय शामिल हैं। इन सिद्धांतों और निर्देशों के आलोक में ही सर्वोच्च न्यायालय ने पर्यावरण से संबंधित अनेक मामलों पर अपना दृष्टिकोण रखा।

सर्वोच्च न्यायालय ने मानव स्वास्थ्य को संकट में डालने वाली दिल्ली की परिवहन यातायात को CNG (Compressed Natural Gas) के अभाव में संचालन पर प्रतिबन्ध[3] लगाने के साथ -साथ ताजमहल पर पडने वाले कुप्रभाव[4]को ध्यान मे रखते हुए आगरा की 292 औद्योगिक इकाइयों को शहर से बाहर सुरक्षित स्थानों पर स्थानान्तरित करने का आदेश दिया है। इसी प्रकार पर्यावरण की सुरक्षा के मद्देनजर दिल्ली - हरियाणा सीमा पर खनन और स्टोन क्रशर पर रोक लगाने का सर्वोच्च न्यायालय का आदेश भी इस क्षेत्र के निवासियों के लिए लाभदायक है। इससे पहले दून घाटी में चूनें की खानों में खनन गतिविधियों पर रोक[5] लगाने के लिए भी सर्वोच्च न्यायालय को ही दखल देना पडा था। सर्वोच्च न्यायालय के आदेश पर ही कार्बेट नेशनल पार्क के बीच सड़क बनाने की उत्तराखण्ड सरकार की योजना को खरिज किया गया। गोवा में समुद्र के संबंध में पिछले दो दशको के दौरान

सर्वोच्च न्यायालय ने दर्जनो निर्देश दिये है।वर्तमान में न्यायापालिका न्यायिक सक्रियता के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण व प्रदुषण निवारण और नियंत्रण की दिशा में प्रभावकारी कार्य कर रही है।

शोध के अपेक्षित परिमाण की पुष्टि–पुष्टि की प्रत्याषा में प्राकल्पना की गयी थी कि– वर्तमान में पर्यावरण एवं विकास के मध्य संतुलन हेतु पोषणीय विकास की अवधारणा का क्रियान्वयन आवश्यक है, जिसकी पुष्टि हो रही है (द्रष्टव्य–सारणी–1)। अत: आज 'पोषणीय विकास' की अवधारणा के क्रियान्वयन की अत्यधिक आवश्यकता है।

सुझाव–पोषणीय विकास के लक्ष्य प्राप्त हेतु नि.लि. उपायों को अपनाये जाने की आवश्यकता है– इसके लिये सबसे पहले हमें पर्यावरण के अनुकूल प्रौद्योगिकी को विकसित करना पड़ेगा, तभी भावी पीढ़ियों का भविष्य सुखद और सुरक्षित रह पाएगा। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का भी स्पष्ट विचार था कि– "`Mother nature has enough to fullfill everyones and technology can end it" पोषणीय विकास के लिए शिक्षा और जागरूकता भी आवश्यक है। पर्यावरण क्षति को रोकने के लिए राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आवश्यक कानून बनाए जाएं और इनका क्रियान्वयन पूरी पारदर्शिता और सख्ती के साथ किया जाए। आज आवश्यकता इस बात की है कि वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का अधिकाधिक उपयोग हो, आर्गेनिक खेती और वन्यजीव संरक्षण को बढ़ावा दिया जाए। जल संरक्षण, वन संरक्षण एवं वनारोपण पर जोर दिया जाए। सरकार को चाहिए कि वह पर्यावरण संरक्षण के लिए आवश्यक नीतियाँ बनाकर क्रियान्वित करे जिससे सुनियोजित पोषणीय विकास की अवधारणा को साकार किया जा सके।

निष्कर्ष – अत: आज 'पोषणीय विकास' की अवधारणा के क्रियान्वयन की अत्यधिक आवश्यकता है, इससे पर्यावरण और पारिस्थितिकी की कम से कम क्षति के साथ आर्थिक विकास संभव हो सकेगा तथा क्षतिग्रस्त पर्यावरण को पुन: संतुलित करने के लिये अपेक्षित उपचार के प्रयास भी किये जा सकेगें। साथ ही, भावी पीढ़ियों के लिये संसाधनों के साथ–साथ स्वस्थ एवं प्रदूषण रहित पर्यावरण भी प्रदान किया जा सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दुबे अरविन्द कुमार: पर्यावरण विधि, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।
2. उपाध्याय डॉ . जे.जे.आर.: पर्यावरण विधि, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद।
3. पी.डी. मेथ्यू, फोर एनस्योनिंग ए सेफ एनवायरमेंट लॉ अगेन्सर पाल्युसन, इंडियन सोशल इंस्टिट्यूट, नई दिल्ली, 2006.
4. रचना, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
5. राष्ट्रीय सहारा, अक्टूबर 4, 2015.
6. दैनिक भास्कर, दिसम्बर 15, 2015.
7. जागरण, अगस्त 31, 2016.
8. नई दुनिया, अगस्त 31, 2016.
9. मजदूर बिगुल, जनवरी 23, 2016.

Case-law :-

1. वैलोर सिटीजन्स वेलफेयर फोरम बनाम युनियन ऑफ इंडिया, ए.आई.आर. 1996 एस, सी. 2715.
2. ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 1446.
3. एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ (1991)2 सु.को. केसेज 353.
4. एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ (1997)2 सु.को. केसेज 353.
5. रूरल लिटिगेशन एण्ड एण्टाइटिलमेन्ट केन्द्र देहरादून बनाम उत्तर प्रदेश राज्य ए.आई.आर.1988 एस. सी 2187.

सारणी–1 : पोषणीय विकास मॉडल लागू करने के सम्बन्ध में सर्वेक्षित उत्तरदाताओं का अभिमत

क्र.	सर्वेक्षित वर्ग की श्रेणी अभिमत हेतु सर्वेक्षित वर्ग	सर्वेक्षित वर्ग का अभिमत						समग्र	
		हॉ		नहीं		ज्ञात नहीं		योग	प्रतिशत(%)
		संख्या	प्रतिशत (%)	संख्या	प्रतिशत(%)	संख्या	प्रतिशत(%)		
1	उद्यमी	01	0.33	09	3.00	00	00	10	3.33
2	अर्थ एवं वाणिज्यविद्	10	3.33	05	1.67	00	00	15	5.00
3	विधिवेत्ता	13	4.33	11	3.67	00	00	24	8.00
4	सामाजिक कार्यकर्ता	50	16.67	08	2.66	00	00	58	19.33
5	कृषक	50	16.67	05	1.67	10	3.33	65	21.67
6	विस्थापित	70	23.34	00	00	02	0.67	72	24.00
7	अन्य	06	2.00	03	1.00	47	15.66	56	18.67
	योग	200	66.67	41	13.67	59	19.66	300	100

स्रोत– सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी के आधार पर

****

महिला (पीड़ित) को दिए जाने वाले प्रतिकर से संबंधित विधिक प्रावधान - म.प्र. अपराध पीड़ित प्रतिकर योजना 2015 के विशेष संदर्भ में

कृष्ण वल्लभ विश्वकर्मा *

प्रस्तावना -भारतीय संविधान में सर्वाधिक आधारभूत मौलिक अवधारणा है, तो वह है, न्याय की। न्याय के बिना समता और स्वतंत्रता के आदर्ष भी निस्सार हो जाते हैं। यह सच है कि अपराध न्यूनाधिक मात्रा में प्राय: सभी समाज में पाए जाते हैं, किन्तु यह इन अपराधों की गंभीरता ही है कि यह पीड़ित को ऐसी शारीरिक एवं मानसिक क्षति कारित करते हैं कि उससे मुक्त होना कठिन होता है।

अपराध विधि में अपराधों से संरक्षण पुरुष एवं महिलाओं को बिना किसी भेदभाव के समान रुप से प्राप्त हैं परन्तु फिर भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं के प्रति यौन अपराधों की मात्रा अधिक है। अत: महिलाओं की गरिमा को सुरक्षित रखने हेतु अपराधों से उनकी सुरक्षा जरुरी है।

सामान्यत: न्याय प्रशासन का उद्देश्य अपराधी को दण्डित करना होता है, किन्तु व्यवहार में देखा गया है कि दण्डित अपराधी कारागार में रहते हुए भी अपनी दण्डावधी के दौरान, शासकीय मशीनरी का दुरूपयोग करते हुए जेल में भी सुखपूर्वक अपना जीवन यापन करते हैं। ठीक इसके विपरित अपराध पीड़ित महिला उत्पीड़न की कटु स्मृतियों एवं उसके व्यवहारिक कुप्रभावों के साथ कष्टप्रद जीवन यापन करती है। इस बात को दृष्टिगत रखते हुए प्रतिकर संबंधित विधि अस्तित्व में आई। जिससे न्याय प्रशासन की भूमिका पूर्णता की और अग्रसर हुई। एक और अपराध विधि के माध्यम से अपराध को दंडित किया जाता है, वही दूसरी और पीड़ित की स्थिती में भी प्रतिकर के माध्यम से सुधार आता है।

महिला पीड़ित के संदर्भ में प्रतिकर का तात्पर्य महिला के प्रति किए जाने वाले अपराध से, महिला को होने वाली शारीरिक, मानसिक या आर्थिक क्षति की पूर्ति हेतु दिलाए जाने वाली आर्थिक सहायता हैं।

प्रतिकर से संबंधित विधिक प्रावधान -

अपकृत्य विधि के अन्तर्गत पीड़ित व्यक्ति के लिए अनिर्धारित क्षतिपूर्ति एवं **संविदा विधि** के अन्तर्गत संविदा भंग द्वारा हानि से पीड़ित व्यक्ति के लिए परिनिर्धारित क्षतिपूर्ति की व्यवस्था की गई है।

अपराधी परिवीक्षा अधिनियम 1958 की धारा 5 में भी प्रतिकर से संबंधित प्रावधान इस प्रकार दिए है-

धारा 5 छोड़े गए अपराधियों से प्रतिकर और खर्च देने की अपेक्षा करने की न्यायालय की शक्ति -

1. धारा 3 या धारा 4 के अधीन अपराधी को छोड़ने का निर्देश देने वाला न्यायालय, यदि ठीक समझता है, तो उसी समय अतिरिक्त आदेश कर सकेगा। जिसमें उसे निम्नलिखित संदत्त करने के लिए निर्दिष्ट किया जाएगा -

(d) अपराध के किए जाने से किसी व्यक्ति की हानि या क्षति के लिए इतना प्रतिकर जितना न्यायालय युक्तियुक्त समझता है, और

(k) कार्यवाहियों के इतने खर्चे जितने न्यायालय युक्तियुक्त समझता है।

2. उपधारा (1)के अधीन संदत्त किए जाने के लिए आदिष्ट रकम संहिता की धारा 386 और 387 के उपबंधों के अनुसार जुर्माने के रूप में वसूल की जा सकेगी।

3. उसी मामले से जिसके लिए अपराधी अभियोजित किया जाता है, उत्पन्न होने वाले किसी वाद का विचारण करने वाला सिविल न्यायालय नुकसानी दिलाने में उस किसी रकम को गणना में लेगा जो उपधारा (1)के अधीन प्रतिकर के रूप में संदत्त या वसूल की गयी हो।

इस धारा के अनुसार जब न्यायालय द्वारा किसी अपराधी को परिवीक्षा अधिनियन 1958 की धारा 4 के अधीन परिवीक्षा पर छोड़े जाने का आदेश दिया जाता है, तो न्यायालय यह भी आदेशित कर सकता है कि अपराधी व्यक्ति अपराध से प्रभावित या व्यथित व्यक्ति को क्षतिपूर्ति के रूप में युक्तियुक्त प्रतिकर राशि तथा न्यायिक कार्यवाहियों में खर्चों का संदाय भी करे।

प्रतिकर की राशि सामान्यत: पीड़ित या व्यथित व्यक्ति को कारित वास्तविक क्षति या हानि से अधिक नहीं होनी चाहिए तथा उपधारा (2) के अनुसार इसे अपराधी व्यक्ति से जुर्माने के रूप में वसूल किया जा सकता है।

उच्चतम न्यायालय ने पीड़ित को प्रतिकर प्रदान करने के दायित्व का विस्तार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 32 एवं 226 का अवलम्ब लेते हुए, राज्य तक किया है।

प्रतिकर से संबंधित प्रावधान **दण्ड प्रकिया संहिता 1973** की धारा 357 में निम्नानुसार प्रावधानित किए गए है।

दण्ड प्रकिया संहिता 1973 की धारा 357 के अनुसार प्रतिकर देने का आदेश -

1. जब कोई न्यायालय जुर्माने का दण्डादेश देता है या कोई ऐसा दण्डादेश (जिसके अंतर्गत मृत्यु दण्डादेश भी है) देता है, जिसका भाग जुर्माना भी है, तब निर्णय देते समय वह न्यायालय यह आदेश दे सकता है, कि वसुल किये गए सब जुर्माने या उसके किसी भाग का उपयोजन-

(क) अभियोजन में उचित रूप से उपगत व्ययों को चुकानें में किया जाएं।

(ख) किसी व्यक्ति को उस अपराध द्वारा हुई किसी हानि या क्षति का प्रतिकर देने में किया जाएं, यदि न्यायालय की राय में ऐसे व्यक्ति द्वारा प्रतिकर सिविल न्यायालय में वसूल किया जा सकता है।

* अतिथि विद्वान (विधि) शासकीय स.जे.एन. एस. महाविद्यालय शुजालपुर, जिला-शाजापुर (म.प्र.) भारत

(ग) उस दशा, में जब कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु कारित करनें के या ऐसे अपराध के किये जाने का दुष्प्रेरण करने के लिए दोष सिद्ध किया जाता है, उन व्यक्तियों को,जो ऐसी मृत्यु से अपने को हुई हानि के लिए दण्डादिष्ट व्यक्ति से नुकसानी वसूल करनें के लिए घातक दुर्घटना अधिनियम 1855 (1855 का 13) के अधीन हकदार है, प्रतिकर देने में किया जाए।

(घ) जब कोई व्यक्ति किसी अपराध के लिए जिसके अंतर्गत चौरी, अपराधिक दुर्विनियोंग, आपराधिक न्यास भंग या छल भी हैं या चुराई हुई सम्पत्ति को उस दशा में जब वह यह जानता है, या उसको विश्वास करने का कारण है कि वह चुराई हुई है, बेईमानी से प्राप्त करने या रखे रखनें के लिए या उसके व्ययन में स्वेच्छा या सहायता करनें के लिए दोष सिद्ध किया जायें, जब ऐसी सम्पत्ति के सदभाव पूर्ण क्रेता को ऐसी सम्पत्ति उसके हकदार व्यक्ति के कब्जे में लौटा दी जाने की दशा में उसकी हानि के लिए प्रतिकर देने में किया जाए।

2. यदि जुर्माना ऐसे मामले में किया जाता है, जो अपीलनीय है तो ऐसा कोई संदाय अपील उपस्थित करने के लिए अनुज्ञात अवधि के बीत जाने से पहले या यदि अपील उपस्थित की जाती है, तो उसके विनिश्चिय के पूर्व, नहीं किया जायेंगा।

3. जब न्यायालय ऐसा दंड अधिरोपित करता है, जिसका भाग जुर्माना नहीं है तब न्यायालय निर्णय पारित करते समय अभियुक्त व्यक्ति को यह आदेश दे सकता है कि उस कार्य के कारण जिसके लिए उसे ऐसा दंडादेश दिया गया है, जिस व्यक्ति को कोई क्षति या हानि उठानी पड़ी है, उसे वह प्रतिकर के रूप में इतनी रकम दे, जितनी विनिर्दिष्ट हैं।

4. इस धारा के अधीन आदेश अपील न्यायालय द्वारा या उच्च न्यायालय द्वारा या सेशन न्यायालय द्वारा भी किया जा सकेगा। जब वह अपनी पुनरीक्षण की शक्तियों का प्रयोग कर रहा हो।

5. उसी मामले से संबंधित किसी पाश्चात्वर्ती सिविल वाद में प्रतिकर अधिनिर्णित करते समय न्यायालय ऐसी किसी राशि को जो इस धारा के अधीन प्रतिकर के रूप में दी गई है या वसूल की गई है, हिसाब में लेगा।

357 क. आहत प्रतिकर योजना –

1. प्रत्येक राज्य केन्द्रीय सरकार के साथ समन्वय से आहत् या उसके आश्रितों को जो अपराध के परिणाम स्वरूप हानि या क्षति वहन किए है, और जो पुनर्वास की अपेक्षा करते है, प्रतिकर के प्रयोजन के लिए कोष प्रदान करने के लिए योजना तैयार करेगी।

2. जब न्यायालय, द्वारा प्रतिकर के लिए सिफारिश की जाती है तो जिला विधिक सेवा प्राधिकरण या राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, जैसी भी स्थिति हो उपधारा 1 में निर्दिष्ट योजना के अधीन प्रदान किये जाने वाले प्रतिकर की मात्रा विनिश्चय करेगा।

3. यदि विचारण न्यायालय विचारण के निष्कर्ष पर संतुष्ट हो की धारा 357 के अधिनिर्णित प्रतिकर ऐसे पुनर्वास के लिए पर्याप्त नहीं है, या जहां मामले दोषमुक्त या उनमोचन में समाप्त होते है, और आहत् को पुनर्वासित करना होता है, तो वह प्रतिकर के लिए सिफारिश कर सकता है।

4. जहां अपराधी का पता नहीं लगा या पहचाना नहीं गया, किंतु आहत् पहचाना गया है और जहां विचारण नही हुआ है, तो आहत् या आश्रित, राज्य या जिला विधिक सेवा प्रधिकरण को प्रतिकर प्रदान करने के लिए प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर सकेगा।

5. ऐसी सिफारिशों या धारा 4 के अधीन प्रार्थना पत्र पर राज्य या जिला विधि सेवा प्राधिकरण, संम्यक जांच के पश्चात् पर्याप्त प्रतिकर दो मास के अंदर जांच पूरी करके प्रदान करेगा।

6. राज्य या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण जैसी स्थिति हो आहत् की यातना को कम करने के लिए ऐसे पुलिस अधिकारी जो पुलिस थाने प्रभारी अधिकारी की श्रेणी से कम नहीं हो, या संबंधित मजिस्ट्रेट के प्रमाणपत्र पर निशुल्क उपलब्ध कराए जाने वाली तुरंत प्राथमिक सुविधा चिकित्सीय लाभ के लिए या कोई अन्य अंतरिम राहत जिन्हें समुचित प्राधिकारी ठीक समझे आदेश कर सकता है।

357 ख. प्रतिकर का भारतीय दंड संहिता की धारा 326 क या धारा 376 घ के तहत जुर्माना के अतिरिक्त होगा –

भारतीय दंड संहिता (1860 क 45) की धारा 357 क के अधीन राज्य सरकार द्वारा संदेय प्रतिकर धारा 326 क या धारा 376 घ के अधीन पीड़िता को जुर्माना संदाय करने के अतिरिक्त होगा।

357 ग पीड़ितों का उपचार – सभी लोक या प्राईवेट अस्पताल चाहे वह केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, स्थानीय निकायों या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा चलाए जा रहे हों, भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 326 क, धारा 376, धारा 376 क, 376 ख, 376 ग, 376 घ या धारा 376 ड़ के अधीन आने वाले किसी अपराध के पीड़ितों को तुरंत नि:षुल्क प्राथमिक या चिकित्सीय उपचार उपलब्ध करायेंगें और ऐसी घटना की पुलिस को तुरंत सूचना देंगे।

दण्ड प्रकिया संहिता धारा 357 ए के अनुपालन में '**मध्यप्रदेश अपराध पीड़ित प्रतिकर योजना 2015**' लागू की गई है, जिसमें राज्य ' पीड़ित प्रतिकर निधि ' से योजना में उल्लेखित नियमों एवं प्रक्रिया का पालन करते हुए पीड़ित या उसके किसी आश्रित पक्षकार को प्रतिकर उपलब्ध करा सकेगा।

इस योजना में –

1. जीवन की हानि (मृत्यु) के लिए जहाँ मृतक आय अर्जित करता था, तो अधिकतम 4.00 लाख रु. और यदि मृतक आय अर्जित नहीं करता था तो अधिकतम 2..00 लाख रु. प्रतिकर दिलाया जा सकेगा।

2. भ्रूण की हानि या क्षति के लिए पीड़ित को रु. 50 हजार तक की प्रतिकर राशि दिलायी जा सकेगी।

3. पीड़ित के शरीर में 100 प्रतिशत स्थायी नि:शक्तता होने पर जहाँ पीड़ित आय अर्जित करता हो अधिकतम रु. 3.00 लाख एवं जहाँ पीड़ित आय अर्जित न करता हो वहाँ 1.50 लाख रु. तक की प्रतिकर राशि, दिलायी जा सकेगी।

4. शरीर में स्थायी नि:शक्तता 40 प्रतिशत से अधिक होने जहाँ पीड़ित आय अर्जित करता हो अधिकतम रु. 2..00 लाख एवं आय अर्जित न करता हो वहाँ रु. 1.00 लाख तक प्रतिकर राशि दिलायी जा सकेगी।

5. बलात्कार को छोड़कर अन्य आपराधिक घटना में महिला की प्रजनन क्षमता की स्थायी क्षति होने पर अधिकतम रु. 1.50 लाख तक प्रतिकर राशि दिलायी जा सकेगी।

6. पीड़ित के शरीर के महत्वपूर्ण भाग पर गंभीर चोट अथवा शल्य क्रिया की स्थति में जहाँ पीड़ित आय अर्जित करता हो अधिकतम रु. 50 हजार तक एवं आय अर्जित न करता हो वहाँ अधिकतम रु. 25 हजार तक प्रतिकर राशि दिलायी जा सकेगी।

7. सामूहिक बलात्कार की स्थिती में अधिकतम रु. 3.00 लाख तक प्रतिकर राशि दिलायी जा सकेगी।
8. अवयस्क बच्चों के साथ लैंगिक अपराध के मामले में अधिकतम रु. 2.00 लाख तक प्रतिकर राशि दिलायी जा सकेगी।
9. एसिड अटेक से कुरुपता 40 प्रतिशत से अधिक होने पर पीड़ित को अधिकतम रु. 3.00 लाख तक जिसमें रु. 1.00 लाख, सूचना दिनांक के 15 दिवस के अंदर एवं शेष राशि 2.00 रु. लाख दो माह के अंदर प्रतिकर के रुप में दिलाये जा सकेगें।
10. एसिड अटैक से कुरुपता 40 प्रतिशत से कम होने पर पीड़ित को अधिकतम रु. 1.50 लाख तक जिसमें 50 हजार रु. सूचना दिनांक के 15 दिवस के अंदर एवं शेष राशि दो माह के अंदर प्रतिकर के रुप में दिलाए जा सकेंगे।

उल्लेखनीय है कि उक्त सभी मामलों में पीड़ित को प्रतिकर राशि के साथ ही शासकीय चिकित्सालय में नि:शुल्क चिकित्सा दिलाए जाने के प्रावधान भी हैं।

उक्त विधिक प्रावधानों एवं प्रतिकर योजना के संबंध में यह भी महत्वपूर्ण है कि महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरुक किया जाए तभी उत्पीड़ित महिलाओं को न्याय की कल्पना साकार होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. एन. वी.परांजपे विधि शास्त्र एवं विधि के सिद्धांत।
2. डॉ. जय नारायण पाण्डे भारत का संविधान।
3. डॉ. एन. वी. परांजपे अपराध शास्त्र एवं दंड प्रशासन।
4. डॉ. एन. वी.परांजपे दण्ड प्रक्रिया संहिता,1973
5. मध्यप्रदेश अपराध पीड़ित प्रतिकर योजना 2015

****

राजस्थानी हरजस (हरियश) में वैदिक, पौराणिक एवं भक्तिकालीन प्रभाव

डॉ. विनीता कौशिक *

प्रस्तावना – लोक साहित्य के अध्येताओं को जो बिन्दु आकर्षित करता है वह प्रश्न के रूप में उभरता है कि आखिर 'लोक' क्या है और उसका साहित्य कैसा है ? 'लोक' शब्द भी हमें संस्कृत में शुद्ध तत्सम रूप से मिलता है। 'लोकृ दर्शने' धातु में 'घञ्' प्रत्यय लगाने से व्युत्पन्न शब्द को 'लोक' कहा गया है।[1] इसके अतिरिक्त ऋग्वेद में 'लोक' शब्द के लिए जन[2] शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'लोक' साधारण जन–समाज है, जिसमें भूभाग पर फैले हुए समस्त प्रकार के मानव सम्मिलित है। यह शब्द, वर्ग–भेद रहित, व्यापक एवं प्राचीन परम्पराओं की श्रेष्ठ राशि सहित अर्वाचीन सभ्यता, संस्कृति के कल्याणमय विकास का द्योतक है।[3]

लोक की कालजयी परम्परा के साथ निरन्तर प्रवाहित रहने वाली भक्ति के लयबद्ध स्वरूप को, गीतात्मक अभिव्यक्ति को, लोक वाद्य यंत्रों के स्वरों के साथ राजस्थानी 'हरजस' (हरियश) साहित्य का अद्धितीय स्थान है।

ईश्वरीय आस्था के प्रति निवेदन किये जाने वाले भाव ही 'हरजस' कहलाये। भगवान के जितने भी रूप 'लोक' ने अपनाये सभी के प्रति जो प्रेम और भक्ति निवेदन की, अपूर्व सत्ताओं की शक्तियों तथा चमत्कार से अभिभूत होकर जो यशोगान किया वहीं 'हरजस' कहलाये। देव चाहे वैदिक कालीन हों, पौराणिक हों अथवा मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन का प्रभाव हो, या लोक विश्वास पर निर्मित लोक देवी देंवता हो, सभी के लिए सर्व प्रचलित शब्द 'हरजस' ही रहा है। 'हरजस' का सीधा संबंध भक्ति से है। 'भक्त का आलम्बन के प्रति श्रद्धा एवं प्रेम समन्वित पूज्य भाव ही भक्ति है।[4] भक्ति का मुखरित रूप ही 'हरजस' है।

वैदिककाल में ऋचाएँ व स्तुतियाँ, यज्ञादि का स्वरूप दिखाई देता है तो पौराणिक काल में विभिन्न अवतारों की लीलाओं का वर्णन, स्तुति, आराधना ही भक्ति का स्वरूप रहा लेकिन प्रत्येक क्षेत्र में वैदिक कालीन प्रकृति पूजन, पौराणिक अवतारों की लीलाओं के साथ ही मध्यकालीन भक्ति आंदोलन के संत–भक्त कवियों का प्रभाव और लोक ने स्वयं के विश्वासों के आधार पर जिन लोक देवी–देवताओं को माना वही निरन्तर उनकी भक्ति का आलम्बन बनकर कालजयी परम्परा के रूप में 'हरजसों' में प्रवाहमान है।

राजस्थानी हरजसों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम तो वे, जो वैदिक काल के प्रकृति से सम्बन्ध रखते हैं, द्वितीय वह, जो पौराणिक काल से विभिन्न अवतारी शक्तियों के रूप में लीलाधारी रहे और मध्यकालीन भक्ति आंदोलन में भक्तों की अभिव्यक्ति का आलम्बन बने। इसी में निर्गुण संतो का प्रभाव भी सम्मिलित किया जाता है। तृतीय वह, जिन्हें लोक ने अपने मानस के अनुरूप बाना पहनाया अर्थात् जो महान आदर्शों का पालन करने के कारण मनुष्य से देव–कोटि में आ गये। उच्च आदर्शों का पालन करने वाला व्यक्ति ज्यों–ज्यों काल की सीमा को पार करता गया उसके अद्भुत कार्य–कलापों की गाथा लोक में प्रचलित हो गई। उसके जन्म, कार्य, मृत्यु आदि के विषय में अलौकिकता जुड़ी है। इसके अतिरिक्त लोक की आस्था उनके पूर्वज भी रहे हैं जिन्हें 'पितर' के रूप में पूजा जाता है। पितर व देवताओं के रात्रि जागरण में यह प्रभाव देखा जा सकता है।

वैदिक पूजा अर्चना संबंधी प्रभाव–राजस्थानी हरजसों पर वैदिक कालीन प्रकृति पूजन, बलि आदि का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। अग्नि, जल, वायु सभी उसके ईष्ट देव हैं। विभिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले 'हरजस' में सूर्य, पीपल (वृक्ष) बड़, कुल देवी, पितर, जल–देवता, चांद–तारे आदि को ईश्वर के रूप में स्वीकार किया है।

सूरज –सूरज सूरज कहो ये लुगाया अन पाणी सूरज बाबो देसी जी।
गरदी रौ बैठण सांई को दरसण सूरज बाबो देसी जी

बाजरिया री रोटी दूध दही रो धीणू सूरज बाबो देसी जी
सासु को पुरसण बहु को जीमण सूरज बाबो देसी जी
दिवर जिठण्यां ने गावण वांल्या ने गुल धाण्या सूरज बाबो देसी जी[5]

सूरज जी के इस गीत में सूर्य को बाबा के रूप में रूपायित करते हुए अन्न उपजाने तथा सभी प्रकार के समृद्धि प्रदाता कहा गया है। साथ ही राजस्थान की संस्कृति का एक चित्र भी सजीव होता है कि सासु का भोजन परोसना और बहु का जीमना अर्थात् भोजन गृहण करना एक सुन्दर गृहस्थ जीवन का परिचायक है।

जल देवता – हरिया बासा री छाबड़ी रे
मांय चमेली – रो फूल
कै तूं बामण–बणियै री अे
कै विणजारै – री धीय
ना हूँ बामण–बणियै री अे
ना विणजारै री धीय
हूँ तो सकल जल देवता अे
पांगलिया पग देय
बाँझड़िया पुत्र देय
आंधलियां आँख देय।[6]

यहाँ जल देवता से पुत्र प्राप्ति, आंखो की रौशनी की प्राप्ति, की बात कही गई है। इसी प्रकार यहाँ कई देवी–देवताओं को विभिन्न पशुओं, वनस्पतियों आदि के रूप में पूजने की परम्परा भी दिखाई देती है, यह सब वैदिक कालीन प्रभाव ही है। उदाहरणार्थ चैत्र बदी दसवी तिथि को दशामाता के रूप में पीपल की पूजा की जाती है तथा कूआ या जलवा पूजने हेतु भी

* सह आचार्य (हिन्दी) राजकीय महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

पीपल की एक डाली को कलश में सजाकर ले जाया जाता है और 'जल' देवता के रूप में वरूण का पूजन होता है। चैत्र सुदी नवमी को दीयाड़ी माता की पूजा की जाती है तथा खेजड़ी, बबूल, नीम, आम, वट आदि वृक्षों की पूजा की जाती है। भादवा बदी तीज के अवसर पर 'नीमड़ी' (वृक्ष) की पूजा होती है।

नीमड़ी – चाल्या पना–मारू वीकाणै–रै–देस हजारी ढोला।
बीकाणे री गलियां ओ नीमड़ली झुक रही जीम्हारा राज।
लाया पना–मारू तुरैै जी रांग हजारी ढ़ोला।
लाया उगायौ ओ चानण–चौक में जी म्हारा राज।
क्यां रै बधावां नीमड़ली री पाल हजारी ढ़ोला।
क्या रै सिचांवा ओ हरियै रूंख–ने जी म्हारां राज।
ऊगी नीमड़ली पान–दुपान हजारी ढ़ोला।
ऊगवड़ी जुग मोह्यौ जी गोरी–रा सायब जी म्हारां राज।
मत कोई तोड़ो नीमड़ली रा पान हजारी ढ़ोला।
मत ना सतावो जी हरियै रूख नै जी म्हांरा राज।[7]

उक्त गीत में नीम वृक्ष के साथ ही हरे वृक्षों के प्रति अति स्नेह भाव लक्षित हो रहा है साथ ही राजस्थान प्रदेश वृक्षों की रक्षा हेतु प्राण त्यागने वाली भूमि रही है।

पौराणिक अवतारों से संबंधित हरजस– पौराणिक युग का अभ्युदय अनेक साम्प्रदायिक झंझावातों के बीच सुधारात्मक दृष्टि को लेकर हुआ। इस युग में अवतारों को सृजक, पालक, संहारक के रूप में वर्णित किया गया है जो क्रमश: ब्रह्म, विष्णु, शिव के रूप में 'हरजस' विधा में प्रचलित है। विष्णु के राम, कृष्ण व अन्य अवतारों के भजन का गान राजस्थान में सभी वर्गों में किया जाता है।

राजस्थान में किसी भी अनुष्ठान, समारोह, त्यौहार पर सर्वप्रथम गणेश वन्दना की जाती है –

(1) आओ जी गजानन्द म्हारे प्यारा पांवड़ा।
थां बिन म्हारे काज न सरसी, रिद्धि–सिद्धि संग लेता आवणां।

(2) गणनायक गौरी पुत्र गजानन देवा
मैं विनय करूं कर जोर अरज सुणि लेवा।

शिव – गणेश पिता, कल्याणकर्त्ता, महादेव की स्तुति का एक उदाहरण
मन रा मनोरथ पूरा करजो ओ पहाड़ा रा जोगी
ओ म्हारां भोला शिवजी।
आक धतूरा शिवजी अमल अरोगो ओ
बणियां देवे ओ भरपूर–म्हारा भोला .....

पार्वती जी – हंस हंस बोले पारबती, ओ जी म्हाने सिवजी प्यारा लागे।
इदक मास री काती न्हाई, नऊ नौरता दुर्गा धाई
इकादसी री रात जगाई, जद मैं पाया संकर पति[8]

यहाँ शिव को प्राप्त करने के लिए पार्वती ने किस प्रकार तप किया उसकी महिमा का गान लोक–मत के अनुसार अधिकमास के कार्तिक का स्नान, नवरात्रि में दुर्गा पूजा, एकादशी को रात्रि जागरण आदि के रूप में किया गया है। इसी प्रकार देवी के विविध अवतारों का सौन्दर्य वर्णन तथा पराक्रम का वर्णन यहां के हरजसों में सभी क्षेत्रों में समान रूप से पाया जाता है।

मेघनाद का वध और सुलोचना की करूण पुकार की अभिव्यक्ति देखें –
रामादल में सुलोचन आई अरज सुनो रघुराई,
दु:खी जीवन का कोई सहारा नहीं,
चांद कैसे खिले कोई तारा नहीं
मेरी सासु ने मुझे समझाई – अरज सुनो .....
भुजा कटके गिरी है मेरे आंगन में
सीस जा के गिरा प्रभु चरणन में
भुजा लिखके हकीकत बताई
कटि भुजा बात केवे वो किकरमाने
सेना बोली सीस हंसे जब जाणें
सीस हंसते ही सेना घबराई। अरज सोु ..... [9]

लोक कवि तुलसी की पहुँच राजस्थानी हरजसों में पूर्ण रूपेण दिखाई देती है। राम कथा तथा सभी उपकथाएँ प्रसंगानुकूल लोक हृदय से हरजस के रूप में नि:सृत हुई है।

इसी प्रकार कृष्ण भक्ति तथा प्रसिद्ध भक्तों के उदाहरण अथवा महिमा का गान हरजसों की विपुल सम्पदा है। नरसी जी पर कृष्ण कृपा का सुन्दर वर्णन इस हरजस में देखा जा सकता है –

घणीं दूर सूं आयो थारी गाडूली रे लार,
गाड़ी मे बैठा ले रे बाबा जाणों है नगर अंजाण,
नरसी बोल्या बठै जाय तूं के करसी,
ओढ़ण कपड़ा नाय वहाँ सिया मरसी।
टूटी गाड़ी बैल पुराना, पैदल चाल्यौ न जाय। गाड़ी में बैठा .....
नानी बाई को भात देखण चालांला
फूल–पालड़ौ थाली मैं भी घालूंला
चार–पांच दिन चौखी–चौखी जीमूला मनवार।
गाड़ी में ..... [10]

यहाँ कृष्ण वेश बदलकर नरसी जी की सेवा में उपस्थित है। बहुत ही मर्मस्पर्शी 'हरजस' गाया जाता है। जहाँ कृष्ण ने नरसी जी की मदद की, नैनी बाई का मायरा भरा। यह प्रसंग राजस्थान में अति लोकप्रिय है। इसी प्रकार का भाव करमाबाई के गीत में भी दिखाई देता है, जहाँ कृष्ण भगवान ने करमाबाई का खीचड़ा बड़ी ही रूचि से खाया –

म्हारों सांवरियों गिरधारी, खीचड़ खायले रे बनवारी,
करमा बिनती कर–कर हारी, बेटी जांटा री .....
करमा खीचड़ों कर ल्याई, ऊपर घी की धार लगाई,
कुड़ची खाटा की भरल्याई, बेटी जांटा री .....
गिरधर तू तो है सरमीलो, परदो ढाबलिये रौ कीन्हों
आड़ो मिन्दर को जड़ दीनो, बेटी जाटां री ..... [11]

उक्त सम्पूर्ण गीत में, प्रत्येक पंक्ति में बालिका की भक्ति का अबोध व भोला मन सबको आत्म विभोर कर देता है।

राजस्थान में जितने भी भक्त हृदयों से गीत और संगीत उभरा सभी ने अपना संबंध विशेष उस अलौकिक शक्ति के साथ जोड़ा, चाहे चंद्रसखी व मीरा के कंत श्री कृष्ण हो या नैनीबाई के वीर श्री कृष्ण हों। कोई दास मानकर भक्ति करता है तो किसी को अपनने प्रभु में सखा भाव दिखाई देता है। सभी के मूल में भक्ति है। उलाहना भाव को दर्शाता यह 'हरजस'

ऐ जी म्हारा नटवर नागरिया, भग्तां के क्यूं नहीं आयो रे
धना भगत री प्रीत पुरबली जिनको खेत निपजायो रे,
नामदेव थारो नानो लागे, ज्यांरो छप्पर छायो रे
सेन भगत थारो सुसरो लागे ज्यारो कारज सार्‌यो रे।

इसी प्रकार – गज की सहाय करी तत्काल
गरड़ छाड़ धायै गोपाल

सिला ऊपर चरण रज धारी,
गौतम नार अहल्या तारी
पिरथी असुर डुबोई तबै
वराह दंत उठायो जबै [12]

इस 'हरजस' में भक्त ईश्वर (विष्णु) के गुणों का बरवान करते हुए उनकी अनन्त महिमा प्रतिपादित करने का प्रयास करते है। पद के अन्त में स्वयं को भी दीन दु:खी बताकर ईश्वर से सहायता की प्रार्थना करते हैं। इस प्रकार के हरजसों में हमें एक ओर दीनदयालु प्रभु के दर्शन होते हैं तो दूसरी ओर अनेक ऐतिहासिक, धार्मिक कथाओं तथा पात्रों का संक्षेप में परिचय भी प्राप्त होता है जो किसी भी लोक संस्कृति को जीवित रखने में योगदान देते हैं। इस गीत में आठ पौराणिक कथाओं का एक साथ परिचय प्राप्त होता है।

सुदामा जी का चित्र देंखे – दु:खल एक सुदामा बामण
श्री किसन भी चुप है जामन
निपट ही कसालौ जो कै घर में
अन्न से कण नहीं, ता के
पगड़ी वागो पटको धोती,
काटी सी पनिया पग हो ती
कांसी का थाल कहां से लावै,
बिरछ–पान में भोजन पावै
फूस पुराणो टपरी छाई
बिरखा ऋत में बोल्यो अवश्याई [13]

रसखान के सवैयों की स्मृति हो आती है जब सुदामा के हरजस कानों में पड़ते है। यही नहीं बहुत से हरजसों में वियोग पक्ष की अभिव्यक्ति में लोक हृदय से नि:सृत भक्ति गीतों में निर्गुण–सगुण सभी प्रकार के स्वर दिखाई देते हैं। चूंकि राजस्थान संत भक्त कवियों की पावन भूमि रही है, वीरों के बलिदान की भूमि रही है, दैनिक जीवन के संघर्ष को निकटता से देखने वाली रही है अत: यहाँ के भक्ति गीतों में सभी प्रकार के प्रभाव स्पष्ट ही दिखाई देते है। चूंकि हमारा विवेच्य विषय वैदिक तथा पौराणिक है अत: सीमित परिधि में ही विवेचन किया जा रहा है। राजस्थानी हरजसों में साहित्य के सभी रस विद्यमान है। यहाँ के लोक ने कितनी गहराई से कबीर को छू लिया है। प्रतीकात्मक शैली में अभिव्यंजना देखते ही बनती है। राम मिलन की उत्कंठा का चित्र कितना सुन्दर बन पड़ा है –

सूरताये म्हांने राम मिला दे ये। – टेक।
तू सुरता बड़ भागिनी ये, कर रघुबर से प्रीति
गई–गई सुरता बा गई जी सियावर के देस।
सुण म्हारी सुरता लाडली ये, तज दे कपट विकार,
जग मोहनीये कर सत्संग सार। ..... सुरताये म्हाने .....

उक्त प्रसंग में सुरता अर्थात् स्मृति का मानवीय करण करते हुए ईश्वर तक पहुंचाने के लिए सर्वशक्तिमान बताया है। राम से मिलने को आतुर जीवात्मा, स्मृति से निवेदन कर रही है कि वह उसे राम तक पहुँचा दे।

अन्य – गुंथलाई म्हारी मालण सेवक सतगुरू सारे जोगी ए
सरवर पाणी मैं गई इक इचरज देख्यो भारी ए
एक कमल दोय फूलड़ा बिच भंवर लुमायो ऐ .....
गुंथलाई म्हारी .....

ब्रह्म, माया, जीव सभी पर लोक चिन्तन की गहराई स्पष्ट होती है। चंद्रसखी और मीरां बाई तो लोक हृदय, लोक मानस, लोक वाणी में आत्मसात कर ली गई है।

लोक की यह विशेषता इस संदर्भ में अवलोकनीय है कि यह हमेशा समष्टि को साथ लेकर चलते हैं। लोक का भक्ति भाव–सर्वजन हिताय–सर्वजन सुखाय ही देखा जा सकता है। विष्णु के ही अवतार रूप में सम्पूर्ण राजस्थान ही नहीं अन्य राज्यों के लोग भी बहुत श्रद्धा के साथ रूणिचे (रामदेवरा) आते हैं। यद्यपि लोक देवता के रूप में इनका गुणगान किया जाता है। सामूहिक कल्याण की कामना का एक उदाहरण –

बाबा सुणजे म्हारो हेलो रे,
रूणिचे बुलाले देखों थारो मेलो रे,
हे ..... हाथ जोड़ ने करूं बीनती सुणजे नेजाधारी।टेक।
भगत थारे चरणां रा चाकर लाज राखजे म्हारी,
लाऊँ साथे घणों झमलो रे ..... रूणिचे ....
निरधनियां ने धन देवो थें, बंझिया ने पूत
भगत थारा गुण गावे, थारी लीला पार न पावे।
धन धान से भरदो जी धरती माय,
मनचाहा सब फल पावे, हिवड़ा माहीं हरसावे।[14]

यही नहीं संत भक्त कवियों के प्रभाव के फलस्वरूप समाज सुधारक दृष्टि भी 'हरजसों' में दिखाई देती है। यह बुराई चाहे मानव मन की हो अथवा समाज प्रचलित हो दोनों ही पक्षों पर लोक ने पूरा बल दिया है और समाधान का मार्ग भी सुझाया है। जिन बातों को विद्धानों ने ज्ञान व विवेक के द्धारा ग्रंथों की रचना कर समझाने का प्रयास किया है उन्ही महत्वपूर्ण तत्वों का सार गर्भित विवेचन तथा निराकरण लोक ने बड़े ही सहज रूप से किया है। एक उदाहरण प्रस्तुत है –

साधू भाई निन्दग नरक निचौवे, जो मैल पराये धोवे
आमां सामीं बातां संग के और आगे पोवे
ऐसी दृष्टि पड़े इसकी बात पराई जोवे
धोबी मैल लै जावे गठिया कपड़ा नीर झगोवें
जैसे निंदा निंदा करके पाप संतारा धोवे
साधू भाई ..... [15]

ऐसे शब्दों का लोक पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है। वह निन्दा से दूर रहकर, संबंधों की मधुरता बनाकर स्वस्थ समाज का निर्माता होता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि राजस्थानी हरजस, वैदिक कालीन प्रकृति की स्तुति का, प्रकृति की महत्ता को स्वीकारते हुए जन मन के प्राण का संवाहक तो है ही जहाँ वृक्षों की रक्षार्थ बलिदान हो जाना श्रेष्ठ समझा जाता है। जीवन के उत्सव को सूर्य, चन्द्र, तारे, जल, वायु, वृक्ष, पशु, पक्षी के साथ मनाता है। पौराणिक अवतारों की लीलाओं का गान कर तथा मध्यकालीन संत–भक्त कवियों की चिन्तन की पृष्ठभूमि को समझता हुआ, आत्मसात करता हुआ निरन्तर प्रवाहमान है। निश्चय ही राजस्थानी हरजसों की विपुल सम्पदा यहाँ के जन–मन में रची बसी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिद्धान्त कौमुदी, पृष्ठ – 416 सं. 1989
2. ऋग्वेद 10।90। 14
3. भारतीय लोक साहित्य, डॉ. श्याम परमार, पृ. 9.10
4. चिन्तामणि भाग प्रथम–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल–निबन्ध श्रद्धा भक्ति – पृ. 17 से 43
5. जोधपुर संभाग से – गंगा देवी (पुष्करणा ब्राह्मण)
6. जैसलमेर संभाग से – धापू देवी
7. बीकानेर संभाग से – सुशीला बाई

8. जोधपुर संभाग से (बड़लों का चौक)
9. जोधपुर संभाग
10. जोधपुर संभाग
11. जोधपुर संभाग
12. जैसलमेर संभाग
13. जैसलमेर संभाग
14. जैसलमेर संभाग
15. जैसलमेर संभाग

****

छायानादोत्तर नारी की स्वाधीनता और दयानन्द दिनकर द्विवेदी

दत्तात्रेय गौतम *

प्रस्तावना – ''मैथिलीशरण गुप्त के साकेत के राम तो दयानन्द के कृणवन्तो विश्वमार्यम् का नारा लगाते है'' –राम धारी सिंह 'दिनकर'

सन् 1936 के बाद कवियों ने अपना रूख बदला कल्पना प्रकृति, रहस्य के साथ–साथ आध्यात्म के विषय में नारी को देखना छोड़कर अब इनकी कविताओं में लोकोन्मुखता का भी स्वर दिखाई देने लगा। निराला छायावाद से प्रगतिशीलता की और बढ़े कुकुमुरत्ता, 'गर्म पकौड़ी', 'प्रेम गीत', 'रानी और कानी', 'खजोहरा', 'मास्को डायलाग्स', 'स्फटिक शिला' और 'नये पत्ते' आदि में प्रगतिवादी विचाराधारा का विकास हुआ। 1936 में युगान्त की घोषणा कर पंत ने 'युग वाणी' और 'ग्राम्या'की रचना की। 'ग्राम्या' में पंत ने नारी एवं ग्राम संस्कृति का मध्य चित्र प्रस्तुत किया। छायावाद के बाद का काल अत्यन्त ऊर्जावान साहित्य का काल था। 1936 से 1943 तक चलने वालाा यह काल प्रगतिवाद के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ, विदेशी शोषण के प्रति खुला विद्रोह भी था किन्तु राष्ट्रीयता की भावना सबसे ऊपर थी। मैथिलीशरण गुप्त, हरिऔध, प्रसाद, निराला, प्रेमचन्द जैसे कलाधर्मी साहित्य में राष्ट्रीय भावना का चित्रण करते रहे।

द्विवेदी युगीन साहित्य में तथा छायावादी साहित्य में विश्वबन्धुत्व वाली भावना का अंकन हुआ था। किन्तु छायावादोत्तर काल में ये सारी भावना ओर उच्च स्तर पर पहुंच गई राष्ट्रीय जागरण का जो महर्षि दयानन्द का मिशन था, उसे अब गांधीजी दयानन्द से प्रेरित होकर आगे बढा रहे थे। छायावाद में राष्ट्रीय जागरण की उत्कंठा कुछ ढीली पड गई थी किन्तु गांधीजी के आन्दोलन के कारण प्रगतिवाद में साहित्य पर जो प्रभाव पत्र उसमें सम्पूर्ण समाज के हितों, शोषण, अत्याचार, दासता, गुलामी आदि के बिन्दुओं की ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा, इस संघर्ष में शोषित वर्ग में सारी भारतीय जनता आने लगी। स्त्री को भी शोषित वर्ग के साथ ही जोडा गया। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति दासता की गुलामी से भयंकर आतंकित एवं पीड़ित था, अंग्रेजो ने समूचे देश में एक शासन स्थापित किया, जिससे पूरे देश के लोग एक राजा की प्रजा हुए और पूरे देश को समान यातना का अनुभव हुआ।

इन जंजीरों को तोड़ने का साहस साहित्य में ही था जो रचनाकारों की रचनाओं में प्रकट होने लगा। दिनकर ने जब लिखना प्रारंभ किया तब देश की स्थिति गुलामी खत्म करने के लिए प्रयत्नशील थी। देश गुलामी से कराह रहा था। सविनय अवज्ञा आन्दोलन, कांग्रेस की पूर्ण स्वतंत्रता के लक्ष्य की घोषणा, भगतसिंह तथा उनके साथियों को फांसी आदि अनेक कारण थे जिससे सम्पूर्ण देश के जनमानस पर आन्दोलन का प्रभाव था। बीसवीं शताब्दी के तीसरे–चौथे दशक का यह कालखण्ड बडा महत्वपूर्ण था। जिस प्रकार द्विवेदी युग में दयानन्द और आर्यसमाज का प्रचार होने से वह सुधार काल में परिवर्तित हो गया वैसे ही भगत सिंह, चन्द्रशेखर, रामप्रसाद बिस्मिल, अश्फाक उल्ला खां, लाला लाजपतराय, स्वामी श्रद्धानन्द दयानन्द के शिष्य एवं आर्य समाज से प्रभावित होने से आम जनता का ध्यान स्वामी दयानन्द एवं आर्यसमाज से कुछ सीख कर देश के लिए कुछ करने की ओर गया।

हिन्दी साहित्य में इसी प्रभाव से प्रभावित होकर दिनकर ने हूंकार भरी और सारे भारत स्वतंत्रता का भान कर रही थी। दिनकर ने नारी को भी शोषित माना, वह पुरूष की दासी बनकर बहुत समय से उसकी छाया बनी। उसे अपने स्वतंत्र अस्तित्व की तलाश थी। दिनकर का कुरूक्षेत्र एक दृष्टि से तो युधिष्ठिर की आंतरिक खिन्नता से उठने वाले प्रश्नो का भीष्म द्धारा जवाब था और दूसरी दृष्टि से तत्कालीन सामाजिक अव्यवस्था, युद्ध व पूँजीपतियों के विरूद्ध शोषित जन का आक्रोश था लेकिन यहाँ शोधकर्ता की दृष्टि से इसमें एक और बिन्दु था जो शोध योग्य है वह था इन सब परिस्थितियों के बीच में और साहित्यकार के अन्तर्मन में भी दयानन्द की दृष्टि विद्यमान थी।

वस्तुत: नारी घर की गृहणी होती है लेकिन जिस घर का पुरूष ही गुलाम हो या शोषित हो तो वहाँ की नारी तो गुलाम की गुलाम या शोषित की भी शोषित हुई। जैसे तिल से तेल निकालने के बाद बची हुई खल को फैक्ट्रियों में ले जाकर उनमें से फिर तेल निकाला जाता है। इसी प्रकार स्त्री दो बार पिसती थी। पहले परिवार फिर अंग्रेजी सरकार। इसमें भी यदि कम पड़े तो अभी उसे समाज भी पीसने के लिए तैयार बैठा है! ताक में है चौबीसों घण्टे। इसलिए तो मनु ने नियम बनाया था कि स्त्री क्रमश: पिता, पति एवं पुत्र से रक्षित रहे। कम से कम समाज के पिसाव से तो बच जाए किन्तु लोगों ने इस मनु के नियम का उल्टा अर्थ कर दिया और अब तो बडी–बडी स्त्री–विमर्श लेखिकाएँ भी इस पिता, पति व पुत्र से रक्षित वाली बात को रात–दिन दकियानुसी विचार बताकर अपने स्त्री मुक्ति ग्रन्थ की संख्या बढाकर प्रशस्ति पा रही है। अस्तु।

बात यहाँ सीधी है कि दिनकर के काव्य का बोध विद्धानों ने जो भी दिया हो किन्तु यहाँ शोध की जगह शेष है।

''शान्ति नहीं तब तक, जब तक
सुख–भाग न नर का सम हो,
न ही किसी को बहुत अधिक हो
न ही किसी को कम हो।''[1]

वेदों का भाष्य करते हुए स्वामी दयानन्द ने स्पष्ट लिखा है कि व्याकरण के नियम या सृष्टि नियम के अनुसार 'पुरूष' शब्द का अर्थ यदि मनुष्यों के अर्थ में आता है वहाँ स्त्री एवं पुरूष दोनों समझना चाहिए। उन्होंने अपने व्याख्यानों में सैकड़ों बार कहा है कि ''पर यह अवश्य कहूँगा कि ईश्वर के समीप स्त्री–पुरूष दोनों बराबर है।''[2] विश्व में जितने भी युद्ध हुए या है सम न होने से अर्थात असमानता के कारण ही है चाहे वह कैसा भी क्षेत्र हो छोटा या बडा यदि विचारों का भी आदान–प्रदान समान न होगा उसमें भी युद्ध की

* शोधार्थी, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

सम्भावना रहती है।

''पर जिनकी अस्थियाँ चबाकर
शोणित पीकर तन का
जीती है यह शान्ति, दाह
समझो कुछ उनके मन का।''[3]

शोषित वर्ग का रक्त तो पूँजीपति और ब्रिटिश शासक पी रहे थे किन्तु उन स्त्रियों का भी तो रक्त शोषित वर्ग पी रहे थे जिनके वे स्वामी थे। उनके मन की दाह को कौन समझेगा। उच्च वर्ग और पूँजीपतियों में भी स्त्रियों की दशा कुछ ठीक नहीं थी, वहाँ वे केवल भोग एवं ऐश्वर्य मात्र के लिए उपयोग ली जाती थी। शोषित वर्ग स्त्री के रक्त को पीन था, तो पूँजीपति स्त्रियों के माँस के भूखे भेडिये बने हुए थे, वे अपनी पूँजी के दर्प में उन्हें रौंदते थे। स्त्रियाँ पूँजीपति होकर भी पूँजीपतियों द्वारा रोज कुचली जाती थी अत: उन्हे भी वहाँ अपने शोषण का पूरा आभास था, वे भी इस वातावरण से मुक्त होना चाहती थी। ब्रिटिश शासन तथा पूँजीपति गुलामों के विरूद्ध पूँजीपति पतियों की स्त्रियाँ भी देश के गरीब, शोषित और कुचली गई जनता के साथ थी उन्हे भी उन बन्द कमरों और पूँजीपति के मर्दन से मुक्ति का प्रकाश चाहिए था–

''सबको मुक्त प्रकाश चाहिए
सबको मुक्त समीकर,
बाधा रहित विकास, मुक्त
आकांक्षाओं से जीवन।''[4]

उदाहरण हम प्रेमचँद के उपन्यासों में देख सकते है, इस समय स्त्रियों के प्रति लोगों की वासना मध्यकाल की तरह भडकने लगी थी। भारतेन्दु और द्विवेदी युग में तो दयानन्द के सुधार आन्दोलन के साथ अनेक सुधारवादी महापुरूषों ने स्थिति नियंत्रित कर स्त्रियों के प्रति शिक्षा एवं सम्मान के भाव जागृत किये थे, जिसका असर छायावाद तक रहा। किन्तु 1857 के स्वाधीनता आन्दोलन के पश्चात् अंग्रेजों की दमन कारी नीति और उसका प्रभाव अधिक हो गया। महारानी विक्टोरिया का धूर्तता पूर्ण घोषणा पत्र पीडितो, मुल्ाओं, राजा–महाराजाओं तथा पूजीपतियों को तुष्टि करना प्रदान कर, देश में अंग्रेंजियत का प्रभाव ओर अधिक करने का रहा। फलस्वरूप वर्ग संघर्ष की दमित भावना तथा स्वाधीनता की आग भीतर ही भीतर तीव्र होती गई। केवल गॉधी का प्रभाव भारतीय जनता पर कायम था। लेकिन अंग्रेजों की चालाकी से इस देश की जनता में पाश्चात्य संस्कृति पनपने लगी और स्त्रियों के प्रति भेडिया–दृष्टि का पुन:विकास होने लगा। जिसका दंश आज तक निर्भया दिल्ली जैसा हमें भुगतना पड रहा है। जो कुछ प्रभाव स्वामी दयानन्द एवं आर्यसमाज के द्वारा जनता में था, उसका धीरे–धीरे लोप होने लगा। जहाँ सौ प्रतिशत प्रभाव स्वदेशी का था वहाँ वह विदेशी सभ्यता के हावी होने पर घटकर पचास प्रतिशत ही रह गया। इस विदेशी सभ्यता की आँधी ने स्त्रियों की मनोदशा को झकझोर कर रख दिया। दिनकर की कविताओं में वर्ग संघर्ष एवं स्वाधीनता के स्वर तो हैं ही किन्तु गूढता से देखने पर यह सहज ही पता चलता है कि उसमें स्त्रियों पर होने वाले अनैतिक कार्य भी द्रौपदी के माध्यम से उजागर हुए हैं। पाश्चात्य सभ्यता से जो स्त्रियों के प्रति लोगों की वासना भड़क गई थी उसका दिनकर ने बडी स्पष्टता से विवरण दिया है–

''वासना की यामिनी, जिसके तिमिर से हार,
हो रहा नर भ्रान्त अपना आप ही आहार,
बुद्धि में है नभ की सुरभि, तन में रूधिर की कीच,
यह वचन से देवता, पर, कर्म से पशु नीच।''[5]

दिनकर में यह स्वामी दयानन्द का ही प्रभाव था कि वे गांधीवादी होते हुए भी क्रान्ति, विध्वंस के साथ स्वाधीनता का समर्थन करते हैं, उनके मन में परवर्ती दयानन्द से प्रभावित कवियों का भी प्रभाव था। रामनरेश त्रिपाठी तथा नवीन राष्ट्रीय रचनाओं से प्रभावित थे, दयानन्द काल के बाद से दयानन्द के स्वतंत्रता संबंधी इन शब्दों ''कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अपनी प्रजा पर माता–पिता के समान कृपा न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं होता।''[6] का असर सम्पूर्ण जन व साहित्यकारों पर था।

व्यक्तिगत रूप से दिनकर जी अपनी माता जी की धर्म–परायणता और काव्य प्रेम से बहुत प्रभावित हुए थे। उनकी पत्नी ने भी प्रत्यक्षत: या परोक्षत: उनके कवि जीवन को बराबर प्रभावित किया। उनकी नारी संबंधी विचाराधारा में इन दोनों ही स्त्रियों का प्रभाव स्पष्टतया देखा जा सकता है। 'पुरूष प्रिया' 'नारी', 'बालिका से वधु' तथा 'कर्त्तिन का गीत' आदि रचनाओं मे नारी के आधुनिका, रक्षणीया एवं माता आदि रूपों में कवि अन्तिम रूप को ही श्रद्धेय मानता है। हूंकार के कवि की कालजयी पंक्तियों में तत्कालीन पूंजीवाद वर्ग संघर्ष तथा शोषित की भी शोषित नारी की जो दशा का वर्णन हुआ है वह राष्ट्र एवं नारी स्वाधीनता की माँग करता है–

''श्वानों को मिलता दूध वस्त्र, भूखे बालक अकुलाते हैं।
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर, जाडे की रात बिताते हैं।।
युवती की लज्जा वसन बेच, जब ब्याज चुकाये जाते हैं।
पापी महलों का अंहकार, देता मुझको तब आमंत्रण।।''[7]

छायावादोत्तर युग के प्रगतिवाद में कवियों ने नारी को शोषित माना उसकी पीडा का आतुर भाव यहाँ दिखाई देता है। पंत ने अपनी 'आधुनिक कवि की भूमिका' में लिखा है– 'सामन्त युग के स्त्री–पुरूष–सदाचार का दृष्टिकोण अब अत्यन्त संकुचित लगता है। उसका नैतिक मानदण्ड स्त्री की शरीर यष्टि रहा है।'

इसी बीच सन् 1946 में हिन्दी साहित्य जगत के प्रसिद्ध लेखक हजारी प्रसाद द्विवेदी का उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' आया। इसमें बाणभट्ट और महाराज हर्ष के एक छोटे कलाखण्ड को आधार बनाया गया इस उपन्यास के केन्द्र में स्वयं बाणभट्ट का जीवन है जो राष्ट्रीय अस्मिता की प्रतीक तुवरमिलिंद की कन्या भट्टिनी की मुक्ति के महत् उद्देश्य को लेकर आगे बढता है लेकिन यहाँ द्विवेदी जी की जो मुख्य विशेषता भारत की राष्ट्रीय मुक्ति नारी–मुक्ति को भी रेखांकित करती है। इस प्रक्रिया में द्विवेदी जी ने ऐतिहासिकता की पूरी तरह रक्षा करते हुए अपने युग के राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए अनिवार्य एकता, समाजिक साम्प्रदायिक सद्भाव, नारी–मुक्ति, जातिवाद की भावना अत्यन्त कलात्मक ढंग से संकेतिक किया है। यह सूमचा प्रयास उपन्यास को समकालीन यथार्थ से जोडता है।

छायावादोत्तर काल की यह सबसे सशक्त रचना है जिसमे स्वामी दयानन्द के स्त्री चिन्तन का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा है। वैसे भी हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने लेखो में कई स्थलों पर स्वामी दयानन्द और आर्य समाज की खुलकर सत्यता प्रकट की है। मध्यकाल में नारी की भारतीय समाज में स्थिति भोग्या वस्तु के रूप में थी। स्त्रियों का अपहरण और उनकी खरीद फरोक्त सामान्य बात थी। उस ऐतिहासिक तथ्य को आज के युग से मेल कराते हुए नारी महिमा का जो रूप खड़ा किया है। वह अनूठा है। बाणभट्ट की आत्मकथा में एक भी ऐसा नारी–पात्र नही है। जो अपने चरित्र से स्त्री की

गरिमा को बढाता न हो। भट्टिनी निपुणिका, महामाया, सुचरिता आदि सभी प्रमुख नारी-पात्र स्त्री का ऐसा आर्दश सामने रखते हैं जो वन्दनीय है। विभिन्न पात्रों के द्धारा नारी के सम्बन्ध में व्यक्त कराये गए विचार भी द्धिवेदी जी के नारी विषयक दृष्टीकोण तथा स्वामी दयानन्द के स्त्री चिन्तन से भरपुर स्पष्ट दिखाई देते है, उन पात्रों में पूरे संयम की विद्यमानता दिखाई देती है, महामाया भैरवी भट्टिनी से कहती है- ''हाँ बेटी नारी हीन तपस्या संसार की भद्दी भूल है। यह धर्म-कर्म का विशाल आयोजन, सैन्य संगठन और राज्य व्यवस्थापन सब फेन-बुदबुद की भँति विलुप्त हो जाये, ''क्योंकि नारी का इसमें सहयोग नहीं है। ये सारा ठाट-बाट संसार में केवल अशांति पैदा करेगा।'' [8] महामाया नारी तत्व की व्यख्या करती है। जहाँ कहीं अपने आपको उत्सर्ग करने की, अपने आपको खपा देने की भावना प्रधान है, वही नारी है। जहाँ कहीं दु:ख-सुख की लाख-लाख धाराओं में अपने को दलित द्राक्षा के समान निचोड़ कर दूसरे को तृप्त करने की भावना प्रनल है, वहीं 'नारी तत्व' है, या शास्त्रीय भाषा में कहना हो तो 'शक्ति तत्व' है।''[9] 'बाणभट्ट प्रथम बार सुचरिता को देखकर अपने भाव व्यक्त करता है, मुझे बार-बार वराहमिहिर की याद आती रही और मैं उनकी सहृदयता पर मुग्ध हुए बिना नही रहा। उन्होनें ठीक ही कहा है, स्त्रियाँ ही रत्नों को भूषित करती हैं, रत्न स्त्रियों को क्या भूषित करेंगे।' बाणभट्ट निपुणिका के प्रसंग में चिन्तन करता है- ''नारी से बढ़कर अनमोल रत्न और क्या हो सकता है? पर उससे अधिक दुर्दशा किसकी हो रही है? मुझसे निपुणिका क्या आशा रखती है? अवधूतवाद की साधना इसलिए अधूरी है कि उन्हें विशुद्ध नारी का सहयोग नहीं मिला और निपुणिका की बलिदानाकांक्षा इसलिए अपूर्ण है कि उसे पुरूष का करावलम्ब नहीं मिला।''[10] भट्टिनी की कामना है कि भारतवर्ष बार-बार क्रूर और आततायी 'प्रव्यत्त दस्युओं' से पादाक्रान्त न हो, उनके द्धारा स्त्रियों और बच्चों का ब्राह्मणों और श्रमणों का, वृद्धों और बालिकाओं का संहार न हो, मंदिरों और विहारों का ध्वंस न हो, ग्राम और नगर जलाकर भस्मीभूत न किए जाए। बाणभट्ट के स्त्री के प्रति विचार देवी व करूणामूर्ति के रूप में उच्च आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

वराहमिहिर के अनुसार स्त्रियाँ रत्नों को भूषित करती हैं। स्त्रियाँ पूजा योग्य है ''पूजा का अर्थ सत्कार है।''[11] इसलिए स्त्रियों का सत्कार, सम्मान करना चाहिए। हजारी प्रसाद द्धिवेदी बाणभट्ट के माध्यम से कहते हैं कि 'स्त्री के दु:ख इतने गम्भीर होते है कि उसके शब्द उसका दशमाँश भी नहीं बता सकते।' यहाँ स्त्री मुक्ति चेतना के स्वर समाहित हैं।

इसी दौरान स्त्री साहित्यकार भी अपनी स्वाधीनता के लिए आतुर थी। विद्यावती कोकिल प्रयाग विद्यापीठ से शिक्षा प्राप्त कर साहित्यिक साधना के साथ आध्यात्मिक मार्ग का भी अनुसरण कर रही थी। उनके गीतों का प्रथम संग्रह 'अंकुरिता' नाम से सन् 1941 में प्रकाशित हुआ-

''आज जल उठा एकाकी पन
तोड़ों मेरी कारा तोडो,
घाव बन गया यह दुराव
खोलो मेरे बन्धन खोलो।''[12]

यह स्त्री जागरण का ही फल है जिसमें स्त्री मुक्ति व स्वतंत्रता की कामना दिखाई देती है।

शकुन्तला सिरोठिया का जन्म 1915 कोटा राजस्थान में हुआ। इनके काव्य में स्त्री मुक्ति की पीडा जो सूर्य की आग को अपने स्त्रीत्व की दाह में देखती है-

''किसके अंतर की दाह दिखाता
सुलग-सुलग कर दिनकर?
किसकी उर प्याली भरता नभ
नित निशि में टपक-टपक कर ।।'' [13]

जीवन के प्रति धैर्य एवं आशा की किरण की ऊर्जा से धीरे-धीरे स्त्रियों के दु:खों में कमी आने का सकारात्मक संदेश इन पंक्तियों में दिया है यह स्त्री जागरण की सशक्त पंक्तियां कही जा सकती है-

''कितनी रात अंधेरी हो पर,
धीरे-धीरे घट जाती है।
कितनी दूरी मंजिल की हो,
चलते-चलते कट जाती है।''[14]

शकुन्तला सिरोठिया की रचनाएं 'मरे परदेसी' 'चाँद इतना हँसा' तथा 'सुधी के स्वर' है

हीरा देवी चतुर्वेदी की कविताएँ सन् 1940 में तीन संग्रह 'मंजरी', 'नीलम' 'मधुबन' प्रकाशित हुई। जो राष्ट्रीय सामाजिक परिस्थितियों की विषमता लिए हुए थी-

''मेरा कवि क्या गीत सुनाए?
युग की पीड़ित मानवता का,
लेखा जोखा कौन लगाए?
आज भूख से व्याकुल रोते
शस्य श्यामलता भू पर सोते
मानव के कंकाल पथ पर
जीवन में ही मृत्यु छुपाए।''[15]

प्रणय और सौन्दर्य की रचना करने वाली रामेश्वरी देवी 'चकोरी' पर भी स्वामी दयानन्द का प्रभाव पडा और उन्होने देश को दासता से मुक्त करने के लिए युवाओं में जागृति के लिए भी कविताएं लिखी-

''दासता मिटा दो औ, भगा दो भाव भीरूता को
भारत वसुन्धरा की, वीरों हाँ बचालो लाज।''[16]

स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों पर चलने वाली आर्य समाज परिवार से सम्बद्ध तथा राष्ट्र की स्वतन्त्रता में सहयोग प्रदान करने वाला चन्द्रकिरण सोनरेक्सा का पूरा परिवार दयानन्द का भक्त था। इनका जन्म पेशावर में, इनकी पहली कहानी 'अछूत' सन् 1931 में कलकत्ता से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका 'विषय में छपी थी, इन्होंने अपनी रचनाओं में स्त्री स्वातन्त्रय एवं सामाजिक विदपताओं को बडे सूक्ष्म ढ़ंग से प्रस्तुत किया है। उपेक्षित के प्रति इनके मन में संवेदना थी पुरूष का वर्चस्व एवं स्त्री की विवशता, उत्पीड़ित वर्ग के यथार्थ आदि का चित्रण इनकी कहानियों में हुआ है। अपने समाज में नारी विडम्बना पूर्ण स्थिति पर अपनी कहानियों के माध्यम से प्रकाश डालने वाली चन्द्रकिरण सोनरेक्सा स्वदेशी सन् 1940 के बाद उभरने वाली कथा लेखिकाओं में सबसे सफल लेखिका रही है।''[17] उनकी आत्मा कथा 'पिंजरे की मैना' के माध्यम से सन् 1857 की क्रान्ति में अपने पूर्वजों का वर्णन तथा दयानन्द के प्रभाव की भूमिका को भी दर्शाया है। इस तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन महिला लेखिकाएँ दयानन्द का कितना उपकार मानती थीं और स्त्री जागरण में वे उनके प्रति कितनी कृतज्ञ थीं।

भारता की स्वतन्त्रता के बाद मुस्लिम समाज की स्त्रियों भी शोषण व पीड़ा की शिकार थी और वे भी दयानन्द की विचार धारा आर्य समाज से

प्रभावित थी। परिणाम यह हुआ कि जो स्त्रियाँ उनके सामाजिक बन्धनों के बारे में आवाज तक नहीं उठा सकती थी। वे अपनी आजादी के लिए छटपटाने लगी। मुस्लिम समाज में शोषण एवं दासता को उजागर करती हुई एक मुस्लिम महिला जहान आरा बेगम 334 विले पार्ले बंबई से भारत के प्रधानमंत्री के नाम एक खुला पत्र लिखती है भारत में सभी जगह कानून में सुधार हुए। ''मगर हिन्दूस्तान में मुस्लिम औरतों को मुस्लिम पर्सनल लॉ और शरियत के तहत लौण्डी, बान्दी, गुलामी तथा दोजखी जिन्दगी गुजारने पर मजबूर होना पड़ रहा है। इस कानून के तहत अगर मुस्लिम मर्द अपनी बीबी के सामने तीन बार 'तलाक','तलाक','तलाक' कह दे तो वह तलाक जायज करार दिया जाता है, औरतों को अपनी सफाई देने का भी हक हाँसिल नहीं है। शरियत के मुताबिक कुरान में औरतों को मर्दो की खेतियाँ बताया गया है और एक जगह उन्हें मर्दो का लिबास अर्थात् पोशाक बताया गया है। इसी बात का फायदा उठा कर मुस्लिम मर्द जब समझता है कि एक औरत पुरानी हो गई तो वह पोशाक की तरह ही उसे बदल कर नई ले आता है जिसकी वजह से मुस्लिम औरत को दिमागी तकलीफ दी जा रही है यदि मुस्लिम पर्सनल लॉ और शरियत के ठेकेदार चाहते है कि यह कानून बना रहे और लागू रहे तो कुरआन के मुताबिक चोरी करने वाले मुसलमान को हाथ मैर काट देने की सजा का फरमान है। क्या यहाँ हिन्दुस्तान में इन शरियत के ठेकेदारों ने किसी मुसलमान चोरी करने वाले को हाथ काटने की सजा दी है। कभी नहीं। फिर सौतेला तरीका मुस्लिम औरतों के साथ ही क्यों बरता जाता है।''[18]

इस प्रकार केवल हिन्दी साहित्य में ही नहीं दयानन्द की विचार धारा का प्रभाव सम्पूर्ण भारत वर्ष में था। यहाँ तक कि विदेशों में भी इस भारतीय संन्यासी की खासी धूम थी यही कारण था कि एक मुस्लिम महिला अपनी पीड़ा सहन न कर सकी और दु:ख को व्यक्त करने की क्षमता का विकास उसने दयानन्द से सीख लिया था।

छायावादोत्तर काल को बढ़ते-बढ़ते नई-कविता तक भी स्वामी दयानन्द का स्पष्ट प्रभाव देखने को मिलता है। 'मन की सीपी में' शीर्षक गीत में दिनकर सोनवलकर ने दयानन्द के निराकार परमेश्वर तथा उनके निज नाम ओउम् को किस प्रकार कविता में बांधा है मन का आध्यात्मिक निरूपण तो हुआ ही है किन्तु पूरी कविता में दयानंद के विषय अंधविश्वास, रागद्वेष, कर्मकाण्ड आदि का पाखण्ड भी दिनकर सोनवलकर ने भस्म किया है-

''अन्तर में बहती रहे प्रेम सरिता
ज्योति से मिले ज्योति
अन्धविश्वास। रागद्वेष। कर्मकाण्ड
भस्म हो जाएँ सभी
तेजस्वी लपटों में।
बच रहे आनन्द-मात्र
चैतन्य-रूप। निर्विकार।
करूणामय से एकात्म
गले मिलें व्यक्त से अव्यक्त
किरणें सब दौड़ पड़े सूरज की तरफ।
सुगन्ध एकाकार हो सौन्दर्य से;
स्वर में भी हो जाएँ 'ऊँ'कार रूप
चेतना बने विराट।''[19]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 कुरूक्षेत्र : रामधारी सिंह दिनकर, पृ.सं.-23
2 उपदेश मंञरी : स्वामी दयानन्द, पृ.सं.-119
3 कुरूक्षेत्र : रामधारी सिंह दिनकर, पृ.सं.-23
4 वही, पृ.सं.-77
5 वही, पृ.सं.-68-69
6 साहित्यिक निबन्ध : राजनाथ शर्मा, पृ.सं.-459-460
7 साहित्यिक निबन्ध : डॉ. देवीशरण रस्तोगी ;पृ.सं.-135
8 बाण भट्ट की आत्म कथा : हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं.-156
9 वही, पृ.सं.-156
10 वही, पृ.सं.-246
11 सत्यार्थ प्रकाश : स्वामी दयानन्द ;पृ.सं.-91
12 हिन्दी साहित्य का ओझल नारी इतिहास : नीरजा माधव, पृ.सं.-128
13 वही, पृ.सं.-129
14 वही, पृ.सं.-130
15 वही, पृ.सं.-131
16 वही, पृ.सं.-134
17 वही, पृ.सं.-136-138
18 स्लाम में नारी : ले. कुँवर आनन्द सुमन (द्वितीय संस्करण) पृ.सं.-15
19 हिन्दी साहित्य की प्रवृतियाँ : डॉ जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल, पृ.सं.-564

****

राजस्थान की हिन्दी-कहानी : विकास यात्रा भाग - 5

डॉ. राजकुमार चौधरी *

प्रस्तावना - कथा-लेखन परम्परा

नवें दशक की कहानी -राजस्थान की हिन्दी-कथा के छठे चरण में नवें दशक के कई नवोदित कहानीकारों ने नये तेवर के साथ कहानी लेखन परम्परा को आगे बढ़ाया। इनमें नरेन्द्र निर्मोही, रामानन्द राठी, कृष्ण कल्पित, यश गोयल, रघुनन्दन त्रिवेदी, नरपतसिंह सोढ़ा, माधव नागदा, जगदीश माथुर, ओम प्रकाश, घनश्याम सुखवाल, योगेन्द्र दवे, सूरज पालीवाल, हसन जमाल, धनराज चौधरी, चन्द्रशेखर अरोड़ा, मालचन्द तिवाड़ी, भगवान अटलानी, सत्यनारायण, कमलेश शर्मा, राम स्वरूप अरोड़ा, हबीब कैफी, अशोक सक्सेना, आनन्द कुरैशी, प्रेम तन्मय, जुगमन्दिर तायल आदि प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त महिला लेखिकाएँ श्रीमती मनमोहिनी, श्रीमती क्षमा चतुर्वेदी, श्रीमती पुष्पा रघु, डॉ. विभा सक्सेना, डॉ. उषा रानी माहेश्वरी, श्रीमती पुष्पलता कश्यप, श्रीमती कमला गार्ग्या आदि की कहानियाँ एवं संग्रह प्रकाशित हुए हैं। इन्होंने अपने महत्त्वपूर्ण कथा-संग्रहों के माध्यम से राजस्थान के हिन्दी-कहानी की श्रीवृद्धि की है।

प्रान्त के वरिष्ठ कहानीकार **श्री जगदीश माथुर** की सन् साठ के आस-पास रचित कहानियों का संकलन 'आँसू-आँसू और पत्थर' शीर्षक से सन् 1983 में प्रकाशित हो सका। डॉ. प्रेमचन्द गोस्वामी ने इस संकलन पर टिप्पणी करते हुए लिखा है '... इस संकलन की कहानियों को 'कथात्मक अनुभव चित्रों की संज्ञा दी है।[1] शिल्प पेशे से चिकित्सक डॉ. गोपाल काबरा के दो कहानी संग्रह- 'अन्त्येष्टि' और 'अविश्वास' प्रकाशित हो चुके हैं। इनकी अधिकांश कहानियाँ अस्पताली जिन्दगी से ताल्लुक रखती हैं, किन्तु वे एक लोक प्रिय और संवेदनशील चिकित्सक के संस्करण नहीं हैं। गहन मानवीय पीड़ा को कथाकार ने बहुत करूणा और कौशल के साथ व्यक्त किया है, और अस्पताल तथा डॉक्टर के व्यक्तिगत-पारिवारिक जीवन को एक नये और दुर्लभ भीतरी कोण से चित्रित किया है। 'महकते फूल तथा कचनार' और 'नीलकण्ठ' में बाल मनोविज्ञान की अच्छी झलकियाँ हैं। 'झुलसे पतंगे' टिटनेस से मरने वाले बच्चों का चित्रण करती हैं, जिनमें बाल-स्वास्थ्य के प्रति राष्ट्रीय उपेक्षा का प्रश्न उठाती हैं। 'अविश्वास', 'रामदीन', 'एक जरा सी भूल' इनकी अच्छी कहानियाँ हैं।

उदीयमान कहानीकार **भगवान चौरसिया** की चौदह कहानियों का संग्रह- 'अपने टूटने तक' प्रकाशित हुआ है। शहरी जीवन के नौकरी पेशा लोगों की छोटी-छोटी परेशानियों को इन कहानियों में व्यक्त किया है। 'वर्तमान टूटता हुआ' एक सेवानिवृत पोस्ट मास्टर की कहानी है जिसके पढ़े-लिखे बेटे उसे बुढ़ापे में छोड़ देते हैं। 'चादर मैली-सी', 'पांचवा अध्याय' उल्लेखनीय कहानियाँ हैं। इनका दूसरा कथा-संग्रह 'नहीं ऐसा नहीं' भी प्रकाशित हुआ है जिसमें निम्न मध्यवर्गीय परिवारों की आर्थिक दुश्चिताओं का प्रभावी चित्रण किया गया है।

मदन केवलिया की चौबीस कहानियों का संकलन 'सड़क का दिल' उपलब्ध है। इनमें से नौ कहानियाँ एक ही परिवार की हैं। निम्न मध्यवर्गीय जीवन की कटुता-क्रूरता, तिक्तता, ईर्ष्या और विवेक हीनता जैसे एक स्थिर वस्तु को विभिन्न कोणों से चित्रित किया है। यह यथार्थ का ही एक पहलू है जिसे पहले किशोर भावुकता और बाद में शंकालु प्रौढ़ता से मदन केवलिया ने चित्रित किया हैं। ये कहानियाँ अब भले ही नई न लगें, जिस मानवीय संवेदना के दर्शन होते हैं वह पुरानी नहीं पड़ी है।

श्री ओम प्रकाश का भी एक कथा-संग्रह- 'स्थिति बोध' का प्रकाशन हुआ। इसमें प्रकाशित कहानियों का औपचारिक विस्तार विशेष रूप से ध्यान आकृष्ठ करता है। परिवारों की टूटन, सम्बन्धों के बीच आई दरार का अंकन खास तौर पर हुआ है। 'बाजार' कहानी में आंचलिक शब्दावली का प्रयोग हुआ है।

युवा कहानीकार **ब्रजमोहन गोयल** का पहला कथा-संकलन 'अशेष' (1984) तथा **श्री घनश्याम सुखवाल** का 'सुबह का इन्तजार' (1985) प्रकाशित हुए सुखवाल जी की ज्यादातर कहानियाँ रूमानी सम्बन्धों के इर्द-गिर्द बुनी गई हैं। 'मनु विधवा हो तो क्या' में एक छात्र के प्रति अध्यापक का रूमान और 'मेंहदी लग जाए' में छात्रा का अध्यापक के प्रति रूमानी भाव है। उल्लेखनीय है कि सुखवाल जी स्वयं भी अध्यापक ही हैं।

प्रान्त के महत्त्वपूर्ण उभरते हुए कथाकार **श्री योगेन्द्र दवे** का पहला कहानी-संग्रह 'गिरफ्तारी वारन्ट' (1983) में प्रकाशित हुआ था। इस संकलन में अपनी विविध आयामी कहानियों और संयत विन्यास से दवे पाठकों का ध्यान आकृष्ठ कर पाने में सफल हुए हैं। पारिवारिक सम्बन्धों की जमीन में आई दरारों को सन्तुलित व परिचय दृष्टि से देख पाना उनकी सबसे बड़ी सफलता रही।[2] इस कथा-संग्रह की 'तस्वीर' कहानी एक अविस्मरणीय रचना है जहाँ दिवंगत पिता की तरवीर घर में टांकने का समर्थन बहू इसलिये करती है कि उस तस्वीर के टंक जाने से दीवार का उखड़ा पलस्तर ढंक जाएगा। इस प्रक्रिया में वस्तुत सम्बन्धों की दीवार का उखड़ा हुआ पलस्तर ही उजागर हुआ है। इस संकलन के बाद 'विषमता' (1985) का प्रकाशन हुआ। इस संकलन में लघु कथाएँ है किन्तु सौभाग्य से दवे जी यहां उस चुटकुलें बाजी से मुक्त रह पाये है जो इधर हिन्दी की लघु-कथाओं के नाम पर चल रही है। स्वभावत: इन कहानियों में सामाजिक, राजनीतिक विद्रूप को ही उजागर किया गया है। यही लघु कहानी के शिल्प के अनुकूल भी है। कहानियों में जगह-जगह तीखा व्यंग्य भी उभरा है।

* एसोसिएट प्रोफेसर, राजकीय महाविद्यालय, राजसमंद (राज.) भारत

डॉ. सूरज पालीवाल का प्रथम कहानी-संकलन 'टीका प्रधान' (1985) में प्रकाशित हुआ। पालीवाल जी की सबसे बड़ी चिन्ता यह है कि गाँव की सामूहिक जिन्दगी को मानो आजादी का साँप सूंघ गया है। गाँवों का राजनीतिकरण हुआ है, सहज अकृत्रिम जीवन पद्धति विस्थापित हुई है। 'टीका प्रधान' कहानी में उन्होंने स्पष्ट किया है कि गाँवों में अब भी सब कुछ उच्च वर्ग के ही पक्ष में है। सूरत पालीवाल एक सजग और सरल कथाकार हैं जो प्रेमचन्द की धारा को आगे बढ़ाते हैं।[3]

श्री हसन जमाल का पाँचवां कहानी-संग्रह 'आबगीना' (1980) में प्रकाशित किन्तु हाल ही में जारी हुआ है इससे पहले 1982 में 'अंश अंश दंश' कहानी-संग्रह प्रकाशित हुआ है। 'अंश अंश दंश' में समाज के निचले और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के लोगों की व्यथा कथाएँ हैं। कहानीकार की दृष्टि इन लोगों के जीवन में बहुत गहरे तक उतरती है और बहुत ताकतवर तरीके से वह इन लोगों की पीड़ाओं को व्यक्त करता है। भारतीय निम्न मध्यवर्गीय मुस्लिम और अदालती जीवन, ये दो विषय हसन जी के प्रिय हैं और इनकी कहानियाँ लिखने में वे बहुत ज्यादा सफल भी होते हैं। 'आबगीना' में उनके विषय क्षेत्र में विस्तार हुआ है। इस संकलन की एक बहुत ही उम्दा कहानी है - 'आतंक' जहाँ व्यवस्था का क्रूर अविवेकी रुप अपनी पूरी विकरालता के साथ उजागर हुआ है। यह कहानी पिछले संकलन की और हसन जी की बहुचर्चित कहानी 'उजड़ते दयार में' का अगला कदम है। हसन जी की भाषा में उर्दू शब्दों की बहुलता है जो उनके कथा- परिवेश के अनुकूल है।

श्री धनराज चौधरी का पहला कहानी संग्रह 'ज्वर यात्रा' (1986) प्रकाशित हुआ। भौतिकी के प्राध्यापक डॉ. चौधरी की कहानियाँ अपनी वैज्ञानिक प्रभाव युक्त भाषिक संरचना के कारण अलग से पहचान में आती है। इनकी एक और चर्चित कहानी है - 'बीफोना'। चौधरी जी की कहानियों की एक खासियत है - यथार्थ का संश्लिष्ट चित्रण।

श्री चन्द्रशेखर अरोड़ा का पहला कहानी संस्करण 'दु:स्वप्न' (1986) प्रकाशित हुआ। इस संकलन का शीर्षक काफी हद तक अरोड़ा की मन:स्थिति का द्योतक है। 'दु:स्वप्न' एक प्रभावशाली कहानी है। इनके पास एक समर्थ भाषा और सधा हुआ शिल्प विधान है।

पिछले कुछ वर्षों में प्रान्त के जिन कहानीकारों ने बहुत तेजी से अपनी विशिष्ट पहचान कायम की है उनमें **श्री मालचन्द तिवाड़ी** प्रमुख है। इनका पहला कहानी संकलन 'पानीदार तथा अन्य कहानियाँ (1986) में प्रकाशित हुआ। इस संकलन में शहर और गाँव के जीवन को चित्रित करने वाली क्रमश: चार तथा छ: कहानियाँ हैं। तिवाड़ी जी राजस्थानी में भी लिखते हैं और प्रान्त के ग्राम्य जीवन पर उनकी पकड़ बहुत मजबूत है। अकाल से जूझते, तड़पते तिलमिलाते राजस्थान के ग्रामीण जीवन के इतने प्रखर और प्रामाणिक चित्र उनकी कहानियों में हैं कि हमें स्वयं अपने परिवेश पर ग्लानि होने लगती है। इस संकलन की 'कसूमल' कहानी को हिन्दी की किसी भी श्रेष्ठ कहानी के समकक्ष रखा जा सकता है। इस कहानी का एक-एक शब्द तिवाड़ी के कहानीकार को दाद दिलाने की सामर्थ्य रखता है, लेकिन इससे यह न समझ लिया जाए कि यह कोई महफिली अन्दाज की कहानी है। इस कहानी में अकाल की विभीषिका को जिस तरह चित्रित किया गया है, उसका संबंध पढ़ने और अनुभव करने से ही है। कथाकार को ग्रामीण जीवन का पुनर्सजन करने में अपेक्षाकृत अधिक सफलता मिली है। ग्राम्य शब्द का, उनकी भाषा में खूब आते हैं, लेकिन प्रवाह में रहते हुए, मूल भाषा का हो बनकर। 'माँ के बोल बाजरे के सिट्टे की तरह लहलहा रहे थे' या 'टिकुड़ी की नींद का घड़ा पका ही नहीं कि ठोकर लगी, जैसे खेत की सींव की तरह से आती जूतियों की चड़-चूँ कानों से होकर हिये में उतर गयी। एक तरेर-सी चल पड़ी उसके अन्दर, हप करती उठकर माँचे पर बैठ गयी। चौफेर नजर पसारी। अंधेरा और सुनसान, आसमान में अनगिनत तारें पर जमीं पर फकत दो ही चिनगारियाँ उसे दिखाई पड़ीं; जो हिलती-डुलती उसके माँचे की तरफ बढ़ रही थीं।'[2]

श्री भगवान अटलानी का पहला कहानी-संग्रह 'बन्द आसमान का आखिरी दरवाजा' (1987) में प्रकाशित हुआ है। समीक्षक कमलेश्वर ने इनकी कहानियों के कथ्य को रेखांकित करते हुए कहा है - 'भगवान अटलानी ने घुटन, धुँए और अंधेरे के बीच भी मनुष्य की जिजीविषा और जीने की शक्ति के आखिरी दरवाजे खोलने की अपनी मौलिक प्रतिबद्धता को नहीं छोड़ा इसलिए उनकी कहानियाँ अपने समय के आदमी और इंसानियत का साथ देती है। अटलानी जी की कहानियाँ अपने समय और समय की नियति से निरपेक्ष नहीं है।'[4] 'बन्द आसमान का आखिरी दरवाजा' निश्चय ही इस संकलन और कथाकार की एक अत्यन्त सफल कहानी है जहां वर्तमान समाज की आर्थिक संरचना और उसके नीचे पिसते हुए एक आम, औसत मध्यमवर्गीय व्यक्ति का चित्रण है। यह कहानी भगवान अटलानी की क्षमता की परिचायक है। कथाकार ने सूक्ष्म मानवीय संवेदन से युक्त अपनी दृष्टि को समस्त अनुभवों के लिए खुला रखा है, परिणामत: वे एक वैविध्यपूर्ण कथा-संसार का सृजन कर पाये हैं। कहीं जीवन के छोटे-छोटे निजी यथार्थ है तो कहीं बड़ी समस्याओं से जूझते, फिर भी अपनी अस्मिता बनाये रखे हुए मामूली आदमी है। उनकी एक और महत्त्वपूर्ण कहानी है - 'स्वनिर्मित लक्ष्मण रेखा' जहाँ इलाहाबाद के पण्डों का कुरुप यथार्थ और उसके कारण एक युवक का भ्रम भंग चित्रित है। 'सवा शेर' संकलन की एक हल्की-फुल्की कहानी है।

प्रदेश के महत्त्वपूर्ण नव युवा **कथाकार सत्यनारायण** का पहला कहानी - संग्रह 'फटी जेब से एक दिन' (1987) में प्रकाशित हुआ। कथाकार ने जीवन की तंग सुरंगों में सेंध मारकर अपने आस-पास के परिवेश को इन कहानियों में उभारा है। संकलन की ग्यारह में से लगभग सभी कहानियों में खाली जेब, खाली पेट, खाली हाथ वाला शिक्षित युवक बार-बार झांकता है, और उभरता है - एक शाश्वत प्रश्न : आखिर यह भूख कब तक चलती रहेगी? नायक की बैचेनी की मुखर अभिव्यक्त दृष्टव्य है - 'मैं उसी चौकोर चिकने पत्थर पर करवट बदल रहा हूँ! नींद के लिए नहीं शब्दों के अर्थ के लिए नहीं, सुख के लिए नहीं, रोटी के लिए भी नहीं।' मैं (डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल) नहीं जानता आखिर वह क्याए चीज है जिसे मैं भूलना चाहता हूँ, लेकिन भूलता नहीं, और चाहें तो इनमें यह भी जोड़ सकते है - निश्चय ही सत्यनारायण की कहानियाँ पढ़कर ही कि नायक यह भी नहीं जानता कि वह क्या पाना चाहता है क्योंकि नींद, शब्दों के अर्थ, सुख और रोटी का तो वह निषेध कर चुका है, यों इस संकलन की लगभग हरेक कहानी में एक अदद प्रेमिका का जिक्र भी मौजूद है जो प्राय: सुखी, सम्पन्न, बुर्जुआ वर्ग से है। कहना अनावश्यक है कि नायक सर्वहारा वर्ग से है। गनीमत यह है कि नायिका के प्रसंग को ज्यादा विस्तार नहीं दिया गया है, वरना.....।'[5]

कथाकार के पास बेहद समर्थ, आधुनिक भावबोध को वहन कर सकने वाली भाषा है। उनकी यह सामर्थ्य उन्हें प्रान्त के लगभग सभी समकालीन कथाकारों में विशिष्ट बनाती हैं, लेकिन कथ्य के स्तर पर अभी लम्बी यात्रा तय करनी है। फिर भी सत्यनारायण प्रान्त के उन कथाकारों में से है जिनसे

हमें बहुत ज्यादा उम्मीद बंधती है और उनकी कहानियों का पाठकों को बराबर इन्तज़ार रहेगा।

श्री हबीब कैफ़ी प्रान्त के उन रचनाकारों में से है जिनका सृजन तो अबाध है परन्तु प्रकाशन नहीं के बराबर है। हाँ 'अनायक' उपन्यास पर अकादमी पुरस्कार दिया गया था। कथाकार कहानियाँ तो बराबर लिखते रहते है, फिर भी पुस्तकाकार प्रकाशन नहीं हुआ है। ये एक-एक वाक्य बड़ी समझ के साथ रखते हैं। वाक्य भी बहुत छोटे-छोटे होते हैं, उनमें एक भी शब्द फालतू नहीं होगा। एक-एक शब्द को घण्टों-घण्टों सोचकर फिर लिखते हैं। 'वे तीन' इनकी महत्त्वपूर्ण कहानी है।

श्री माधव नागदा युवा कथाकार के रुप में काफी प्रशंसा अर्जित कर चुके हैं। इनकी 'उसका दर्द' नामक कहानी विख्यात है। यह कहानी कथाकार को सशक्त सिद्ध करने और उनसे बहुत सारी अच्छी कहानियों की अपेक्षा कराने का दम रखती है। 'मोती भाई ताले वाले' के रुप में इस कहानी ने एक अविस्मरणीय चरित्र हमें प्रदान किया है। पूरी व्यवस्था इसके आतंक को एक मामूली आदमी के बरअक्स रखकर एक जोरदार विसंगति पैदा की गई है।

अशोक सक्सेना भी प्रान्त के एक समर्थ कथाकार हैं। इनकी 'ओवर एज' कहानी मध्यवर्गीय परिवार की बेबसी और तज्जन्य अमानवीयकरण को परत दर परत अनावृत करती चलती है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कथाकार ने सबसे तीखी बात को अभिधा में न कहकर मात्र ध्वनित हो जाने दिया है और इस समय से कहानी में जबर्दस्त कलात्मक उत्कर्ष आ गया है। 'मधुमती' में प्रकाशित 'एल्सेशियन' कहानी भी उम्दा है जिसमें अंग्रेजीयत साहिबियत

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'मधुमती' - नवम्बर-दिसम्बर 1987 - पृष्ठ 184
2. 'मधुमती' - नवम्बर-दिसम्बर 1987 - पृष्ठ 186
3. 'मधुमती' - नवम्बर-दिसम्बर 1987 - पृष्ठ 188
4. 'मधुमती' - नवम्बर-दिसम्बर 1987 - पृष्ठ 188
5. 'मधुमती' - नवम्बर-दिसम्बर 1987 - पृष्ठ 189

****